गुरु-गोविन्द के चरणचञ्चरिक

अष्टछाप कवि



श्री चतुर्भुजदास

संपादक : भगवती प्रसाद देवपुरा

गुरु गोविन्द के चरणचञ्चरिक

अष्टछाप-कवि

श्रीचतुर्भुजदास



* सम्पादक *

भगवतीप्रसाद देवपुरा

साहित्य-मण्डल, श्रीनाथद्वारा।

* प्रकाशक :
भगवतीप्रसाद देवपुरा
प्रधानमंत्री
साहित्य-मण्डल,
श्रीनाथद्वारा फोन- ०२९५३-३०७८५

* प्रकाशन वर्ष :
संवत् २०५८ वि., सन् २००२ ई०

* मूल्य :
दो सौ रूपये मात्र

* प्रथम संस्करण :
पाँच सौ प्रतियाँ

* लेजरटाईप सेटिंग :
मेवाड़ कम्प्यूटर एण्ड प्रिन्टर्स
मल्लाह तलाई, उदयपुर फोन ४३३०७५,४३०५६४

* मुद्रक :
हरिहर प्रिन्टर्स,
जे–६७, अशोक चौक, आदर्शनगर, जयपुर

- ग्रंथ में प्रकाशित लेख, लेखकों की निजी राय है। इसमें सम्पादक की सहमति ज़रूरी नहीं है।
- समीक्षा के अतिरिक्त ग्रंथ के किसी भी अंश के अन्यत्र उपयोग में सम्पादक की सहमति आवश्यक है।

सम्पादक

गुरु-गोविन्द के चरणचञ्चरिक

अष्टछाप-कवि : श्रीचतुर्भुजदास

अनुक्रमणिका

क्र.	लेख	लेखक	पृष्ठ
❂	सम्पादकीय	श्री भगवतीप्रसाद देवपुरा	७

अनुशीलन खण्ड

क्र.	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	चतुःश्लोकी	श्री रामशरण पीतलिया	१३
२.	अष्टछाप कवि चतुर्भुजदास	डा. कन्हैयालाल पाण्डेय	१४
३.	चतुर्भुज की यशकाया	डा. भगवतशरण चतुर्वेदी	१५
४.	परम भगवदीय चतुर्भुजदास चरित	श्री रामशरण पीतलिया	१७
५.	गोस्वामी विट्ठलनाथजी और चतुर्भुजदास	श्री देवकीनन्दन कुम्हेरिया	२०
६.	कीर्तन सामगीति के ऋतिज : चतुर्भुजदास	आचार्य डा. सुरेश पाण्डेय	२७
७.	बालकृष्ण के बालसखा : चतुर्भुजदास	श्री हरिनारायण नीमा	३६
८.	अष्टछाप में चतुर्भुजदास	डा. सुषमा शर्मा	३८
९.	अष्टछाप के कनिष्ठ कवि : चतुर्भुजदास	श्री रामनारायण अग्रवाल	४२
१०.	चतुर्भुजदास का गुरु और गोविन्द के प्रति समर्पण भाव	डा. उमाशंकर शुक्ल 'उमेश'	४५
११.	चतुर्भुजदास की भावसाधना	डा. सुरेन्द्र शर्मा	५१
१२.	अष्टछाप कवि श्रीचतुर्भुजदासजी की सेवा भावना	पं. हरि प्रसाद शर्मा 'हरिदास'	५६
१३.	चतुर्भुजदास के सुभाव की विशेषता	श्री रामशरण शर्मा 'शरण'	६२
१४.	अष्टछापीय कवियों के ब्रह्मसम्बन्धी विचार और चतुर्भुजदास	डा. गजानन शर्मा	६४

क्र.	लेख	लेखक	पृष्ठ
१५.	सप्तम के पोषक : माधुर्य विरह के परम गायक : कृष्णाराध्य चतुर्भुजदास	डा. घनश्याम व्यास	७१
१६.	चतुर्भुजदास के काव्य में रास सौन्दर्य	डा. राजनारायण राय	८८
१७.	चतुर्भुजदास का उद्धव सन्देश	डा. चक्रधर नलिन	६७
१८.	अष्टछाप कवि श्रीचतुर्भुजदास के पदों का वर्गीकरण	डा. हर्षनन्दिनी भाटिया	१०३
१६.	परम भगवदीय चतुर्भुजदास की मर्मस्पर्शी सेवा–भावना	श्री रामशरण पीतलिया	११०
२०.	श्री भक्त चतुर्भुजदास की वर्षोत्सव लीलापदों की भावना	प्रो. गिरीशचन्द्र चौधरी	१२२
२१.	अष्टछाप कवि चतुर्भुजदास का काव्य सौष्ठव	डा. रमेशचन्द्र मिश्र	१२६
२२.	अनूठे शब्द चित्रों के सृजनहार कवि कीर्तन गायक : श्रीचतुर्भुजदास	श्री चिरंजीवलाल शर्मा	१४६
२३.	श्रीचतुर्भुजदासजी की रचनायें और उनकी प्रामाणिकता	श्री लक्ष्मीचन्द्र शर्मा "मयंक"	१५०
२४.	श्रीचतुर्भुजदासजी की रचनायें और उनकी प्रामाणिकता	श्री गोपालप्रसाद मुद्‌गल	१५४
२५.	चतुर्भुजदास का प्रकृति चित्रण	डा. पुष्पा चौरसिया	१५६
२६.	श्रीचतुर्भुजदासजी के पदों में प्रकृति वर्णन	श्री भगवान 'मकरन्द'	१६६
२७.	अष्टछाप के कवि श्रीचतुर्भुजदास के काव्य में विभिन्न कलाओं का चित्रण	श्री चिरंजीवलाल शर्मा	१७३
२८.	श्रीचतुर्भुजदास के पदों में ब्रजमहिमा	श्री सर्वोत्तम त्रिवेदी 'लघु'	१८१
२६.	श्रीचतुर्भुजदास का युगल वर्णन	डा. जगदीश लवानिया	१६४
३०.	श्रीचतुर्भुजदास के काव्य की पुष्टिमार्गीय समीक्षा	श्री हरिनारायण नीमा	२०१
३१.	पुष्टि भक्ति के परिप्रेक्ष्य में – श्री चतुर्भुजदासजी का काव्य	डा. श्याम शर्मा वशिष्ठ	२०५

क्र.	लेख	लेखक	पृष्ठ
३२.	साक्षात् सत्संग भगवदीय चतुर्भुजदासजी	श्री गोपेशशरण शर्मा 'आतुर'	२११
३३.	हिन्दी साहित्य में चतुर्भुजदास	डा. रामप्रकाश कुलश्रेष्ठ	२१४
३४.	भारतीय दर्शन की पृष्ठभूमि में अष्टछाप और सुकवि चतुर्भुजदास	श्री वसन्त यामदग्नि	२३१
३५.	परमभगवदीय श्रीचतुर्भुजदास का प्राणोत्सर्ग	श्री विट्ठलपारीक	२३६

कीर्तन काव्य खण्ड

❂	काव्य संग्रह (कुल ४२३ पद)	संकलित	२४५

समीक्षा खण्ड

१.	श्री गुसाईंजी के सेवक चतुर्भुजदास कुम्भनदास के बेटा तिनकी वार्ता (२५२ वैष्णव की वार्ता से)		३६५
२.	चतुर्भुजदास (हिन्दी कृष्ण काव्य में भक्ति एवं वेदान्त)	डा. संतोष पाराशर	३७०
३.	श्री चतुर्भुजदासजी (कल्याण सन्त अंक)		३७५
४.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास)	प्रो. रामकुमार वर्मा	३७६
५.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का इतिहास)	श्री रामचन्द्र शुक्ल	३७७
६.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का इतिहास)	डा. नगेन्द्र	३७७
७.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का इतिहास)	श्री किशोरीलाल गुप्त	३७८
८.	चतुर्भुजदास (अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय)	डा. दीनदयाल गुप्त	३७८

क्र.	लेख	लेखक	पृष्ठ
९.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य : एक परिचय)	डा. त्रिभुवनसिंह	३८०
१०.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का इतिहास)	श्री श्यामचन्द्र कपूर	३८०
११.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास)	श्री देवीशरण रस्तोगी	३८१
१२.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का इतिहास : आलोचना तथा सिद्वान्त)	श्री सर्वाधार गुप्त	३८१
१३.	चतुर्भुजदास के जीवन की रूपरेखा (अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय : प्रथम भाग)	डा. दीनदयाल गुप्त	३८२
१४.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास)	डा. रामप्रसाद मिश्र	३८५
१५.	चतुर्भुजदास (ब्रज का इतिहास : भाग २)	श्री कृष्णदत्त वाजपेयी	३८६
१६.	भक्त श्रीचतुर्भुजदासजी (कल्याण : भक्त चरितांक)	....	३८६
१७.	चतुर्भुजदास (अष्टछाप के कवि पुस्तक से)	....	३८६
१८.	चतुर्भुजदास (हिन्दी साहित्य कोष भाग–२)	श्री धीरेन्द्र वर्मा	३९१
१९.	चतुर्भुजदास (अष्टछाप काव्य : सांस्कृतिक मूल्यांकन)	डा. मायारानी टण्डन	३९२

सन्दर्भ खण्ड

- सन्दर्भ ग्रन्थ ३९३

नाटिका खण्ड

- ब्रजबाल नाटिका : चतुर्भुजदास — श्री रामशरण पीतलिया ३९७–४१६

सम्पादकीय.....

साहित्य–मण्डल द्वारा प्रकाशित 'अष्टछाप' ग्रंथ प्रकाशन की परम्परा में श्री सर्वश्री कुंभनदास, नन्ददास, छीतस्वामी, गोविन्ददास पर ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं-जिनकी हिन्दी संसार ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। उसी कड़ी में चतुर्भुजदास पर भी कार्य किया गया है।

हिन्दी साहित्यकारों और इतिहास लेखकों ने श्री चतुर्भुजदास की भी वैसी ही उपेक्षा की है जैसी श्री छीतस्वामी और गोविन्ददास की। आज के इतिहास लेखकों के लिए आचार्य श्री रामचन्द्र शुक्ल का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' ही मार्गदर्शक है। उसी की सामग्री को इधर उधर करते हुए, अपने विचित्र तर्क प्रस्तुत करते हुए नये-नये इतिहासकार अपनी रचनाएं प्रस्तुत कर रहे हैं। यह सही है कि आचार्य शुक्ल के इतिहास की बहुत सी बातों को, काल विभाजन आदि को नए इतिहासकारों ने नूतन रूप दिया है,कुछ शोध करते हुए नवीन बातों का समावेश भी किया है किन्तु भक्तिकाल के कई कवियों के बारे में, विशेष रूप से अष्टछाप से सम्बद्ध कवियों पर कभी कोई शोध परक कार्य हुआ हो-ऐसा ज्ञात नहीं होता, परवर्ती इतिहासकारों ने अपने पूर्ववर्ती इतिहास लेखकों की रचनाओं को ही अपने अध्ययन का आधार मान लिया है और उन्हीं बातों का अपने ग्रंथों में भी उल्लेख कर दिया है। हाँ, विद्या विभाग कांकरोली, वहाँ के पूज्य महाराज श्री तथा विद्वानों ने जिन में सर्वश्री कंठमणि जी शास्त्री और गोकुलानन्द जी प्रमुख हैं, ने अष्टछापीय कवियों के बारे में बहुत कुछ किया है-अनेक कीर्तन ग्रंथों से कवियों के पद एकत्रित कर उन्होंने अलग अलग ग्रंथों का प्रकाशन भी किया है किन्तु शोध परक सामग्री का उनमें भी अभाव है। आज कांकरोली विद्या विभाग द्वारा प्रदर्शित सामग्री ही अष्टछाप के कवियों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का आधार है। हमें उनके 'चतुर्भुजदास' ग्रंथ से पर्याप्त सहायता मिली है।

जहाँ तक चतुर्भुजदास पर शोध परक सामग्री एकत्रित करने का प्रश्न है, हमने इस ओर बहुत प्रयत्न किया है।

हिन्दी साहित्य के विभिन्न इतिहासों, निबन्ध संग्रहों, काव्य ग्रंथों आदि का अध्ययन कर सामग्री का संग्रहण किया गया है-किन्तु वह भी अब पर्याप्त नहीं जान पड़ती, सम्पूर्ण सामग्री एकत्रित करने के दृष्टिकोण से देश के कई सुप्रसिद्ध पुष्टिमार्गीय चिन्तकों को पत्र द्वारा निवेदन किया गया किन्तु कई महानुभावों ने तो पत्र का उत्तर देना भी आवश्यक नहीं समझा और कई ने सर्वथा उपेक्षावृत्ति ग्रहण कर ली। किन्तु कई महानुभावों ने हमारे आग्रहानुरोध पर समुचित विचार कर अपने शोध परक आलेख भेजे हैं, जो इस ग्रंथ को गरिमा प्रदान कर रहे हैं। यों भी श्री चतुर्भुजदास पर आलेख लिखना कोई साधारण काम नहीं है-क्योंकि एक तो वे बहुत छोटी उम्र के थे, दूसरे उन्होंने किसी विशिष्ट ग्रंथ की रचना नहीं की तथा तीसरा उनका कार्यक्षेत्र सीमित था प्रभु श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा और अपने गुरु गोसांई जी महाराज की अनन्य आराधना ही उनका मुख्य कार्य था, सांसारिक लेन देन में उलझे हुए नहीं थे-वे अपने पूज्य पिता श्री कुंभनदास की भांति ही संसार से, संसारी होते हुए भी निरपेक्ष थे। इसी परम्परा का उन्होंने अपने काव्य में निर्वहन भी किया है। यह स्पष्ट है कि जो आलेख प्राप्त हुए हैं उनमें से भी अधिकांश लेखों में 'दो सौ बावन वैष्णवन् की वार्ता' तथा कांकरोली विद्या-विभाग द्वारा प्रकाशित 'चतुर्भुजदास' का ही पर्याप्त प्रभाव है। किन्तु अनेक आलेखों में हमारे माननीय लेखक महानुभावों ने समुचित चिन्तन और मनन कर कवि हृदय और भक्त हृदय श्री चतुर्भुजदास का सांगोपांग निरूपण प्रस्तुत किया है।

कुछ भी हो, जो सामग्री इस ग्रंथ में संग्रहीत की गई है, उसमें हिन्दी संसार को बहुत कुछ नयापन मिलेगा ही। हमें इस बात का संतोष है कि इसी बहाने चतुर्भुजदास के कवि और भक्त हृदय का अध्ययन करने का अवसर मिला।

इस ग्रंथ में कवि के बारे में जो निरूपण हुआ है उसका सार संक्षेप इस प्रकार है-

श्री चतुर्भुजदास, श्री कुंभनदास के सपूत थे और १६०२ में वे गोसांई श्री विट्ठलनाथ जी द्वारा अष्टछाप में सम्मिलित किये गये थे।

श्री चतुर्भुजदास का सम्पूर्ण जीवन श्रीनाथजी की एकनिष्ठ कीर्तन सेवा में व्यतीत हुआ। सं. १६४२ में श्री गोसांई जी गिरिराज कन्दरा में अन्तर्धान हुए

और यह हृदय विदीर्ण करने वाला समाचार जब श्री चतुर्भुजदास को मिला तो वे इस आघात को सहन न कर सके। उन्होने भी अपने आराध्य की स्तुति की और अपना शरीर छोड़ दिया। वस्तुतः वे उच्चकोटि के भक्त थे।

चतुर्भुजदास ने कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं लिखा, कीर्तन सेवा के लिए तैयार किये गये स्फुट पद ही उनकी धरोहर हैं। उनहोंने श्रुतिमधुर ब्रजभाषा में ही अपने काव्य की रचना की। उनके काव्य में माधुर्य गुण की प्रधानता है।

ये पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों के अनुरूप ही अपनी काव्य रचना करते थे। उनके काव्य में अन्य अष्टछापीय कवियों के अनुसार जीव-जगत को ब्रह्म का ही अंश बताया है। उनके अनुसार ब्रह्म (श्रीकृष्ण) रस स्वरूप हैं, उन्हें तभी प्राप्त किया जा सकता है जब सांसारिक भोग-विलासों को त्याग दिया जाय। उन्होंने संसार को क्षणभंगुर मानते हुए उसे त्याज्य बताया है।

उनकी गोपिकाएँ सांसारिक बन्धनों को जंजाल मानती हैं, वे गोपाल (श्रीकृष्ण) को ही अपना सर्वस्व मानती हैं। श्रीकृष्ण के अतिरिक्त उन्हें अन्य नहीं चाहिए। वे श्रीकृष्ण के मुरली वादन पर भी मुग्ध हैं, वे उनसे प्रार्थना करती हैं कि हमें भी आप ऐसा ही श्रुति-मधुर गान गाना सिखा दीजिये।

श्री चतुर्भुजदास ने श्रीकृष्ण की रासलीला का भी वर्णन दिया है। रासलीला पर उनके द्वारा विनिर्मित पद बड़े भावपूर्ण हैं। चतुर्भुजदास के जीवन की अन्य घटनाओं के बारे में हमारे मान्य लेखक महानुभावों ने इस ग्रंथ में बहुत कुछ लिखा है अतः उसका पिष्टपेषण न करते हुए यही निवेदन करना उचित होगा कि सहृदय पाठक महानुभाव इसे आद्यन्त पढ़ें और जो कुछ अच्छा हो उसे स्वीकार कर अनुगृहीत करें।

काँकरोली द्वारा प्रकाशित 'चतुर्भुजदास' ग्रंथ में कवि के ३६५ पद संग्रहीत हैं। हमारे सम्माननीय बन्धुवर कामवन के डा. श्री रमेशचन्द्र जी मिश्र शास्त्री जी ने अथक प्रयत्न कर २७ नये पद भिजवाए और अनेक कीर्तन संग्रहों का कई दिन अवलोकन कर संस्था के वरिष्ठ कार्यकर्त्ता श्री पुरुषोत्तम जी पालीवाल ने ३१ नये पदों को ढूँढ निकाला। इस प्रकार ५८ नये पदों को समाविष्ट कर देने से श्री चतुर्भुजदास के पदों की कुल सं. ४२३ हो गई है। यह सब प्रभु श्रीनाथजी की असीम अनुकम्पा का ही परिणाम है कि इतना कार्य हो सका है। हम सब

तो केवल निमित्त मात्र हैं। फिर भी इस परिश्रम और कृपापूर्ण सहयोग के लिए मैं अपने दोनों मान्य बन्धुओं को धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

अनेक ग्रंथों के अध्ययन से जो सामग्री मिली, वह ग्रंथ के समीक्षा खण्ड में संग्रहीत है। आशा है, कवि के बारे में एक स्थान पर संग्रहीत इस सामग्री का हिन्दी संसार समुचित उपयोग करेगा।

सदैव की भांति माननीय रामशरण जी पीतलिया ने चतुर्भुजदास पर भी ब्रजभाषा में एक नाटिका लिखकर भेजी है, उसे हमारे छात्र साहित्य–मण्डल में प्रेक्षागार के मंचित करेंगे ही-इस ग्रंथ के नाटिका खण्ड में भी उसे यथावत इसलिए प्रकाशित किया गया है कि आवश्यकतानुसार उसे ब्रज लीला से सम्बद्ध अन्य मंचों पर भी मंचित करने का अवसर मिले।

पुस्तक पूर्ववत् चार खण्डों में विभक्त की गई है। पहला दृष्टिकोण, दूसरा कीर्तनकाव्य, तीसरा समीक्षा और चौथा नाटिका खण्ड। आशा है, अपने पूर्ववर्ती ग्रंथों के समान इसे भी सम्मान मिलेगा।

'गुरु गोविन्द ने चरणचञ्चरीक श्री चतुर्भुजदास' ग्रंथ को हिन्दी जगत के सम्मुख रखते हुए हमें अत्यन्त हर्ष है। साथ ही इसके प्रणयन में जिन महानुभावों ने विशेष रूप से श्री रामशरण पीतलिया, डा. रमेशचन्द्रजी मिश्र शास्त्री, श्री पुरुषोत्तमजी पालीवाल और श्री श्याम देवपुरा ने समुचित सहयोग प्रदान किया है-इस अवसर पर उनके प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

अन्त में प्रभु श्रीनाथजी की अन्तःप्रेरणा से विरचित यह ग्रंथ पाटोत्सव के पावन पर्व परं उन्हीं के श्रीचरणों में सादर-ससम्मान समर्पित है।

विश्वप्रभु श्रीनाथजी का पाटोत्सव
फाल्गुन कृष्ण सप्तमी, सम्वत् २०५८ वि.
५ मार्च, २००२

- भगवतीप्रसाद देवपुरा

श्रीनाथजी की सेवा में उनका मन बहुत लगता था । बाल्यवस्था से ही भगवान की अंतरंग लीलाओं की उन्हें अनुभूति होने लगी थी, उन्हीं के अनुरूप वे पद-रचना किया करते थे । उनकी काव्य और संगीत की निपुणता से प्रसन्न होकर श्री विट्ठलनाथजी ने उनको अष्टछाप में सम्मिलित कर लिया । –कल्याण

ये कुम्भनदास के पुत्र और विट्ठलनाथजी के शिष्य थे । कृष्ण-लीला का वर्णन ये सूरदास के समान ही करते थे । इनके पद अधिकतर कृष्ण के क्रिया-कलापों से ही सम्बन्ध रखते हैं । इनकी भाषा बहुत स्वाभाविक और सरस है ।

–हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास

अनुशीलन खण्ड

कुम्भनदास की भक्ति-भावना के कारण उनके घर का वातावरण ही ऐसा बन गया था कि चतुर्भुजदास ने बचपन में ही साम्प्रदायिक रहस्य का ज्ञान भली-भाँति प्राप्त कर लिया । श्रीनाथजी की भक्ति, अनन्य सेवा-भावना और कीर्तन के उत्तम पदों की रचना के कारण वे गोस्वामी विट्ठलनाथजी के अत्यन्त कृपापात्र शिष्यों में से थे । –प्रभुदयाल मीतल

ये दस वर्ष की आयु में ही पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए थे। ये पद गाकर श्रीनाथजी के कीर्तन में आजीवन मग्न रहे। काव्य-शक्ति का प्रादुभाव तो इनमें बचपन से ही हो गया था । –ब्रज साहित्य का इतिहास

अखण्ड भूमण्डलाचार्य महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्य विरचित

चतुःश्लोकी

(ब्रजभाषा अनुवाद)

✍ रामशरण पीतलिया

ब्रजपति सब भावन सतत, वन्दनीय भजनीय।
अपनौ निश्चित धर्म यह, अन्य नाँहि मननीय।।
अन्य नाँहि मननीय, जीव भगवद् अंशी है।
सहजदास है निःसाधन अरू अनुवंशी है।।
अनुवंशी है जीव यह, ब्रजनिधि सेवा एक गति।
धर्म प्रथम पुरुषार्थ है, ब्रजपति सब भावन सतत।

सेवा हित अनुरत रहत, प्रभु रखवार तदर्थ।
रहहु भक्त निश्चिन्त मन, ब्रजपति सर्व समर्थ ।।
ब्रजपति सर्व समर्थ, करहु नित सेवा सुमिरन।
लौकिक वैदिक कर्म सहज प्रभु करि हैं पूरन।।
पूरन है निश्चिन्त फिर लोक और परलोक हित।
अर्थ रूप पुरुषार्थ यह, सेवा हित अनुरत रहत।।

सर्वभाव उर धारि यदि, एक गोकुलाधीश।
लोक वेद के कर्मफल, बिरथा विश्वाबीस।।
बिरथा विश्वाबीस, भक्त के काम मनोरथ।
लौकिक वैदिक कार्य सहज प्रभु पूरन समरथ।
समरथ जिनके सेव्य हैं, पूरहिं प्रभु आशा प्रचुर।
काम रूप पुरुषार्थ यह , धारि हैं सर्वमान उर।

गोकुलेश के चरण भज, सदा सर्व भावेन।
सुमिरन भजन न त्याज्य है, मो मत एहि बरेन।।
मो मत एहि बरेन, आसुरी वेश न आए।
एतदर्थ सेवा वन्दन को नहिं बिसराए।।
बिसराए चिन्तन मनन नहिं कदापि प्रभु भजन तज।
मोक्ष रूप पुरुषार्थ यह, गोकुलेश के चरण भज।।

-प्रान्तीय अध्यक्ष, 'कदम्ब, कामवन'

अष्टछाप कवि चतुर्भुजदास

✍ डा. कन्हैया लाल पाण्डेय

गिरिराज गोद ग्राम, जमुनावतौ है नाम, कुंभन के गृह, भक्त पूत कौ प्रकाश हो।
विट्ठल के शिष्य कै अगाध कृष्ण सौं लगाव,भक्ति रस पान कूँ विनहि के ढिग वास हो।
गाय, गोप, गोपी, द्रुम, लतान विशेष नेह,कै कदम्ब या करील खादर कौ कास हो।
अष्टछाप कौ अलाप गोधन धरन जाप, बल्लभ कुलीय भक्ति भाव में विलास हो।

*

कृष्ण लीला ललित बताई पिता कुंभन नै, बाल गोपाल भक्ति पद लिखिबे लगे।
काव्य कला के कुसुम विनय में करै किलोल,शनै शनै पुष्टि मार्गीय दिखिबे लगे।
काव्य की अजस्र भक्ति धारा कै बहाइ गाइ,अष्टछाप की विशिष्टता में छिकिबे लगे।
'विट्ठल गुसाँई प्रभुधाम गमने'ये जानि,चतुर्भुज दास के ऊ नैना मिचिवे लगे।

*

शिशु के शरण आत विट्ठल असीस दीनी, कुंभन तिहारौ पूत आनन्द दिवावैगौ।
तव मन कहा कहा कामना छिपी है बहु,उनकूँ जि भक्त पूत सफल करावैगौ।
तुमकूँ ही नाइ सिर भगवत भक्तन कूँ, निज भक्ति भाव सौं अमिय रस प्यावैगौ।
काव्य कला कोविद बनै तुम्हारौ जि सपूत,कृष्ण लीला के कवित्त कथि के सुनावैगौ।

*

विष्णु अवतारे कोऊ पावत न पारे प्रभु,चार भुजा वारे के प्रकाश कूँ प्रणाम है।
गिरवरधारी है के इन्द्र मान मेटिबे कूँ,गोप, गाय, गोपिका सुवास कूँ प्रणाम है।
बल्लभ के पूत विट्ठलेश जी के अष्टछाप,भक्ति भरे काव्य अनुप्रास कूँ प्रणाम है।
छाप के ही भक्त कवि कुंभन के अनुगामी,पूत कवि चतुर्भुज दास कूँ प्रणाम है।

*

सम्वत पन्द्रह सौ पिच्यानवे की विक्रमी में, गोरवा छत्रिय कुम्भन घर आए हे।
पाँच पूत लौकिक सष्ट वन मह संहारयौ सिंह, सप्तम चतुर्भुज के मंगल मनाये हे।
भगवत भक्त प्रभु लीला ज्ञान अनुरक्त, मुंह माँगौ पाइ मन मोद उमगाये हे।
बाप के समान गुन–सान–कीर्तिमान बनि,मध्य अष्ट छाप निज नाम जुड़वाये हैं।

-५४, रसखान नगरी, मथुरा

चतुर्भुज की यशकाया

✍ डा. भगवतशरण चतुर्वेदी

पुष्टिमार्ग की परमपावनी भक्ति भाव की धारा।
जिसके स्नेह-सलिल से सिंचित यह वैष्णव कुल सारा।।

अष्टाक्षरी मंत्र ही केवल कुटिल कलुष को काटे।
दुख, दारिद्र्य, दैन्य की खाई पलक झपकते पाटे।।

आठ झाँकिया झीने-झीने माया-महल जलाती।
भाव-सिन्धु में सहज समर्पण के वे सुमन खिलातीं।।

कीर्तनियों की कीर्तिकथा का गायन हृदय लुभाता,
एक बार जो सुनता, अपनी सुध-बुध वह खोजाता।

अष्टछाप के कवियों की वह काव्यकीर्ति की गाथा।
जिसके सम्मुख नतमस्तक है विश्वकाव्य का माथा।।

ऐसे प्रभु श्रीनाथ चतुर्भुज जिनकी लीला गाते।
वल्लभ प्रभु-श्रीनाथ परस्पर एक रूप हो जाते।।

कुंभन-अंशज बनकर जग में दास चतुर्भुज आये।
शैशव से जिनकी आँखों में बस श्रीनाथ समाये।।

जिसके भक्ति भाव का शैशव विट्ठलप्रभु ने चाहा,
स्वयं भाग्य ने, भाग्य चतुर्भुज का इसलिए सराहा।

दस बसंत भर देखे, उसको प्रभु ने क्या अपनाया।
पुष्टिमार्ग की दीक्षा देकर अपना स्नेह जताया।।

मिला ब्रह्म-सम्बन्ध, अंध माया ने ठोकर खाई।
दास चतुर्भुज ने तन्मय हो, प्रभु की लीला गाई।।

कुंभनदास, चतुर्भुज वैसे पिता-पुत्र बन आये।
किन्तु कृष्ण के सखा-सखी थे, कोई जान न पाये।।

वल्लभ प्रभु, विट्ठल स्वामी ने यह रहस्य बस जाना।
अपने सखा-सखी को प्रभु ने सहज भाव पहचाना।।

कुंभन, अर्जुन और विशाखा बनकर साथ रहे थे।
और चतुर्भुज ने विशाल, विमला के रूप गहे थे।।

दोनों आज मिले तो फिर इतिहास उतर यों आया।
अपने सखा, इष्ट की लीला को दोनों ने गाया।।

एक पंक्ति में कुंभन अपनी साँसों को कह जाते।
और दूसरी पंक्ति चतुर्भुज धड़कन सी धड़काते।।

कुंभन कहते-'हरि पौढ़े हैं ऊँची चिन्तरसारी'।
तभी पुत्र कह देते-'राखे बहुत जतन कर प्यारी।।

पिता -पुत्र ने, सखा-सखी ने क्या इतिहास बनाया।
बिठा सामने अपने प्रभु को फिर लीलापद गाया।।

रोम-रोम पुलकित तन सुंदर नैन चतुर्भुज बोले।
छिन-छिन बदला रूप देखकर रूपोदधि तक डोले।।

गिरबर-धरन रास रँग नाँचे बोले जहाँ चतुर्भुज।
पारस प्रभु फिर परस भक्त को नाँचे वहाँ चतुर्भुज।।

दास चतुर्भुज लीलाधर की लीला गाते-गाते।
कभी स्वयं में खो जाते, श्रीनाथ कभी हो जाते।।

कभी भक्त को अपने माथे स्वामी स्वयं बिठाते।
और कभी फिर रूप बदल कर स्वयं भक्त हो जाते।।

कई शताब्दी पूर्व किया विधवा विवाह जब कवि ने।
पहली बार चरण पूजे थे आ धरती पर रवि ने।।

विट्ठल प्रभु की आज्ञा से तब यह सत्कार्य हुआ था।
गौरव को उस दिन ही युग ने अपने हाथ छुआ था।।

पुष्टिमार्ग ही इस समाज में नई क्रांति को लाया।
विधवा को सौभाग्य, भक्त को परम इष्ट दिलवाया।।

पचपन बरस जिये पर हर पल केवल श्रीनाथ जिये।
उनकी लीला देख जिये, सदा उन्हीं के साथ जिये।।

आज चतुर्भुज की यशकाया धरती पर रहती है।
वही गंध श्रीनाथ-चरण से गंधित हो बहती है।।

भक्त, भक्त-वत्सल की ऐसी मोद भरी लीलाएँ,
दिग-दिगन्त तो दुहराते हैं, गातीं यहाँ दिशाएँ।

-२६ ए, केशव नगर, सिविल लाइन्स, जयपुर

परम भगवदीय चतुर्भुजदास-चरित

(जन्म-प्रसंग)

✍ रामशरण पीतलिया

बतरावत बतियाँ घनी, बिहँसि बिहँसि ब्रजनाथ।
कुंभन रहत उदास क्यौं, बोल बता सिग गाथ।।
बोल बता सिग गाथ, रहत क्यौं उखरौ उखरौ।
कुंभन बोल्यौ बिनु सत्संगी मारग सकरौ।।
'मारग सकरौ' कौन बिध, नई बात काहे बनी ?
संग रहूँ मैं रात दिन, बतरावत बतियाँ घनी।

*

निसि वासर हियरा बसौ, जियरा चैन परै न।
दियरा झंझावात कौ, ओटक बिना बरै न।।
ओटक बिना बरै न, बिना सत्संग सहारे।
मृग मरीचिका मन मग भटकत मारे मारे।।
मारे मारे कब तलक, सोच रहत नित याहि मिस।
जानत सिग अन्तर बिथा, बूझत काहे दिवस निस।।

*

सोच परे सुधि बीसरे, मन भारी अकुलात।
सत्संगी सुवना बिना, उडि उडि कैं घर खात।।
उडि उडि कैं घर खात, तिहारी तुमही जानौ।
अनजाने बन बूझ, तुरंत अपनी ही तानौ।।
तानौ तौ मानौ सही, शरण तिहारी आ परे।
नाथ उबारहु कष्ट मम, सोच परे सुध बीसरे।।

*

मैं जानी कुंभन सखा, तेरे मन की बात।
जासौं रहत उदास मन, चिंतित है दिन रात।।
चिंतित है दिनरात, उठौ मन मोद मनाऔ।
भगवदीय सुत पाऔगे, अब तौ मुसकाऔ।।
मुसकाऔ गाऔ हँसौ, मिल्यौ वर जो चाह्यौ मन।

बुझे-बुझे अब मत रहौ, बात मैं जानी कुंभन।।
धन धन दीनदयाल प्रभु, धन गोबरधननाथ।
ब्रजपति ब्रजनिधि कला-निधि, लाज तिहारे हाथ।।
लाज तिहारे हाथ, भगत पन राखन हारे।
जयति देवकीनन्दन माधव नन्ददुलारे।।
नन्द दुलारे दया करि, जयति जयति जसुदा सुवन।
मो कँह मनवांछित दियौ, कियौ सपूरन सुपन धन।।

*

माखन चाखन चाव हित, सँग लै कुंभनदास।
घर सूनौ देख्यौ घुसे, भर मन मँह उल्लास।।
भर मन मँह उल्लास, गह्यौ कर ऊँची छींकौ।
उत्तरीय खुल गयौ, बनौआ अजब छबी कौ।।
अजब छबीकौ दृश्य हौ, दोय कर प्रकटे ताखन।
भयौ चतुर्भज रूप, खूब चाखौ हौ माखन।।

*

माथे कस्तूरी तिलक, उर कौस्तुभ की माल।
नकबेसर नासा लसे, मुरली सबद रसाल।।
मुरली सबद रसाल, अंग चन्दन कर कंकन।
ब्रजगोपिन के यूथ, सोहते असुर निकन्दन।।
असुर निकन्दन चन्द्रमुख, इन्दीवर छबि की झलक।
मोरपंख मंगलकरन, माथे कस्तूरी तिलक।।

*

जयति गोरधन नाथ जय, लीला ललित ललाम।
भक्त बछल करुणाकरन, अनुपम छबि के धाम।।
अनुपम छबि के धाम, अनौखी लीला न्यारी।
नैन तृप्त भए रूप चतुरभुज लखि गिरधारी।।
गिरधारी लीला अमित, भाग्य सराहत मोद अति।
माखन चाखन हार जय, ब्रज जन रखवारे जयति।।

*

भावलोक विचरण करत, कुंभनदास प्रवीन।
देवालय गिरवर धरन, छेरत राग नवीन।।
छेरत राग नवीन, तबहिं इस ग्वाला आयौ।
बहुत बधाई कुंभन घरनी ललना जायौ।।
ललना जायौ सुन स्रवनि, भयौ अतुल उल्लास मन।
रूप चतुर्भुज दिखायौ, बन्यौ चतुर्भुजदास जन।।

भए चतुर्भुजदास घर, जय हो दीनदयाल।
धन्य चतुर्भुजनाथ धनि, मो कँह भए कृपाल।।
मो कँह भए कृपाल, सुवन सत्संगी आयौ।
भाग्य सराहत नाथ, व्यथित उर धीर धरायौ।।
धीर धरायौ मम हृदय, प्रन पूरन कर धरम धुज।
दरसन दीने चतुर्भुज, धरनि मुदित भए चतुर्भुज।।

*

किलकरी मारी हँसे, बाल चतुर्भुजदास।
आसिस पायौ मुदित मन, गुरुवर बिट्ठल पास।।
गुरुवर बिट्ठल पास, कराए नाम निवेदन।
युग युग की पहचान साध पूरे कर बचनन।।
बचनन कौ निर्वाह सत, गोस्वामी उलसित लसे।
चीन्ह परमगुरु चतुर्भुज, किलकारी मारी हँसे।।

- प्रान्तीय अध्यक्ष, कदम्ब ब्रज संस्थान, कामवन

रात्रि २ बजे के आस पास स्वप्न में परम भगवदीय चतुर्भुजदास के चबूतरे और इमली के पेड़ के दर्शन हुए। छोटे-छोटे बालक उसके आस पास खेल रहे थे। आँख खुल गई। प्रातः तक सो नहीं पाया। प्रातः गोवर्धन परिक्रमा और चबूतरा दर्शन की इच्छा प्रबल हुई और मैं गोवर्धन पहुँच गया। राधाकुण्ड वाली परिक्रमा अकेले की। जतीपुरा वाली परिक्रमा में श्री कुम्हेरियाजी को साथ लिया। गिरिराज शिखर पर भगवान श्रीनाथजी के चित्रपट के दर्शन किए। भव्य मन्दिर के दर्शनों का सौभाग्य जीवन में प्रथम बार कर कृतकृत्य हो गया। परम भगवदीय चतुर्भुजदास का चबूतरा और इमली बिल्कुल वही थे जो स्वप्न में दृष्टिगत हुए थे। स्वप्न और यथार्थ एकाकार थे। मैं अभिभूत हो गया। धन्य प्रभु श्रीनाथ तेरी लीला अपार हैं। यह भी एक संयोग ही था कि भगवान श्रीनाथजी के प्राचीन मंदिर में व्यवस्थापक मुखिया जी ने जो पद सस्वर गाया, वह चतुर्भुजदासजी का ही पद था। प्रस्तुत करते समय अविरल अश्रुधारा वृद्ध मुखिया के हृदय की भाव-अभिव्यक्ति थी। ऐसा लगा मुखिया जी के स्वर में अष्टछाप के कवियों की आत्मा उतर आई हो। यह सब आपकी कृपा का अतिरिक्त प्रतिफल ही तो था - मैं नत शिर था परम भगवदीय चतुर्भुजदास के चबूतरे पर आपकी अहैतुकी कृपा के प्रति। जीवन में ऐसे अवसर बहुत कम ही आते हैं।

✍ रामशरण पीतलिया, कामवन

गोस्वामी विट्ठलनाथ जी और चतुर्भुजदास

✍ देवकीनन्दन कुम्हेरिया

अष्टछाप कवि चतुर्भुजदास जी का जन्म सं.१५८७ में गोवर्द्धन पर्वत के समीप ही, पूर्व दिशा में बसे गाँव जमुनामते में भगवान श्रीनाथजी के प्रथम कीर्तनकार व अष्टछाप के वरिष्ट कवि कुंभनदास के यहाँ उनके पुत्र-रूप में हुआ था। यह सुखद संयोग ही रहा कि जहाँ वह कुंभनदास के सप्तम पुत्र के रूप में थे वहीं अष्टछाप कवियों के गणना क्रम में भी उन्हें सप्तम स्थान प्राप्त हुआ। गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी के स्नेहिल आशिष से ही वह भूतल पर आये और गोस्वामी जी के लीला प्रवेश के साथ ही उन्होंने भी यह धराधाम त्याग दिया। जीवन पर्यन्त चतुर्भुजदास को पूज्य गोस्वामी जी की छत्र छाया प्राप्त रही।

चतुर्भुजदास के जीवन से पूर्व कुंभनदास के छै-पुत्र थे, इनमें पाँच बड़े पुत्रों की रुचि लौकिक विषयों में थी। भगवद् भक्ति और श्रीनाथजी की सेवा के प्रति उन्हें कोई अनुराग नहीं था। इसलिए कुंभनदास उनसे भारी असन्तुष्ट रहते थे। छटवाँ पुत्र कृष्णदास श्रीनाथजी की गायों की रखवाली करता था, इसलिए कुंभनदास उससे कुछ सन्तुष्ट थे। इन छै पुत्रों के होते हुए भी कुंभनदास एक ऐसा पुत्र और चाहते थे जो उनके जैसा भक्त और श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में मन लगाने वाला हो। कुंभनदास ने अपनी यह कामना गोस्वामी जी के चरणों में प्रस्तुत की। गोसाई जी ने मुस्करा कर उन्हें इच्छापूर्ति का आशीर्वाद दे दिया। इस प्रकार गोसाई जी के शुभ आशिष से ही चतुर्भुजदास का जन्म हुआ। कुंभनदास ने भी सदैव चतुर्भुजदास को गोस्वामी जी के आशिष के रूप में ही माना। जन्म से पूर्व रात्रि में कुंभनदास को स्वप्न में भगवान चतुर्भुज जी के दर्शन हुए थे, इसी कारण बालक का नाम चतुर्भुजदास रखा गया। बालक चतुर्भुजदास प्रारम्भ से ही अपने पिता के गुणों का अनुकरण करने लगे थे, इसलिए कुंभनदास को अपने अन्य सभी पुत्रों की अपेक्षा चतुर्भुजदास पर विशेष स्नेह था।

सं. १५९७ में गोसाई विट्ठलनाथ जी अपने ज्येष्ठ पुत्र गिरधर जी का जन्मोत्सव मना कर जब गोकुल से गोवर्द्धन पधारे तो कुंभनदास की प्रार्थना पर उन्होंने चतुर्भुजदास को पुष्टि सम्प्रदाय की दीक्षा दी। उस समय चतुर्भुजदास की आयु १० वर्ष थी। इस प्रकार चतुर्भुजदास पर गोस्वामी जी की कृपा उनके

जन्म के पूर्व से ही मानी जाती है जिसमें आगे चलकर निरन्तर भी वृद्धि ही होती रही। ऐसा सौभाग्य सुख अष्टछाप कवियों में मात्र चतुर्भुजदास को ही प्राप्त हुआ है।

चतुर्भुजदास बचपन से ही धर्मपरायण और अपने माता-पिता के आज्ञाकारी पुत्र थे। वह प्रत्येक कार्य में अपने पिता को पूर्ण सहयोग देते थे। खेती-बाड़ी, घर के काम के साथ ही वह श्रीनाथजी की कीर्तन-सेवा में सदैव अपने पिता की सहायता करते थे। उनको बचपन से ही काव्य और संगीत की शिक्षा प्राप्त हुई थी। अपने पिता के साथ श्रीनाथजी के कीर्तन में सम्मिलित होने से वह छोटी अवस्था में ही उत्तम पदों की रचना कर उनको सुन्दर रीति से गाने लगे थे।

चतुर्भुजदास अपनी बाल्यावस्था में ही कितनी सुन्दर आशुकविता करने लगे थे, इसका वर्णन वार्त्ता के एक प्रसंग में इस प्रकार दिया हुआ है-एक दिन कुंभनदास और चतुर्भुजदास दोनों अपने गाँव जमुनामते में एक झोपड़ी में बैठे हुए थे। वहाँ से पर्वतराज गोवर्द्धन की शिखर पर स्थापित श्रीनाथजी के भव्य मन्दिर के दर्शन होते हैं। अर्धरात्रि के समय मन्दिर के दीपक का प्रकाश झरोखों से निकलता हुआ दिखाई दे रहा था। लीला-रस में डूबे कुंभनदास को श्रीनाथजी के शयन करने का अनुभव हुआ। उन्होंने उसी समय पद की एक पंक्ति का गायन किया-

''वह देखौ बरत झरोखन दीपक, हरि पौढे ऊँची चित्तरसारी।''

इस पंक्ति को सुनते ही चतुर्भुजदास ने उसी रस का अनुभव करते हुए तत्काल दूसरी पंक्ति रचकर उसकी तुक इस प्रकार मिलाई-

''सुन्दर बदन निहारन कारन, राखें हैं बहुत जतन कर प्यारी।।''

इसे सुनकर कुंभनदास को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्हें विश्वास हो गया कि मेरा यह पुत्र वास्तव में वैसा ही होगा जैसा मैं चाहता था। पिता की भक्ति भावना के कारण उनके घर का वातावरण ही ऐसा बन गया था कि चतुर्भुजदास ने बचपन में ही साम्प्रदायिक रहस्य का भली भाँति ज्ञान प्राप्त कर लिया। श्रीनाथजी की भक्ति, अनन्य सेवा-भावना और कीर्तन के उत्तम पदों की रचना के कारण वे गोस्वामी जी के अत्यन्त कृपा पात्र शिष्यों में थे।

सं. १६०२ में जब गुँसाई जी ने 'अष्टछाप' की स्थापना की तब उसमें चतुर्भुजदास को भी सम्मिलित किया गया। अष्टछाप में जहाँ बड़े-बड़े भक्त, सुकवि और उच्चकोटि के कीर्तनकार थे, वहाँ अपने वयोवृद्ध पिता के साथ युवक चतुर्भुज को सम्मलित किया जाना चतुर्भुजदास के लिए गौरव की बात थी। अष्टछाप कीर्तन-सेवा में चतुर्भुजदास को सायंकालीन 'भोग' में कीर्तन-सेवा

सोंपी गई थी। यह सभी कुछ उन्हें श्री गोसाई जी की कृपा से ही प्राप्त हुआ।

अष्टछाप के सभी कवियों ने प्रिया प्रीतम की निकुंज लीला और रसमाधुरी पर उच्चकोटि की काव्य रचना की है, किन्तु फिर भी उन सभी भाव और रस की अलग-अलग पहचान है। जैसे कुंभनदास का निकुंज भाव और सूरदास का वात्सल्य रस। चतुर्भुजदास की रचनाओं में ब्रज गोपी भाव प्रधान है, और उनमें विरह भाव की सर्वोच्चता के कारण ही गोपियों को 'प्रेम की ध्वजा' कह कर सम्बोधित किया गया है। चतुर्भुजदास के काव्य और जीवन में इस भाव की पराकाष्ठा देखी जा सकती है। जैसे गोपियाँ श्रीकृष्ण के वियोग में व्याकुल रहती थीं, उसी प्रकार चतुर्भुजदास के लिए श्रीनाथ का विछोह असहनीय था। वह गोवर्द्धन और श्रीनाथजी को छोड़कर अन्यत्र नहीं जाते थे। एक बार गोस्वामी जी के ज्येष्ठ पुंत्र गिरधर जी श्रीनाथजी को मथुरा लिवा ले गये। उनके बिछोह में चतुर्भुजदास भारी व्यथित रहें, उन्हें प्रसन्नता तभी हुई जब भगवान श्रीनाथजी पुनः आकर गोवर्द्धन विराजे। वार्त्ता ग्रन्थ में उनके गोवर्द्धन व श्रीनाथजी के विछोह के सम्बन्ध में अनेक कथाएँ वर्णित हैं। एक प्रसंग इस प्रकार है-एक बार गोसाई जी ने चतुर्भुजदास को नवनीतप्रिया जी की सेवा हेतु गोकुल बुलाया। वह गोकुल जाते और नवनीतप्रिया जी की झाँकी में संगीत सेवा के उपरान्त वह तुरन्त ही गोवर्द्धन लौट आते। कुंभनदास को चतुर्भुजदास द्वारा नित्य सेवा हेतु गोकुल जाने और वहाँ से गोवर्द्धन लौट आने के बारे में सन्देह हुआ और उनका सन्देह तभी दूर हुआ जब गोसाई जी ने बताया कि चतुर्भुज नित्य प्रति गोकुल जाते हैं और सेवा-पश्चात तुरन्त गोवर्द्धन लौट आते हैं।

अष्टछाप कवियों में कुंभनदास और चतुर्भुजदास यही दोनों पिता-पुत्र ऐसे कवि थे जो गृहस्थ आश्रम में रहकर उसका पालन करते हुए पूर्ण रूपेण भक्ति भाव से श्रीनाथजी की सेवा में समर्पित थे। जमुनावतो गाँव में उनकी थोड़ी सी खेती थी, और भोजन करने वाला था बहुत बड़ा परिवार, इसलिए उनके यहाँ आर्थिक कठिनाई बनी ही रहती थी। गोसाई जी इनकी दयनीय आर्थिक स्थिति से परिचित थे, वह चाहते थे कि चतुर्भुजदास यात्रा में उनके साथ चले तो इसे कुछ अर्थ-लाभ हो जाए, किन्तु चतुर्भुजदास का मन भगवान श्रीनाथजी का सानिध्य-सुख त्यागने को तैयार नहीं था। वार्त्ता के अनुसार एक बार गोसाई जी चतुर्भुजदास को यात्रा में अपने साथ ले गए। यात्रा के पहिले दिन ही जब पूँछरी गाँव से आगे सायंकाल पड़ाव हुआ तो चतुर्भुजदास को श्रीनाथजी का बिछोह सालने (सताने) लगा, और उनके नेत्रों से अश्रुपात

होने लगा। वह विरह में डूबे हुए श्रीनाथजी का स्मरण कर पद गायन करने लगे-

श्री गोवरधनवासी साँवरे, तुम बिन रह्यौ न जाय।
ब्रजराज लड़ैते लाडिले, तुम बिन रह्यौ न जाय।।
बंक चितै मुसिकाय कें, सुन्दर बदन दिखाय।
लोचन तलफें मीन ज्यों, पल छिन कल्प बिहाय।।
सप्तक स्वर बंधान सों, मोहन बेणु बजाय।
सुरत सुहाई बाँधिकें, मधुरे-मधुरे गाय।।
रसिक रसीली बोलनी, गिरि चढि गाय बुलाय।
गाय बुलाई धूमरी, ऊँची टेर सुनाय।।
दृष्टि परी जा दिवस तें, तबतें रुचे नहिं आन।
रजनी नींद न आवहीं, बिसरौ भोजन पान।।
दरसन को नयना तपें, बचन सुनन कों कान।
मिलिबें कों हियरा तपै, जियके जीवन प्रान।।
मन अभिलाषा है रही, लागत नयन निमेष।
इकटक देखूँ आवते, नटवर नागर भेष।।
जुग-जुग अविचल राखिये, यह सुख शैल निवास।
श्री गोवर्द्धनधर रूप पर, बल जाए ''चतुर्भुजदास।।''

गोस्वामीजी ने विरह व्यथित चतुर्भुजदास की यह दशा देखी तो मन ही मन विचार किया कि इनकी प्रथम दिवस ही यह स्थिति है तो आगे चलकर तो यह श्रीनाथजी के विरह में प्राण ही त्यागन कर देंगे। यह विचार कर गोस्वामी जी ने चतुर्भुजदास को वापिस गोवर्द्धन भेज कर उन्हें भगवान श्रीनाथजी की सेवा में ही रहने की आज्ञा प्रदान की।

एक दिन गोंसाईजी ने श्रीनाथजी का शृंगार कराकर उन्हें आरसी (अँगूठा में पहिनने का दर्पण) दिखाई। चतुर्भुजदास आशुकवि तो थे ही, उन्होंने तुरंत यह पद गाया-

सुभग शृंगार निरख मोहन कौ, लै दर्पण कर पियहिं दिखावें।
आपु न नेंक निहारिये बल जाऊँ, आज की छवि कछु कहत न आवें''

इसके पश्चात जब गोविन्द कुण्ड पर गोसाईजी पधारे तो एक वैष्णव ने पूछा-महाराज! ''आज की छबि कछु कहत न आवें।'' आज चतुभुर्जदास ने ऐसा गाया है। आप तो नित्य शृंगार करें, आरसी दिखावें हैं, सो आज के शृंगार

का अभिप्राय समझाए। तब श्री गोसाईजी ने उसे समझाया-'यह बात तुम चतुर्भुजदास से ही पूछो। इससे ज्ञात होता है कि गोसाईजी चतुर्भुजदास पर कितना स्नेह रखते थे। इसके पश्चात चतुर्भुजदास ने एक पद और गाया-

''माई री, आज और काल और''।

इस पद को सुनकर उस वैष्णव ने गोसाईजी से पूछा –

प्रभो ! भगवद्लीला तो नित्य है, और सर्वत्र है, फिर चतुभुर्जदास ने और और क्यों कही? तब गोसाईजी ने आज्ञाकरी– भगवद्लीला में विलक्षणता यही है कि जो नित्य है वही क्षण भर में नूतन लगती है, और लीलास्य जीव कूँ और लीला के दर्शन करने वालों का क्षण-क्षण नूतन लगती है, तथा नवीन रुचि पैदा करती है। फिर उसे एक दोहा द्वारा इस प्रकार समझाया–

एक रसना किम कहूँ, गुण प्रकट विविध विहार।
नित्य लीला, नित्य नूतन, श्रुति न पामें पार।।

सुनकर वैष्णव बहुत प्रसन्न हआ। गोसाईजी का चतुर्भुजदास पर ऐसा कृपा पूर्ण स्नेह था। यह वार्त्ता के इस प्रसंग के ज्ञात होता है। वार्त्ता में एक और प्रसंग इस प्रकार है–

एक दिन गुसाईं जी ने चतुर्भुजदास को आज्ञा करी कि तुम अपछरा-कुण्ड पर जाकर रामदास भीतरिया को बुला लाओं, और फिर पुष्प ले आओ। चतुर्भुजदास ने जाकर रामदास को गोसाईंजी की सेवा में भेज दिया, और आप बनफूल बीनने लगे। जब चतुर्भुजदास पुष्प लेकर गोसांईजी की सेवा में जाने लगे कि तभी श्रीनाथजी श्रीस्वामिनी जी सहित श्री गोवर्द्धन की कन्दरा से बाहर निकले। स्वामिनीजी के मन में विचार आया कि यह लीला कोई जाने नहीं। इतने में ही चतुर्भुजदास ने उनके दर्शन किये और यह पद गाया-

श्री गोवर्धन गिरि सघन कंदरा, रैन निवास कियौ पिय प्यारी।
उठि चले भोर सूरति रँग भीने, नँद नंदन वृषमानु-दुलारी।।
इत बिगलित कच माल मरगजी, अटपटे भूषन मरगजी सारी।
उतहि अधर मसि पाग रही फब, दुहूँ दिसि छबि बाढी अति भारी।।
घूँमत आवत रति रन जीते, बरनी संग गजवर गिरिधारी।
'चतुर्भुजदास' निरखि दंपति छबि, तन मन धन कीनों बलिहारी।।

पश्चात उन्होंने यह पद गाया–

रजनी राज कियौ निकुंज नगर की रानी।
मदन महीपति जीत महारन, श्रम जल सहित जँभानी।।
परमसूर सौंदर्य भ्रकुटि धनु, अनियारे नैन बान संधानी।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिधिर रस, संपति बिलसी ज्यों मनमानी।।

ये पद सुनकर श्री स्वामिनीजी प्रसन्न हुई और चतुर्भुजदास पुष्प लेकर गोसाईजी की सेवा में पहुँचे। इस प्रकार चतुर्भुजदास श्री गोसांईजी के ऐसे कृपापात्र थे जो श्रीनाथजी तथा स्वामिनीजी के मन की भी जान गये।

उस काल में शिर की चोटी हिन्दुओं के आन, बान, शान स्वाभिमान की पहिचान थी। हिन्दू समाज चोटी की रक्षा हेतु की बोटी तो कटवा सकता था किन्तु किसी भी प्रकार चोटी नहीं। फिर माथे पर तिलक और सिर पर चोटी यह तो वैष्णवों का प्रथम स्वरूप है। महात्मा सूरदास ने श्रीकृष्णा के श्रीमुख से 'मैया कबहि बढेगी चोटी'' कहलवा कर चोटी की महिमा और गरिमा को बाल-भाव में प्रस्तुत कर लोक जीवन का चित्रण किया है, किन्तु चतुर्भुजदास ने सिर की चोटी का जो रसमय वर्णन किया है उसकी कहीं भी कोई समानता नहीं।

पद इस प्रकार है-

चुटिया तेरी बडी किधों मेरी
अहो सुबल बैठहु भैया हो, हम तुम माँपें इक बेरी।।
लै तिनका माँपत उनकी कछु, अपनी करत बड़ेरी।
लैकर कमल दिखावत ग्वालन, ऐसी काहू न केरी।।
मौकों मैया दूध पियावत, तातें होत घनेरी।
'चतुभुर्ज' प्रभु गिरिधर इहि आनँद, नाँचत दै दै फेरी।।

इस पद में जहाँ बाल स्वभाव का सजीव चित्रांकन है वही ग्वालिन द्वारा कमल दिखाकर अपनी लम्बी चुटिया का प्रदर्शन रसभाव की उत्पत्ति करता है। चतुर्भुजदास ने अपने एक पद में उस 'सुन्दर शिला का भी वर्णन किया है जो ग्वाल वालों की खेलन भूमि थी और आज कल 'मुखारविन्द' के नाम से पूजित है। यह शिला गोवर्द्धन पर्वत के तल भाग में गोपालपुरा गाँव (जतीपुरा) में विराजित है। पद इस प्रकार है-

सुन्दर सिला खेल की ठौर।
मदन गुपाल जहाँ अधिनायक, चहुँ दिसि सखा मंडली और।।
बाँटत छाक गोवरधन ऊपर, बहुविधि कानन बैठे मोर।
हँसि-हँसि भोजन करत परस्पर, चाखि चाखि लै अरोगत कौर।।
कबहुक बोल गिरि के सिखर पर, लै लै नाम धूँमरी धौर।
'चतुर्भुज' प्रभु लीला रस रीझे, श्री गिरिधर लाल रसिक सिरमौर।।

चतुर्भुजदास भगवान श्रीनाथजी व श्री गोसांईजी में कोई भेंद नहीं मानते थे। दोनों के प्रति उनका पूर्ण समर्पण था। अनेक पदों द्वारा उन्होंने अपने इस भाव को व्यक्त किया है। देखिये ये पद जिनमें उन्होंने श्री गोसाईजी

के श्रीकृष्णा का अवतार मानते हुए गायन किया है-

सदाँ ब्रज में ही करत बिहार।
तबके गोप भेष बपु धार्‌यौ, अब द्विजवर अवतार।।
तब गोकुल में नंद सुवन, अब वल्लभ राजकुमार।
आपुन चरित सिखावत औरन, निज मत सेवा सार।।
युगल रूप गिरिधरन श्री विट्ठल, लीला इक अनुसार।
'चतुर्भुज' प्रभु सुख शैल निवासी, भक्तन कृपा अपार।।

इसी भाव का एक और पद इस प्रकार है-

प्रगटे रसिक विट्ठलराय।
भक्त हित अवतार लीयौ, बहोरि ब्रज में आय।।
शिव ब्रह्मादिक ध्यान धरत हें, निगम जाकों गाय।
शेष सहस्त्र मुख रटत रचना, रस न बरन्यों जाय।।
पीट पट कटि काछिनी, कर मुरली मधुर बजाय।
मोर चन्द्र का मुकुट मस्तक, भाल तिलक लगाय।।
मकर कुँडल गंड मंडित, देख मदन लजाय।
ग्वालिनी के संग बिहरित, रास मंडल मांय।।
अंग अंग अनूप सुंदर, कहा कहौ बनाय।
प्राणपति की निरखि सोभा,चतुर्भुज बल जाय।।

इस प्रकार गुसाईंजी की छत्र छाया में उन्होंने एकनिष्ठ भाव से अगणित पदों की रचना कर पुष्टिपंथ कीर्तन सेवा और श्रीनाथजी के सान्निध्य में अपना जीवन अर्पित कर दिया।

सं. १६४२ में गोस्वामी जी ने लीला प्रवेश किया, उस समय चतुर्भुजदास अपने निवास (जमुनावते) में थे। इस दुखद समाचार को सुनते ही उनके हृदय पर मानो पहाड़ टूट पड़ा। वह गाँव से सीधे गोवर्द्धन पर्वत पर श्रीनाथ की स्मृति में पद गायन करते हुए जतीपुरा की ओर उतर गए। वहाँ रुद्रकुण्ड के तट पर जाकर, एक इमली-वृक्ष के नीचे जाकर उन्होंने अपना भौतिक शरीर त्याग दिया। ऐसी थी चतुर्भुजदास की गोस्वामी जी के प्रति अबाध श्रद्धा और अनूठा समर्पण। उन्होंने गोस्वामीजी के बिना इस धरा पर जीवित रहना स्वीकार नहीं किया। आज भी रुद्रकुण्ड के तट पर खडा इमली का वृक्ष चतुर्भुजदास के समर्पित जीवन की गाथा अपने हृदय में सँजोये हुए है और यहीं उसकी छाया में बनी है चतुर्भुजदास जी की समाधि।

–बड़ा बाजार,गोवर्द्धन

कीर्तन-सामगीति के ऋत्विज : चतुर्भुजदास

✍ आचार्य डा. सुरेश पाण्डेय

भार : कश्चन् सहयते गिरि गुरोर्हसताम्बुजाग्रस्थिते
रेताबन्तमनेहसं चरणयोरेकैव चाव स्थितिः।
बालेनाप्यमुनात्र नाम तृष्णा नापि क्षुधा गृह्यते
तात्कोप्येष दयानिधिर्निजजनान् रक्षन् चिरं पातु नः।।
कलिन्दनन्दिनी तटान्तकुंज मंजुलोदरे,
निसर्गसर्गपोषसंयमैकशक्ति सुन्दरे।
नटन्-नटन्-नटन् कमद्वनान्तकान्तिकालिमा,
हरि-मणिप्रभाषणैकमण्डि-पण्डितोऽवतु।।

''यः प्राणे तिष्ठन् प्राणादन्तरोअयं प्राणो न बेद यस्य प्राणः शरीरं यः प्राणमन्तरोऽयमयति। यो वाचि तिष्ठन् बाचोअन्तरीऽयं वाङ् न वेद यस्य वाक् शरीरं यो वाचमन्तरोऽयमयंति। यश्चक्षुषितिष्ठश्चक्षुषोऽन्तराऽयं चक्षुर्न वेद यस्य चक्षुः शरीरं यश्चक्षुरन्तरो यमयति। यः श्रोत्रे तिष्ठ छोत्रादन्तरोअय, श्रोत्रं न वेद यस्य श्रोत्रः शरीरं यः श्रोत्रमन्तरी यमयति। यो मनीस तिष्ठन् मनसोऽन्तरो यं मनो न वेद यस्य मन : शरीरं सो मनोऽन्तरो यमयति। यस्त्वचि तिष्ठ, स्त्वचोऽन्तरों यं त्वङ्.नं वेद यस्य त्वक् शरीरं यस्त्वचमन्तरो यमयाति। यो विज्ञाने तिष्ठन् विज्ञानादन्तरों यं विज्ञानं न वेद यस्य विज्ञानं शरीरं यो विज्ञानंमन्तरो यमयति। यो रेतसि तिष्ठन् रेतसोऽन्तरों य रेतो न वेद यस्य रेतः शरीरं यो रेतोऽन्तरो यमयति। बृहदारण्यकोपनिषद-३/७/३-२३।''

''जो प्राण प्राणवायुसहित घ्राणेन्द्रिय में स्थित हैं, प्राण के अभ्यन्तर हैं, जिन्हें प्राण नहीं जानता प्राण जिनका शरीर है, जो भीतर रहकर प्राण का नियमन करते हैं, तो नेत्र में स्थित हैं, नेत्र के अभ्यन्तर हैं, जिन्हें नेत्र नहीं जानता, नेत्र जिनका शरीर है, जो भीतर रहकर नेत्र का नियमन करते हैं, जो श्रोत्र में स्थित हैं, श्रोत्र के अभ्यनतर हैं, जिन्हें श्रोत्र नहीं जानता, श्रोत्र जिनका शरीर है, जो भीतर रहकर श्रोत्र का नियमन करते हैं, जो मन में स्थित हैं, मन के अभ्यन्तर हैं, जिन्हें मन नहीं मानता, मन जिसका शरीर है, जो भीतर

रह कर मन का नियमन करते हैं, जो त्वक् में स्थित हैं, त्वक् के अभ्यन्तर हैं, जिन्हें त्वक् नहीं जानती, त्वक् जिनका शरीर है, जो भीतर रहकर त्वक् का नियमन करते हैं, जो विज्ञान (बुद्धि) में स्थित हैं, विज्ञान के अभ्यन्तर हैं, जिन्हें विज्ञान नहीं जानता, विज्ञान जिनका शरीर है, जो भीतर रहकर विज्ञान का नियमन करते हैं, जो वीर्य में स्थित हैं, वीर्य के अभ्यन्तर हैं, जिनहें वीर्य नहीं जानता, वीर्य जिनका शरीर है, जो भीतर रहकर वीर्य का नियमन करते हैं-इस प्रकार जो आध्यात्मरूप हैं।''

वे अधिदैव, अधिभूत, अध्यात्मस्वरूप सर्वान्तर्यामी कौन हैं ? वे ब्रजेन्द्र नन्दन श्री कृष्णचन्द्र ही तो हैं। किन्तु आज वे सर्वान्तर्यामी, सर्वनियामक श्री कृष्णचन्द्र वात्सल्यरस-सुर्धापान की उत्कट अभिलाषावश-अपने बाल्यावेश के अन्तराल में अपना अनन्त ऐश्वर्य, अपनी अशेष नियामकता छिपाये हुए, भूले हुए ब्रज की विमल वसुन्धरा पर विचरण कर रहे हैं।·जल, अग्नि, अन्तरिक्ष, वायु, आदित्य, दिशायें, चन्द्र, तारिकायें, आकाश, तम,तेज-इनमें अधिष्ठित देव, इन्हें अपने नेत्रों से निहारकर कृतार्थ हो रहे हैं। ब्रज में ब्रह्मा से स्तम्ब पर्यन्त समस्त भूत उनका प्रत्यक्ष दर्शन कर धन्य-धन्य हो रहे हैं। आज श्री कृष्ण चन्द्र मानो अपने प्राण के नियामक नहीं, प्राण उनका नियमन कर रहा है, किसी भी गोपसुन्दरी के भवन में दधि-दुग्ध-नवनीत का सुवास पाते ही वे खिंच कर चले जाते हैं। श्री गोवर्द्धननाथ अपने नेत्रों के नियन्ता नहीं रहे, नेत्र उनका नियमन कर रहे हैं।

अचिन्त्यलीला महाशक्ति को नीलमणि की इस ल ीला में भी लीला रचनी है। क्षीरसिन्धु के मन्थन से सुधा निकली थी। अमरवृन्द उस सुधा का पान कर तृप्त हुए थे, किन्तु उस सुधा में वह सर्वथा अनुपम सुस्वादु कहाँ , जो आभीरसुन्दरियों के दधि-दुग्ध-नवनीत में हैं। अपने इन्द्रनीलद्युति श्रीअंगों की शीतल किरणों से पुरबीथी का उद्भासित, नवजलधर कांति से सिक्त,परमदिव्य सुरभि से सुरभित करते हुए किसी गोप-सुन्दरी के घर दधि-नवनीत चुराने चल पड़े हैं। कुंचित केशकलाप, ललाट का वह केसरबिन्दु, रतनारे चंचल नयन, सुढार युग्म कपोल, अरूणिम अधर, कठुलाभूषित कम्बुकण्ठ, व्याघ्रनखराजित वक्षःस्थल, सुन्दर नाभिकमल, किंकिणीभूषित कटिदेश, निर्बाध एकाकी ग्वालिन के घर चुप चाप घुस कर प्रवेश कर गए श्रीकृष्णचन्द्र आकाश पथ से अमर-किंनर, गन्धर्व, आदि इस परम-मनोहारिणी मोहिनी लीला के दर्शन कर कृतार्थ हो रहे हैं। नवनीतहरण करने-माखन चुराने कौन आया है ? वे आये हैं, जिनके रोमकूप में-जैसे आकाश में वायुसंचारित क्षुद्र रजः कण उडते रहते

हैं, वैसे-उत्तरोत्तर दस गुणित सप्तावरणसमन्वित अक्षय ब्रह्माण्ड एक साथ घूमते रहते हैं, जिनका अन्त स्वर्गादि-लोकाधिपति ब्रह्मा, इन्द्र प्रभृति नहीं जानते, नहीं जान सकते, जोअनन्त हैं कि अपना अन्त स्वयं नहीं जानते, जिनके स्वरूप का साक्षात् वर्णन श्रुतियों नहीं कर सकतीं। नीलमणि अन्दर प्रवेश कर अपने दोनों सुकोमल हाथों में दही और माखन की हॉडी लेकर भागने लगे बाहर-खुल गयी तभी कमर में बंधे पीताम्बर की गाँठ-दोहाथ प्रकट कर कमर में खुले पीताम्बर की गॉठ लगाने लगे। तब तक ब्रजबाला ने आकर ज्योंहि श्री कृष्ण को पकड़ने का प्रयास किया उसकी बड़ी-बडी अँखियन में दही का कुल्ला मार कर कीक देते भाग खडे हुए नीलमणि। श्री गोवर्द्धननाथ की मधुर-मदिर माखन-चोरी की लीला की उत्ताल तरंगाकुल भाव-राशि में डूबते उतराते दैवी सम्पत्ति के अनर्धरत्न, अलौकिक भागवत लीला-भाव भावना के आभूषणों से अन्तर्वाह्य अलंकृत, महानुभावी भक्त-कवि अष्टछाप के वयोवृद्ध कुंभनदास इस साक्षात चतुर्भुजस्वरूप का विनोदपूर्ण सख्य भावना से दर्शन करते हुये पद-रचना में तल्लीन थे-''आनि पाये हो हरि नीकें भरि गंडूष छींटि नैननि में गिरिधर धाइ चले दै कीकें। ....सहसा पुत्र जन्म का समाचार उनके कर्णगोचर हुआ...जिस ''चतुर्भुज'' स्वरूप के उन्होंने दर्शन किये थे, स्मारक स्वरूप उन्होंने पुत्र का नाम ''चतुर्भुजदास रख दिया था।

महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्य के ''निरोधलक्षण ग्रन्थोक्त ''पुत्रे कृष्णप्रिये रतिः'' इस सिद्धान्त से पुत्र में कृष्णप्रियता ही कुंभनदास की पितृत्वभावना का आधार था। यह कृष्णप्रियता सेवा और कथा दोनों से ही सम्प्राप्त होती है-फलतः कुंभनदास उभयगुणों की अवस्थिति अपने किसी पुत्र में देखना चाहते थे। वे चाहते थे कि सच्चे अर्थ में पितृवात्सल्य का पात्र उनके सम्मुख आए और वह परमाराध्य प्रभु की उभय लीलाओं का रसावगाहन कर उन्हें भी उससे अभिषिक्त किया करे। कुंभनदास के प्रस्तुत सत्संकल्प की इस दिन रसस्त्रोत में डूबते–उतराते प्रभु श्री गोवर्द्धननाथ ने पूर्ति की। अपनी बाल एवं किशोर लीलाओं के सहायक सखा ''विशाल'' को ''चतुर्भुज़'' रूप में प्राकट्य कर। पुष्टिमार्गीय निकुंजलीला की अष्टसखियों में ये हैं ''विमला'' सखी। साम्प्रदायिक मान्यतानुसार प्रभु श्रीनाथजी के अनन्य सखा सदैव लीला-विहार में उनके साथ रहते हैं, श्रीनाथजी के भूतल पर अवतीर्ण होने के कारण, उनकी सेवा करने के लिए प्रकट हुए। गिरिगोवर्द्धनराज की तलहटी में श्रीनाथजी स्वामिनीजू सहित अहर्निश नित्यलीला करते हैं। अष्टछाप के कवि दिन और रात में सखा और सखी के रूप में सदा संग संग रहते हैं।

पुष्टिमार्गीय संयोग-विप्रयोग उभयदलात्मक भक्ति का विकास जगद्हितार्थ एक क्षेमंकर परिणाम है। श्रीहरि की नामात्मक लीला का सैद्धान्तिक प्रचार श्री महाप्रभु का विशेष आयोजन है तो स्वरूपात्मक लीला का क्रियामय आयोजन श्रीप्रभुचरण की देन है। एक संयोग के संश्लिष्ट स्वरूप हैं तो दूसे विप्रयोग के वपुष्मान आदर्श। यही कारण है कि उभय के चार-चार शिष्यों के सम्मिलित रूप में अष्टछाप की स्थापना की गई। यही आठ भक्त वैष्णव ऐसे थे जो सख्यभाव की अनुभूति एवं अभिव्यक्ति में अपनी तुलना नहीं रखते थे। इन्हीं में थे पिता-पुत्र : कुंभनदास एवं चतुर्भुजदास।

अष्टछाप में समावेश के लिए नवविधा भक्ति के अन्तर्गत सख्य भाव की अपेक्षा होती है। सख्य भावभिव्यक्ति में काव्यमयी पद रचना और संगीत साधना की विशेष कारणता है तो तदर्थ सत्संग, शिक्षा एवं अनुभव की परिपक्वता भी उपादेय होती है-जो कम सेकम कैशोर और तारूण्य की संधि में संभव है। ऐसे शुभ काल-कर्म हेतु गो. श्री विट्ठलेशप्रभुचरण ने चतुर्भुजदास को वैष्णव धर्म दीक्षा में आत्मनिवेदन दीक्षा प्रदान की अपनी अहैतुकी कृपा से। आत्मनिवेदन के समय बालक चतुर्भुज की हाव-भाव चेष्टा से गुसाईं जी अत्यधिक आह्लादित हुए। उन्होंने कुम्भनदास को सम्बोधित कर कहा : ''या पुत्र सों तुम को बहोत ही सुख होयगो। तुम्हारे मन में जैसो मनोरथ है सोई सिद्ध होयगो। ''आगे चलकर विट्ठलेश प्रभुचरण का यह आशीर्वचन सफल हुआ। चतुर्भुजदास परम भगवदीय वैष्णव हुए जहाँ, वहीं वे ''परस्परं त्वदगुणवादसीधुपीयुषनिर्यापितदेहधर्माः ''के प्रत्यक्ष उदाहरण भी सिद्ध हुए।

पितृ-शिक्षा, भगवद्भक्तिमय संगीतात्मक चतुर्दिक वातावरण, अहर्निश भगवत्प्रसंग-चर्चा, साधु-समागम, प्रभु श्रीनाथजी की नित्य नवीन सेवाप्रणाली एवं विविध मनोरथों के दर्शनोपरान्त श्रीप्रभुचरण के उपदेशामृत ने संस्कारी बालक चतुर्भुजदास पर जो प्रभाव डाला वह उनके लिये अमृतकल्प हो गया। स्वल्प वय में ही उन्होंने जो वीतरागिता, भक्ति-प्रवणता एवं लीला-सम्बन्धी तन्मयता अधिगत की वह बहुत कम अन्यत्र दृष्टिगोचर होती है। वे तपे हुए रससिद्ध-लीला प्रवीण भक्त सिद्ध हुए।

भारतीय दर्शन की प्रकृति की एक संक्षिप्त, सुबोध, सारगर्भित व्याख्या है। सांख्य परम्परा केन्द्रित है दुःख में, ताप-त्रय की एकान्तिक और आत्यन्तिक विकृति में ही इसका पर्यवसान दिखाई देता है। हीनयानी बौद्ध कहते हैं-''सब्बं दुक्खम्। को नु हासो, किमानन्दो, सब्बं पज्जलिते सति।'' वेदान्त की चेतना में ''जगन्मिथ्या'' का

स्वर भी गूंजता है। किन्तु भक्ति परम्परा में भगवान की मोहिनी छवि ही सर्वत्र विलास करती है-" मत्त : परतरं नान्यत किंचिदस्ति धनंजय।" सतत्, अखंड, प्रतिक्षण, प्रतिश्वास, प्रतिपग श्रीकृष्ण मुखारविन्द में, मन का मधुर रूप में विमुग्ध रसिक होकर रसास्वादन करना ही तो पूर्ण-समर्पण है।

अष्टछाप के अन्य महानुभावी कविभक्तों की परमानन्द दायिनी संगीत लहरी, देवरति-विषदिणी काव्यधारा, सदाचार-साधना से चतुर्भुजदास में एक ज्योतिर्मयी आभा प्रकट हुई, जिससे स्वल्प वय होने पर भी उन्हें अष्टछाप में स्थान प्राप्त हुआ-ये श्री गोवर्द्धननाथजी के श्रृंगार के समय कीर्तन-सेवा के अन्यतम कीर्तनिया नियुक्त किये गये। भगवल्लीलानुसंधान में इन पर गुरुचरण श्री गुसाईं की अनुकम्पा-प्रसाद पूर्णरूपेण प्रतिफलित हुई।

किसी ने नहीं जाना-ब्रजेशतनय ने बंशीवादन की शिक्षा कब, किससे ली। एक दिन सहसा वह अमृतपूर-प्रवाह बह चला एवं समस्त ब्रज वासी उसमें विमग्न हो गये। कुछ क्षणों के लिए सबकी चेतना विलुप्त हो गयी। जब ये प्रकृतिस्थ हुए, तब भी अपने-आप निर्णय नहीं कर पाये कि यह क्या वस्तु है। कतिपय गोपसुन्दरियों ने अवश्य देखा-प्रस्फुटित पीतझिण्टी पुष्पों की झुरमुट को परिवेष्टित कर गोपशिशु आनन्द कोलाहल कर रहे हैं और उसके अन्तराल में अपने को छिपाये, अपने बिम्बारुण अधरों पर हरित बाँस की बंशी धारण किये श्री यशोदा के नीलमणि स्वर भर रहे हैं। अपलक नेत्रों से जड़ पुत्तलिका की भाँति वे तो खड़ी-खड़ी देखती रह गयीं। पर उनके प्राणों की अनुभूति का स्पर्श पाकर मानो पवन पुन : द्विगुणित चंचल हो उठा और उसने ही क्षण भर में विस्तृत ब्रजपुर में, ब्रजपुर के प्रत्येक आवास, में आवास के कोने-कोने में यह सूचना भर दी कि यह तो ब्रजरानी के नीलमणि की-नन्दनन्दन श्री कृष्णचन्द्र की बजाई हुई मोहन बंशीध्वनि है।

यह ध्वनि वृन्दावन को झंकृत करके ही नहीं रह गयी। अन्तरिक्ष को भी आत्मसात करने ऊपर उठी, पाताल को प्रकम्पित करने नीचे चली गई। उधर तो मेंघसमूह सहसा रूद्ध हो गये। स्वर्गायक तुम्बरू की दशा विचित्र हो गयी, आश्चर्य में निमग्न विस्फारित नेत्रों से बारंबार वृन्दावन की ओर झांककर वह इस उन्मद नाद क़ा अनुसंधान पाना चाहता था। समस्त ब्रह्माण्ड का भेदन करती हुई यह ध्वनि सर्वत्र परिव्याप्त हो गयीं। सब ओर रससिन्धु उमड़ चला। यमुना-पुलिन मोहन-वंशी नाद से निनादित होने लगा। श्री गुसाईं जी की कृपा से प्रभु श्रीनाथजी ने लीला का अनुभव चतुर्भुजदास को भी कराया। वे गा उठे-

''जमुना के तीर बजाई बाँसुरी नंदलाल री।
अधर करन मिलि सप्त सुरन सौं उपजत राग रसाल री।।
छूटी लट लपटात बदन पर टूटति मुक्ता माल री।
ब्रज बनिता धुनि सुनि उठि धाई रहिय न अंग सम्हाल री।।
बहत न नीर समीर न डोलत वृंदाविपिन संकेत।
सुनि थाबर अचेत चेत भए जंगम भए अचेत री।।
अफल फले फल फूल भए री जरे हरे भए पात।
उमगि प्रेम जल चल्यो सिखिर तें गर्‌यो गिरिनि कौ गात री।।
तृन न चरत हैं मृगा-मृगी री तान परी जब कान।
सुनत गान गिरि पर्‌यौ धरनि पर मानों लागे बान री।।
सुरभी लाग दियो केहरि कों हरत स्त्रवन ही डारु।
एड भवग फुनि चढि बैठे हैं निरखत श्री मुख चारु री।।
खग रसना रस चाखि बदन पर बैठे निमिषनि मारि।
चाखत ही फल परे चोंच तें रहे जु पंख पसारि री।।
सुर नर देव असुर नर मोहे छायो व्योम विमान।
''चत्रभुज'' दास कहे कौन बस या मुरली की तान री।।''

सरल-सख्य रसभावित, कोटि-कोटि-प्राणप्रिय कन्हैया गोपशिशुओं के साथ गिरिराज-परिसर में गोसंचाराण करते हुए विभिन्न क्रीड़ा की अवतारणा कर रहे हैं। बाल गोपाल का गोसंचारण कितने शतशहस्त्र पुनीत प्रेमिल रसमय चरितों के संस्मरण से नित्य पूर्ण है। आनन्दविभोर हो कर चतुर्भुजदास के मन में प्रभु श्रीनाथ की इस लीला की स्फूर्ति होने लगी-बस उसका गायन अपनी विलक्षण प्रतिभा से रच कर वह गा उठे-

''गोविन्द गिरि चढि टेरत गाइ।
गांग बुलाई धूमरि धौरी टेरत बेनु बजाइ।।
श्रवन नाद, अरु मुख तृन धरि सब चितई सीस उठाइ।
प्रेम सुभर व्है हूक मारि चहूँ दिसि तें उलटीं धाइ।।
''चत्रभुज'' प्रभु पट पीत लियौ कर आनंद उर न समाइ।
पोंछत रेनु धेनु के मुख तें गिरिगोरबर्द्धनराइ।।''

अन्तरिक्षचारी अमरगण देखते-ब्रजेन्द्रनन्दन की पुकार सुनते ही गायों ने तत्क्षण अपने मुख का अर्धचर्वित तृणग्रास उगलकर सिर को ऊपर उठा लिया

प्रेमविवश हुई एक साथ सब-की-सब हाम्बारब कर उठीं तथा प्राणों का सम्पूर्ण बेग लगा कर दौड चलीं अपने नित्यपालक नन्दनन्दन के समीप। और नन्दनन्दन-जय हो गिरिगोवर्द्धनराय की उस प्रेमाधीनता की। वे आनन्द विह्वल होकर अपने पीताम्बर से गायों के मुख पर लगी हुई रज को पोंछते हैं। गायों की आँखें छल-छल करने लगती हैं। विमानचारी देववर्ग का हृदय भी भर आता है। धन्य है करूणावरूणालय की अहेतुकी कृपा।

लीला-चर्चा, अनुपमेय, अकथनीय, अवर्णनीय वेणु-ध्वनि ही थी। कल्पना के लिए स्थान कहाँ हृदय में ? प्रत्यक्ष का, समीपतम का, द्युतिका , छवि का, महाकोमल छवि का, महाकोमल छवि नील पुंज को समर्पित मन में कल्पना का अन्धकार कैसे हो सकेगा ? लीला ही श्रोतव्य है, लीला ही दृष्टव्य है, यही अब चतुर्भुजदास को अनुभव-जन्य है। लीला माधुर्य चर्चा, विस्मृति के लिए अवकाश देने वाली ही नहीं है। प्रत्यक्ष यथार्थ, इच्छित, नित्य अखण्डित नवनूतन चर्चा-अमोघ, अपार, असीम, अनुपमेय, मनोमूल अनुरंजित, माधुर्यमयी, अविचलित लीला-स्मृति की बातें ही प्रतिक्षण श्रुत, प्रतिक्षण सुलभ, प्रतिक्षण लब्ध, लुब्ध दोनों की नव-नव लीला है।। प्रतिक्षण, गतक्षण प्राप्त विलक्षण, ततसुख से सुखी रहने के स्वरूप से सहज समास्वादित प्रियतम की निरूपमामयी उन्मादनीय चर्चा की ही रूपमाधुरी में समासक्त अनुरक्त होकर श्री गिरिराजधरन का यशोगायन ही अवकाश नहीं देता चतुर्भुज को-

''माई री आजु औरु काल्हि औरु प्रति छिनु औंर हि औरु
देखिये रसिक गिरिराजधरन।
नित प्रति नव छवि बरनें सो कौन कवि
नित हीं सिंगारु बागे बरन बरन।।
स्याम तन अंग अंग मोहत कोटि अनंग
उपजी सोभा तरंग विश्व के मनु हरन।
''चत्रभुज'' प्रभु कौ रूप सुधा नैनपुट
पान कीजै जीजै रहिये सदाई सरन।।

श्री प्रभुचरणपाद ने वैष्णवों के समक्ष इस पद का मर्म प्रकट करते हुए कृपा-पूर्वक कहा-''भगवल्लीला में विलक्षणपणो येई है जो नित्य है, क्षण क्षण में नूतन लागत है और लीलास्थ जीवन कूँ और लीला के दर्शन करके वारेनकूँ क्षणक्षण नूतन लगत है और नूतन रुचि उपजे है।

चतुर्भुजदास श्री प्रभुचरणपाद के ऐसे कृपापात्र थे जिनको

श्री गिरिगोवर्द्धननाथ की नित्यलीला का सर्वत्र अनुभव होता था।अन्य किसकी सामर्थ्य है, जो ठीक-ठीक चित्रित कर दे चिदानन्दमय की लीला-क्रीड़ा को परम प्रेममय रसधाम में-जिसे परमपद, परमव्योम आदि नामों से पुकारा जाता है, ऐसे महामधुर रसमय परमधाम गिरि-गोवर्द्धन की रसभरी विविध कुंज निकुंजों में सखी समूहों सहित युगलवर किशोर-किशोरी श्री राधाकृष्ण बिहारी-विहारिणी का विहार रस सतत एकरस, नित्यनूतन, परिवर्धमान, उच्छलित तथा दिव्य ऊर्मियों से लहरान्वित है। "रसो वै सः", रसरूप-रसिक् का यह विहार महामधुर रसयुत दिव्य आस्वाद से भरा हुआ, परस्पर रसमत्त प्रमत्त-उन्मत्त बनानेवाला एवं अत्याश्चर्य-अनुरागमयी तीव्र-उत्कंठा से युक्त है। महाभाव-रसराज का यह विचित्र विलास-रससिंधु अनन्त क्रीड़ामयी तरंगों से नित्य तरंगायमान रहते हुए अपनी कायव्यूह रूपा सखीगणों को दिव्यप्रेम रसानन्द से मत्त-प्रमत्त एवं अति उत्कंठित रखता है। अद्भुत श्याम प्रेम की अचिन्त्यता का मूर्तमान रूप है, वर्णनातीत है, मूकास्वादनवत। तथापि रस कणिका उच्छलित होना सहज स्वाभाविक है :

"अद्भुत नट-भेखु धरें जमुना तट स्याम सुंदर
गुन निधान गिरिबरधर रास-रंगु नाचैं।

जुबति-जूथ संग मिलि गावत केदार रागु
अधर बेनु मधुर-मधुर सप्त सुरनि साँचें।।

उरप-तिरप लाग-डाट तत-तत-तत-थेई-तथेई-थेई
उघटत शब्दावलि गति भेद कोउ न बाँचें।

"चत्रभुज" प्रभु बन बिलास मोहे सब सुर अकास
निरखि थक्यो चंद-रथ हि पच्छिम नहिं खाँचें।।"

गिरि-गोवर्द्धन की तलहटी के ग्राम परासोली में उस रात हुये रासधारियों के रास के उपरान्त जब श्री गोकुलनाथजी ने चतुभुर्जदास को आज्ञा करी कुछ गाने की तब चतुर्भुजदास ने निर्भीक उत्तर फटाक दे डाला-" मेरे सुनबे बारे श्री नाथजी नहीं पधारे हैं जासूँ मैं कैसे गाऊँ। "श्री गोकुलनाथ जी ने कहा "श्रीनाथजी अभी पधारेंगे"। श्री गोकुलनाथजी की बात सत्य करने के लिए अथवा अपने परमसखा चतुर्भुजदास का गायन सुनने के लिए श्रीनाथजी प्रेमविह्वल हो परासोली पहुँच गये। चतुर्भुजदास ऐसे कृपापात्र थे कि प्रभु श्रीनाथजी के बिना अन्यत्र गायन नहीं करते। श्रीनाथजी के केवल चतुर्भुजदास को और श्री गोकुलनाथजी को ही दर्शन हुए, अन्य किसी को नहीं। रात भर

रास में जग कर अपनी ही अचिन्त्यलीला का गायन चतुर्भुज-सखा के मुख से सुनते रहे अनाथ-नाथ प्रभु श्रीनाथ।

चतुर्भुजदास समय-समय पर विविधलीला, उत्सव, भावना के पदों की रचना कर अपनी काव्य प्रतिभा को पूर्णशिखर पर पहुँचा कर लोक में धन्य हो गए। भगवत्सामुख्य ही उनके जीवन का लक्ष्य था। वे उसके बिना शतशः अगणित मनस्ताप से पीडित हो उठते। जिसने उनकी हृदय की कोमल भावना पर आघात कर विप्रयोगावस्था के अनुभवजन्य विरह के पद गाने को उन्हें विवश कर दिया। प्रभु श्रीनाथजी के (सं.१६२३ में) मथुरा पधार जाने पर मंदिर में उनके दर्शन न होने पर श्री चतुर्भुजदास ने "बात हिलग की कासों कहये", "गोवर्द्धनवासी साँवरे लाल तुम बिन रह्यौ न जाई", "तब तें जुग समान पलु जान" आदि पदों में उत्कण्ठा मिश्रित विरहानुभूति का जो प्रत्यक्ष दर्शन कराया है, वह रससिद्ध कवि के सिवाय अन्य की सामर्थ्य के बाहर है।

स्वकीय गुरुचरण श्री विट्ठलनाथजी और आराध्यदेव श्रीनाथजी में चतुर्भुजदास को एकात्मभाव के दर्शन होते थे। प्रभुचरण का वियोग उनके जीवन की ऐसी रिक्तता थी, ऐसे अभाव का साक्षात्कार था, जिसकी पूर्ति असंभव थी। ज्योंही (सं १६०२ फाल्गुन कृष्ण ७ के दिन) श्री गुसाईं जी के इहलीला-तिरोधान का उन्हें पता लगा, वे विरह-निमग्न हो गये। विषम विरह वेदनोत्पादक इस वृत्त को सुन कर वे आन्यौर ग्राम से श्री गोवर्द्धन आए। प्रभु श्रीनाथजी के दर्शनोपरान्त कुछ विरह के पद गाते हुये अपनी मानसिक वेदना को साकारता प्रदान करते हुए तल्लीनता प्राप्त की। "श्री विट्ठलनाथ सौ प्रभु भयो न ह्वै है।" पद का अन्तिम चरण "श्री वल्लभसुत दरसन कारन अब सब कोउ तपै है। "चत्रभुजदास" आस इतनी जो उहि सुमिरन जनम सिरै है।" के उच्चारण के साथ ही रूद्रकुंड पर इमलीवृक्ष के नीचे इनकी इह-लीला समाप्त हो गई। वे दिव्य यशः कलेवर पाकर भगवत्सख्य-भाव का साक्षात अनुभव करने में जागरूक हो गए। "अष्टछाप" से उनमें और उनसे अष्टछाप में ऐसी परिपूर्णता आई जो हिन्दी साहित्य की अमर अप्रतीक निधि बनकर युग-युगान्तर तक आदरणीय रहेगी। "कृष्णाय कृष्णभक्ताय तद्भक्ताय नमो नमः

—नेह-निकुँज, एस ०-१/१२, कैलाशनगर,
श्रीधाम, वृन्दावन

बालकृष्ण के बालसखा चतुर्भुज

✍ हरिनारायण नीमा

यशोदोत्संग ललित सौन्दर्य सुधा सिन्धु बालकृष्ण की बालकेलि के दर्शन और तदनरूप हृदय की कोमलतम अनुभूतियों का सामंजस्य समन्वित लीलागान बालकवि चतुर्भुजदास ने किया है। 'अष्टछाप' में सबसे कम वय में आने वाले चतुर्भुजदास पर प्रभुचरण गो. श्री विट्ठलनाथ जी की कृपा तो मुख्य थी ही उनके पिता रसकंद कुंभनदास का भी वरद हस्त सिर पर था।

घर का सात्विक वातावरण, गायकी, त्याग, अपरिग्रह भगवत सेवा और पुनीत ब्रजभूमि में निवास आदि कई कारक भी थे जिसके कारण उन्हें श्री नाथ जी के भयतापहारी पादारविन्द नखमणि चन्द्र की चन्द्रिका का प्रकाश प्राप्त हो गया था।

चतुर्भुजदास प्रभु के 'विशाल'' सखा के स्वरूप माने गये हैं। उनकी विप्रयोगात्मक सख्य भक्ति थी। कीर्तनों में बाललीला के वर्णन में इनकी अधिक रुचि थी। श्री ठाकुर को जगाने का उनका यह पद कितना 'मनोमय' है, रसपान कीजिये-

''भोर भयो जसोदाजु बोली, जागो मेरे गिरिधरलाल।
रतन जटित सिंहासन बैठो, दर्शन को आई, ब्रजबाल।
नियरे आय सुफेती खेंचत, बहोर्यो दंपत बदन रसाल।
दूध, दही, माखन, बहुमेवा, कामिनी भर भर लाई थाल।
तब हरषित गादी उठ बैठे, करत कलेऊ तिलक दे भाल।
दे बीरा आरती उतारत'' ''चतुर्भुजदास गावें गीत रसाल।''

विक्रमाब्द १५८७ से लेकर १६४२ तक ५५ वर्ष की आयु उन्होंने प्राप्त की थी। कितनी यथार्थता है इस पुरुषोत्तम भाषा में व्यक्त भावनाओं में-

'जो कोई कोटि कल्प लग जीवे, कोटिक रसना पावे।
तो यह रुचिर वदनारविन्द की, शोभा कहत न आवे।''

चतुर्भुजदास के अब ४०० से अधिक पद प्राप्त हैं , इनके पदों में तीन छाप मिलती हैं यथा (१) दास चत्रभुज (२) चत्रभुज चतुर्भुजदास

श्री विट्ठलेश्वर प्रभुचरण ने कुंभनदास जी को आशीर्वाद देते हुए कहा था -

''या पुत्र सों तुमको बहुत सुख होयगो, तुम्हारे मन में जैसों मनोरथ है, सोई सिद्ध होयगो।

वस्तुत : वाणी, विचार, विवेक और व्यवहार आदि का संगम जहां होता हैं वहीं भक्ति और मुक्ति का पथ स्वयं प्रशस्त हो जाता है।

अनंत की रंग भूमि पर रंग खेलते हुए श्री गोसाईजी सात बालक और आठ सखाओं को अग्रांकित पद में कितने सुन्दर भावों के साथ चित्रित किया गया है-रचना है श्री कृष्णदास जी अष्टसखा की।

''खेलत बसंत विट्ठलेशराय, निज सेवक सुख देखे आय।
श्री गिरिधर राज बुलाय, श्री गोविन्दराय पिचकारी लाय।
श्री बालकृष्ण छवि कही न जाय, श्री गोकुलनाथ लीला दिखाय।
श्री रघुनाथ अरगजा अंग लगाय, श्री यदुनाथ छिरकत रंग गुलाल।
श्री घनश्याम धाम फेंट न भराय, सब बालक खेलत एक ठाम।
तहां सूरदास नाचत है आय, परमानंद ढोरे गुलाल लाय।

चतुर्भुज केशर माटन भराय, छीतस्वामी बूका फेंकत हो आय। नंददास निरखे छवि कही न जाय, गावें कुंभनदास वीणा बजाय, सब बालक गोविन्द गिरि पै धाय,

कोऊ नाचत देह की दसा भुलाय।
सब बालक हो-हो बोलत आय, उड्यो अबीर गुलाल घूमर मचाय।
पिचकारी इत उत छिटकै जाय, कोऊ फेंकत फूलन अपने बाय।
कोऊ चोबा ले छिटके बनाय, बाजै ताल मृदंग, उमंग भाय।
बिच बाजत मुरली चंग गाय, सब बालक भीने रंग चुचाय।
गोकुल घर-घर सुख हि छाय, शोभा कहा कहूँ कहि बनाय।
यह सुख सेवक हि देखे आय, सुरगन कुसुम तहं बरखैं आय।
तहां ''कृष्णदास'' बलिहारी जाय।।''

पद में 'बसंत' साकार हो गया है, ऐसा लगता है अंतर के रंगो से अभिभूत पीत वस्त्र से आवृत बसंत कलश छलक रहा हो, मन के उपवन में विकसित सुरक्षित अम्लान पुष्पों को बिखेर दिया हो। अनुराग ने साकार स्वरूपधारण किया हो।

बाल कवि ने प्रभु की विविध लीलाओं का गान किया है, विरह जनित पदों में उनके हृदयगत भावों का ही प्रकटीकरण हुआ है। कवि श्री के मनरूपी मृग को मोहनलाल ने नयन वाणों से आहत कर दिया था।

अपने ग्राम जमुनावता में चिन्तनरत चतुर्भुजदास को जब पता लगा कि श्री विट्ठलनाथ जी महाराज (गुसाईं जी) सदेह गोवर्द्धन की कंदरा में प्रवेश कर गये तो उनके धैर्य का बांध टूट गया अत्यन्त व्याकुल अवस्था में दौड़े दौड़े आये और कंदरा के आगे गिर पड़े। मूर्च्छा दूर होने पर यह 'विरह पद' उन्होंने गाया-

''फिर ब्रज बसहु श्री विट्ठलेश''
श्री बल्लभ नंदन दुःख निकंदन, सुनहु सुचित संदेस।
चतुर्भुज प्रभु या कुल कौ, हरहु सकल कलेस।।

अपने कुल की परंपरा को आगे बढ़ाने वाले को 'कुलदीपक' कहा गया है, सही अर्थों में चतुर्भुजदास कुलदीपक थे। त्यागी, विरागी और प्रभुचिन्तक।

–साभार 'वल्लभभस्वर' २००१ जुलाई

अष्टछाप में चतुर्भुजदास

✍ डा. सुषमा शर्मा

शोधपरक दृष्टि से देखें तो यह कह सकते हैं कि कवि परंपरा का प्रारंभ ब्रह्मा से ही हुआ। वेद तो ब्रह्मा को ही कवि मानता है। अत : कवियों का कवि ब्रह्मा है। जिनका श्रव्यकाव्य वेद है और दृश्यकाव्य ब्रह्मांड। भक्ति धर्म के इतिहास में दो प्रकार के भक्त मिलते हैं, एक गायकों के रूप में और दूसरे आचार्य के रूप में। कृष्णकाव्य में श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य एवं गोसाईं विट्ठलनाथजी आचार्य की दृष्टि में उल्लेखनीय हैं, तो अष्टछाप भक्त कवि गायकों के रूप में। इन गायक भक्त कवियों की भक्ति में प्रेम, उल्लास, भावप्रवणता सहजता आदि गुण हैं। भक्ति एक भावना है जिसका आश्रय है भक्त का हृदय और आलंबन है, प्रभु। इस प्रकार भक्त, भक्ति और प्रभु तीन प्रमुख अंग हैं, जिसने भक्तिकाव्य को व्यापकता दी है। भक्तिकाव्य में प्रभु का स्वरूप है, विविध गुणों का प्रतिपादन है। हमारी नवधा भक्ति में कीर्तन का महत्व है, अतः कीर्तन में प्रभु का लीला गान है। अष्टछाप भक्त कवि कीर्तनकार थे। जिन्होंने प्रभु की लीलाओं का गान किया, उसके स्वरूप को, माहात्म्य को दर्शाया। विभिन्न राग-रागनियों में वाद्ययंत्रों के साथ इन अष्टछाप भक्त कवियों के पद मंदिरों में आज भी तन्मयता से आत्मविभोर होकर, गाए जाते हैं। लीलागान का उद्देश्य ही है अखंड आनंद के साथ आध्यात्मिक परिपूर्णता।

हमारे यहां कई संप्रदाय हैं जिनमें एक है पुष्टिमार्ग। जिसके प्रवर्तक महाप्रभु वल्लभाचार्य हैं तत्पश्चात् गोसाईं विट्ठलनाथजी ! इन्होंने पुष्टिमार्ग में ब्रह्मसम्बन्ध की दीक्षा दी। इस बात को प्रमाणित कर दिया कि पुष्टि अर्थात् अनुग्रह। शुद्धाद्वैत की स्थापना कर ब्रह्मसत् चित् और आनंद के रूप को सर्वव्यापक कहा। यह भी स्पष्ट कर दिया कि "श्री कृष्ण शरणम् ममः" अर्थात् अष्टाक्षर मंत्र में दर्शन और रहस्य है। जिसमें ब्रह्म के गुणों का आविर्भाव होता है, यह सब कुछ उसकी रचनात्मक शक्ति का परिणाम है। समर्पण की भावना ही पापों का निराकरण करती है। आदि भौतिक, आदि दैहिक, आदि दैविक के दुःखों का हरण करने की क्षमता है। जन्म, मरण के दुख का निवारण अहै। प्रभु सम्बन्धी ज्ञान देने की शक्ति है, दृढ भक्ति का विचरण करने की शक्ति है। प्रभु की सेवा भी प्रेम से होती है। प्रभु में इतनी निकटता आजाती है कि भक्त कोप्रभु के शरण में रहना ही स्वीकार है। किसी प्रकार से मोक्ष नहीं चाहता

न पुनर्जन्म की कामना! केवल प्रभु की निकटता, उसी में रमना, रिझना, रिझाना! इस मार्ग में, स्वरूप सेवा है, चाहे बालभाव हो या राधाकृष्ण का भाव हो, अतः इस मार्ग को कृपा मार्ग कहें तो अधिक स्पष्ट हो सकता है। ब्रह्म स्वरूप कृष्ण के अनुग्रह से ही अनुभूति होती है। यही अनुग्रह "पोषक" है।

अष्टछाप के भक्त कवियों की स्थापना महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने और गोसाईं विट्ठलनाथजी ने की। पुष्टि संप्रदाय की भावना के अनुसार ये अष्टछाप भक्त की लीलाओं का उभय स्वरूप उनकी लीलासक्ति और अधिकृत द्वारों के विवरण से होता है। अष्टछाप परिचय से उद्‌घृत् इस कोष्ठक से यह सिद्ध कर सकते हैं

	अष्टसखा	लीलात्मकरूप	लीलासक्ति	अधिकृतद्वार
१	कुंभनदास (अर्जुनसखा)	विशाखासखी	निकुंजलीला	आन्यौर
२	सूरदास (कृष्णसखा)	चंपकलतासखी	मानलीला	चंद्रसरोवर
३	परमानंद (तोकसखा)	चंद्रभागा सखी	वाललीला	सुरभिकुंड
४	कृष्णदास (ऋषभसखा)	ललिता सखी	रासलीला	बिलछू कुंड
५	गोविंद स्वामी (श्रीदामासखा)	भागा सखी	आंखमिचौनी	कदम्बखंड
६	छीत स्वामी (सुबलसखा)	पद्‌मा सखी	जन्मलीला	अप्सराकुंड
७	चतुर्भुजदास (विशाखासखा)	विमला सखी	अन्नकूटलीला	रुद्रकूट
८	नंददास (भोजसखा)	चंद्ररेखा सखी	किशोरलीला	मानसी गंगा

गिरिराज निकुंज के आठ द्वार है। अष्टछाप भक्त इन द्वारों के अधिकारी माने जाते हैं। ये लौकिक लीलाओं में भौतिक शरीरों से इन द्वारों पर स्थिर रहते और लीला की समाप्ति पर भौतिक शरीरों को त्यागकर अलौकिक रूप से नित्यलीला में लीन हो जाते। इन्हें श्रीनाथजी का सक्षात्कार भी प्राप्त था।

इन अष्टछाप भक्त कवियों के विषय में इतिहासकारों ने भी उनकी विशेषताएं बताकर भक्तिकाल के साहित्य को उजागर किया है। जैसे-महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के शिष्य शिरोमणि सूरदास को पुष्टिमार्ग का जहाज कहा। नंददास के विषय में कहा जाता है "और कवि गढिया नंददास जड़िया।" परमानंद दास को अपनी रचना के विस्तार और काव्य की उत्कृष्टता पर प्रसिद्धि मिली। कृष्णदास ने राधाकृष्ण की शृंगारी लीला के पदों की रचना कर प्रेमतत्व का निरूपण किया। कुंभनदास अच्छे गायक जिसके विषय में सुप्रसिद्ध प्रसंग की पंक्तियां हैं-"संतन कहा सीकरी सों काम" छीतस्वामी को कृष्ण के साथ ब्रजभूमि तक से विशेष प्रेम रहा जिन्होंने पुन: जन्म ब्रज में होने का निवेदन किया

'' अहो विधना ! तो सों अँचरा पसारि मांगो
जन्म जन्म दीजो मोहि याही ब्रज बसिबो''

गोविंदस्वामी ने ब्रज को छोड़ वैकुंठ जाने के लिए मना कर दिया ''कहा करें वैकुंठहिं जाय''चतुभुर्जदास जी ने तो होनहार बिरवान के होत चिकने पात'' की उक्ति को सार्थक किया। ये कुंभनदास जी के पुत्र तथा गोसाई विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। वंश परंपरागत खेतीबाड़ी छोड़ इन्होंने अपने पिताश्री के पदचिन्हों को अपनाया उनका ध्यान भजनकीर्तन की ओर अधिक रहा। उनके गुरु ने उन्हें दीक्षा दी। शैशवकाल से ही गान विद्या के ज्ञाता होकर अपनी काव्यरचना प्रारंभ की। यद्यपि इनका स्वतंत्र ग्रंथ उपलब्ध नहीं होता। इनके स्फुट पदों को ही चतुर्भुज कीर्तन संग्रह, कीर्तनावली, दानलीला शीर्षकों से माना गया है। द्वादशयश, मधुमालती, भक्ति प्रताप जैसी रचनाओं में श्रृंगार की छटा है। कृष्ण जन्म से लेकर गोपी विरह तक ब्रजलीला गान है। श्रीनाथजी के मंदिर में आज भी जो पद गाए जाते है उनमें चतुर्भुजदासजी के पद भी हैं। यहाँ पर बाललीला का उदाहरण है-

वात्सल्यरस का रूप सौंदर्य है-जिसे कहने, सुनने में ही चरम आनंद है-

''जसोदा ! कहा कहौं हौं बात?
तुम्हरे सुत के करतब मो पै कहत कहे नहिं जात
भाजन फोरि ढारि सब गोरस, लै माखन दधि खात
जो बरजौ तो आंखि दिखावै, रंचहुँ नाहिं सकात
और अटपटी कहँ लौं बरनौ, छुवत पानि सों गात
दास चतुर्भुज गिरधर गुन हौं कहति कहति सकुचात।।

चतुर्भुजदास जी के जीवन प्रसंग का यह उदाहरण भी दृष्टव्य है जब उन्होंने अंत समय में सूरदास से प्रश्न पूछा था और उसका उत्तर भी-

''जो सूरदास तुम बिन अलौकिक भाव कौन दिखावै, जो अब थोरे में श्री आचार्य जी को यह पुष्टिमार्ग है ताकौ सरूप सुनावो, सो कौन प्रकार सों पुष्टिमार्ग के रस कौ अनुभव करिये'' सूर ने निम्नांकित पद को गाकर प्रश्न का निराकरण किया

''भज सखि भाव भावहि देव,
कोटि साधन करौ कौऊ तौऊ न मानै सेव।
धूमकेतु कुमार भाग्यौ कौन मार्ग प्रीति,
पुरुष तेतिय भाव उपज्यौ, सबै उलटी रीति।

बसन भूषण पलटि पहरे, भाव सों संजोय।
उलटि मुद्रा देई अंकन, वरन सूधे होय
वेद विधि कौ नेम नहिं जहां प्रेम की पहिचान
ब्रज वधू बस कियौ मोहन, सूर चतुर सुजान
वह पद सूरदासजी ने सारे वैष्णवों को सुनाया

–सूरदास कौ वार्ता प्रसंग

चतुर्भुजदास का समय भी भक्ति उत्थान का था अतः भक्ति का अभियान इन्होंने संगीतकला से जोड़ा और विभिन्न राग रागनियों से पूरे ब्रह्मांड को कृष्णमय बना दिया। इनके पदों में गुणात्मकता है। प्रभु के प्रति अनुराग की अभिव्यंजना हैं। हर पद भावभूमि से उत्पन्न होकर रस भूमि के रसतल तक पहुंचने में सक्षम है। भाव विभोरता से भरे शब्द अठखेलियां खेलते हैं। भक्ति के तीन स्वरूप हैं। १ सख्य भक्ति २ वात्सल्य भक्ति ३ मधुरा भक्ति इन तीनों का स्वरूप चतुर्भुजदास के पदों में यत्रतत्र है। वात्सल्य भाव में कृष्ण का बालसुलभ और मैया यशोदा के ममत्व की झलक मिलती है। अष्टछाप भक्त कवियों ने प्रभु एवं गुरु से साक्षात् दर्शन कर श्री कृष्ण की लीलाओं की अनुभूति की। उन अनुभूतियों की लीलाओं के आधार पर श्रीनाथजी की अष्टयाम सेवा, उत्सवों से संबंधित सुंदर पदों की रचनाकर विभिन्न राग रागनियों में कलात्मकता दी है इन्हीं में चतुर्भुजदास भी हैं। ब्रजभाषा द्वारा रचना कर यह सिद्ध कर दिया कि यह कोई एक दिन की गढ़ी भाषा नहीं बल्कि तन्मयता, तल्लीनता से मुखरित भाषा ने नये प्राण दिए हैं। गीतिशैली में भावात्मकता है, संगीतात्मकता है, वैयक्तिकता है, संक्षिप्तता है आनंद और उल्लास का गुण है। इनका साहित्य आत्मप्रेरणा का सेतु है जिसका सृजन सर्वांत सुखाय है स्वान्तः सुखाय है और मानवता, भावात्मकता का, और सांस्कृतिक एकता का भाव है। प्रेम लोक की विविध भावदशाओं का सूक्ष्म से सूक्ष्म परीक्षण है, जिन्हें देखकर कहना होगा ''न भूतो न भविष्यते''! अष्टछाप भक्त कवियों का साहित्य जनमानस के जीवन का नया आलोक है, जहां आशा, आकांक्षा और समर्पण हैं। हर पद आत्माभिव्यक्ति है। हृदय, मन और आत्मा की प्यास को तृप्त करता तो है पर वह तृप्ति पूरी नहीं होती अपितु नेति ! नेति! कहने के लिए विवश करती हैं। चतुर्भुजदास जी के पद भी इस कथन की पुष्टि करते हैं, जो ''तमसों मा ज्योतिर्गमय'' के पर्याय हैं। जीवन की सहज छटा, घटा को कलाप्रियता का बोध कराती आत्मा को झंकृत कर, कृष्णमय बना देने में सक्षम है।

–'प्रेम मंजरी' डी-२० चोमू हाउस, जयपुर

अष्टछाप के कनिष्ठ कवि चतुर्भुजदास

✍ रामनारायण अग्रवाल

अष्टछाप के कवियों में गोस्वामी विट्ठलनाथ जी ने अपने चार प्रमुख गायक और कवि शिष्यों को सम्मिलित किया था, जिनमें काव्य रचना के क्षेत्र में कविवर नंददासजी और गायन के क्षेत्र में गोविंदस्वामी सर्वोपरि थे, परन्तु इन भक्त कवियों में संभवतः श्रीचतुर्भुजदास जी सबसे कनिष्ठ थे। वे अपने पिता श्री कुंभनदास के सत्संग के कारण जन्मजात भक्त कवि के साथ-साथ कुशल गायक के रूप में अवतरित हुए। गो. विट्ठलनाथ जी ने बचपन में ही दीक्षा देकर अपना आशीर्वाद प्रदान किया था। चतुर्भुजदास जी ने भी भगवान श्री नाथजी के कीर्तन गायन के साथ-साथ गुरु महिमा के अनेक पद रचे हैं। अतः गुरु के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा स्पष्ट है। हिन्दी साहित्यकारों ने यद्यपि चतुर्भुजदास जी के काव्य को वह स्थान नहीं दिया जो उन्हें मिलना चाहिए था, परन्तु उनके काव्य में जो सहजता, सहृदयता और सरसता विद्यमान है वह उन्हें ब्रज का एक महत्वपुर्ण भक्त कवि सिद्ध करती है।

गोवर्धन के समीप ही उनका गांव जमुनावतौ विद्यमान है, जहाँ पुरातत्वविदों के अनुसार कभी जमुना की एक धारा प्रवाहित होती थी, जो चीरघाट से गोवर्धन होती हुई भगवान श्री कृष्ण के जन्मस्थल का स्पर्श करती हुई वर्तमान मथुरा के कृष्णा गंगा घाट पर वर्तमान जमुना की धारा से मिलती थी और इस संगम स्थल पर भगवान कृष्ण द्वैपायन व्यास जी का ब्रज निवास काल का आश्रम था। आज भी जमुनावतौ की भूमि को खोदने पर नीचे यमुना जी की रेती के दर्शन हो जाते हैं। इसी पावननभूमि पर कुंभनदास जी का खिरक आज भी विद्यमान है जो आयातकार एक लम्बे चबूतरे के रूप में विद्यमान है और उसके ऊपर एक छप्पर पड़ा हुआ है। छप्पर के मध्य में एक छोटा सा पक्का मंदिर है जिसमे प्रिया प्रीतम के पीतल के विग्रह विराजमान हैं। संभवतः यही कुभंनदास जी का प्राचीन निवास स्थान था। यह भक्त की साधना का निजी केन्द्र रहा होगा। इसी पावन भूमि पर बालक चतुर्भुजदास ने अपनी बाल क्रीड़ा करते हुए युगल छवि की मधुरिम अनुभूति प्राप्त की होगी, जो बाद में उनकी दान, लीला, मान और प्रिया-प्रीतम की छवि वर्णन के रूप में उपलब्ध होती है। एक पद देखे-

आजु सिंगार निरख स्यामा कौ, नीकौ बनौ स्याम मन भावन।
ये छवि तनहि लखायौ चाहत, कर गहिकें नख चन्द दिखावत।।

मुख जोरे प्रतिविम्ब विराजत, निरखि निरखि मन में मुसकावत।
चतुर्भुज प्रभु गिरधर श्री राधा, अरस परस दोउ, रीझि रिझावत।

इस प्रकार आचार्य वल्लभ के आशीर्वाद से बालभाव की उपासना के पोषक वल्लभ सम्प्रदाय में उनके पिता कुंभनदासजी ने जो निकुंज लीला गायन की परम्परा स्थापित की और उनके गुरु श्री विट्ठलनाथ जी ने श्रृंगार रस् मंडन की रचना करके मधुर भक्ति को जो महत्व प्रदान किया था, उसका विकास चतुर्भुजदास की निकुंज लीलाओं के वर्णन में विशेष रूप से हुआ है। गिरिवर की सघन कन्दराओं में प्रिया प्रीतम के वर्णन की इनकी काव्य रचना की विशेषता है, जिससे अपनी जन्मभूमि गिरिराज और गोवर्धन से कृष्ण भक्ति के साथ इनके जन्म भूमि प्रेम का भी परिचय मिलता है।

चतुर्भुजदास जी से सम्बन्धित दूसरा स्थल परासोली है, जहां महाकवि सूरदास निवास करते थे उनके स्थान से कुछ दूरी पर ही कुंभनखेड़ा है। जहां कुंभनदास जी के खेत थे और उनके प्रिय पुत्र के रूप में चतुर्भुजदास जी खेती बाड़ी में उनका हाथ बटाते थे। उस प्रकार की खेती के साथ-साथ महाकवि सूरदास जी के सत्संग का लाभ भी उन्हें सहज प्राप्त हुआ होगा। चतुर्भुजदास जी ने सूर सागर की भाँति अपने पदों में अवतार लीलाओं का भी वर्णन किया है। जिनसे हमारे उक्त कथन की पुष्टि होती है। सूरदास जी ने बालकृष्ण की घुटरन चलते हुए बजती हुई पैंजनियों का उल्लेख किया है। इसी भाव का श्री चतुर्भुदास जी का पद यहां उद्धृत किया जा रहा है-

मोहन चलत बाजत पैंजनि पग

सब्द सुनत चकृत है चितवत, त्यों ठुमकि ठुमकि धरत है डग। मुदित जसोदा चितवति सिसु तन लै उछंग लावै कंठ सु लग 'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल कों ब्रज जन निरखत ठाड़े ठगठग।।

चतुर्भुजदास जी से सम्बन्धित जतीपुरा में भी दो-स्थल हैं जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण पर्वत राज गिरिराज के शिखर पर स्थित पूरनमल खत्री द्वारा बनवाया गया भगवान श्रीनाथजी का वह मंदिर है जहां अष्टछाप् के आठों कवियों की मधुर स्वर लहरी गूँजती थी और जिसने पूरे भक्ति आन्दोलन पर अपनी अमिट छाप लगाई है। चतुर्भुजदास के पदों में स्थान स्थान पर गिरिधर का उल्लेख आज भी उस युग की मधुर स्मृति को जीवंत बनाए हुए है। जतीपुरा में ही दूसरा स्थल रुद्र कुंड है, जहां चतुर्भुजदास जी सं. १६४२ वि. में अपने पूज्य गुरुदेव गो. विट्ठलनाथजी के गिरिरिज जी की कन्दराओं में प्रवेश करके लीला संवरण का समाचार पाकर अत्यन्त दुखित होकर भगवान श्रीनाथजी के दर्शन करके जा बैठे

थे। यहीं एक इमली के वृक्ष के नीचे गुरु के विरह में पद-गायन करते हुए उन्होंने भी अपना शरीर त्याग दिया। जो उनकी गुरु भक्ति का उत्कृष्ट-प्रमाण है। जहाँ चतुर्भुजदास जी ने देह छोड़ी थी उसी स्थल पर वर्तमान में एक धर्मशाला स्थापित है परन्तु वहाँ कोई एक ऐसा स्मारक नहीं बन सका है, जिससे यह सिद्ध हो कि इस स्थल का कविवर चतुर्भुजदास जी से कभी कोई सम्बन्ध रहा है।

परासौली में चन्द्र सरोवर के तट पर हमने सूर पंचशती महोत्सव के अवसर पर जब सूरद्वार का निर्माण कराया था तब सूरकटी के द्वार के सामने चतुर्भुजदासजी के नाम पर ''चतुर्भुज चौक'' भी स्थापित करके वहाँ एक छोटी सी वाटिका और उसके बीच में एक मंडप भी स्थापित किया था परन्तु उस मंडप में अभी तक चतुर्भुजदास की मूर्ति स्थापित नही हो सकी है और वाटिका की भी इसक्षेत्र के निवासी रक्षा नही कर सके। मुख्य द्वार पर चतुर्भुज चौक का शिलालेख आज भी अंकित है। चतुर्भुजदास जी ही क्यों उनके पूज्य पिता कुंभनदास जी की समाधि भी अन्यौर गांव में परिक्रमा मार्ग पर एक छोटे से चबूतरे के रूप में विद्यमान है। जिस पर अनाधिकृत अधिकार करने के लिए कुछ लोग प्रयासरत है। उस पर कंडे थापकर सुखाए जाते हैं ये हमने आखों से देखा है। गत वर्ष वहाँ एक विशेष उत्सव का आयोजन किया गया था और कुंभनदास की समाधि के निर्माण के लिए उत्तर प्रदेश के वर्तमान लोक निर्माण राज्यमंत्री श्रीरामप्रसाद कपल ने अपनी विधायक नीधि से दो लाख रुपए देने की घोषणा भी की थी परन्तु वहाँ संस्कृति के क्षेत्र में सक्रिय रूप से जुटे हुए लोगों के अभाव के कारण कोई भी पहल नहीं हुई है।

गोवरधन के परिक्रमा मार्ग में चतुर्भुजदास ही नहीं अष्टछाप के आठों कवियों के निवास स्थल विद्यमान हैं परन्तु दुर्भाग्य से इन अमर कवियों के इनके गौरव के अनुरूप स्मारक कहीं भी नहीं बन पाए है। महाकवि सूरदास जी की पंचशती के अवसर पर उ.प्र. सरकार के सहयोग से जो विकास योजना बनी थी वह भी अधूरी पड़ी है। अपनी विगत गोवर्धनयात्रा में गोवर्धन के विकास के लिए ३ करोड़ रुपए की घोषणा की है। हमारा निवेदन है कि इस विकास कार्य में अष्टछाप के आठों कवियो के स्थानों के विकास की विशेष योजना बनाई जाए और मुख्यमंत्री द्वारा घोषित धनराशि में से एक करोड़ रुपया सरकार इन भक्त कवियों के स्थलों के विकास को सुरक्षित कर दे। इस सम्बन्ध में सभी साहित्य प्रेमियों व भक्त हृदयों से हमारा निवेदन है कि उत्तर प्रदेश सरकार पर इस सम्बन्ध में दबाव डालकर इस पुण्य कार्य को पूर्ण कराने का प्रयत्न करें।

–कार्यकारी अध्यक्ष, ब्रजकला केन्द्र,
गली रावलिया, मथुरा

अष्टछाप के कवि-

चतुर्भुजदास का गुरु और गोविन्द के प्रति समर्पण भाव

✍ डा. उमाशंकर शुक्ल 'उमेश'

लब्धप्रतिष्ठ विद्वान श्री अमरनाथ झा के शब्दों में-'हिन्दी साहित्य के इतिहास में अष्टछाप के कवियों का एक विशिष्ट स्थान है। यदि इनमें केवल सूरदास ही होते तब भी इनकी बड़ी प्रतिष्ठा होती। परन्तु इनमें और भी कई महाकवि की पदवी के योग्य हैं। हिन्दी साहित्य के विकास का ज्ञान बिना इनके काव्य को पढ़े हुए सम्भव नहीं। ब्रजप्रान्त के ये अनमोल रत्न हैं। इनका प्रभाव समस्त हिन्दी काव्य पर है। इन कवियों के ग्रन्थों में केवल काव्य सौन्दर्य ही नहीं है, संगीत का ज्ञान ही नहीं है, कृष्ण भक्ति का विविध रूप भी इनमें मिलता है।' अष्टछाप के कवियों में सूरदास, परमानन्द दास, कुम्भनदास, कृष्णदास, नन्ददास, चतुर्भुजदास, गोविन्दस्वामी तथा छीतस्वामी आते हैं। इनमें प्रथम चार अर्थात् सूरदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास एवं कृष्णदास वल्लभ-सम्प्रदाय के संस्थापक श्री बल्लभाचार्य के शिष्य थे और अन्तिम चार-नन्ददास, चतुर्भुजदास, गोविन्दस्वामी तथा छीतस्वामी, आचार्य श्री के उत्तराधिकारी गोस्वामी की विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। अष्टछाप के कवियों की प्रशंसा सर्वश्रेष्ठ भक्त, श्रेष्ठ कवि तथा संगीतज्ञ के रूप में हिन्दी के प्रायः शीर्षस्थ सहित्यकारों, यथा-डा. श्यामसुन्दरदास, आचार्य पं. रामचन्द्र शुल्क तथा मिश्रबन्धुओं प्रभृति ने की है।

संवत् १६२३ वि. में गोस्वामी विट्ठलनाथ जी अपना जन्मस्थान अरैल (प्रयाग) छोड़कर सपरिवार गोकुल आ गये। इसी स्थान पर नन्ददास, चतुभुर्जदास गोविन्दस्वामी तथा छीतस्वामी गोस्वामी विट्ठलनाथ जी के शिष्य बने थे। "विक्रम की १६ वीं शताब्दी में विष्णुस्वामी भी सम्प्रदाय की उच्छिन्न गद्दी पर श्री वल्लभाचार्य जी बैठे और उन्होंने श्री विष्णुस्वामी के सिद्धान्तों से प्रेरणा लेकर शुद्धाद्वैत सिद्धान्त तथा भगवद्-अनुग्रह अथवा पुष्टि द्वारा प्राप्त प्रेम-भक्ति के मार्ग की स्थापना की। हिन्दी ब्रजभाषा के अष्टछाप कवि इसी सम्प्रदाय के भक्त थे।"?[१]

श्री वल्लभाचार्य जी के गोलोग वास के पश्चात उनके द्वितीय पुत्र श्री विट्ठलनाथजी आचार्य पद पर आसीन हुए। श्री विट्ठलनाथजी ने चार सर्वश्रेष्ठ

१. अष्टछाप और वल्लभ-सम्प्रदाय लेखक डा. दीनदयालु गुप्त पृष्ठ ७०

कवि अपने तथा चार अपने पिताके, मिलाकर अष्टछाप भक्त कवियों की स्थापना की। ये आठो भक्त 'अष्टसखा' भी कहलाते थे। श्री चतुर्भुजदास जी श्री विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। चतुर्भुजदास प्रारम्भ से ही विरक्तभाव के सन्त थे। गृहस्थ होते हुए भी गृहस्थी से उन्हें मोह न था। वे सदैव श्रीनाथजी की सेवा-कीर्तन में ही रहते थे-"ता दिन ये चतुर्भुजदास श्री गिरिराज जी की तलेटी छांड़ि के कहूँ न जाते।"[2] इनका जन्म संवत् सम्प्रदाय-कल्पद्रुम के अनुसार १५८७ वि. बताया जाता हैं।

"कुंभनदास जी चतुर्भुजदास को श्री गुसाई विट्ठलनाथ जी के पास ले गये और विनती की-"महाराज कृपा करके चतुर्भुजदास को नाम सुनाइये-यह सुनि के चतुर्भुजदास ताही समे किलक के हँसे।" इसके बाद उसी दिन राज-भोग के समय गुसाईं जी ने नवजात शिशु को शरण में लिया। उन्होंने कुम्भनदास जी से कहा-"या पुत्र सों तुमको बहुत ही सुख होयगो। जो तुम्हारे मन में जैसो मनोरथ हतो ताही भाँति सों तुम्हारे मनोरथ सिद्ध भये हैं।"[3]

इस प्रकार चतुर्भुजदासजी वल्लभ-सम्प्रदाय में प्रविष्ट हुए। वल्लभ-सम्प्रदाय में प्रविष्ट होना 'ब्रह्म सम्बन्ध' कहलाता है। इसमें गुरु अष्टाक्षर मन्त्र सुनाता हे, जिसे नाम-निवेदन' कहते हैं और शिष्य अपना तन-मन-धन, सर्वस्व कृष्ण को अर्पित करता है। 'ब्रह्म सम्बन्ध' हो जाने के पश्चात् चतुर्भुजदास समर्पित भाव से गुरु और गोविन्द की सेवा में तन्मय हो गये।

इसके पूर्व कि चतुर्भुजदास जी के गुरु और गोविन्द की सेवा में कहे गये पदों के माध्यम से उनके हृदय के अनन्य समर्पण भाव के सम्बन्ध में कुछ कहा जाय, चतुर्भुजदास जी की कृतियों पर प्रकाश डालना आवश्यक है। इस सन्दर्भ में २५२ वैष्णवन की वार्ता' में लिखा है-'इन्होंने कृष्ण-जन्म-महोत्सव, बाल-भाव, पालना श्रृंगार, रासलीला, विनय तथा विरह के पद बनाकर गाये। अन्त समय में इन्होंने गुरु-महिमा के भी पद लिखे थे।'

'मिश्र-बन्धु-विनोद में अष्टछाप के चतुर्भुजदास के ग्रन्थ इस प्रकार हैं-(१) मधुमालती-कथा (२) भक्ति-प्रताप (३) 'पद तथा समैया के पद (४) द्वादश-यश (५) हितूज को मंगल। यद्यपि इस कथन का समर्थन आचार्य पं. रामचन्द्र शुक्ल एवं

---

२. वही, चतुभुर्जदास की वार्ता, अष्टछाप काँकरोली पृष्ठ ३२०

३. वही अष्टछाप काँकरोली, पृष्ठ २६५

डा रामकुमार वर्मा ने भी किया है किन्तु सूक्ष्म पर्यवेक्षण एवं जाँच से इनमें से कोई कृति प्रामाणिक सिद्ध नहीं हुई। इस सम्बन्ध में डा. दीनदयालु गुप्त जी का निष्कर्ष प्रामाणिक प्रतीत होता है। उन्होंने लिखा है-"चतुर्भुजदास की प्रामाणिक रचना के सन्दर्भ में लेखक के विचार से, काँकरोली तथा नाथद्वारा में प्राप्त होने वाले पद-संग्रह तथा वल्लभ-सम्प्रदायी छपे कीर्तन-संग्रहों में प्राप्त पद ही हैं। एक दूसरी प्रामाणिक रचना 'दानलीला' भी है जो वास्तव में कवि का एक लम्बा पद है। इसे स्वतंत्र ग्रंथ नहीं कहा जा सकता। सम्भव है, अन्यत्र वैष्णव मन्दिरों में इनके और भी पद हों। लेखक ने चतुर्भुजदास के काव्य तथा विचारों के अध्ययन के लिए इन्हीं दो प्रकार के पद-संग्रहों का आधार लिया है। 'मधुमालती-कथा, भक्ति-प्रताप, द्वादशयश, तथा हितजू को मंगल ग्रंथ अष्टछापी चतुर्भुजदास की रचना नहीं हैं।"[१]

डा. गुप्त ने चतुर्भुजदास जी की रचनाओं की प्रामाणिकता सिद्ध करने हेतु जो विवरण प्रस्तुत किया है वह सत्य के निकट प्रतीत होता है। वस्तुतः हिन्दी साहित्य के लेखकों ने मिश्र-बन्धुओं का मात्र अनुसरण करते हुए लिख दिया है। उन्होंने सामग्री की जाँच स्वयं नहीं की, इसलिए भूल की पुनरावृत्ति होती रही। डा. गुप्त ने बल्लभ-सम्प्रदायी छपे कीर्तन संग्रहों-'राग-सागरोद्भव,' 'राग-कल्पद्रुम' तथा राग-रत्नाकर' तथा काँकरौली विद्या विभाग में हस्तलिखित चतुभुर्जदास के कीर्तन-संग्रह-'कीर्तनावलि चतुर्भुजदास (१८६ पद), चतुर्भुजदास की दानलीला, कीर्तन संग्रह चतुर्भुजदास (१८६ पद) 'चतुर्भुजदास के पद (१६२ पद) तथा नाथद्वारा निज पुस्तकालय में चतुर्भुजदास के पद (२६२ पद) के आधार पर चतुर्भुजदास की कृतियों को निरूपित किया है।

चतुर्भुजदास का गुरु और गोविन्द के प्रति समर्पण भाव

उपर्युक्त कीर्तन-संग्रहों एवं पद-संग्रहों में संकलित पदों के आधार पर ही चतुर्भुजदास के गुरु और गोविन्द के प्रति समर्पण भाव को व्याख्यायित किया जा सकता है। प्रायः सभी आध्यात्मिक सम्प्रदायों में गुरु की गरिमा का अंकन हुआ है। प्राचीन ग्रंथों में गुरु-महिमा का अति विशिष्टता के साथ मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है। एक संत ने लिखा है-'जो साधक (भक्त) गुरु के वचन पर विश्वास करता है वह अमरावती में" निवास करता है ऐसा समझना चाहिए।' ससार के

१ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय-ले. डा. दीनदयालु गुप्त प्रथम भाग पृष्ठ ३८५

रोगों से यदि मुक्ति पानी है तो हमें सद्गुरु की शरण में जाना होगा।'हरि रूठे गुरु राखि लेय, गुरु रूठे हरि न रखैया' कहकर संतों ने गुरु को गोविन्द से भी ऊँचा स्थान प्रदान किया है।

कबीर, मलूकदास, दादूसाहब, सुन्दरदास, दूलहदास, सहजोबाई, गोस्वामी तुलसीदास, मीराबाई, नानक साहब आदि सन्तों ने गुरु की महत्ता का गुण-गान किया हैं। इसी प्रकार अष्टछाप के कवियों ने भी अपने पदों में गुरु-महिमा गायी है। "वल्लभ-सम्प्रदाय में भी गुरु को ईश्वर का ही रूप समझा जाता है। अष्टछाप के कवियों ने भी गुरु को भगवान का ही स्वरूप माना है।"[१] चतुर्भुजदास जी ने भी गुरु को ईश्वर रूप ही माना है। अपने गुरु विट्ठलनाथ जी के विषय में वे कहते हैं-

सदा ब्रजही में करत बिहार,[२]
तब के गोप वेष अबके-प्रकटे द्विजवर-अवतार।
जब गोकुल में नन्द कुँवर अब वल्लभ राजकुमार,
आप पहुँचि रुचि और दिखावत सेवा मत दृढ़सार।
जुग स्वरूप गिरिधरन श्री विट्ठल लीलाए अनुसार,
चतुर्भुज प्रभु सुख लेत निवासी भक्तन कृपा उदार।"

एक अन्य पद में चतुर्भुजदास जी ने गोसाईं विट्ठलनाथ जी की महिमा का गुण-गान करते हुए उनके प्रति अपने समर्पण भाव को रेखांकित किया है-

श्री विट्ठलनाथ नैन भरि देखे।
पूरे मनोरथ भए सब कछु हुती जु जीव आपेखे।
श्री वल्लभ सुत सरन बिना यह लों दिन गए अलेखे,
दास चतुर्भुज प्रभु सब सुख निधि रहिए कृपा विशेषे।

अर्थात् जब से मैंने विट्ठलनाथ जी को देखा है तब से मेरे सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण हो गयेहैं। जब तक उनकी शरण में नहीं गये थे तब तक के दिन जैसे व्यर्थ में बीत गये। हे सब सुख के निधान ! आप मुझ पर सदैव अपनी कृपा बनाए रखें।

एक अन्य पद में उन्होंने अपने गुरु तथा श्री कृष्ण भगवान को एक ही रूप में देखा है-

---

१. अष्टछाप और वल्लभसम्प्रदाय ले. डा. दीनदयालु गुप्त द्वितीय भाग पृष्ठ ६८६
२. वही, पृष्ठ ६८८

श्री विट्ठलनाथ गोकुल भूप।[1]
भक्त हित कलियुग कृपा करि धरे प्रकट स्वरूप।
सकल धर्म धुरन्धर हरि भक्ति निज दृढ़ जूप।
चरण अम्बुज सिरसि परसत सोष कर अन्ध कूप।
आपु ही सेवा सिखावत, सकल रीति-अनूप।
भोग राग-सिंगारु नाना चरिचि दीप-अरुधूप।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन युग वपु लीला-अनूप।
नन्दनन्दन श्री वल्लभनन्दन एक मन द्वै रूप।

वे कहते हैं कि श्री कृष्ण भगवान ने स्वयं कलियुग के जीवों का उद्धार करने के लिए श्री विट्ठलनाथजी के रूप में शरीर धारण किया है उनका मन एक है केवल रूप दो हैं। यहाँ उन्होंने दोनों को एक ही माना है। यह है कवि की अनन्यता अपने गुरु के प्रति।

चतुर्भुजदास जी अपने गुरु के प्रति अटूट प्रेम रखते थे। गुरु का विरह असह्य था उनके लिए। गुरु के गोलोकवास पर शोक प्रकट करते हुए उन्होंने जो मार्मिक चित्रण किया है, इससे उनकी गुरु-भक्ति का गहन परिचय मिलता है-

फिर ब्रज बसहु श्री विट्ठलेस।
कृपा करि दरसन दिखावहु वे लीला वे वेस।
संग ग्वालरु गाय गोकुल गाउ करहु प्रवेस।
नन्दराय ज्यों बिलसवो सम्पत्ति बहु दास नरेस।
भक्ति मारग प्रगट करि कलि जननि देहु उदेस।
रच्यो रास विलास वेस गिरि गोप धन देस।
बदन इन्दु ते बिमुख नैन चकोर तपत बिसेष।
सुधापान कराय मेटो बिरह को लवलेस।
श्री वल्लभ-नन्दन दुख-निकन्दन सुनहु सुचित सन्देस।
चतुर्भुज प्रभु या धोष कुल को हरहु सकल कलेस।

'श्री विट्ठलनाथ से प्रभु भए न ह्वै हैं' पद लिखकर चतुर्भुजदास जी ने अपने अन्तर की पीड़ा गायी है। कहते हैं गुरु विट्ठलनाथ जी के निधन के पश्चात् इन्होंने भी देह छोड दी थी। अष्टछाप काँकरौली में लिखा है कि विरह के कीर्तन

1. अष्टछाप और वल्लभसम्प्रदाय – डा. गुप्त पृष्ठ १०३

करते करते चतुभुर्जदास ने भी अपनी देह छोड़ दी। गुरु भक्ति और गुरु के प्रति समर्पित निष्ठा का यह एक बेजोड़ उदाहरण है हिन्दी साहित्य के इतिहास में।

'चतुर्भुजदास जी ने भगवान श्री कृष्ण के प्रति अपनी भक्ति भावना की अभिव्यक्ति करते हुए विनय के अनेक पद गाये हैं। 'चतुर्भुजदास प्रभु गिरिधरन लाल संग सदा बसों दिनरात' पद में उनके हृदय की अनन्यता का स्पष्ट परिचय मिलता है। भगवान श्री कृष्ण एक पल के लिए भी उनसे दूर न रहे इस भावना को रूपायित करते हुए कवि कहता है-

श्याम सुन्दर प्राणप्यारे छिन जिन होउ न्यारे।"[१]
नेक की ओट मीन ज्यों तलफत, इन नैनन के तारे।
मृदु मुसिकान बंक-अवलोकनि अड़िचलतरा हज में सुढारे
चत्रमुज प्रभु गिरिधर बानिक पर कोटिक मन्मथ वारे।

चतुर्भुजदास जी ने कृष्ण की भावात्मक ब्रज-लीलाओं का चित्रण किया है। उनकी भक्ति निकुंज-लीला की माधुर्य भक्ति के साथ वात्सल्य भाव की भी थी। इन लीला पदों में उनकी कृष्ण भक्ति का भाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। "चतुर्भुजदास वल्लभ-सम्प्रदाय में मान्य रस-रूप पर ब्रह्म श्री कृष्ण के उपासक थे।" एक पद में वे एक गोपी द्वारा कहलवाते हैं-'[२]

रस ही में वश कीने कुँवर कन्हाई।
रसिक गोपाल रस ही रीझत, रसमिल रसत्यज माई।
प्रिय को प्रेमरस सुन्यो है रसीली बाल रस में बचन श्रवन सुखदाई।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर सब रसनिधि रसता मिलि है रहसि हृदय लपटाई।

इसी प्रकार अपने अनेक पदों के माध्यम से चतुर्भुजदास जी ने श्री कृष्ण भगवान की कीर्तन-सेवा-आराधना की है। उनका जो भी साहित्य बिखरा पड़ा है उसे चतुर्भुजदास रचनावली' के नाम से जाँचोपरान्त संकलित करने की आवश्यकता है। उनका साहित्य ब्रजभाषा साहित्य की अमूल्य धरोहर है। वस्तुतः गुरु और गोविन्द की भक्ति ही इनकी आराधना का केन्द्र बिन्दु रही है। चतुर्भुजदास जी ब्रजभाषा के अनमोल रत्न हैं।

—साहित्य-सदन, फूलपुर-प्रयाग राज-२

---

१. अष्टछाप और वल्लभसम्प्रदाय – डा. गुप्त पृष्ठ ४२०

चतुर्भुजदास की भावसाधना

✍ डा. सुरेन्द्र शर्मा

चतुर्भुजदास जी की भावसमाधि, उनका पुष्ट शुद्ध स्वरूप उनकी गेय रचनाओं से परिलक्षित होता है।अपने पिता कुम्भनदास जी से भाव का दाय उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुआ था उसका पूर्ण मनोयोग से परिरक्षण किया। वैसे ब्रजवासी होने के कारण श्री कृष्णभाव सम्पदा को तो प्राप्त किया था, परन्तु आपने उसका संरक्षण, संवर्धन, सम्पोषण और सम्प्रेषण भी किया जो आज भी हवेली संगीत में संरक्षित है।

श्री वल्लभ सम्प्रदाय ने अष्टछाप, अष्टसखा, अष्टसखियों की स्थापना कर श्री कृष्ण के रसात्मक पक्ष को जीवन में उतारने का जो प्रयत्न किया उसका परिणाम स्पष्टतः भारतीय जनजीवन के आचरण और व्यवहार में देखा जा सकता हैं, जीवन की विषमताओं से मुक्ति के लिए और उनके कारण उत्पन्न होने वाले रोग शोक, आधि व्याधि भय कोप वासना आदि से मुक्ति के लिए गायन विद्या के माध्यम से आनन्द के वास्तविक स्वरूप से साक्षात्कार करा दिया, दमन की अपेक्षा संयम को आगे किया गया। सरल और सुबोध विधि से जीवन को अज्ञानता से हटाकर ज्ञान कार्य और भक्ति से जोड़ दिया गया, जीवन को संजीवन स्वरूप दिया गया, जगत् को अध्यात्म, संस्कृति और दर्शन से समन्वित कर दिया गया। मनोविकारों से निवृत्ति और सद्विचारों की प्रवृत्ति देने की इस प्रक्रिया के ऊपर सैकड़ों मनोवैज्ञानिकताओं को न्यौछावर किया जा सकता है।

ईश्वर प्रत्येक जन को अपने जैसे शुद्ध सात्विक रूप में जन्म देता हैं, जहाँ काम क्रोध, लोभ मोह, ईर्ष्या द्वेष कुछ नहीं होता। यदि शिशु में कुछ होता है तो वह है प्रीतितत्व आगे जैसे जैसे संसार से सम्बन्ध जुड़ते जाते हैं उसमें से प्रतितत्त्व कम होता जाता है, विकारों के आवरण चढ़ते जाते हैं, जब देवत्व से दानवीयता की ओर अर्थात् पतन की ओर बढ़ता है और उसे ही अपना विकास समझता है।श्री कृष्णभक्ति की इस प्रक्रिया ने उसे देवत्व से निरन्तर जुडे रहने के विविध प्रयास किये। भोग को भगवत्प्रसाद का रूप दिया गया। मन्दिर व्यवस्था, उसमें अष्टयाम सेवा, भोग, राग, नीरांजना (आरती) आदि के विधान से नर को नारायण से इस प्रकार जोड दिया गया, कि उन्हें प्रभु भक्ति में ही सारा संसार दिखाई देने लगा।

इस प्रक्रिया के पुरोधाओं में श्री चतुभुर्जदास का भी नाम सम्मान के साथ लिया जा सकता है। श्री कृष्ण की बाल लीलाओं के चित्रण में देखिये उनका चमत्कार। श्री कृष्ण को अपने घर में तो माखन दूध दही तो खूब मिलता ही है परन्तु अपने पड़ौस के घरो से भी प्राप्त करने की लालसा बनी रहती है। गोपियाँ इसका उलाहना देती हैं तो यशोदा कहती हैः-

माई लैन देहु जो मेरे लालै भावै।
दधि माखन चौगुनौ देउंगी या सुत के लेखैं जाकौ जितनौ आवै।।
पलना झूलत कुलदेव आराधौ, जतन जतन करि घुटुरुअन आवे।
सरवस ताहि देउंगी जो मेरे नान्हरे गोविन्द पां पां चलन सिखावे।।
यह अभिलाष लेत दिन प्रति कब मेंरौ मोहन धेनु चरावै।
'चतुर्भुज प्रभु' गिरिधरन लाल कों निरीख निरखि उर नैन सिरावै।।

यह माँ हृदय के भावों की अभिव्यक्ति है कि सभी प्रकार बालक को सुरक्षित करती हुई उसके पैदल चलने फिर गाय चराने जाने की उत्कण्ठा उर में बसाये रहती हैं। लौकिक भाव को अलौकिक पुरुष के बालसुलभ कार्यो से जोड़ते माँ की मनोकामनाओं का उदात्तीकरण करती है। कोई भी माँ इस पद को गायेगी तो निश्चय ही उसके हृदय में अपने पुत्र के प्रति सात्विक भावों का ही उदय होगा। श्री कृष्ण भी अपने बालसुलभ चंचलताओं से उभरे वात्सल्य को अपने घर तक ही सीमित नहीं रखना चाहते, अड़ौस-पड़ौस में भी वितरित करना चाहते हैं। उपालम्भ के बहाने श्री कृष्ण के गुण अथवा अवगुण गान में भी पड़ौस की गोपिकाओं को आनन्द ही आता है -

जसोदा कहा कहों हो बात।
तुम्हरे सुत के करतब मोपै कहत कहे नहिं जात।।
भाजन फोरि ढोरि सब गोरस लै माखन दधि खात।
जो बरजों तौ आँखि दिखावै रंचहु नाहि सकात।।
और अटपटी कहा लों बरनों छुवत पानि सों गात।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर-गुन हौं कहति कहति सकुचात।।

श्री कृष्ण का हाथों से शरीर छू लेना और ऐसा आचरण करना कि गोपी को कहने में संकोच लगे तो यशोदा का प्रत्युत्तर भी पढियेः-

ग्वालिनि तोहि कहतं क्यों आयौ।
मेरौ कान्ह निपट बालक क्यों चोरी माखन खायौ।।
बूझि बिचार देखि जिय अपुने कहा कहों हो तोहि।
कंचुकि बन्द तोरे ये कैसें सो समुझि परत नहि मोहि।।

चतुर्भुजदास लाल गिरिधर सों झूठी कहत बनाय।
मेरौ स्याम सकुच कौ लरिका पर घर कबहुं न जाय।।

जिस बात को कहने में गोपी संकोच कर रही थी, यशोदा ने उसे स्पष्ट कह दिया की कंचुकीबन्द तोड़ने की स्थिति कुछ समझने में नहीं आ रही और कोई भी बालक श्रीकृष्ण का यह कृत्य कोई सोद्देश्य नहीं समझ सकता, आकस्मिक होसकता है, परन्तु चतुर्भुजदास जी वात्सल्य में शृंगार का चामत्कारिक प्रयोग कर उसमें हास्य का भी पुट दे दिया है।

अष्टयाम सेवा का प्रथम कार्यक्रम मंगला आरती होती है। उसके दर्शन की प्रेरणा देते हुए जहाँ एक ओर जीवन को प्रातः काल उठने की प्रेरणा देता है तो दूसरी ओर जीवन में मंगलविधान को प्रोत्साहित करता है-

मंगल आरती गोपाल की।
नित उठि मंगल होत निरखि मुख चितवत नैन विसाल की।।
मंगलरूप श्यामसुन्दर कौ मंगलछवि भृकुटी भाल की।
'चतुर्भुजदास' सदा मंगल निधि बानिक गिरिधरलाल की।।

प्रकृत पुरुष श्रीकृष्ण की उपासना में प्रकृति प्रेरित ऋतुओं के अनुसार उत्सवों का विधान है, तदनुरूप भोगराग भी व्यवस्था है, जो हमें उपासना से जुड़े रहकर जीवन को प्रकृति के अनुरूप ढालने की प्रेरणा देता है। वर्षा ऋतु में सुरम्य वनस्थलियों में वृक्षों की डाल पर झूला डालकर नन्ही नन्ही फुहारों में झूलना, प्रकृति और जीवन में सांमञ्जस्य करता हुआ एक सहज रस का संचार करता ही है। चतुर्भुजदास जी के इस पद को पढ़िये और गुनिये भी कि इस पद में जीवन की उन्मुक्तता के कितने सूत्र छिपे हुए है-

झूलत लाल गोवर्धनधारी सोभा बरनि न जाई हो।
वाम भाग वृषभानुनन्दिनी, नव सत अंग बनाई हो।।
अति सुकुमारि नारि डरपत हैं, मोहन उर सों लाई हो।
नील पीत पट मिलि फहरत हैं, घन दामिनि जुरि आई हो।।
मानहुँ तरुन तमाल मिलन कों अंग अंग मुरझाई हो।
गौर स्याम मरकत तन परसन कनक बेलिछवि छाई हो।।
सुरति सिन्धु मिलि विलसे दोउजन, सब सहचरि सुखछाई हो।
'चतुर्भुजदास' लाल गिरिधर जस सुर नर मुनि मिलि गाई हो।।

मोहन ब्रजवासियों के आराध्य केवल पुराण पुरुष होने के ही नाते नहीं बनाये, उन्होंने जीवन के आनन्द के रहस्यों को एक-एक करके इस प्रकार खोला है कि जीवन भार नहीं आनन्द की भूमि, आराध्य से सान्निध्य की दिशा

ही नहीं खोलता अपितु जीवन की सत्यता का भी उद्घाटन करता है। वैसे भी श्री कृष्ण का अवतरण ईशित्व भगवत्तत्त्व रहित होकर ही हुआ है, देश में सांस्कृतिक निष्ठा स्थापित करने के लिए हुआ है। होली के चित्रण में यह सब स्पष्ट हो जाता है। पद लम्बा होते हुए भी उसमें हमें होली क्रीड़ा विधान के साथ वेश, संगीत, वाद्य वृन्द, सामाजिकता आदि सब कुछ एकत्र मिलते हैं:-

खेलत नन्द किशोर ब्रज में, हो हो होरी।
गौरी राग अलापत गावत मधु मुरली कल घोरी।।
कटि पियरौ पटपीत बनी छवि सीस चन्द्रिका मोर।
मनमथ मान हरत मन चितवनि चपल नैन की कोर।।
बालक वृन्द स्यामघन सोभित उत समूह ब्रजनारी।
विविध सिंगार सजे मिलि झुंडन देत भामिनी गारी।।
देखि समाज मदनमोहन कौ धाई सब मिलि सहित हुलास।
तिन में मुख्य राधिका नागरि सकल सुखन की रास।।

*

दुंदभि झांझ मुरज डुफ बीना मृदंग उपंगै तार।
दुहूँ दिसि खेल मच्यौ जु परस्पर घोषराय दरबार।।

*

चोबा साख अरगजा चंदन केसरि सुरंग मिलाई।
तकि तकि तरुनि गुपालहिं छिरकत करन करन पिचकाई।।

*

जुबती जूथ पेलि सनमुख ह्वै मोहन पकरे जाई।
काजर नैन आंजि पीतम के मुरली लई छिनाई।।
प्रिय व्यारी की जोट बनाई अंचल सों पट जोरि।
सैनहिं सैन परसि कर सों कर हंसत सवै मुख मोर।।
मगन भई तनकी सुधि बिसरी हृदै गढ्यौ अनुराग।
यह सुख तीन लोक में नांहि गोपिन के बड़ भाग।।
चीर हार अंग अंगन भीजै कीच मची ब्रजखोर।
मानों प्रेम समुद्र अधिक बल उमँगि चल्यौ मति कोर।।
'चतुर्भुजदास' विलास फाग कौ कहत न वरन्यौ जाय।
लीला ललित देवगन मोहे गिरि गोवर्धन राय।।

मनुष्य जीवन इतना प्रीतिपोषित सुखमय बनाया जाय कि देवता भी मुग्ध हो जांय। श्री कृष्णा के इस जीवन स्वरूप को पदगायन के माध्यम से

इतना सजाया जाय कि ईश्वर साक्षात्कार का दृश्य बिना किसी ज्ञान अथवा दर्शन, वैराग्य अथवा तपश्चर्या के देखा जा सके।

श्री कृष्ण अपने शिशु काल, किशोर जीवन के साढे ग्यारह वर्ष ब्रज में रहे, परन्तु अपने इस अल्प जीवन में उन्होंने जीवन के विविध रंगों को इस कुशलता से बिखेरा, कि उनके ब्रज से चले जाने के चार हजार सात सौ सोलह वर्ष तक ब्रज के गोप गोपियों के सामान्य जीवन में श्रीकृष्ण अपनी रस माधुरी से ऐसे छाये रहे कि वियोग होते हुए भी संयोग के समस्त समग्र सुखों का आनन्द लिया, और ब्रजवासी आज भी विश्वास करते हैं कि श्री कृष्ण अभी तक भी विद्यमान है। और श्री कृष्ण प्रतिज्ञा किये हुए ही हैं कि वृन्दावंन परित्यज्य पादमेंकं न गच्छति।

यह दृष्टि यह आचरण किसने हमें दिया ? सम्प्रदाय ने मंदिर देवालयों ने और उनमें सम्पन्न होने वाले उत्सवों, तथा उत्सवों में गाये जाने वाले काव्य पदों ने, जिनकी रचना चतुर्भुजदास जैसे भक्त कवियों ने की है। रचना ही नहीं की उनको स्वयं गाया भी है। उन्होने अपनी साधना में जो प्रत्यक्ष अनुभूतियाँ की हैं। उनको ही पदों के द्वारा अभिव्यक्त किया है और अपने मानवीय जीवन की सार्थकता को दिशा दी है।

अष्टसखा और अष्टसखी की स्थापना में चतुर्भुजदास को विशाल सखा और विमला सखी का स्थान देकर सखा, सखी के रूप में सेवा का दायित्व दिया गया, जिसके कारण उनमें सखाभाव है तो सखीभाव भी है। प्रस्तुत पद में सखीभाव की अभिव्यक्ति कितनी सुन्दर बन गई है जिसमें रूपचित्रण के साथ भक्तिमती नारी के अनुराग का भी चित्रण है -

सुभग सिंगार निरखि मोहन कौ, ले दर्पन कर पियहिं दिखावै।
आपुन नेंक निहारि बलि जाऊँ, आज की छबि कछु कहत न आवै।।
भूषन रहे ठाँव ठाँवहि फबि अँग अँग अद्‌भुत चितहि चुरावै।
रोम रोम पुलकित तन सुन्दर फूलन रचि रचि पाग बनावै।।
अंचल फेरि करत न्यौछावर तन मन अति अभिलाष बढावै।
'चतुर्भुज प्रभु' गिरिधर की रूप सुधा पीवत नैन पुट तृप्ति न पावै।।

इस प्रकार श्री चतुर्भुजदास के किसी पद को प्रीतिसुधापगे मन से आप गायेंगे, निश्चय ही आप स्वयं भी भाव समाधि में पहुँच जायेंगे। निश्चय ही ऐसे भक्त कवियों का समाज सर्वदा सर्वदा के लिए ऋणी रहेगा।

–बिहारीपुरा, -वृन्दावन

अष्टछाप कवि श्री चतुर्भुजदासजी की सेवा -भावना

✍ पं. हरिप्रसाद शर्मा,'हरिदास'

श्री चतुर्भुजदास जी की कीर्तन-सेवा अन्य अष्टछाप के पुष्टिमार्गीय वैष्णव भक्त कवियों से विलक्षण है। वैसे पुष्टिमार्ग कृपा मार्ग है "पोषणं तद अनुग्रह" फिर भी चतुर्भुजदास जी पर जन्म लेते ही कृपा हो गई और ४० दिन की आयु में श्री गुसाँई श्री विट्ठलनाथ जी ने कंठी-ब्रह्म-सम्बन्ध की दीक्षा श्री नाथ जी के सम्मुख दे दी और "चतुर्भुजदास जी कूँ ब्रजभक्तन सहित लीला कौ दर्शन भयो और प्रथम पद रचना की –

सेवक की सुख राशि सदा श्री वल्लभ-राजकुमार।

चतुर्भुज प्रभु उद्धरे पतित श्री विट्ठलकृपा उदार।

इतनी छोटी वय में पद रचना करना विरुद्ध-धर्माश्रय सिद्धान्त का प्रतिपादक है। भगवान् श्रीकृष्ण ने तो विरुद्ध धर्माश्रय लीलाएँ की ही हैं परन्तु उनके भक्तों में भी यह भगवत तत्व प्रदर्शित होता है यह प्रमेय बल का साक्षात प्रमाण है।

सेवा प्रकार:- अष्टयाम सेवा में कीर्तन-सेवा प्रमुख मानी गई है। इस भगवद् गुणगान के द्वारा चित्त की वृत्तियों का जो निरोध होता है वह अन्य प्रकार से सेवा करने पर नहीं होता, अतः राग, भोग, शृंगार में राग को प्रथम स्थान दिया है। अखण्डभूमण्डलाचार्य चक्रचूड़ामणि शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद संस्थापक जगदगुरु महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्य जी ने अपने निरोध-लक्षण ग्रंन्थ में कीर्तन सेवा (भगवद् गुणगान) द्वारा मन का निरोध होना उत्कृष्ट पुरुषार्थ माना है।

श्लोक -

गुण गाने सुखावाप्ति गोविन्दस्य प्रजायते।
यथा तथा शुकादीनं नैवात्मनि कुतो ऽन्यतः।।

अर्थः- श्री गोविन्द भगवान् का गुणगान करने से जो अनन्त सुख मिलता है इस प्रकार का सुख तो शुकदेव आदि मुनीश्वरों को आत्मानन्द में भी कभी नहीं मिला। अब दूसरों की तो गणना ही क्या है ?

श्लोक -

तस्मात् सर्वं परित्यज्य निरुद्धै सर्वदा गुणाः।
सदानन्द परैर्गेयाः सच्चिदानन्दताः ततः।।

अर्थ :- इसलिए सम्पूर्ण त्याग कर सदा प्रभु के गुण गान के द्वारा ही मन का निरोध परात्पर परब्रह्म सच्चिदानन्द भगवान् श्री कृष्ण में ही करना चाहिए। ऐसा करने से सच्चिदानन्दता सिद्ध होती है अर्थात् सत्-चित, और आनन्द रूप प्रभु स्वयं प्रगट हो जाते हैं।

इसलिए अष्टछाप संस्थापक प्रभुचरण गोस्वामी श्री विट्ठलनाथजी ने अष्टछाप की स्थापना की तथा श्रीनाथजी की सेवा में समय ऋतु अनुसार राग, ताल और स्वर का ध्यान रखते हुए श्री चतुर्भुजदास जी को कीर्तन की सेवा में नियुक्त किया। पुष्टिमार्गीय दशधाभक्ति जिसे प्रेम-लक्षणा तथा परा-भक्ति के नाम से जाना जाता हे, उसका फल निरोध-अवस्था को ही प्राप्त करना हैं मूल पुरुष नामक ग्रन्थ में श्री द्वारिकेश जी महाराज (भाव-भावना वाले) लिखते हैं।''द्वारिकेश निरोध माँगे ये ही फल की आस है''

महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने श्रीमद्भागवत की दशम स्कन्ध की टीका में निरोध की परिभाषा इस प्रकार की है। प्रपंच विस्मृति पूर्वक भगवद् आसक्ति सः निरोध''-श्रीनाथजी के सन्मुख कीर्तन की सेवा श्री चतुर्भुजदास जी इस तन्मयता के साथ करते थे कि प्रपंच की स्मृति ही नहीं रहती थी अतः प्रेम, आसक्ति और व्यसन दशा को प्राप्त केवल भगवद् गुणगान के द्वारा ही किया जा सकता है।

श्री चतुर्भुजदास जी की सेवा-भावना (कीर्तन की सेवा) पुष्टिमार्गीय पद्धति के अनुरूप ही रही तथा मार्गनिर्देशन उनके गुरुदेव गो. श्री विट्ठलनाथ जी की कृपा द्वारा प्राप्त हुआ। यह परिपाटी बनी कि श्रीनाथजी को जगाने के कीर्तन गाने से पूर्व, महाप्रभु श्रीमद् वल्लभाचार्य जी का स्मरण गुण गान द्वारा होना चाहिये अतः श्री चतुर्भुजदास जी राग भैरव में गाने लगे।

श्री वल्लभ संतत सुयश नित्य उठि गाऊँ।
मन, क्रम वचन क्षण एकौ न विसराऊँ।।
चतुर्भुजदास पर्‌यो द्वारें प्रणपति करे।
श्री बल्लभ कुल कौ चरणामृत भोर ही उठि पाऊँ

महाप्रभु श्रीमदवल्लभाचार्य जी का ही नहीं उनके वशंजों का भी गुणगान करना वे अपना स्वधर्म समझते हैं क्योंकि उनके गुरु श्री विट्ठलनाथ जी ने 'सर्वोत्तम ग्रन्थ'' में समझाया कि महाप्रभुजी के १०८ नाम हैं उनमें से एक नाम यह भी है।

'स्ववंशे स्थापिता शेष स्वमातात्म्यः स्मयापहः''

महाप्रभु जी ने अपने वंश में अपने महात्तम को स्थापित किया है अतः आज भी कंठी-ब्रह्म सम्बन्ध दीक्षा देने की परम्परा आपके वंशजो (महाराज श्री) द्वारा ही चली आ रही है जो कि पुष्टिमार्गीय वैष्णव बनने से पहिले अनिवार्य है।

उसके पश्चात् श्री यमुना जी का ध्यान कर के, उनके गुणानुवाद गाये जाते हैं। श्री चतुर्भुजदास जी की सेवा-भावना श्री यमुना जी के स्मरण के साथ चलती है-

राग भैरव :-

जो कोई श्री यमुना नाम सँभारें।
ताकौ दरस, परस कोऊ करही, वाही को वे तारें।।
भक्त की महिमा वरण न सके, यम हा हा करि कें हारें।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन लाल को, नित प्रति वदन निहारें।

अन्तिम पंक्ति में पुष्टि भक्ति के सिद्धान्त को वे नही भूलते। पुष्टिमार्ग में मुखारविन्द की भक्ति को प्रधानता दी गई है। चरणारविन्द की भक्ति शीतल भक्ति मानी गई है। जब कि मुखाराविन्द की भक्ति ऊष्ण भक्ति मानी गई है। यह मार्ग ताप क्लेशानन्द का है, विरह-भावना का है, महाप्रभु वल्लभाचार्य जी स्वयं विरह की आकांक्षा अपने निरोध लक्षण ग्रन्थ में कर रहे हैं।

श्लोकः-

यच्च दुःखं यशोदाया नन्दा दीनाँ च गोकुले।
गोपिका नां तु यद दुःखं तद दुःखं स्यात् मम क्वचित।।

जब श्री ब्रजाधिप भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी मथुरा पुरी में पधारे उस समय यशोदा जी और नन्द आदि गोकुल के सब ब्रजवासियों और श्री गोपीजनों को जो दुःख हुआ-क्या मुझकों भी कभी होगा।

अतः चतुर्भुजदास जी ने संयोग रस के साथ साथ विरह का भी अनुभव किया। जब श्रीनाथजी मथुरा सतघरा में पधारे तो ४१ दिन तक विरह के पद गा गाकर समय व्यतीत करते रहे। निम्नलिखित पद बड़ा विख्यात है-

श्री गोवर्धन वासी साँवरे लाल प्यारे तुम बिन-रहयो न जाय हो।
श्री ब्रजराज लडैते लाड़िले लाल प्यारे.....
दरसन कूँ नयना तपै लाल, वचन सुनन कों कान हो।
मिलिबे कूँ हियरा तडपें लाल मेरे जिय के जीवन प्राण हो।

युग युग अविचल राखिये लाल यह सुख शैल निवास हो।
श्री गोवर्धनधर रूप पै, बलि जाय चतुर्भुजदास हो।

इनकी इस विरह-भावना को श्रीनाथजी सहन नहीं कर सके और श्री गुसाँई जी के प्रथम लाल जी श्री गिरिधर जी को आज्ञा की''हम कूँ गोवर्धन पर्वत पर पधरावो। किशनगढ़ (अजमेर) के महाराजा श्री सावन्तसिंह जी पुष्टिमार्गीय वैष्णव थे। उन्होंने अपना हरि सम्बन्धी नाम नागरीदास रखा। उनकी पद-रचनाओं का ग्रन्थ 'नागर-समुच्चय'प्रसिद्ध है। उसके अन्त में आपने पद-प्रसंग माला भी लिखी है जिसमें इस उपर्युक्त पद का उल्लेख है। आपका तो यहाँ तक मानना है कि इस पद का गायन कोई वैष्णव ४० दिन तक सायंकाल नित्य करे तो उसे श्रीनाथजी का साक्षात्कार हो जावेगा। पुष्टिमार्ग में ''शृंगार सरसोः हरिः'' भगवान् ''रसो वै सः'' है और शृंगार रस से सरस हो जाते हैं। यह रस द्विदलात्मक है (१) संयोग (२) विप्रयोग। अतः विरह भावना श्री चतुर्भुजदास जी की अत्यधिक उत्कृष्ट रही।

श्री मद्भागवत महापुराण में रास पंचाध्यायी के प्रसंग में ब्रज सीमंतनी गोपांगनाओं ने भी गोपी गीत गाकर विरह किया। श्री शुकदेव जी राजा परीक्षत को सम्बोधन देकर कह रहे हैं कि हे राजन्। रुरुदः सु स्वरन राजन् कृष्ण दरसन लालसा'' गोपी जनों ने सु स्वर रुदन किया। क्योंकि पुष्टिमार्ग के गुरु गोपीजन हैं उसी गोपी भाव से सेवा भावना की जाती है अतः श्री चतुर्भुजदास जी भी सुस्वर में रुदन कर विरह के पदों का गायन करते थे। वैंसे श्री भागवत की सुबोधिनी टीका में महाप्रभु जी ने विरह का अर्थ वि+रह ''एकान्त का अभाव'' किया है। गोपीजनों को नित्य साक्षात् दर्शन द्वापर की अवतार चरित्र लीला में होते थे, फिर विरह कैसा ? भगवान के साथ वार्तालाप का समय नहीं मिलता था।

अष्टछाप के सभी पुष्टिमार्गीय वैष्णव भक्त नित्य-प्रति सुबोधिनी कथा श्री महाप्रभुजी के मुखारविन्द से तत्पश्चात् उनके द्वितीय लाल जी गो. श्री विट्ठलनाथ जी के मुखारविन्द से श्रवण करते थे। और जो भाव संस्कृत की टीकाओं का श्रवण करते थे, उन्हीं भावों को ब्रजभाषा (जिसे पुरुषोत्तम भाषा भी कहते हैं।) में पद रचना द्वारा व्यक्त करते थे। इसका साक्षात् प्रमाण यही है कि दानलीला, मानलीला, होरीलीला आदि का वर्णन श्रीमदभागवत में नहीं है। दान लीला का वर्णन संस्कृत में श्री गो. विट्ठलनाथ जी शृंगार रस मण्डन'' नामक अपने ग्रंथ में किया हैं। उसी आधार पर चतुर्भुजदास जी ने दानलीला का वर्णन ब्रजभाषा पद साहित्य में किया

है। वार्ता साहित्य में ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि श्री चतुर्भुजदास जी ने रहस्य-लीला भावना का विशेष रूप से वर्णन बाल्यावस्था में ही प्रारम्भ कर दिया था, जब कि लौकिक बालक बोलना भी नहीं जानता।

वे देखो दीपक बरत झरोखन हरि पौढ़े ऊँची चित्रसारी।

*

कंठ लगाय भुज दै सिरहाने, अधरामृत पीवत पिय प्यारी।

गूढ़ रसात्मक रहस्य इसी लीला को सुन कर उनके पिता श्री कुँभनदास जी चकित हो गए कि यह लौकिक बालक नहीं है। यह तो श्रीनाथजी की कृपा से अलौकिक जीव प्रगट हुआ है। गो. श्री विट्ठलनाथ जी के पंचम लाल जी श्री रघुनाथ जी ने नाम रत्नाख्य स्त्रोत्र में जो कि संस्कृत में है श्री गुसाँई जी के १०८ नाम प्रगट किये है, उसमें एक नाम यह भी है ''गीत संगीत सागरः'', श्री गुंसाँई जी स्वयं गीत, और संगीत के महान् सागर थे, तो इन अष्टछाप के भगवदीय कवियो ने जिन लीलाओं का वर्णन किया है, वह सब श्री गुसाँई जी श्री प्रभुचरण श्री विट्ठलनाथजी के मार्ग निर्देशन में हुआ है। दान गढ़, मान गढ़, साँकरी खोर आज भी नन्दगाँव, बरसाने में विद्यमान है। तो उन लीलाओं को प्रगट करना श्री गो. विपट्ठलनाथ जी की कृपा का फल है। वार्ता साहित्य में ऐसे प्रमाण भी मिलते हैं कि श्री गुसाँई जी अष्टछाप के कवियों की पद रचनाओं में संशोधन भी किया करते थे। जैसे गोविन्द स्वामी होरी की धमार गाते गाते चुप हो गये-''श्री गोवर्धन राय लाल....भाजी गिरिधर गाल लगाय हो। तब श्री गुसाँई जी ने इसे पूरा किया, ''यह विधि होरी खेल ही, ब्रज जन संग लगाय हो।''

इसी प्रकार ''कौन यह खेलने की बान'' इस पद में संशोधन किया भली यह खेलबे की बान'' श्रीनाथजी की इच्छा है-कैसी लीला करे सब भली है।

शृंगार रस के ९ अंग माने गये हैं :-

नवहि अंग शृंगार के होरी, चोरी, दान।
छलय करन, वन, रति गमन, विरह, मिलन, अरु मान।

श्री चतुर्भुजदास जी ने एवं अष्टछाप के कवियों ने इन ९ (नौं) लीलाओं का ही विशेष रुचि से वर्णन अपने पद कीर्तन साहित्य में किया है। महाप्रभु वल्लभाचार्य जी कृत सिद्धान्त मुक्तावलि में ब्रह्मवाद परकः- पुष्टिमार्ग का मूलभूत सिद्धान्त है-

'अतस्तु ब्रह्म-वादेन कृष्णे बुद्धिर्विधीयताम''

ब्रह्म-वाद के दृष्टिकोण से भगवान् श्रीकृष्ण में बुद्धि को लगाना ही महाप्रभु जी का मत है। अतः श्री चतुर्भुजदास जी तथा अन्य पुष्टिमार्गीय भक्त कवियों के पद ब्रह्मवाद परक हैं। इनकी पद रचनाओं को समझने के लिए शुद्धाद्वैत, ब्रह्मवाद आदि को समझना पड़ेगा। इस दिशा में अनुसंधान की भी आवश्यकता है कि सुबोधिनी जी में वर्णित किन टीकाओं को श्रवण कर किस पुष्टि भक्ति मार्गीय कवि ने कौनसा पद बनाया। सुबोधिनी जी के ऊपर श्री गुसाँई जी ने टिप्पणी संस्कृत में लिख कर महाप्रभु जी के भाव को उजागर किया है। उन सबका आधार लेकर साथ साथ ब्रज की रीत प्रीत को लेकर गुसाँई जी ने श्रीनाथजी के सेवा प्रणालिका प्रारम्भ की, जैसे साँझी-लीला ब्रज की कन्याओं का खेल है। रथ-यात्रा का उत्सव जगन्नाथ जी के रथ यात्रा उत्सव के अनुरूप पुष्टिमार्ग में मनाया जाने लगा। और "जो देख्यो सो गायो" जैसे श्रीनाथजी के दर्शन होते थे वैसे ही पद बनाकर श्रीनाथजी के सम्मुख गाये जाते थे।

श्री कुँभनदास जी के सात बेटा थे। उनसे जब पूछा आपके कितने बेटा है" तब बोले डेढ़ बेटा है। पुनः पूछा महाराज डेढ़ का क्या तात्पर्य है। तब आपने उत्तर दिया-"कृष्णदास तौ आधौ बेटा है, श्रीनाथजी की गायन की सेवा करत है पर गुणगान नाँहि करत है" और चतुर्भुजदास पूरौ बेटा है। सेवा हू करत है गुणगान हू करत है-सेवा से तात्पर्य यहाँ ग्रह-सेवा से भी हो सकता है। या मन्दिर की अन्य कई प्रकार की सेवाएं चतुर्भुजदास जी करते होंगे" इससे ऐसा सिद्धान्त प्रतिपादित होता है कि ठाकुर जी की सेवा-तथा जगाने से लेकर शयन पर्यंत कीर्तन-पदों का गायन प्रत्येक वैष्णव को घर में रहकर भी करना चाहिए। सेवा और गुण गान पुष्टिमार्ग के दो अनिवार्य अंग हैं। महाप्रभु बल्लभाचार्य जी की आज्ञा भी है भक्ति वर्धनी ग्रंथ में-

"सेवायां वा कथायां वा यस्या सक्तिर्यदा भवेत्।"
यावज्जीवं तस्य नाशो न क्वापीति मतिर्मम।।

गृह-सेवा तथा भगवद गुणगान दोनों ही भगवान में आसक्ति को दृढ़ करते हैं। अतः चतुर्भुजदास जी की भाँति मानव मात्र वैष्णव बनकर, सेवा गुणगान करे तो संसार की आसक्ति से ऊपर उठकर भगवद् आसक्ति की ओर अग्रसर हो सकता है-और उसका नाश कभी भी नहीं हो सकता।

– ए एम-२६ केदार नगर
शाहगंज, आगरा (उ.प्र.)

श्री चतुर्भुजदास के सुभाव की विशेषता

✍ रामशरण शर्मा 'शरण'

गुरु श्री विट्ठलनाथ जी की कृपा सों श्री कुम्भनदास कूँ सातवों पुत्र रत्न श्री चतुर्भुजदास प्राप्त भयौ। जब श्री चतुर्भुजदास की उमर दस साल की भई तौ श्री कुम्भनदास ने जा पुत्र में अपने अनुरूप आचार विचार देख कें श्री विट्ठलनाथ जी सों पुत्र कूँ ब्रह्म सम्बन्ध दिबाय दियौ और उनकी अनुनय विनय पै श्री चतुर्भुजदास कूँ अष्टछाप में प्रविष्ट कराय दियौ। बालक श्री चतुर्भुजदास के आचार विचार पै घर और बाहरी धार्मिक वातावरण कौ गहरौ अमिट असर भयौ। भावनात्मक दृढ़ भक्तिभाव, भक्तिमय काव्यात्मक भाव, सौम्य भाव, निस्पृह विरक्तिभाव, और अनन्य अंतरंग भाव आदि कौ सुभाव इनके रोम-रोम में पुर गयौ।

भावनात्मक दृढ़ भक्ति भाव कौ सुभाव :- पिता समान श्री चतुर्भुजदास में हू अपने आराध्य श्रीनाथ गोवर्धन धारी के प्रति अटूट श्रद्धा और दृढ़ भक्ति हती। जैसे श्री कुम्भनदास जी, श्रीनाथजी सों कबहु बिलग नाय रहे और क्षणिक विलग रहेऊ तौ विकल ह्वै अन्तर्मन सौं कबहु अलग नाय भये। मयूर कूँ घन, चकोर कूँ चाँद, लहरन कूँ किनारौ प्यारौ लगै। तैसोई सुभाविक सुभाव श्रीचतुर्भुजदास कौ अपने आराध्य श्रीनाथजी के प्रति ह्वै गयौ।

घर में भक्त सिरोमनि पिता कौ सानिध्य और घर सों बाहर साधु सन्त, भक्तन की सत्संगति कौ उनके सुभाव पै सुभाविक प्रभाव पर्‌यौ। बालकपन की सुभाविक केलिक्रिया अन्तर्मन में प्रमुख रहें हैं। ताकी प्रचुरता श्री चतुर्भुजदास के सुभाव में हूं दृष्टिगोचर होय है। इनकौ आराध्य कैं संग दृढ़ भक्ति कौ सुभाव सख्य रूप में हतौ। जे जा भाव सों आराध्य संग दृश्य-अदृश्य रूप में खेल्यौ करै हे। खेल में चंचलता, चपलता, रूसनौ मटकनौ, मान करनौ-मनानौ, भगनों भगानों, वाक युद्ध करनौ, चिकनी चुपरी मधु सी मीठी गारीं खानों, खवानों आदि केलि क्रिया इनके भक्ति सुभाव में समाहित हती।

भक्तिमय काव्यात्मक सुभाव :- एक रात घर की झोपड़ी में पिता पुत्र बैठे भये श्रीनाथजी के मन्दिर कूँ निहार रहे। शयन कौ समै हतौ। मंदिर के गवाक्ष सौ दीये कौ उजीतौ झांक रहयौ हौ। श्री कुम्भनदास जी ने शयन समैं कूं अन्तर्मन में धर के एक पद की पंक्ति रचि कें गाय सुनाई, "वह देखौ बरत झरोखन दीपक, हरि पौढ़े ऊँची चित्तर सारी" पास बैठे श्री चतुर्भुजदास ने भाव विभोर ह्वै तत्काल दूसरी पंक्ति रचि कें गाय सुनाई "सुन्दर बदन निहारन

कारन, राखैं हैं बहौत जतन कर प्यारी'' जा तरियाँ पिता की जिज्ञासानुरूप, अपने काव्यात्मक सुभाव की प्रस्तुति कर उनकूँ प्रसन्न कियौ।

अष्टछाप कवियन में श्री चतुर्भुजदास सबते छोटे हते। सुभाविक रूप में जे उन सबके प्यारे और सनेही रहे। जा प्यार और सनेह के कारन इनकौ काव्यात्मक सुर में श्रीनाथजी कूँ सुनानौं, वाद्य यंत्रन कूँ निपुणता सों बजानौं, पै आठौयाम संगत कौ असर रहनौ इनके इन अन्तरंग निखार कूँ देख सुन, गुरु श्री विठ्ठलनाथ जी अष्टछाप कवि, साधु संत और भक्त जन सबई अत्यन्त सन्तुष्ट और गद्-गद् भये।

सौम्य सुभावः- धार्मिक आचार-विचार, सादगी, शालीनता, शीलता, आराध्य सेवा, गुरु सेवा, बृद्ध कवि भक्तन की सेवा, घर में खेती बाड़ी सौं घर बारेन की सेवा, सरस-सरल वाक्पटुता आदि सुभाविक गुनन ते श्री चतुर्भुजदास सबके चितेरे ह्वै गये।

निस्पृह प्रवृत्ति को सुभावः- युवति काल में गृहनी कौ गोलोक गमन ह्वै गयौ और श्री चतुर्भुजदास के निस्पृह सुभाव में और प्रगाढ़ता कौ आगमन ह्वै गयौ। घर कौ बिछोह, बधू कौ बिछोह, बालकपन कौ बिछोह, इनके निस्पृह सुभाव कूँ नैंकऊ प्रभावित नांय कर सके। इनकौ वंशानुगत् निस्पृह सुभाव जुगान-जुग प्रशंसनीय रहैगौ।

अनन्य अंतरंग सुभावः- पंछिन कूँ घौंसला, गायन कूँ खिरक, गृहस्थीन कूँ घरन कौ विछोह खलै है। तैसेंई अनन्य अंतरंग सुभाव बारे भक्तन कूँ, पूजनीय सेवनीय और दर्शनीयन कौ बिछोह, इनकूँ असहनीय होय है।

एक बेर आचार्य पुत्र श्रीनाथजी कूँ गोवर्धन सों मथुरा लै गये। ता समै श्री चतुर्भुजदास ने अपनी व्यथित विरही पीड़ा जा पद सों व्यक्त करी ही। ''श्रीगोवर्धन बासी साँमरे लाल, तुम बिन रह्यौ ना जाय हो''

श्रीनाथजी नें अपने भगत की पीड़ा सुनी और तत्काल आचार्य पुत्र कूँ सुपनौं दैके पुनः गोवर्धन पधरायवे कौ चमत्कार दिखायौ।

दूसरी अंतरंग पीड़ा जो श्री चतुर्भुजदास कूँ असहनीय रही। जा समै श्रीविठ्ठलनाथजी कौ गो लोक बास भयौ, ता समै चतुर्भुजदास अपने गाँम जमुनावतौ में हते। सुनके जैसी अवस्था में हते तैसेइ दौर परे। प्रथमतः आराध्य श्रीनाथजी के दर्शन करे तत्पश्चात गुरु के दर्शन करके रुद्र कुण्ड पहुँचे। वहाँ इमली के पेड़ के नीचे तत् छिन अपनी इहि लीला की इति श्री कर दई। जे ही भक्त वत्सल भगवान के भगत के सुभाव की विशेषतान कौ निचोर है।

–नन्दबाबा मन्दिर के पास,नन्दगाँव

अष्टछापीय कवियों के ब्रह्मसम्बन्धी विचार और चतुर्भुजदास

डा. गजानन शर्मा

अष्टछाप के कवि पुष्टिमार्ग के अनुयायी थे। इनमें से चार सूरदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास और कृष्णदास श्रीमद् वल्लभाचार्य के शिष्य थे। नन्ददास, चतुर्भुजदास, गोविन्दस्वामी और छीतस्वामी श्री वल्लभाचार्य के सुपुत्र गुसाईं जी श्री विट्ठलनाथ जी के सेवक थे। पुष्टिमार्ग का दार्शनिक सिद्धान्त शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद है। श्रीमद् वल्लभाचार्य ने अपने दर्शनिक सिद्धान्तों का निर्धारण वेद, श्रीमद्भगवत गीतोक्त श्रीकृष्ण वाक्यों, वेदव्यास जी रचित ब्रह्मसूत्रों और व्यास जी की समाधि भाषा श्रीमद्भागवत की एक वाक्यता के आधार पर किया था। भारत के सभी आस्तिक दार्शनिक आचार्य परम तत्व को 'ब्रह्म' अभिधान देते हैं। ब्रह्म का अर्थ है वह आदितत्व जो शाश्वत और चिरन्तन है एवं जो अनन्त, अपरिच्छिन्न, अपरिमेय और पूर्ण है।

श्रीमद्वल्लभाचार्य का मत है कि उपर्युक्त सभी प्रमाण गंथों से सर्वभावापन्न श्री हरि ही प्रमेय रूप में ज्ञातव्य हैं-'हरिरेव प्रमेयं सर्वभावापन्नम् (त.दी.नि.शा.प्र.-प्रकाश)। आपकी मान्यता है कि वेद के पूर्वकाण्ड में (जिसे कर्मकाण्ड भी कहा जाता है) इन्हीं प्रमेय श्री हरि का यज्ञरूप में निरूपण हुआ है और उत्तरकाण्ड (जिसे ज्ञानकाण्ड भी कहा जाता है) में इन्हीं की ब्रह्म रूप में मीमांसा की गयी है। वैदिक ऋषि प्रसंगानुसार एक ही सत् तत्व को विभिन्न नामों से कहते हैं-'एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति।' अतः तत्वविद् जिस परम तत्व को वेदान्त में 'ब्रह्म' कहते हैं, उसी को स्मृति में 'परमात्मा' अभिधान देते हैं और श्रीमद्भागवत में उसे 'भगवान्' संज्ञा प्रदान करते हैं-

वेदान्ते च स्मृतौ ब्रह्मलिंग भागवते तथा।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते।। (त.दी.नि.शा.प्र.६)

पुष्टिमार्ग का सिद्धान्त है कि जिसे ब्रह्म, परमात्मा या भगवान् कहा जाता है वह परम तत्व श्री कृष्ण ही है-'परं ब्रह्म तु कृष्णो हि'- (सि.मु..६)। अन्य सभी देव प्राकृत हैं किन्तु आदिमूर्ति श्रीकृष्ण परमानन्द स्वरूप और पूर्णानन्द हैं अतः जीवों को आत्मानन्द-समुद्र में स्थित श्रीकृष्ण में ही अपनी बुद्धि विशेष

रूप से लगा कर ब्रह्मवाद से उन्हीं का स्मरण-चिन्तन करना चाहिए और सर्वदा सर्वभाव से उन्ही की सेवा (भजन) करनी चाहिए -

प्राकृताः सकला देवा गणितानन्द कं बृहत्।
पूर्णानन्दो हरिस्तस्मात् कृष्ण एवं गतिर्मम।। (श्रीकृष्णाश्रय-८)
परमानन्दरूपे तु कृष्णे स्वात्मनि निश्चयः।
अतस्तु ब्रह्मवादेन कृष्णे बुद्धिर्विधीयताम्। (सि.मु..११-१२)
आत्मानन्द समुद्रस्थं कृष्णमेव विचिन्तयेत्। (वही-१६)
सर्वदा सर्वभावेन भजनीयो व्रजाधिपः। (चतुःश्लोकी-१)

अष्टछाप के सभी कवि निर्विवाद रूप से शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद के सिद्धान्त के अनुरूप श्रीकृष्ण को ही परब्रह्म मानते हैं। सूरदास का कथन है-'प्रकृति पुरुष श्री पति नारायन सब हैं अंश गुपाल, परमानन्द भी अपने सर्वस्व श्रीकृष्ण को ही उस तत्व के रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसने सारे ब्रह्माण्ड का खेल रचा है-

'परमानन्द स्वामी मनमोहन खेल रच्यो ब्रजनाथ।' इसी परम्परा में चतुर्भुजदास का अटल विश्वास है कि वेद की ऋचाएँ जिस परम सत्ता का मंगल गान करती हैं, वह प्रभु श्रीकृष्ण ही है'-

'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लांल को,
मंगल करत वेद स्रुति गान। (चतुर्भुजदास पद संग्रह २५/५०)

सभी वेदान्त ग्रंथ सत्य और ज्ञान स्वरूप ब्रह्म को अपरिमित, असीम, अनन्त बताते हैं। अतः श्रीमद्वल्लभाचार्य 'अनन्तमूर्ति तद् ब्रह्म' कह कर श्री कृष्ण का स्मरण करते हैं। अष्टछापीय अन्य कवियों के समान ही चतुर्भुजदास भी श्री कृष्ण को अपरिमेय और अनिर्वचनीय तत्व के रूप में निरूपित करते हैं-

को गावै को परमिति पावै,
कहाँक लगु कहिए बिस्तारी। (चतु.पद.१.६/१८२)

महाप्रभु वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद में ब्रह्म के तीन रूप माने गये हैं। पहला मूल, मुख्य या आदि रूप है-रसस्वरूप, पूर्णानन्द पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण।ब्रह्म का दूसरा रूप है-अक्षर ब्रह्म। भक्तों को अक्षर ब्रह्म पुरुषोत्तम धाम या व्यापी वैकुण्ठ के रूप में प्रतीत होता है किन्तु ज्ञानियों को अक्षर ब्रह्म सच्चिदानन्द, देशकाल-अपरिच्छिन्न, स्वयंप्रकाश और गुणातीत रूप में स्फुरित होता है। अक्षर ब्रह्म गणितानन्द है। उस में कुछ आनन्दांश तिरोहित सा अनुभूत होता है। यही रूप सृष्टि कार्य में संलग्न होता है। ब्रह्म का तीसरा रूप है-अर्न्तयामी।

अर्न्तयामी इह लोक, परलोक और समस्त भूतों के अन्तःस्थिर होकर उनका नियमन करता है। अष्टछाप के कवियों को ब्रह्म के तीनों ही रूप मान्य हैं। किन्तु उन्होंने अपने काव्य में मुख्यतः ब्रह्म के रसस्वरूप, पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण रूप का ही विशद वर्णन किया है और अपने पदों में उन्हीं की विविध रसमयीलीलाओं का तन्मय होकर गान किया है। किन्तु उन्होंने यथावसर अक्षर ब्रह्मरूप निजधाम का वर्णन भी किया है। सूर की निम्न पंक्तियाँ इसकी पुष्टि करती है-

पूरन ब्रह्म प्रकट पुरुषोत्तम नित निज लोक विलासी।
जहँ वृन्दावन आदि अजिर, जहाँ कुंज-लता-विस्तार।
जहँ गोवर्धन पर्वत मनिमय, सघन कन्दरा सार। (सूरसारावली)

इसी प्रकार ब्रह्म के अन्तर्यामी रूप का उल्लेख भी अष्टछाप के अनेक पदों में मिलता है। परमानन्ददास का एक पद इस ओर संकेत करता है-

'तुम प्रभु अन्तर्यामी व्यापक द्वितीय साखि कहा दीजे।'

चतुर्भुजदास ब्रह्म के तीनों रूपों को मान्यता देते हैं किन्तु पूर्ण पुरुषोत्तम रसात्मक श्रीकृष्ण की लीलाओं के गान में ही तल्लीन रहते हैं।

वेदों में ब्रह्म को रसस्वरूप कहा गया हैं। जिसे प्राप्त कर जीव आनन्दमय हो जाता है-'रसो वै सः। रस ह्येवायं लब्धवाऽऽनन्दी भवति।'(तैत्तरीयोपनिषद्) अतः श्री मद्वल्लभाचार्य रसस्वरूप श्रीकृष्ण को पूर्णानन्द कहते हैं। अष्टछाप के सभी कवि महाप्रभु वल्लभाचार्य की मान्यता का अनुसरण करते हुए श्रीकृष्ण के रसरूप, आनन्दनिधि स्वरूप और रसिक शिरोमणि रूप को अपने पदों में व्यक्त करते हैं-'सदा एकरस एक अखंडित आदि अनादि अनूप।' (सूर) 'आनँद की निधि नन्दकुमार।'(परमानन्ददास)'रसिक सिरोमणि नँद नन्दन' (वही)। इसी परम्परा में चतुर्भुजदास भी श्रीकृष्ण को रस निधि, रसिक, रसिकवर, रसिकराय आदि विशेषणों से सम्बोधन करते हैं। उनका विश्वास है कि रसनिधि, रसिकराय प्रभु रस से ही रीझते हैं, और रस ही उन्हें वश में कर पाता है-

रस ही में बस कीन्हे कुँवर कन्हाई
रसिक गोपाल रसिक रस रिझवति,
रस ही में तासों रिस तजि री माई। (चतु.पद.१४७/२६६)
'चत्रभुज' प्रभु गिरधर रस बस भए (वही)

रसिकनिवर रसिक गिरिधर - (चतु पद १५६/३२१)

सब रसिकन को राइ री। (चतु. पद १३८/२७२)

रस का अर्थ है आनन्द। आनन्द की अभिव्यक्ति सौन्दर्य, माधुर्य और प्रेम के द्वारा होती है। अतः अष्टछाप के सभी कवियों ने श्रीकृष्ण को सौन्दर्य, माधुर्य और प्रेम रूप में चित्रित किया है। सूर उन्हें 'सुन्दरता का सागर' कहते हैं, जिसके अंग-प्रत्यंग में छबि की तरंगे उठती रहती है, जिनमें भक्तों का नागर मन लीन हो जाता है। महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्य के 'मधुराष्टक' में तो मधुराधिपति से सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु को मधुर बताया गया है। चतुर्भुजदास अनुभव करते हैं कि श्रीकृष्ण का सौन्दर्य नित्य नूतन और क्षण-क्षण में नवीनता धारण करने वाला है। उनके अंग-प्रत्यंग से उठने वाली शोभा की तरंगे विश्व के मन को हर लेती हैं अतः नयनपुटों से रूप-सुधा का पान करते हुए, उन्हीं के शरणागत होकर जीने में ही जीवन की सार्थकता है-

माई री आजु औरु काल्हि औरु प्रति छिनु और हि औरु
देखिए रसिक गिरिराज धरन।
नित प्रति नव छबि बरनै सो कौन कवि,
नित ही सिंगारु बागे बरन-बरन।
स्याम तन अंग-अंग मोहत कोटि अनंग,
उपजी सोभा तरंग विश्व के मनुहरन।
'चतुर्भुज' प्रभु कौ रूप-सुधा नैनपुट
पान कीजै जीजै रहिये सदाई सरन।। (चतु.पद.१७२/१८१)

चतुर्भुजदास के परब्रह्म श्रीकृष्ण साक्षात् मन्मथमन्यथ हैं। उनका अप्रितम सौन्दर्य कोटि कन्दर्पो से भी बढ़ कर है-'नख-सिख रूप अनूप बिराजित अंग-अंग मन्मथ कोटि बिसेखों। (चतु.पद.१६८/३५२)

वे परम प्रेममय रसनिधि परब्रह्म श्रीकृष्ण से प्रेम की वर्षा करने की प्रार्थना करते हैं-'प्रेम नीर बरखाइये नव धन नन्दकिशोर हो।' (चत. पद. १२८/२४६)

अष्टछापीय कवियों के उपर्युक्त वर्णन महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्य के सिद्धान्तों से अनुप्राणित हैं। महाप्रभु श्रीकृष्ण को आनन्दाकार मानते हैं। उन के अंग-प्रत्यंग आनन्द रूप हैं-'आनन्दाकारमुत्तमम्, आनन्दमात्र करपाद मुखोदरादि' (त.दी.नि.शा.प्र.६७,४४)

शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद केअनुसार अद्भुत कर्म करने वाले श्री कृष्ण ही जगत् के कारण हैं, वे ही जगदाधार हैं और वे ही अनन्त नाम-रूपों के भेद से जगत् रूप में क्रीड़ा कर रहे हैं-

यत्र येन यतो यस्य यस्मै यद्यद् यथा यदा।
स्यादिदं भगवान् साक्षात् प्रधानपुरुषेश्वरः।। त.दी.नि.शा.प्र.६६
नमो भगवते तस्मै कृष्णायाद्भुतकर्मणे।
रूप-नाम-विभेदेन जगत् क्रीडति यो यतः। वही-१

सभी अष्टछापीय कवि महाप्रभु जी के ब्रह्मवाद के सिद्धान्तों के अनुरूप पर ब्रह्म श्री कृष्ण को ही सृष्टि का मूल कारण मानते हैं, जिन्होंने लीला करने के लिए स्वयं को ही नाना रूपों और नामों में विभक्त कर जगत् रूप में प्रकट कर लिया है-

खेलत-खेलत चित में आई सृष्टि करन विस्तार।
अपने आप करि प्रकट कियो है हरी पुरुष अवतार। -सूर

चतुर्भुजदास भी जगत् का मूल कारण और एक मात्र आधार परब्रह्म श्रीकृष्ण को ही मानते हैं, जिन्होंने अपने को सृष्टि के सुन्दर रूप में व्यक्त किया है-

'चतुर्भुज' मखिल जगदाधार रूरुया
निज कृपया निदर्शित सुरूपम्। (चतु.पद.१६६/३५३)

इसी कारण अष्टछापीय कवि छीतस्वामी को उपनिषदों की 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' की भावना और ब्रह्मवाद के सिद्धान्तों के प्रतिफलन रूप सर्वत्र श्री कृष्ण के ही दर्शन होते हैं-

आगे कृष्ण पाछे कृष्ण इत कृष्ण उत कृष्ण
जित देखौं तित कृष्ण ही मई री।

शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद के अनुसार ब्रह्म निर्गुण भी है और सगुण भी। सच्चिदानन्द ब्रह्म गुणरहित भी हैं और उनमें सत्यादि सहस्त्रों गुण सहज ही रहते हैं-

सच्चिदानन्द रूपं तु ब्रह्म व्यापकमव्ययम्।
सर्वशक्ति स्वतंत्रं च सर्वज्ञं गुण वर्जितम्।।

वे निर्गुण होकर भी सगुण-साकार रूप में अवतार ग्रहण करते हैं किन्तु प्रत्येक स्थिति में वे सर्वसमर्थ हैं। यशोदा की गोद में स्थित होते हुए भी

श्रीकृष्ण सम्पूर्ण जगत् के आधार हैं-'कृष्णो यशोदा क्रोडे स्थितो ऽपि सर्वजगदाधारो भवति।'(त.दी.नि., शा.प्र.५४ प्रकाश) अतः अष्टछाप के सभी कवि अपने पदों में बारम्बार यह व्यक्त करते हैं कि अव्यक्त, अनिर्वचनीय, निर्गुण ब्रह्म स्वयं श्री कृष्ण रूप में भूतल पर पधारते हैं-

ब्रह्म अगोचर मन वाणी लें अगम अनन्त प्रभाव।
भक्तन हित अवतार धारि जो करि लीला संसार।। (सूरसागर द्वि. स्कन्ध)
प्रकट ब्रह्म निकुंज नायक भक्त हेत अवतार। (परमानन्ददास)

इस सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि शुद्धाद्वैत दर्शन साकार ब्रह्मवाद मानता है। यहाँ निर्गुण का अर्थ प्राकृत गुण रहित माना जाता है।

अन्य अष्टछापीय कवियों के समान ही चतुर्भुजदास की भी मान्यता है कि साक्षात् परब्रह्म पूर्ण पुरुषोत्तम ही भक्तों का दुःख नाश करने के लिए यदुवंश शिरोमणि श्रीकृष्ण के रूप में भूतल पर अवतरित होते हैं और तदनुरूप कार्य सम्पन्न कर भक्तों का पालन-रक्षण करते हैं-

भक्तजन-दुख-विध्वंस-कृति-तत्परं
पालिताशेष यदुवंश भूपम्। (चतु.पद. १६६/३५३)

परब्रह्म की उपासना चतुर्विध पुरुषार्थ-प्रदायिनी होती है। सभी अष्टछापीय कवियों के अनुरूप चतुर्भुजदास की भी श्रीकृष्ण को ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पुरुषार्थों के सहित समस्त सुखों के दाता मानते हैं। उनका विश्वास है कि श्री गोवर्धनधर प्रभु श्रीकृष्ण गोकुल के त्राता, भक्तों के रक्षक हैं, उनका ही अनन्य आश्रय लेना चाहिए-

धर्म अर्थ काम मोक्ष सब सुख के दाता।
:चतुर्भुज' प्रभु गोवर्धनधर गोकुल के त्राता। (चतु. पद.१०३/१८३)

चतुर्भुजदास का मत है कि सगुण ब्रह्म की लीला का रहस्य दुर्ज्ञेय है। भगवान् के नाभिकमल से उत्पन्न चतुर्मुख ब्रह्मा भी उनकी सगुण लीला को देखकर चकित ही नहीं भ्रमित भी हो जाते हैं और परीक्षा लेने के लिए भी तत्पर हो जाते हैं।

ब्रजलीला भूल्यो चतुरानन (चतु. पद.-१७१/३५६)

ब्रह्म के साथ उनकी नित्य शक्ति सदैव रहती है। जब ब्रह्म पृथ्वी पर अवतरित होते हैं, तब शक्ति भी अवतरित होती है। श्रीकृष्ण के साथ राधा का

नित्य सम्बन्ध है। राधा प्रकृति है और श्री कृष्ण पुरुष। राधा और कृष्ण दोनों अभिन्न है-

प्रकृति पुरुष एकै करि जानों बातनि भेद करायो।
द्वै तनु जीव एक हम तुम दोऊ सुख कारन उपजायो। (सूरसागर दशम स्कं.)

शक्ति युक्त शक्तिमान की वन्दना उपासना रसात्मक बन जाती है। अष्टछापीय सभी कवियों ने युगल स्वरूप की क्रीड़ाओं का वर्णन किया है। चतुर्भुजदास भी युगल स्वरूप पर खूब रीझे है। उन्हें युगल स्वरूप का परस्पर रीझना-रिझाना लुभा लेता है-

मुख जोरें प्रतिबिम्ब विराजत, निरखि-निरखि मन में मुसिकावत।
'चत्रर्भुज' प्रभु गिरिधर श्री राधा, अरस-परस दोउ रीझि रिझावत।।
(चतु. पद. १११/२०४)

चतुर्भुजदास प्रेमरंग में रंगे युगल स्वरूप के प्रति विशेष भक्ति भाव रखते हैं। चतुर्भुजदास के हृदय पर श्यामतमाल रूप श्रीकृष्ण पर कनक बेलि सी लिपटी रसमाती राधिका की छबि स्थायी रूप से अंकित हो गयी है-

'चत्रर्भुज' स्याम तमाल पर लपटी कनक बेलि
मानों रतिरन चढ़्यो प्रेमरंग रस बौरें। (चतु. पद.११३/२०७)

ब्रह्म परायण ज्ञानीजन मुक्ति को सर्वोपरि उपलब्धि मानते हैं किन्तु रसात्मक परब्रह्म श्रीकृष्ण के भक्त तो भजनानन्द में ही मग्न रहते हैं।-

घर हरि दरसन हरि-जसु गावत भक्ति मुक्ति सी दासी।
बदत न कछू 'चत्रर्भुज' वैभव भजनानन्द उपासी।।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अष्टछापीय कवियों के ब्रह्मसम्बन्धी विचार महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद से प्रेरित और अनुप्राणित हैं किन्तु ये कवि हैं अतः ब्रह्मवाद के सिद्धान्तों की रसात्मक अभिव्यक्ति करते हैं। वे दार्शनिक शब्दावलियों और शास्त्रीय तर्कों में नहीं उलझते। चतुर्भुजदास भी इसी प्रणाली का अनुसरण करते हैं।

इसी कारण इनका काव्य सहज एवं रसमय है।

– ३२, शिक्षक नगर,
विमान पत्तन मार्ग, इन्दौर

''सप्तम के पोषक : माधुर्य-विरह के परम गायक : कृष्णाराध्य चतुर्भुजदास''

✍ डा. घनश्याम व्यास

नियति का क्रम, मानव की स्थिति को जन्म के साथ ही अपने संग लिये रहता है। तदनुसार मानव अपने पथ की ओर अग्रसर रहता है। इसी के साथ यह भी मान्य करना समुचित है कि मानव अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति से, कर्म के प्रति अबाध्य लगाव तथा अटल विश्वास भाव से स्वयं को असीम पथ का पथिक बनाते हुए जीवन सरिता को निरन्तर प्रवाहमय बनाते हुए, उसे चिन्तन पक्ष से पुष्ट कर सकता है। नित नूतन भाव भर सकता है। सांसारिक जीवन से बंधे रह कर भी संसार के लौकिक अस्तित्व से परे होकर भक्ति के परम रस को प्रवाहित करने में मग्न रह सकता है। परिणामत्व वह स्वयं कुछ न चाह कर भी, अनुपम पद प्राप्त करने का अविस्मरणीय अधिकारी बन जाता है। ऐसा ही कुछ मुझे वैष्णव सम्प्रदाय के अनन्य कवि-भक्त चतुर्भुजदास में परिलक्षित होता है। मुझे भक्त-कवि चतुर्भुजदास के जीवन क्रम की ओर ध्यान देने पर एक पक्ष ने विशिष्ट रूप से प्रभावित किया है तथा मेरे मानस को आकर्षित भी किया है-वह है सप्तम का क्रम। तदर्थ मैं उन्हें सप्तम के पोषक के रूप में देखने के साथ-साथ माधुर्य-विरह के परम गायक के रूप में भी स्वीकार करता हूँ। प्रथमतः सप्तम के पोषक ''पर सहज गति से विचार कर लेते हैं।

चर्चा : ''सप्तम के पोषक'' की :

पुष्टिमार्गीय वैष्णव सम्प्रदाय साहित्य में ''अष्ट'' का विशिष्ट महत्व है। आचार्यप्रवर श्रीमद्वल्लभाचार्य जी ने वैष्णव सम्प्रदाय की स्थापना के साथ पुष्टिमार्ग का निरूपण किया था। इस क्रम के अन्तर्गत पुष्टिमार्ग से ''अष्टसखा'' एवं ''अष्टछाप'' अपने गौरवपूर्ण इतिहास के कारण सम्प्रदाय तथा साहित्य की दृष्टि से अनुपम तथा अतुलनीय है। हिन्दी साहित्य परम्परा का जहाँ तक प्रश्न है,, पुष्टि मार्ग के कवियों का महत्व ''अष्टछाप'' के रूप में विशिष्ट है। वैष्णव सम्प्रदाय के ''अष्टछाप'' कवियों का साहित्य की दृष्टि से विशिंष्ट महत्व है एवं अष्टछाप के सिरमौर कवि ''महाकवि सूरदास'' का बाल स्वरूप-वर्णन विश्व साहित्य में अद्वितीय है तथा उनके समकक्ष बाल-चरित्र का निरूपण और बाल मनोभाव की गहनता को कोई नहीं पा सका है। इतना सब कुछ

होते हुए भी इन "अष्टछाप" कवियों के काल क्रम की ओर ध्यान देने पर एक विशिष्ट तथ्य हमारे समक्ष उपस्थित हो जाता है-वह है "अष्टछाप" के दो कवियों का। उनके नामों का उल्लेख करने के पूर्व मैं यहाँ उनके क्रम को प्रस्तुत करता हूँ जो निम्नतः है-

क्र.	नाम	गुरु का नाम	शरणागति काल	मूल नाम
१.	कुम्भनदास	वल्लभाचार्य	सं. १५५६	अर्जुन सखा
२.	सूरदास	वल्लभाचार्य	सं. १५५७	कृष्ण सखा
३.	परमानन्ददास	वल्लभाचार्य	सं. १५६७	लोक सखा
४.	कृष्णदास	वल्लभाचार्य	सं. १५६८	ऋषभ सखा
५.	गोविन्दस्वामी	विठ्ठलदास	सं. १५७२	श्री दामा सखा
६.	छीत स्वामी	विठ्ठलदास	सं. १५७२	सुबल सखा
७.	चतुर्भुजदास	विठ्ठलदास	सं. १५९८	विशाल सखा
८.	नन्ददास	विठ्ठलदास	सं. १६०७	भोजसखा

उपर्युक्त क्रमबद्ध अष्टछाप कवियों की नामावली से सुस्पष्ट हो जाता है कि क्रमबद्धता के आधार पर महाकवि सूरदास जी का नाम द्वितीय स्थान पर है, परन्तु काव्य सृजन तथा आन्तरिक मनोदशा का चित्रण के आधार पर महान् भक्त कवि सूरदास का नाम अष्टछाप के कवियों में ही सर्वोच्च नहीं है अपितु बाल्य चित्रण में वे विश्व साहित्य में बेजोड़ हैं, अद्वितीय हैं। यह तो बात हुयी महाकवि सूरदास जी की। मुझे इससे पूर्णतः हटकर दो कवियों के सम्बन्ध में तथ्य स्पष्ट करना है। उनके नाम हैं क्रमशः कुम्भनदास एवं सातवें क्रम के कविवर चतुर्भुजदास।

अष्टछाप के कवियों की ओर ध्यान देने पर ज्ञात हो जाता है कि वैष्णव सम्प्रदाय में सर्वप्रथम शरणागति में आनेवाले अर्थात् दीक्षित होने वाले भक्त कवि श्री कुम्भनदास हैं। कुम्भनदास को महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने अपनी शरण में लिया था। उन्हें दीक्षित किया था। इनके सम्बन्ध में ऐसा कहा जाता है कि ये वल्लभाचार्य जी के समय में स्वकार्य से समय मिलने पर तथा स्वयं की सुविधानुसार श्रीनाथजी का कीर्तन किया करते थे। अष्टछाप के कवियों में कुम्भनदास को आचार्य श्री जी ने सर्वप्रथम दीक्षा देकर पुष्टिमार्ग में सम्मिलित किया था। काल क्रमानुसर एक वर्ष पश्चात् आचार्य श्री वल्लभाचार्य जी ने महाकवि सूरदास जी को पुष्टिमार्ग में सम्मिलित क़िया था तथा उन्हें दीक्षित कर अपनी शिष्य परम्परा में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया था।

तदनन्तर उन्होंने भक्त कवि परमानन्द को दीक्षित किया था। उस समय सूरदास और परमानन्ददास श्रीनाथजी के विभिन्न पदों के माध्यम से गायन करते हुये कीर्तन किया करते थे। कहने का तात्पर्य यह है कि कुम्भनदास पर वल्लभाचार्यजी की विशेष कृपा थी तथा वे प्रथम शिष्य थे। "दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता" में श्री गुसाईं के सेवक चतुर्भुजदास, कुम्भनदास के बेटा, अष्टछाप में जिनके पद गाइयत हैं, के अर्न्तगत वार्ता प्रसंग- ।में उनके जन्म का वृत्तान्त उल्लिखित है। वार्ता में स्पष्ट रूप से कहा है कि-"तब श्री गोवर्द्धननाथजी ने हँसि कै आज्ञा करि, जो कुंभना ! तू धन्य है, जा मैंने तोकों सत्संग के लिए भगवदीय पुत्र दियो।"इसी के साथ एक घटना का विवरण है। श्री गोवर्द्धननाथजी ने माखन के बहाने अपने चतुर्भुज स्वरूप के दर्शन कुम्भनदास को दर्शन कराते हैं। तदनन्तर कुम्भनदास की पत्नी के पुत्र होता है। यह उनकी सातवीं सन्तान थी। कुम्भनदास इसका नाम ही चतुर्भुजदास रखते हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास अपनी पिता के सातवीं सन्तान के रूप में पुत्र रत्न थे। मैं अष्टछाप के कवियों का उल्लेख कर चुका हूँ। उस क्रम में भी श्री चतुर्भुजदास का स्थान सातवें क्रम पर है। यह सब विवरण देने का कारण यह है कि चतुर्भुजदास के जीवन का क्रम सातवें पुत्र जन्म के रूप में होता है तथा अष्टछाप के कवियों में भी उनका दीक्षित होने का क्रम सातवें स्थान पर ही है। अतः मैं यह मत देना चाहता हूँ कि भक्त कवि चतुर्भुजदास सातवें क्रम के अत्यन्त भाग्यशाली व्यक्तित्व के धनी थे। तदर्थ आज भी उनके पदों का गायन अविरल रूप से चल रहा है। यह है उनके सप्तम के पोषक की महत्ता। सच तो यह है कि अंक शास्त्र के अनुसार भी सात का अंक दो अंकों के महत्व को प्रदान करता है-'वह है सात और दो। इस प्रकार सात का अंक से सम्बन्धित व्यक्ति जीवन में अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण अपने आप बनते जाता है। अब चतुर्भुजदास के अन्य पक्ष की ओर अग्रसर होता हूँ। (दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता पृ. ३८०-३८४ सं. द्वितीय)

अष्टछाप में पिता-पुत्र :

पुष्टिमार्ग के "अष्टछाप कवियों" का हिन्दी साहित्य में विशिष्ट महत्व तथा काव्य की दृष्टि से उनका स्थान श्लाध्य है। अष्टछाप के कवियों की ओर ध्यान देने पर सुस्पष्ट हो जाता है कि कालक्रमानुसार "श्री कुम्भनदास का नाम सबसे ऊपर है अर्थात् वे पुष्टिमार्ग को स्वीकार करने वाले प्रथम कवि रहे हैं। उन्हें आचार्य प्रवर वल्लभाचार्य जी ने अष्टछाप कवियों में सर्वप्रथम दीक्षित किया था। उनके पश्चात् महाकवि सूरदास का क्रम आता है। कालक्रमानुसार

भक्त कवि चतुर्भुजदास का क्रम सातवाँ हैं। श्री चतुर्भुजदास जी ने विपुल मात्रा में पदों की रचना की है। चतुर्भुजदास के पदों की ओर ध्यान देने पर सुस्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने श्रीकृष्ण का रूप वर्णन अनेक रूपों में तथा अनेक स्थितियों में किया है। इनका श्रृंगार वर्णन अनुपम है। इनके पदों के अध्ययन से ज्ञात हो जाता है कि चतुर्भुजदास श्रृंगार के दानों पक्षों यथा संयोग और वियोग वर्णन में सिद्धहस्त थे। भावातिरेक की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

सप्तम के पोषकः कवि चतुर्भुजदास के सम्बन्ध में विचार करते समय यह स्पष्ट कर चुका हूँ कि चतुर्भुजदास अष्टछाप कवि कुम्भनदास की सातवीं सन्तान थे। साथ ही यह भी ज्ञात हो गया कि वे अष्टछाप कवियों में सातवें स्थान पर आरूढ़ हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि पुष्टिमार्ग के "अष्टछाप" कवियों में केवल एक ही परिवार के दो कवि हैं-कुम्भनदास और चतुर्भुजदास। और तो और-दोनों पिता-पुत्र है। दोसौबावन वैष्णवन की वार्ता में तो यह स्पष्ट हुआ है कि-श्री गोवर्द्धननाथ जी ने ही अपने भक्त कवि कुम्भनदास को प्रसन्न रखने के लिए कहा कि "जा मैंने तोको सत्संग के लिए भगवदीय पुत्र दियो।" इस प्रकार प्रभु श्री गोवर्द्धननाथ जी ने अपन भक्त की सत्संग के प्रति दृढ़ आसक्ति को पूर्ण करने हेतु पुत्र प्रदान किया था। यह सब नियति का क्रम है जो क्रमबद्धता के साथ अपने आप पुष्ट होता है। यह अपने आप में अनुपम संयोग ही कहा जा सकता है।

माधुर्य-विरह के परम गायकः

अष्टछाप के कवि भक्त चतुर्भुजदास का जन्म ई. सन् १५३० विद्वानों ने निश्चित किया है। उनके निधन का समय ई. १५८५ मान्य किया है। इस प्रकार चतुर्भुजदास पचपन वर्ष की आयु तक ही काव्य सृजन कर सके। " दोसौ बावन वैष्णवन की वार्ता के अनुसार चतुर्भुजदास ने अपने शैशव काल में ही कविता के प्रति विशेष रुझान व्यक्त करना प्रारम्भ कर दिया था। अष्टछाप के कवि कुम्भनदास की सातवीं सन्तान होने के कारण पिता के विशेष दुलारे रहे होंगे तथा उनके स्नेहभाजन के फलस्वरूप पिता के पदचिन्हों पर चलने लगे हों तथा कविता के प्रति तथा भगवत्-भाव के प्रति झुके हों ऐसा भी कह सकते हैं। चतुर्भुजदास काव्य रचना की ओर आकृष्ट हो रहे हैं, यह दृष्टिगत होते ही वे पिता के अपेक्षाकृत अधिक दुलारे पुत्र हो गये थे। परिणामतः उन्हें सर्वाधिक पितृ-प्रेम तथा वात्सल्य का अपेक्षाकृत अधिक अधिकार प्राप्त हुआ, अन्य पुत्रों से, सन्तानों से। चतुर्भुजदास पर पिता के काव्य-रचना के संस्कार के साथ अपने जन्म स्थान के वातावरण का भी गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। उनका जन्म

स्थल जमुनावतो गाँव है जो गोवर्धन की सुरम्य प्रकृति से ओत-प्रोत है। वास्तव में चतुर्भुजदास पर ही प्रकृति का प्रभाव तथा पिता के संस्कार उभरे हैं ऐसा कह सकते हैं, कारण उनके पाँच भाई बड़े थे, परन्तु वे ऐसे नहीं थे। अर्थात् मैं इसे नियति का क्रम ही कहूँगा तथा वे वैष्णव सम्प्रदाय के श्रेष्ठ कवियों में से एक मान्य किये गये। चतुर्भुजदास को पिता का असीम दुलार प्राप्त हुआ तदर्थ वे प्रेम और माधुर्य के पदों के गान में विशेष रूप से सिद्धहस्त थे।

चतुर्भुजदास के पिता भक्तकवि कुम्भनदास साहित्य की दृष्टि से "अष्टछाप " कवियों में सर्वप्रथम दीक्षित हुये थे तथा "अष्टसखा" के रूप में वे सम्प्रदाय के द्वारा मूल नाम के रूप में "अर्जुन सखा" के रूप में सुप्रसिद्ध थे। तदनुसार उनके पुत्र चतुर्भुजदास" अष्टछाप कवियों में सातवाँ क्रम पर हैं तथा "अष्टसखा" के रूप में सम्प्रदाय में "विलास सखा" के नाम से विख्यात थे। दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता में अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास को "विमला" सखी के स्वरूप में मान्य किया है।" साथ ही यह भी उल्लेख किया गया है कि "ये ललिता जी तें प्रगटी हैं।" तदर्थ उनके "तामस " भाव रूप हैं।

भारतीय परम्परा का प्रमुख पक्ष आध्यात्म्य में गुरु कृपा से ही पुष्ट होता है। वैष्णव सम्प्रदाय में इसका विशिष्ट महत्व है। प्रथमतः "नाम सुनाने" का क्रम सम्पन्न होता है तदनन्तर" ब्रह्म सम्बन्ध" गुरु से लिया जाता है, जिसे पुष्टिमार्ग में दीक्षित होना कहा जाता है। चतुर्भुजदास जी अपनी १० वर्ष की आयु में ही पुष्टिमार्ग स्वीकार कर दीक्षित हो गये थे। चतुर्भुजदास ने अनन्य भाव से आचार्य श्री विट्ठलदास जी का गान किया है तथा उनकी महिमा को निरूपित किया है। निम्न पद से सुस्पष्ट हो जाता है-

"श्री वल्लभ संतत सुयश नित्य उठ गाऊँ।
मन क्रम वचन क्षण एको न विसराऊँ।।१।।

श्री पुरुषोत्तम अवतार सुकृत फल जगतवंदन श्री विट्ठलेश दुलराऊँ।
परस पदकमल रज निरख सुंदरनिधि प्रेम पुलकत कलेश कोटिक नसाऊँ।।२।।

श्री गिरिधर देवपति मानमर्दन करन घोषरक्षक सुखदलीलासुनाऊँ।।
श्री गोविंद ग्वालसंग गाय ले चलत वनविशदअंबुज हाथ शिर परसाऊँ।।३।।
श्री बालकृष्ण सहजबालक दशाकमललोचन रंगरुचि बढ़ाऊँ
भक्तिमार्ग प्रकटकरण गुणराशि ब्रजमंडल श्री गोकुलनाथ लडाऊँ।।४।।
श्री रघुनाथ धर्मधीर शोभासिंधु दुख दूर बहाऊँ।।
पतित उदाहरण महाराज श्री यदुनाथ रसना चातक ज्यों रटाऊँ।।५।।

श्री घनश्याम रूप अभिराम रसिकरस निरख नयन सिराऊँ।।
चतुर्भुजदास परसो द्वारे प्रणनित करें श्री वल्लभकुल चरणामृत भोर उठ पाऊँ।।६।।

उपर्युक्त पद में चतुर्भुजदास ने अपने गुरु शिरोमणि की अनन्त महिमा का गान करते हुए उनके चरणों का धोवन नित्य पान करने का पक्ष निरूपित करते हुए अपनी गुरु निष्ठा का अनुपम परिचय प्रस्तुत किया है। साथ वे यह भी कहने में नहीं हिचकिचाते कि उनकी ही कृपा से ब्रजमंडल में भक्तिरस का प्रवाह प्रकट रूप में प्रवाहित है। उनकी ही कृपा से मुझ सदृश पतित का उद्धार सम्भव हुआ है।

चतुर्भुजदास का भक्ति भाव गुरु के प्रति कितना गहन है, इसका निरूपण अपने एक पद में करते हुए भाव व्यक्त किया है कि वे तो अपने सेवक के लिए सदैव ही आनन्द प्रदान करने वाले हैं। आनन्द के सागर हैं। उनके दर्शन से हृदय सराबोर हो उठता है तथा अलौकिक आनन्द की धारा प्रवाहित होने लगती है। मुझ सेवक के लिए तो वे ही श्री पुरुषोत्तम के अवतार हैं तथा उनकी लीलाओं के नित दर्शन कराते हैं। जीवन की समस्त पतित स्थितियाँ तो उनकी अनुपम और उदार कृपा भाव से समाप्त हो गयीं हैं। ऐसे हैं मेरे गुरु श्री विठ्ठलनाथ जी। चतुर्भुजदास के पदों में केवल गुरु महिमा ही व्यक्त नहीं होती अपितु पूर्ण समर्पण भाव के साथ सरस भावधारा प्रवाह हृदय को रससिक्त सक्त करने में भी समर्थ है। निम्न पद द्रष्टव्य है-

सेवक की सुखरासि सदा श्रीवल्लभराजकुमार।
दरसन ही तें होत प्रसन्न मन श्री पुरुषोत्तम लीला अवतार।।
सुदृष्टि चितें सिद्धान्त बतायो लीला एक अनुसार।
यह त्यजि आन ज्ञान कों धावत भूले कुमति बिचार।।
जाके कहे गही भुज दृढ़ करि श्री गिरिधर नंददुलार।
चतुर्भुज प्रभु उद्धरे पतित श्री विठ्ठल कृपा उदार।।

(राग सारंग-वार्ता-२५२)

अष्टछाप के कवियों की भाँति चतुर्भुजदास ने भी बाल स्वभाव के अत्यन्त मनोरम चित्र उपस्थित किये हैं। बालक कृष्ण किस प्रकार आपी में आकर अपनी माता को सहज भाव से अनेक बातें कहता है। उनका प्रस्तुत पद बालक के माधुर्य के साथ भावों की मधुरता को अविरल रूप से निरूपित करता है-

''मैया मोहि माखन मिश्री भावै।।
मीठो दधि मिठाई मधु घृत अपने कर सों क्यों न खबावे।।

कनक दोहनी देकर मेरे गौदोहन क्यों न सिखावे।
ओट्यो दूध धेनु धौरी को भरके कटोरा क्यों न पिबावै।।२।।
अजहू व्याह नहीं करत मेरो तोहि नींद क्यों आवे।
चतुर्भुजदास प्रभु गिरिधर की बतियां सुनले उछंग पय पान करावे।।३।।

(राग विभास रामकली)-पुष्टिमार्गीय पद संग्रह भाग-३ तीजो (प्रथम पद राग भैरव-पद संग्रह-३)

उपर्युक्त पद में कवि ने बालक की सहजता का अंनुपम चित्र उपस्थित किया है। दूध, दही, मिठाई आदि न खिलाने के साथ उसका यह कहना कि मेरा अभी तक मेरा विवाह नहीं किया और तुझे नींद कैसे आती है। इस प्रकार सहज माधुर्य भाव को प्रस्तुत करने में चतुर्भुजदास अत्यधिक कुशल चितेरे थे।

चतुर्भुजदास काव्य-ध्वनि के अनुपम काव्यकार थे। उनके पदों में संगीत के साथ नृत्य-भंगिमा भी पूर्णतः जीवन्त हो उठती है। उनके पदों को पढ़ते अर्थात् गाते समय ऐसा लगता है कि वाणी स्वयं नृत्य के साथ संगीत का ताल निभाते हुए भाव विभोर कर रही है। निम्न पद इसका हमे प्रत्यक्षीकरण कराता है-

''जयति आभीर नागरी प्राणनाथे।।
जयति ब्रजराज भूषण यशोमति ललन देत नवनीत सु हाथे।।
जयति पात परभात दधिखात श्रीदामा संग अखिल गोधनवृंद जुरें साथें।।
ठौर रमणीक वृंदा विपिन शु भरथल सुंदरी केलिगुण गूढगाथे।।२।।
जयति तरणितनया तीर रासमंडलरच्यो ततता थेईथेई ताथे।।
चतुर्भुजदास प्रभु गिरिधरन बहुरि अबप्रकट श्री विठ्ठलेश ब्रजकियो सनाथे।।३।।

उपर्युक्त पद राग भैरव में है। नृत्य और संगीत का अद्‌भुत समन्वय कवि ने प्रस्तुत किया है। प्रकृति का स्पष्ट और सौन्दर्यमय चित्र भी निर्मित किया है। इसी के साथ उन्होंने गुरु महिमा को भी सहज रूप में निरूपित किया है। परिणामतः इनके पद एक साथ माधुर्य, सौन्दर्य, सरसता, प्रकृति निरूपण एवं भाव तन्मयता समाहित करने में पूर्णतः समर्थ दृष्टिगत होते हैं। (पुष्टिमार्गीय पद संग्रह : पृ०२६)

चतुर्भुजदास की सौन्दर्य भावना अत्यन्त सूक्ष्मदर्शी है। शब्द योजना के माध्यम से चित्र उपस्थित करने में पूर्ण कुशल होने के साथ-साथ सौन्दर्य को ध्वनि की गति के साथ निरूपित करने में अनुपम सिद्धता प्राप्त की है, ऐसा प्रतीत होता है। शृंगार निरूपण में उनके शब्द माधुर्य की स्थिति तो देखते ही बनती है। सौन्दर्य दर्शन से किस प्रकार हृदय मुग्ध हो जाता है तथा अपने

आप मुग्धावस्था को प्राप्त होने लगता है, उसका सजीव क्रम चतुर्भुजदास के पदों में स्थायी गुण के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। चतुर्भुजदास जी ने अपने इष्ट का रूप सौन्दर्य निरूपण अपूर्व तन्मयता के साथ किया तथा उसे विश्व व्यापी और विश्व का मन हरने वाला तक कह दिया है। परिणामतः उनके पूर्ण समर्पण तथा एकत्व का क्रम दृष्टिगत होता है। उनके कुछ पद द्रष्टव्य हैं-

''आज और काल्ह और दिन प्रति
और और देखिये रसिक श्री गिरिराजधरन।।
छिन प्रति नई छबि बरनें सो कौन कवि नित्यहीं शृंगारबागो बरण बरण।
शोभासिंधु अंग अंग मोहत कोटि अनंग छबि की उठत तरंग विश्व को मनहरण।।
चतुर्भुजदास गिरिधर को स्वरूप सुधापान कीजे जे रहिये सदा ही शरण।।

विश्व के मन हरने वाले के स्वरूप का वही सुधापान कर सकता हो जो सदैव उनकी शरण में रहता हैं। उनकी छबि अनुपम है तथा उनका अंग-अंग करोड़ों अनंगों की तरंगों से परिपुष्ट है। यही सहज उपमा चतुर्भुजदास के अन्य पद में यों व्यक्त हुयी है-

भूषण वसन भाँति-भाँति अंग-अंग छबि कही न जात,
लटपटी सुदेश पाग चित्त को चुरावें।।
मकर कुंडल तिलक भाल कस्तूरी अतिरसाल चितवन,
लोचन विशाल कोटि काम लजावें।

चतुर्भुजदास सौन्दर्य निरखने में अत्यन्त कुशल थे। वे अत्यन्त सौन्दर्य की बारीकियों को अन्तर्दृष्टि से पकड़ लेते थे तथा शब्द-रूप प्रदान करने में पूर्ण मनोयोग लगा देते थे। इस दृष्टि से निम्न पद अपने आपमें विशिष्ट है-

सुभग शृंगार निरख मोहन को ले दर्पण कर पियहिं दिखावें।
आपन नेक निहारिये बल जाऊँ आज की छबि कछू कहत न आवें।
भूषण वसन रहे फबि ठांई-ठांई अंग-अंग छबि कहु चितहि वें चुरावें।
रोम-रोम प्रफुल्लित ब्रजसुंदरि फूलन रचि रचि माल बनावें।।
अंचलवार करत न्यौछावर तन मन अति अभिलाष बढावें।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर कों स्वरूप सुधा पीवत नयनपुट तृप्ति न पावें।।

उपर्युक्त पद का एक-एक शब्द माधुर्य की वर्षा करता हुआ ब्रज की सुन्दरियों को गिरिधर के रूप सौन्दर्य से सराबोर करता जा रहा है और वे प्रकृति प्रदत्त पुष्पों की मालाएँ बनाती है। उनके तन और मन सौन्दर्य से इतने अभिभूत हो उठे हैं कि सौन्दर्य का रस पान करते जा रहे हैं परन्तु उनके नयन

तृप्त नहीं हो रहे हैं। रूप सौन्दर्य के सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकती अर्थात् वर्णनातीत है, फिर भी गिरिधर के अंग-अंग की शोभा उनके मन को हर रही है, कारण वस्त्राभूषण ऐसे फब रहे हैं कि बस, कुछ भी कहना सम्भव नहीं हो पा रहा है। सच ही चतुर्भुजदास माधुर्य भाव के सागर प्रतीत होते हैं। सौन्दर्य के अन्तरंग किस प्रकार प्रफुल्लित हो उठता है तथा तन-मन आपा तक खो देता है। इस प्रकार वे मर्मान्तक भाव तक को उद्घाटित करने में समर्थ हैं। (उपर्युक्त तीनों पद पुष्टिमार्गीय पद संग्रह भाग तीजो से उद्धृत हैं-पृष्ठ ८५-८६ तीनों पद राग विलावल में रचे है।)

चतुर्भुजदास का काव्य-माधुर्य अनुपम है। रास का चित्रण अत्यन्त सरसतापूर्वक किया है। रास के पद पढ़कर गाते समय ऐसा भान होने लगता है कि हम रासलीला का प्रत्यक्ष दर्शन कर रहे हैं। उनका निम्न पद द्रष्टव्य है-

अद्भुत नट भेख धरे जमुना तट स्यामसुन्दर गुन-निधान गिरिवरधरन रासरंग राचे।
जुवती-जूथ संग मिलि गावत केदारो राग अधर बेनु मधुर-मधुर सप्त सुर सांचे।।
उरप तिरप लाग डाट तततत तत थेई उघटत सब्दावली गति भेद कोऊ न बांचे।
चतुर्भुज प्रभु बन बिलास मोहे सब सुर आकाश निरखि थक्यो चंदरथ पश्चिम न खांचे।।

यमुना तट के अनुपम रम्य प्रकृति स्थल पर रास का आनन्द लेते ब्रज युवक-युवतियाँ के नृत्य का चित्रण किया है। साथ ही संगीत के सप्त सुरों का तन्मयता सह नृत्य की ध्वन्यात्मकता का अभिव्यक्तिकरण पद में अनुपम रूप में हुआ है। इसी क्रम को चतुर्भुजदास ने अपने एक पद में यों अभिव्यक्त किया है-

प्यारी भुजग्रीवा मेलि निर्तत पिय सुजान।
मुदित परस्पर लेत गति में सुगति गुण रास राधे गिरिधर गुन निधान।।
सरस मुरली धुनि मिले मधुर सुर रासरंग भीने गावे ओघट तान बंधान।
'चतुर्भुज प्रभु' श्यामाश्याम की नटनि देखि मोहे खग मृग वन थकित व्योम विमान।।

चतुर्भुजदास रसपगे पद सृजन में अनुपम सिद्धि प्राप्त किये थे। अब मैं यहाँ उनके एक पद का और उल्लेख करता हूँ। चतुर्भुजदास ने श्री गोवर्धननाथ जी और श्री स्वामिनीजी के संग-संग आनन्दमय बीते समय का अत्यन्त मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने जीवन के अमूल्य क्षणों का प्रत्यक्षीकरण किया है।

गोवरधन गिरि सघन कंदरा रैन निवास कियो पिय प्यारी।
उठ चले भोर सुरत रंगभीने नंदनंदन वृषभान दुलारी।

इत बिगलित कच माल मरगजी अटपटे भूषण रगमगी सारी।
उतही अधर मसि पाग रही धस दुहु दिश छबि बाढी अति भारी।।
घूमत आवत रतिरण जीते करिणि संग गज गिरिवर धारी।
चतुर्भुजदास निरख दंपति सुख तन मन धन कीनो बलहारी।।

इस प्रकार अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास, जो सातवें क्रम के अधिकारी हैं-अपने पदों के माध्यम से ब्रजभाषा के माधुर्य को संगीत और नृत्य ध्वन्यात्मक शब्दावली के माध्यम से सुघड़ रूप में पिरोया है। उनके पदों में काव्य माधुर्य के साथ जीवन का मूल उत्स भी अपने आप सजीव हो उठा है। प्रकृति का सौन्दर्य पदों में इहाँ-उहाँ छिटक रहा है। हृदयोल्लास के साथ मानवीकरण को पूर्ण प्रतिसाद प्राप्त हुआ है। रसिकता के साथ अपार भावुकता है। सरस पदों का क्रम अनेक संगीत की राग-रागनियों से सम्बद्ध होना यह स्पष्ट करता है कि कविवर संगीत के मर्मज्ञ थे। उनके पद अनेक राग-रागनियों में रचे गये हैं, समझ में आ जाता है।''गोवरधनगिरि...कीनो बलहारी'' वाला राग विभास में रचा है।

चतुर्भुजदास अष्टछाप कवियों में ''अष्टसखाओं के अन्तर्गगत ''विलास सखा'' के रूप में विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। ''विलास सखा'' होते हुये अपने नाम को पूर्णतः सार्थक कर दिया है-विरह के पदों को लिखकर। जीवन के क्रम की ओर ध्यान देने पर सुस्पष्ट हो जाता है कि ''विलास'' के सह विलगता का क्रम भी जुड़ा है। जीवन में विलगता ''विरह'' की निर्मात्री है। जीवन-संग के समय विलास का क्रम आनन्दमय होता है और ''विरह'' के समय जीवन का क्रम वेदनायुक्त हो जाता है। अष्टछाप के कवियों की ओर ध्यान देने पर यह सुस्पष्ट हो जाता है कि उन्होने शृंगार के दोनों पक्ष-संयोग और वियोग का अत्यन्त मार्मिक निरूपण अपने पदों में किया है। यही क्रम सातवें क्रम के कवि भक्त चतुर्भुजदास में भी परिलक्षित होता है। चतुर्भुजदास के अभी तक के पदों की ओर ध्यान देने पर यह ज्ञात हो जाता है कि उन्होंने अपन पदों के माध्यम से माधुर्य शृंगार का निरूपण करते समय अपनी गुरु-निष्ठा और भक्तिभावना का अत्यन्त प्रभावशाली पक्ष निरूपित किया है। वास्तव में माधुर्य की छटा बिखेरने में चतुर्भुजदास प्रवीण थे तथा मर्म का भेदन करते हैं। उनके वर्णन में केवल बाह्य सौन्दर्य ही नहीं झलकता अपितु आन्तरिक सौन्दर्य भी अपने पूर्ण वैभव के साथ उभरा है। मानव मन को एक साथ प्रफुल्लित और उल्लसित करता है। अब मैं उनके विरह वर्णन की ओर अग्रसर होता हूँ।

चतुर्भुजदास का काव्य-वैभव अष्टछाप कवियों में माधुर्य भाव तथा अन्तरंग हृदयोल्लास की दृष्टि से अनुपम है। उनमें भावों की गति अत्यन्त सहज रूप में विकसित होती हुई हृदय को, मन की गति को स्थिर कर देती है। उनमें भाषा की सहजता तथा मधुरता अद्‌भुत ढंग से एकाकार होती हुई दृष्टिगत होती है। प्रभु के प्रति असीम निष्ठा का भाव उनके विरह में सागर की तरह लहरें मारता हुआ ऐसा तरंगायित होता है कि हम सहज ढंग से उसमें सराबोर होने लगते हैं। चतुर्भुजदास ने निम्न पद में विरह वेदना का निरूपण अत्यन्त भाव विभोर होते हुये किया है।पद का प्रारम्भ ही ऐसा है कि श्रवण करते ही मन द्रवित हो उठता है:-

बात हिलग की कासों कहिये।
सुन री सखी व्यवस्था या तन की समझ समझ मन चुप कर रहिये।।
मरमी बिना मरम को जानें यह उपहास जान जग सहिये।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन मिलें जब तबही सब सुख पैये।।
एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि हृदय की वेदना कैसे कहूँ ?

विरह की वेदना सत्य ही शब्दों में नहीं बांधी जा सकती। अपने गिरिधर के प्रति लगाव ऐसा है कि उनके मिले बिना सुख का अस्तित्व ही नहीं रहता, केवल उनके मिलने पर ही समस्त सुख प्राप्त हो जाते हैं। चुप्पी साधने की बात करते हुए यह भी भाव व्यक्त कर दिया है कि मरमी ही अन्तरंग मरम को समझ सकता है।

चतुर्भुजदास ने गोपियों के पूर्ण समर्पण के भाव की अभिव्यक्ति करते हुये उनके अन्तरंग विरह भाव को अनुपम ढंग से निरूपित किया है। एक गोपी दधि बेचने जा रही है। परन्तु वह अपने गोविन्द के प्रेम भाव में ऐसी सराबोर हो जाती है कि स्वयं के कार्य को ही बिसर जाती है और वह क्या कहने लगती है, इसका निरूपण निम्न पद में चतुर्भुजदास ने यों किया है-

आज सखी तोहि लागी है यह रट।।
गोविंद लेहु लेहु कोउ गोविंद कहत फिरत बन में ओघत घट।

ऐसी तन्मयता का निरूपण करते हुये कवि ने गोपियों की भावविह्वलता का निरूपण करने के साथ-साथ उनकी एकात्मता का अभिव्यंक्तिकरण भी किया है। मानसिक लगाव की सम्पूर्णता भी परिलक्षित होती है।

दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ताप्रसंग -८ में उल्लेख है कि-''तब श्री गोवर्धननाथ जी ने चतुर्भुजदास सों कह्या, जो चतुर्भुजदास। तू ब्याह करि।

तब चतुर्भुजदास ने कही, ...सुख छांड़ि कै आपदा में क्यों परौं ?''बहू मरि गई।'' उस समय अटकाव (सूतक) के कारण प्रभु के विरह में उन्होंने पद रचकर कीर्तन किये। उनमें उनकी विरह वेदना अत्यन्त तीव्र रूप में उभर कर आयी है। दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता के अनुसार विरह में भी उनका मन श्री गिरिधर में ही लगा रहता है। भले ही वे अटकाव के कारण दर्शन करने नहीं जा सकते थे। तदर्थ कविवर अकेले ही बैठे-बैठे उनका स्मरण करते हुये कीर्तन करते तथा अपने विरह को उनके रूप लावण्य में लगाये रहते थे। उस स्थित के पद द्रष्टव्य हैं-

''भोर भांव तो श्री गिरिधर देखों।
सुभग कपोल लोल लोचन छबि निरखि नैन सुफल करि लेखों।
नखसिख रूप अनूप बिराजत सोभा मन्मथ कोटि विसेखों।।
''चतुर्भुज'' प्रभु रस रास रसिक कौ परम भाग बलि इकटक पेखों।।

भक्त कवि चतुर्भुजदास को अपनी पत्नी की मुत्यु का दुख नहीं है अपितु उन्हें इसका दुख है कि उसके कारण दर्शन करने की अटक होने से वे श्री गोवर्धननाथ के दर्शन नहीं कर सकते या दर्शन हेतु उनके स्थल पर नहीं जा सकते। यह उनके भक्ति भाव की अनन्यता, अपने इष्ट के प्रति पूर्ण समर्पण के साथ उनके सानिध्य की अद्वितीयता का पक्ष है। भक्त को तो केवल अपने प्रभु का लावण्यमय स्वरूप, उनकी अनुपम छबि, को निरख-निरख कर ही जो सुख मिलता है, उसी में अपना जीवन सफल मानता है। यही भाव प्रस्तुत पद में अभिव्यक्त हुआ है। तन्मयता भी ऐसी कि बिना पलक झपकाये उनके अनुपम सौन्दर्य को निरखते रहना।

चतुर्भुजदास की भक्ति की अनुपमता अद्भुत है। वे श्री गोवर्धननाथ के स्वरूप से तनिक भी न्यारें नहीं रह सकते। उनके स्वरूप के समक्ष कोटि कामदेव तुच्छ हैं तथा उनके बिना उनका जीवन उसी तरह है जिस तरह जल बिन मछली का होता है। उनकी प्रभु के प्रति अनन्य भाव तथा उनके लिए तड़फ ऐसी है कि क्षण भर के लिए भी उनसे विलग होना असहनीय हो जाता है। ऐसा ही भाव निम्न पद में कवि चतुर्भुजदास ने अभिव्यक्त किया है-

श्यामसुन्दर प्रान प्यारे छिन जिनि होऊ न्यारे।
नैन की ओट मीन ज्यों तलफत इन नैनन के तारे।।१।।
मृदु मुसिकान बंक बिलोकत डगमग चलत सहज में सुढारे।
''चतुर्भुज'' प्रभु गिरिधर की बानिक पर कोटिक मन्मथ बारे।।२।।

चतुर्भुजदास का उपर्युक्त भाव से पूर्ण संतोष प्राप्त नहीं होता है। उनकी अपने प्रभु के पास न जाने के कारण विरह वेदना और अधिक तीव्र हो उठती है। यह मानवीय प्रक्रिया है कि वेदना को शान्त करने के लिए मनुष्य अपने विचार अन्य ओर लगाने को अग्रसर होता है, ताकि वेदना की लपटों से स्वयं को सुरक्षित कर सके तथा अन्तरंग स्थिति को शक्ति भी प्रदान कर सके। इस कारण भक्त कवि चतुर्भुजदास स्वयं को पूर्ण आश्वस्त करने हेतु अपने हृदय में अपने इष्ट के ही स्वरूप के सम्बन्ध में विचार करने की ओर अग्रसर होते हैं। वे स्वरूप का ध्यान करते हुये यहाँ तक विचार करने लगते हैं कि उनके स्वरूप सौन्दर्य पर करोड़ों कामदेव न्यौछावर करता हूँ और उनके स्वरूप ध्यान से धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष सब कुछ प्राप्त होते हैं, कारण वे सब उसके ही हाथ है, तदर्थ कविवर अपनी विचारधारा को पुष्ट करते हुये यह पक्ष अभिव्यक्त करता है कि चतुर्भुज के प्रभु श्री गोवर्धनधारी हैं तथा श्री गोकुल के नाथ है अर्थात् रखवाले है। इस प्रकार का जिय में अर्थात् हृदय में, मन में विचार करने से ही विरह का ताप अपने आप नहीं-सा हो जाता है। अतः मैं विरह की तपन मिटाने के लिए उनके ही अनुपम सौन्दर्य से परिपुष्ट मुखारविंद का ही ध्यान करता हूँ। विचार करता हूँ। प्रस्तुत पद निम्न है-

गोपाल कौ मुखारविंद जियमें बिचारों।
कोटि भान कोटि चंद मदन कोटि वारों।
सरस सरोज सुधा नैन भर पाई।
सुख समुद्र सो कापे कहिय जाई।
धर्म अर्थ काम मोक्ष सबही जाके हाथ।
'चतुर्भुज प्रभु'' गोवर्धनधर श्री गोकुल के नाथ।

उपर्युक्त तीनों पद दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता तृतीय खण्ड से उदधृत है। तीनों की ओर ध्यान देने पर यह भी ज्ञात हो जाता है कि चतुर्भुजदास अनेक रागों में विरह वेदना को अभिव्यक्त करने में समर्थ थे। उपर्युक्त तीनों पद क्रमशः राग भैरव, राग ललित और राग धनाश्री के है।

चतुर्भुजदास का भक्त रूप अपने प्रभु के प्रति पूर्णतः कटिबद्ध है। उनका कहना है कि सब कितनी ही अच्छी बातें कहे, परन्तु मेरे लिए तो गिरधर का कमलनयन से मुस्कराना न देख लूं तब तक सब व्यर्थ है। जीवन की सभी स्थितियाँ उसके बिना व्यर्थ है। मैं तो एकदम बुद्धिहीन ही हो जाता हूँ। ऐसी मेरी स्थिति हो जाती है। और की क्या बात करूं। पद मार्मिक दृष्टि से अन्तरंग

को उपस्थित करता है। उनका इस प्रकार के भाव सौन्दर्य को उद्घाटित करता हुआ पद यह है-

करत हो सबै सयानी बात।
जोलों देखे नाहिन सुंदर कमलनयन मुसकात।
सब चतुराई बिसर जात है खान पान की तात।
बिन देखें छिन कल न परत है पल भर कल्प विहात।
सुन भामिनि के वचन मनोहर मन में अति सकुचात।
चतुर्भुजदास प्रभु गिरिधरनलाल संग सदा बसों दिन रात।

अन्त में कवि यहाँ तक कह देता है कि मैं तो सदैव-दिन रात उनके संग ही रहना चाहता हूँ, ताकि मुझे विरह को तिल मात्र भी अनुभव न हो सके। इस पद में कवि ने अपने प्रभु के साथ एक रंग होने की बात भी कह दी है। (पुष्टिमार्गीय पद संग्रह भाग तीजो :पृष्ठ ७५ राग रामकली)

चतुर्भुजदास ने एक गोपी का चित्र उपस्थित किया है। वह अपने प्रिय श्रीकृष्ण के विरह में इतनी तल्लीन है कि अपना कार्य ही करना विस्मृत कर गयी है। वह यहाँ तक कहने लगती है कि मुझे तो ज्ञात ही नहीं हुआ कि मेरा मन मानिक हर लिया है। इस प्रकार प्रभु के अद्भुत क्रम को कवि ने निरूपति अवश्य किया है, परन्तु साथ ही गोपी के विरह को भी अभिव्यक्त कर दिया है। पद इस प्रकार है-

भूली री दधि मंथन करबो।
देखत रसिक नंदनंदन को डगमगात पग धरबो।
रहि गई चितैचित्र जैसे एकटक नयन निमेष न परबो।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन जनायो कोहे तें मो मनु माणिक हरबों।
इस प्रकार गोपियाँ किस प्रकार अपनी सुधबुध खो देती हैं। प्रिय श्रीकृष्ण के विरह में

अन्य गोपी का नंदकुमार के प्रति कैसा लगाव है, इसका चित्रण चतुर्भुजदास ने अत्यन्त मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। वह श्रीकृष्ण के बिना किस स्थिति को प्राप्त हो चुकी है तथा श्रीकृष्ण से मिलने के लिए अनेक विचार करने के लिए विवश सा दृष्टिगत होती है। ऐसी स्थिति का चित्रण कविवर ने अपने पद में यों निरूपति किया है, जो उनकी भावविह्वलता के साथ अन्तर्मन की स्थिति को भी अभिव्यक्त करता है-

'' उलटी फिर आवत ही नित द्वार।
गृह आंगन सुहात न तबते देख्यो नंदकुमार

सुंदर स्याम कमल दल लोचन सुंदरता जु अपार।।
ता दिनतें आतुर यह मग तन चितवत बारंबारं।
भोर भवनते निकसे मोहन चलत गयंद सुढार।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन मिलनकों करत अनेक विचार।।

चतुर्भुजदास का काव्य सृजन केवल भावात्मक ही नहीं है, अपितु उसमें जीवन का रस भी सिंचित होता रहता हैं। वे बात करते हैं गोपी की परन्तु निरूपित करते हैं जीवन की स्थितियों का। मानव जीवन की सबसे बड़ी कमजोरी है-व्यसनबद्ध होना। वह जिस व्यसंन का आदी हो जाता है उससे उसका पीछा ही नहीं छूटता। कवि बात गोपी के विरह की करता है परन्तु उसे निरूपित करता है-व्यसन के रूप में। इससे एक साथ दो भावधाराओं का मिलन कवि ने कराया है।एक तो व्यसन के माध्यम से मानवी पक्ष की कमतरता को निरूपित किया है। दूसरे-भक्त का अपने इष्ट अर्थात् गोपियों के सर्वस्व श्रीकृष्ण के प्रति उनका पूर्ण समर्पण भाव तथा उनके बिना एक पल भी न जीने का पक्ष। ऐसी स्थिति विरह की चरमावस्था को निरूपित करने में समर्थ होती है। यही तथ्य चतुर्भुजदास के निम्न पद में दृष्टिगत होता है। पद निम्नतः है-

सब व्रत भंग भए सखि।
तबतें एक हि व्रत निश्चय कर लीयो।।
खेलत खिरिक रसिक नंदनंदन आय अचानक दर्शन दियो।
लोक लाज कान कुल सीमा मानों सब संकल्प ही कियो।
मदनगोपाल मनोहर मूरति नवरस सींच सिरानों हियो।
व्यसन पर्‌यो संतत चितचाहत रूप सुधा लोचन भर पीयो।
चतुर्भुजदास प्रभु गिरिधरलाल छबि बिनु देखें पल परत न जीयो।

जीवन की समस्त स्थितियों की ओर कवि संकेत करने के साथ यह व्यक्त करता है कि प्रभु प्रेम के सामने लोक लाज आदि सब व्यर्थ है। अस्तु उन सबका संकल्प कर केवल अपने प्रभु की ओर ही ध्यान लगाने का पक्ष पूर्ण दृढ़ता के साथ अभिव्यक्त किया है। यही तो भक्ति का स्वरूप है तथा भक्त की एक निष्ठता का अदभुत क्रम है।

अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदासजी ने संयोग और विरह-दोंनों पक्षों पर बहुत लिखा है। उन सबका वर्णन करने लगे तो हमारे पास समय ही कम हो जायेगा। अतः मैं अब यहाँ उनका एक और पद प्रस्तुत करता हूँ जो विरह भाव को अन्यतम रूप में प्रस्तुत करता है। भक्त अपने इष्ट के विरह में उसके समस्त

रूप सौन्दर्य को कितनी तन्मयता के साथ भावों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारे समक्ष आ जाता है। वास्तव में कहने को तो अपने इष्ट के विरह में अपनी वेदना अपने हृदय की भावना, तथा अपना अन्तरंग पक्ष स्पष्ट करना है। ध्यान देने पर यह समझ में आता है कि भक्त अपने प्रभु का गुणगान ही कर रहा है, केवल बहाना भर हे कि ''है प्रभु, मैं आपके बिना नहीं रह सकता''। ''प्रस्तुत पद के बोल इसी प्रकार हैं-चतुर्भुजदास ने पद का प्रारम्भ यों किया है-

''श्री गोवर्धनवासी सांवरे लाला, तुम बिन रइयो न जायहो।
ब्रजराज लड़ेते लाडिले।

बंकचिते मुसिकायकें लाल सुंदर बदन दिखाय। लोचन तलफें भीन ज्यों लाल पल

कल्प विहाय।
सप्तक स्वर बंधान सों लाल मोहन वेणु बजाय।
सुरत सुहाई बांधके नेंक मधुरें गाय।
रसिक रसीली बोलनी लाल गिरि चढ़ गैंया बुलाय।
गाय बुलांई धूमरी नेंक ऊंची टेर सुनाय।
दृष्टि परें जा दिवस ते लाल तबते रुचें न आन।
रजनी नींद न आवही मोहि बिसर्‌यो भोजन पान।
दरसन कों नयना तपें लाल वचन सुनन कों कान।
मिलिबे कों हियरा तपे मेरे जिय के जीवन प्रान।
पूरण शशि मुख देखकें लाल चित चोंट्‌यो वाही ओर।
रूप सुधा रस पान कें लाल सादर कुमुद चकोर।
मन अभिलाषा ह्वै रही लाल लागत नयनन मेंख।
इकटक देखे भावते प्यारो नागर नटर भेख।
लोक लाज कुलदेव की लाल छांड्‌यो सकल विवेक।
कमलकली रवि ज्यों बढ़ें लाल छिन छिन प्रीति विशेष
कोटिक मन्मथ वारने लाल देखत डगमगी चाल।
युवती जनमन फंदना लाल अंबुज नयन विशाल
कुंज भवन क्रीडाकरी लाल सुखनिधि मदन गोपाल।
हम श्री वृंदावनमालती तुम भोगी भमर भूपाल।।
यह रट लागी लाडिलेलाल जैसे चातक मोर।

प्रेम नीर वरषा करो लाल नव घन नंदकिशोर।।

युग युग अविचल राखिये लाल यह सुख शैल निवास।
श्री गोवर्धनधर रूप पै बल जाय चतुर्भुजदास।

चतुर्भुजदास के उपर्युक्त पद की ओर ध्यान देने पर सुस्पष्ट हो जाता है कि प्रस्तुत पद के माध्यम से एक साथ-अपने प्रभु का रूप-सौन्दर्य निरूपण, प्रकृति-चित्रण श्रीकृष्ण की वृंदावन लीलाएँ, असीम प्रमोदुभावना, आदि का निरूपण कियाहै। इस प्रकार चतुर्भुजदास अपने इष्ट के प्रति पूर्णतः समर्पण भाव से लगे रहते थे-स्पष्ट कर दिया है। अब मैं यहाँ दो पदों की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत करता हूँ, जो उनके विरह की अभिव्यक्ति को स्पष्ट करने में सशक्त हैं-

(१) ''तब तें जुग समान पल जात।
जा दिन तें देखे सखी मोहन मोतन मुरि मुसिकात।''

(२) तब तें और कछु न सुहाय।
सुंदर स्याम जबहि तें देखे खिरक दुहावत गाय।।'

कहने का तात्पर्य यह है कि अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास, जो सप्तम के पोषक हैं-माधुर्य और विरह के अन्यतम गायक हैं। उनमें पूर्ण समर्पण भाव है। जीवन के क्रम को पूर्णतः निरूपित करने में समर्थ हैं। मानव की दशाओं का निरूपण करने में सिद्धहस्त हैं। उनके पदों का गहन अध्ययन यह भी ज्ञात करा देता है कि वे मूलतः गोवर्धननाथ के भक्त हैं। परन्तु उनमें जीवन के सत्य को निरूपित करने की अद्‌भुत क्षमता थी। जीवन के सत्य को समझने की अद्‌भुत क्षमता थी।

चतुर्भुजदास के माधुर्य और विरह के पदों का अध्ययन स्पष्ट रूप से निरूपित करता है कि वे श्रीकृष्ण के अनन्य उपासक थे तथा वे ही उनका जीवन थे, यह स्वयं सिद्ध है। उपर्युक्त संक्षिप्त विवरण से समझ में आ जाता है कि अष्टछाप के भक्त कवि चतुर्भुजदास पुष्टिमार्ग के अनुपम गायक, कीर्तनकार, व्याख्याकार और उच्चकोटि के संगीतज्ञ थे। पद अनेक राग-रागनियों से सम्बद्ध हैं-''अतः श्री कृष्णाराध्य चतुर्भुजदास उच्चकोटि के संगीतज्ञ थे।

– गोपाल भवन, भाजी मण्डी इतवारी,
नागपुर (महाराष्ट्र)

चतुर्भुजदास के काव्य में रास-सौंदर्य

✍ डा. राजनारायण राय

आलोच्य कवि हैं चतुर्भुजदास, जिन्हें गो. श्री ब्रजभूषण शर्मा की पुस्तक[1] में 'चत्रभुजदास मुद्रित किया गया है। 'चतुर्भुज' नाम हिंदी के अनेक रचनाकारों को प्रिय लगा है (द्र. हिन्दी साहित्य कोश : सं. डा. धीरेंद्र वर्मा) उनमें सर्वाधिक ख्याति मिली है अष्टछापी कवि को ही। 'विष्णु सहस्त्र नाम में 'चतुर्भुज' श्यामवर्णी गुणातीत, अव्यक्त, परब्रह्म विष्णु का एक नाम बताया गया है (दृ. श्लो. २८) पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण-इन चार दिशाओं के आधार पर श्रीविष्णु की भी चार भुजाएँ परिकल्पित हैं। (द्र. श्लो. ८२) और कृष्ण (द्र. श्लो. २०,७२) भी हैं। भक्त कवि चतुर्भुज के नाम में वैष्णववाद और कृष्णवाद की आंशिक छवि गंध है। ये दास हैं-विष्णु और कृष्ण के; इसलिए इन लीलाशाली आराध्यों की भक्ति और कीर्तनगान करना अत्यंत स्वाभाविक है। अपने तीन सौ साठ पदों में चतुर्भुजाकार अवतारी के नहीं, द्विभुजाकार अवतार मयूरपिच्छधारी नटवर कृष्ण के एकांत गायक हैं। इनकी समग्र काव्य चेतना लीला वपुधारी गिरधारी को ही समर्पित है।

अष्टछाप कवियों के काव्य में कृष्ण परब्रह्म हैं, भगवान हैं, एकमात्र प्रमेय हैं; अतः परमाराध्य हैं। आस्वादन के धरातल पर वे रस हैं उनको अप्रतिम रूप भी रस है अधर सुधा भी रस है। लीला-क्रीड़ा भी रस है; इतना ही नहीं रतिमाधुर्य क्रीड़ा अर्थात् रति भी रस-रूप में समादृत है। चतुर्भुज अपने 'गिरिधर' को रस-रूप में ही नहीं, 'रस रासि' के रूप में अभिचित्रित करते हैं। उनके रास नायक स्वयं भी रसिक शिरमौर हैं, महाररसिक। इसलिए रसास्वादक कृष्ण को 'रसलंपट' कहने में संकोच नहीं करते-चतुर्भुज प्रभु गिरधर रसलंपट तैसी ये सौहै राधा सुकुमारी। (प.स.२०८), ललित किशोर कृष्ण की क्रीड़ारस (पं.स.८०,८२,६६),लीला रस। (प.स.१६५,२१६) की अभिव्यक्ति ही चतुर्भुजदास का काव्य है। कवि मात्र भक्त नहीं, वह लीला रस का आस्वादक है। उनके अनुसार यह रस अनिर्वाच्य है, अतृप्तिवर्द्धक हैं। उनका कृष्ण काव्य रस-काव्य हैं जिसमें लीला रस हिल्लोर लेता दिखाई पड़ता हैं।

---

१. चतुर्भुजदास : जीवन झाँकी तथा पद–संग्रह–सं. गो. ब्रजभूषण शर्मा, काकरोली

चतुर्भुंजदास के आराध्य हैं-कृष्ण और राधा-दोनों का युगलस्वरूप। कृष्ण के पर्याय अनेक हैं। गर्ग संहिताकार ने कृष्णभक्तों के लिए 'श्री कृष्ण सहस्रनाम को आदर्श मानकर। इन सहस्त्राधिक नामों में चतुर्भुजदास को सर्वाधिक प्रिय है-

गिरिधर। अधिकांशपदों में यही नाम आया है, गोपाल (प.स.३४), नंदकुमार (पं.स.३७) स्यामसुंदर (पं.स.३७), गोविंद (पं.स.१०८ नन्दलाल (प.सं. १०६) मनमोहन (प.सं.२७७) श्याम (प.सं.३११) हरि (प.सं.२१८) मोहन (प.सं.१६) नन्दकुमार (पं.सं.२) गोकुलनाथ (पं.सं.२६६) श्यामघन (प.सं.२५६) आदि कई कृष्ण के नाम यथास्थान प्रयुक्त हैं। चतुर्भुज के गिरिधर काम को विद हैं नटनागर है, रसिक शिरोमणि हैं, गुण-निधान है, नवल सुजान हैं, रसलंपट हैं, मगर हैं-प्राण-आधार है, सकल सिद्धि दाता, सौंदर्य सार, भक्त उद्धारक और आभीर नागरी प्राणनाथ। वृषभानुसुता के लिए यद्यपि अनेक नाम उस युग विशेष में प्रचलित थे जैसे-वृंदावनी, चंद्रावती, चंद्रकांता, कृष्णवामांगभूता रासवासिनी आदि, परन्तु चतुर्भुज वे पदों में राधा की अनेक बार स्मृत हैं, अन्य यहाँ अगण्य हैं। आलोच्य कवि के काव्य में राधिका या राधा ही कृष्णप्रिय हैं, सर्वगुण सम्पन्न रूप नागरी हैं, रास-नायिका श्यामा हैं और महारसिकनी हैं। यहाँ यह संकेत्य है कि चतुर्भुज अपने आराध्य के अनिर्वचनीय रूप-सौंदर्य का गान पन्द्रह पदों में करते हैं नवल नायिका श्यामा का केवल आठ पदों में ही। इसके आधार पर चतुर्भुज गिरिधर के उपासक अधिक हैं, राधिका के कम ऐसा कहना उचित होगा। नारद पुराण से ज्ञात होता है कि नृत्यपंडिता गधर्वा नागरी आदि नामों के साथ राधा के 'रासभाव' (६८५) 'रास मण्डल मण्डिनी (६२५) रास चित्ता' (६२०) 'रास सिंधु शांका'(६२६)' रासोत्सव विहारिणी' (६४६) नाम भी बताये गये हैं, जिनसे कृष्ण के लिए सहचरी का रासोन्नायिका रूप उमड़ता है। पुराणकार ने कृष्ण के लिए इतने राससम्बन्धी नाम् प्रस्तुत करने में रुचि नहीं दिखाई है। (प्र नारदपुराणान्तर्गत युगल सहस्रनाम)। कीर्तनकार चतुर्भुज प्रयुक्त शब्द 'क्रीडारस' (द्र. प.सं ८८), कृष्णराधा गोपीगण अर्थात् सामूहिक क्रीडा लीला का आनंद है। कृष्ण आत्मक्रीड़ या स्वक्रीड़ है। किंतु चतुर्भुज के काव्य में यूथक्रीड हैं। गिरिधर की क्रीड़ा हरिक्रीड़ा है जिसका प्रतिपादन वंदन आचार्य वल्लभकृत तत्वार्थदीप निबंध के 'शास्त्र प्रकरण के प्रथम श्लोक में है। वस्तुतः इस अनुचिंतन का आधार या उपजीव्य ग्रंथ है-वैदिक साहित्य।'ऋग्वेद

को 'प्रक्रीड़ा' शब्द है-पूतनासु प्रक्रीड़ान्तस्य वा स्याम् (मं.४ : सूक्त ४१ : ११ सामदेवके निम्बोधृत मंत्र दृष्टव्य हैं।(१) (धीमिर्मृजन्ति वाजिनं वन क्रीडन्तमत्यविम्' आभि त्रिपृष्ठं मतयः समस्वरन्।।२।। ६४१) (तृतीय प्रपाठक)

(२) हरि क्रीडन्तमभ्यनूषत स्तुभाऽभि धेनवः पय सेदशिश्रयुः (२) ११५३--चतुर्थ प्रपाठक

(३) अहिर्न जूर्णामति सर्पति त्वचमत्यो न क्रीडन्न सरद्वृषा हरिः।।२।। १६१५ क्रीडुर्मुखो न मंध्युः पवित्र सोम गच्छसि। दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम्।।-

सप्तम प्रपाठक।।४।। ६७४

उपरि उद्धृत मंत्र यह प्रमाणित करने के लिए तत्पर हैं कि परमात्मा नित्य क्रीड़क है। सृष्टि और संहार, सर्जन-विसर्जन उसी के विष्प्रयोजन क्रीड़ावृत्ति का परिणाम है। यही उसकी विलासेच्छा है। वह हरि या ब्रह्म लीला के लिए ही करता है। यह सृष्टि उसी की आत्मकृति है। वल्लभाचार्य का मत है कि :-

लोकवत्तु लीला केवल्यम-(ब्रह्मसूत्र, २.१.३३) लोकवत् लीला, नहि लीलायां किंचित्प्रयोजनमस्ति, लीलायां एव प्रयोजत्वात्...लीलैव केवलेत्तिवा।

(अणुभाष्य, ब्रह्मसूत्र २/१/३३)

तात्पर्य यह कि लीला निष्प्रयोजन होती है। वह अपने आप में कार्य भी है, प्रयोजन भी। हरि क्रीड़ा या लीला का जो प्रतिपादन आचार्य वल्लभ द्वारा हुआ उसी की ब्रजभाषा काव्य में संगीतात्मक अभिव्यक्ति अष्टछापी कवियों के कण्ठ-स्वर से हुई। संगीतकार चतुर्भुज अतः लीक-गामी हैं।

संस्कृत साहित्य में 'रासक्रीड़ा' शब्द का ही बहुशः प्रयोग है। पुराणकारों ने 'रासक्रीड़ा' के प्रति ही आसक्ति दिखाई है। 'रास लीला'शब्द का प्रयोग प्रायः दुर्लभ है। इसके प्रथन प्रयोक्ता हैं-

वेदांतदेशिक जिन के अप्रतिम महाकाव्य में दो बार इस शब्द को देखा जा सकता हैः-

(क) विरक्त निध्येयपदः स रागी रागाधिकां प्रस्तुत रासलीलाम्।।८२।।

(ख) जगु : सहर्ष दिवि देवकन्याः दिव्यारत्तदा दुन्दुभयः प्रणेदुः।
पपात कल्पद्रुम पुष्पवृष्टिः सदर्चिते संश्रित रासलीलये।।८६।।
-यादवाभ्युदयः सर्ग ८

वैसे तंत्र ग्रंथों में भी यह शब्द दृष्टिगोचर होता है-

उत्थाय स्वप्रियेणाशु कुतूहल निमज्जितां

रासलीलांकरिष्यन्ति सह सम्भूयः सर्वशः तः ।।५७।।

-पुराण संहिता :अ.२४/५०

वल्लभ सम्प्रदाय के उन्नायक विट्ठलनाथ के प्रपौत्र, प्रकाण्ड विद्वानः श्री हरिराय की कृति है-

'पुष्टिमार्गीय ध्यान प्रकार विवेचनम्' में 'रासलीला' शब्द है-स्थायि भावात्मक : सर्व श्री लीलारूप फलात्मक :। रासलीलापरो नित्यो भावभावात्मक : पदः ।।२।।

चतुर्भुज के काव्य में 'रासलीला' शब्द अनुपस्थित है, भागवतपुराण के सदृश/हिंदी के अनेक कवियों ने इसे स्थान नहीं दिया है। वैसे चतुर्भुजरास (प.सं.३१), रासमंडल (प.सं.३६) रास-रंग (प.सं.३१,३५) रास-रस-गति (प.सं. ३३)आदि शब्द प्रयोग करते हैं।

भागवत पुराणोक्त रासोत्सव पंचाध्यायी है। अ.२६ में ४८ अ. ३० में ४५ अ ३१में १६ अ ३२ में २१ और ३३ में ४० श्लोक हैं। इस प्रकार कुल १७३ श्लोकों में रास सौंदर्य अभिवर्णित है, किंतु आचार्य वल्लभ[1] ने सभी की टीकाएं नहीं लिखी हैं।

निम्नोद्धृत श्लोक अवलोकनीय है :-

इमान्यधिक मग्नानि पदानि वहतो वधूम्।

गोप्य : पश्यत : कृष्णस्य भाराक्रांतस्य कामिनः।।

अत्रवरोपिता कांता पुष्पहेतोर्महात्मना।

(-भा.पु. स्कं.१०. ३२) प्रतीत होता है, यह श्लोक आचार्य दृष्टि में प्रक्षिप्त है या उपेक्ष्य है। वैसे श्री धर की एतत्सम्बन्धी टिप्पणी है-बहुषु पुस्तकेषु नोपलभ्यते अर्थात् अनेक ग्रंथ में यह प्राप्त नहीं है। आज के टीकाकार डा. रसिकबिहारी जोशी, पं. लक्ष्मणदत्त शास्त्री चतुर्वेद, पं. मानसशास्त्री आदि निश्शंक होकर इसकी व्याख्या टीका प्रस्तुत कर रहे हैं। इस संदर्भ में अन्य टीकाओं का भी अनुशीलन अपेक्षित हैं।

अष्टछाप कवि रासपंचाध्यायी से प्रभावित और अनुप्रेरित हैं, परंतु सभी इसके एकांत-एकनिष्ठ गायक और व्याख्याकार नहीं हैं। छीतस्वामी, चतुर्भुजदास

---

१. रास पञ्चाध्यायी श्री सुबोधिनी–व्याख्याकार श्री वल्लभाचार्य, हिंदी व्याख्याकार प. जगन्ननाथ चतुर्वेदी प्रका. चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, ई.१९७१

जैसे कवि रास-सौदर्य को उसकी समग्रता में प्रस्तुत नहीं करते, उसके तीन चार श्लोकों की भावभूमि पर पंचाधिक पदों की रचना करते हैं। वैसे कवि वर्ण्य विषय की स्वीकृति-अस्वीकृति के मामले में निरंकुश या स्वतंत्र है। चतुर्भुजदास ने अपनी स्वच्छन्दवृत्ति काही परिचय दिया है।

शुद्धाद्वैत दर्शन के उद्भावक प्रचारक आचार्य वल्लभ के द्वितीय पुत्र विट्ठलनाथ के शिष्य चतुर्भुजदास विप्रयोगात्मक सख्य भक्ति में राजससखा भक्त माने जाते थे। यह उल्लेख है कि उनके पिता भी राजस-सखा के रूप में प्रख्यात थे, पर संयोगात्मक भक्ति में। मधुरोपासना के अनुसंधाताओं की अवधारणा है कि वल्लभ सम्प्रदाय में माधुर्य भक्ति के प्रवर्त्तक गो. विट्ठलनाथ थे, यद्यपि शास्त्रीय आधार देने के लिए किसी विवेचनात्मक ग्रंथ की रचना नहीं की। वस्तुतः उनकी मधुरोपासना अभिव्यक्त हुई है, उनकी शृंगार रस मंडन 'निकुंज विलास' 'स्वामिनी स्तोत्र' आदि कृतियों में जब गुरुवर्य ही माधुर्य भक्ति के प्रचारक समर्थक थे तब शिष्य का मधुरोपासक होना अत्यंत आवश्यक है। चतुर्भुज अपने काव्य में इसीलिए, मधुरोपासक अधिक हैं, सख्य भाव के उपासक कम। उनकी रुचि राधा-कृष्ण की प्रेम लीलाओं के संयोगात्मक पक्ष के उद्घाटन में अधिक रही है अन्यथा उनके रंजक मधुर कंठ से युगल रस और सुरतान्त के पंचदशाधिक पद न निस्सृत होते। कवि ने नवल किशोर और नव किशोरी के पारस्परिक दंत-क्षत एवं ताम्बूल चर्वण एवं आदान-प्रदान का संकेत करते हुए अपने आराध्य और आराध्या के 'रति-रस-रंग' का सौंदर्य वर्णन इन शब्दों में किया है :

पौढ़े हरि राधिका के संग।
नव किसोर अरु नव किसोरी गौर साँवल अंग।।
कुसुम सेज सुगंध सीतल रतन जटित प्रजंग।
दसन खंडित बदलि बीरी भरे रति रस-रंग।
उपजि 'चतुर्भुजदास' दुहुँ दिसि प्रेम-सिंधु-तरंग।
रसिकिनी वर रसिक गिरिधर जीति मुदित अनंग।। (पद संख्या ३२१)

आज का विवेकवादी आस्वादक रासरसिक शिरोमणि की सुरतात्मक लीला को गोलोक की अलौकिक नित्य क्रीड़ा मानने के पक्ष में नहीं है, क्योंकि वह कवि की निजी लौकिक कामानुभूति और कामशास्त्रीय परिज्ञान की अभिव्यक्ति है। आध्यात्मिक छवि से आवृत्त, कोककला प्रवीण 'रस लंपट' कृष्ण

'रसिकिनी' श्यामा की रत्यात्मक क्रीडा भले ही कामपथ के परिश्रांत जर्जर काया पथिकों के चिन्त में भक्ति रस का उद्रेक हो परंतु किशोर-किशोरियों और युवक-युवतियों की प्रसुप्त काम चेतना को ही उद्दीप्तता और उतेजकता मिलती है। विप्रयोगात्मक सख्यभक्ति में राजस सखा के रूप में मान्य, गोलोक लीलाकांक्षी चतुर्भुज के काव्य में सखा भाव की भक्ति के प्रमाण सहज ही मिल जाते हैं, किंतु प्रधानता है-मधुर भाव की ही।

संस्कृत काव्य में शरत्रास और वसंत रास-दोनों की परम्परा रही है। पुराणों में शरतरास का सौंदर्य ही अभिचित्रि हुआ, परवर्ती हिंदी काव्य में भी लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व वेदांतदेशिक ने जिस अप्रितम महाकाव्य 'यादवाभ्युदयम्' की रचना की उसके आठवें सर्ग में वसंत रास का उत्कृष्ट वर्णन है। कुछ श्लोक प्रमाण स्वरूप उद्धृत हैं-

तासां तदंगव्यति स लोभात् सैरन्धिकावृत्तिमुपेयुषीणाम्।
विरक्त विध्येयपदः स रागी रागाधिकां प्रास्तुत रासलीलाम्।
तदग्रहत ग्रहणर्थिनीनां स सव्यतो दक्षिणतच्य तिष्ठन्।
वभार विद्युद्व्यवधानभाजां वात्याजुषां वारि मुचाभिमख्याम्।
द्वर्योद्वयोरेकतया स तासां मध्ये स्थितो मण्डल रास नृत्ते।
कर द्वय स्पर्शरसेन कान्ताः प्रत्येक मानन्ध भृशं ननन्द।

(श्लोक सं. ८२,८३,८४)

कृष्ण के वासंती रास क्रीड़ा का ऐसा कमनीय विन्यास अन्यत्र दुर्लभ है। संस्कृत में जिन्होंने वसंतरास की वर्णना में अपनी उल्लेख्य अभिरूचि दिखाई है उनमें प्रमुख हैं-ब्रह्मवैवर्त्त पुराणकार (द्र. ब्रह्मवैवर्त्तपुराण : कृष्ण खण्ड अध्याय ५३ गर्ग सांहिताकार (द्र. गर्ग संहिता : वृन्दावन खंड)।और जयदेव (द्र गीतगोविंद)। अष्टछाप कवियों ने आसक्ति दिखाई इस वासंती रास के प्रति नहीं, अपितु शरत्रासके प्रति। चतुर्भुज को कृष्ण की शरत्कालीन रासक्रीड़ा प्रिय है।

चतुर्भुजदास वर्णित रास वेणु-रास है। उनके पदों में मुरलि (प.सं.३१), मुरलिका (प.सं.३४) बाँसुरी (प.सं.१७६) और बंसी (प.सं. १७७) वेणु बोधक शब्द मिल जाते हैं। वस्तुतः कवि-दृष्टि में इन काष्ठ वंश निर्मित वाद्यों में कोई अंतर नहीं है जबकि संगीत के आचार्यों ने बंशी, मुरली और वेणु में अंतर निर्दिष्ट किया है। इस अंतर को हृदयंगम करने के लिए संगीत रत्नाकर का वाद्याध्याय का

पारायण अपेक्षित है। अवतारवाद के प्रति गंभीर आस्था रखने वाले भक्त कवियों ने वेणु को भगवान का वंशावतार बताया है। यह नाद ब्रह्म है, योगमाया और सरस्वती है। 'कृष्णोपविषद्' के अनुसार, ब्रह्मा ही कृष्ण के लकुटी रूप में हैं, बैकुण्ठ ही गोकुल है, ऋचाएँ गोपियाँ हैं और रूद्र ही बंशी है।

सच तो यह है कि कृष्णभक्ति साहित्य में वेणु वंशी को ही उत्कर्ष शिखर पर अभिषिक्त किया गया। अन्य किसी वाद्य को नहीं। बाँस के छोटे-से साधारण से मुख वाद्य ने कृष्ण के साहचर्य से जो सम्मान-सौंदर्य प्राप्त किया वह अन्य वाद्यों के लिए इर्ष्येय है। भागवत पुराण की 'रास पंचाध्यायी' में रास-वाद्य के रूप में केवल 'वेणु' ही समादृत है। दुन्दुभि तो देप वाद्य है जो नभोरिथत दर्शक द्वारा ही मुग्धावस्था में बजाया जाता है। 'मुरली' 'बंशी', बाँसुरी' जैसे पर्यायवाची शब्द 'रासपंचाध्यायी में नहीं हैं।'हरिवंश' की रासक्रीड़ा में कोई वाद्य स्पष्टतया उल्लिखित नहीं। चतुर्भुज का रास-वाद्य है 'बेणु' जिसके छिद्रों से 'सप्त सुर' निकलते हैं। 'बेनु' की तुलना में 'मुरली' (प.सं. ३१,३२,३४) को अधिक स्मरण किया गया है। चतुर्भुज वर्णित वसंतोत्सव में रूंज, मुरज, झाँक, झालरी कठताल, निसान, ढोल, भेरी, सहनाई, श्रीमंडल, पिनाक, किन्नरी, चंग, ताल, पखावज डफ, मृदंग आदि पंचदशाधिक वाद्यों के स्वर कर्णगोचर होते है, परंतु रासक्रीड़ा में नहीं। गोपरमणियाँ नूपुर की झंकारमयी ध्वनि से रासनृत्य को और अधिक श्रव्य बनाती हैं, उन्मादक और कामोत्तेजक भी।

भागवत पुराण का क्थन है कि रास का ज्योत्स्ना-नृत्य खेचर स्त्रियाँ काम पीड़ित हो जाती हैं शशांक और तारागण आश्चर्य चकित हो जाते हैं-

कृष्ण विक्रीड़िंत वीक्ष्य मुमुहु : खेचर स्त्रियः।
कामार्दिना : शशांक्श्च सगणो विस्मितो ऽभवन्।।(१०/३३/१६)

चतुर्भुज अपने छे पदों में से चार में गिरिधर और ब्रजवनिता यूथ के शरत्रासका प्रभाव निरूपण करते हैं-

(क) थक्यो चंद मोहे खग मृग गन प्रति छिनु अमित आन गति लावै।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर नटनागर सुर नर मुनि गति मति बिसरावै।।(प.सं.३४)

(ख) 'चतुर्भुज' प्रभु बन विलास, मोहे सब सुर अकास।
निरखि थक्यो चंद रथहि पच्छिम नाहें खाँचे।।(प सं ३६)

यह उल्लेख्य है कि भागवत प्रणेता के रासोत्सव पर दुन्दुभि बजाकर

देवगण पुष्प वृष्टि करते हैं और, गंधर्वपति अपनी पत्नियों के साथ नटनागार का यशोगान करते हैं।

ततो दुन्दुभयो नेदुर्निपेतुः पुष्पवृष्टयः।

जगुर्गन्धर्वपतयः सस्त्रीकास्तद्य शोऽमलम्।।-(भा.पु. १०/३३/५)

चतुर्भुजदास नभोमण्डलस्थित देवों की पुष्प-वृष्टि को महत्व नहीं देते।

रास महोत्सव में अनेक राग गाये जाते थे, किंतु चतुर्भुजदास ने दो रागों-मालव और केदार का ही उल्लेख किया है (उ.प.सं.३४ और ३६)। शास्त्रीय संगीत में पारंगत चतुर्भुज रास-सौंदर्य को मालवगौरा, केदारौ, भैरव और आसावरी-इन चार रागों में गेय पदों के माध्यम से उपस्थित किया है। रात्रिकालीन गेय राग केदारौ का एक पद द्रष्टव्य है:

अद्भुत नट-भेखु धरें जमुना तट स्याम सुंदर गुन निधान गिरिवरधर रास-रंगु नाचें। जुवि जूथ संग मिलि गावत केदार रागु अधर बेनु मधुरस्मत सुरनि साँचें। उरप-तिरप लाग-डाट तत-तत-तत थेई-थेई-तथेई थेई उघटत शब्दावलि गति भेद कोउ न बाँचे।।

'चतुर्भुज' प्रभु बन बिलास, मोहे सब सुर अकास निरखि थक्यो चंद-रथ हि पच्छिम नहीं खाँचें।। (प.सं. ३६)

गायक कवि चतुर्भुज के सभी रस, राग और समय सिद्धांत के अनुकूल हैं।

अप्रस्तुतों के प्रयोग में रास-प्रणेता चतुर्भुज भागवत पुराण से प्रभावित प्रतीत होते हैं। कवि ने नृत्यरत नटवर वेषधारी श्याम सुंदर गोपबालाओं का गतिशील सौंदर्य इन शब्दों में व्यक्त किया है-

(क) ललित गावत रसिक नंद सुत भामिनी।

सुभग मरकत स्याम मकर कुंडल बाम कनक रुचि सुचि बसन लजित घन दामिनी। -प. सं.३२

(ख) साजें नटवर भेख गोपाल

मधुर बेनु सु सब्द उघटत तत्त थेई थेई ताल।।

तरनि तनया तीर मरकत मनि जु स्याम तमाल।

ब्रज की नारि-समूह मंडल बनी कंचन-माल।।

'परमहंसी संहिता' नाम से समादृत भागवत पुराण में रास नृत्य का

सौंदर्य निम्नोद्धृत श्लोकों में विन्यस्त हैः

(क) तत्रातिशुशुभे ता भिर्भगवान् देवकीसुतः।
मध्ये भणीनां हैमानां महामरकतो यथा।

(ख) पादन्यासैर्भुजविधुतिभिः सस्मितै भ्रूविलासै भज्जन मध्यैश्चलकुचवटै कुण्डलेर्गण्ड लोलैः।
स्विद्यन्मुख कबररशनाग्रन्थय : कृष्णवद्धो
गायन्त्यस्तं तडित इव मेधचक्रे विरंजुः।

उपरि उद्धृत अंशों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकालना कि चतुर्भुज अपने रास काव्य में भागवतकार के ऋणी हैं, सर्वथा उचित है।

यह निर्विवाद है कि लीलाधर कृष्ण की रासलीला अष्टछाप की दृष्टि में अनुपेक्षणीय वर्ण्य विषय है क्योंकि उनके दीक्षा गुरु एवं आचार्यो ने पंचमवेद के रूप में उत्कर्षित भागवत पुराण का 'रास पंचाध्यायी' की व्याख्या टीका लिखकर साम्प्रदायिक मान्यता दे दी थी। सभी अष्टछापी कवियों ने रासक्रीड़ा की विस्तृत या संक्षिप्त वर्णना अवश्य की है। किंतु, सब में रास के प्रति समान आस्था-निष्ठा नहीं मिलती। सूर ने उसे जो विस्तारपूर्ण उत्कर्ष दिया, वह अन्य में दुर्लभ है। पुष्टिमार्ग के एकनिष्ठ अनुयायी और लीला में कृष्ण सखी विमला (रंग देवी) माने जाने वाले चतुर्भुज की रुचि-गंभीरता रास-सौंदर्य गान में नही बल्कि नवलकिशोर ओर नव किशोरी रासप्रिया राधिका की रूप-माधुरी, आसक्ति, मान, सुखांत आदि के निरूपण में परिलक्षित होती है। यही कारण है इनकी आत्मतुष्टि होती है रास विषयक छः पदों की रचना से ही, जबकि इनके पिता श्री कुंभनदास लगभग बाइस पद गाते हैं। रचना-परिमाण की दृष्टि से परमानंद दास से कृष्णदास आगे हैं क्योंकि प्रथम के ३६ पद हैं, द्वितीय के १०५ पद। समीक्ष्य चतुर्भुज का स्थान गोविंद और छीत के मध्य होना चाहिए। यह कहना अनुचित न होगा कि इनकी परिगणना गौण रास गायक कवियों में ही होगी।

निष्कर्ष यह कि भागवत पुराणोक्त रास महोत्सव की कुछ रश्मियों को प्रस्तुत करने वाले चतुर्भुज का रासकाव्य राधाकृष्ण की माधुर्य केलि लीला का प्रसारक है-सरस, अतः पठनीय, परमास्वाद्य !

–पण्डित वाडी, देहरादून

चतुर्भुजदास का उद्धव संदेश

✍ डा. चक्रधरनलिन

हिन्दी की श्रीकृष्ण काव्यधारा के युग-प्रवर्तक कवियों में कुंभनदास के पुत्र श्री चतुर्भुजदास जी महाराज का उल्लेखनीय, अविस्मरणीय स्थान है। वह राधा वल्लभीय प्रमुख संत कवि थे। ये कृष्ण काव्य के प्रमुख कृष्ण भक्त कवियों यथा विद्यापति (१३६०-१४४६) सूरदास, सूरश्याम, सूर कल्याण, सूरजदास, कविवर सूर श्री गोपाल, कवि सूरसेन, विट्ठलदास परमानंददास, गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी, कृष्णदास, नंददास, चन्द्रहास गदाधर भट्ट, हित हरिवंश, ध्रुवदास आदि की भांति श्री कृष्ण लीलागायन में अग्रगण्य हैं। उन पर वल्लभाचार्य के लीला दर्शन का गहरा प्रभाव है। उनका श्रीकृष्ण परक काव्य हिन्दी साहित्य की उल्लेख्य देन हैं। उन्होने श्रीकृष्ण को अपना इष्ट मानकर उनके जीवन की प्रमुख घटनाओं को अपना काव्याधार बनाया। श्री नाथ चिंतन-मनन गायन, समर्पण और भक्ति-निरूपण उनके काव्य के प्रमुख अंग हैं। उन पर वल्लभ संप्रदाय का प्रभाव उनकी पंक्ति पंक्ति में समाया है।

चतुर्भुजदास (१५३०-८५) अष्टछाप के प्रमुख प्रवाहक कवियों में श्रेष्ठ हैं। इनके सम्बन्ध में गोकुलनाथ कृत कथित 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता'' हिन्दी साहित्य कोश' भाग दो (डा. धीरेन्द्र वर्मा) 'भक्तमाल' (नामादास) 'भक्त नामावली' (ध्रुवदास) 'अष्टछाप और वल्लभसंप्रदाय, (डा. दीनदयाल गुप्त) 'अष्टछाप परिचय (प्रभुदयाल मीतल) 'राधावल्लभ संप्रदाय : सिद्धांत और साहित्य' (डा. विजयेन्द्र स्नातक)'हिन्दी साहित्य का वस्तु परक इतिहास' खण्ड एक (डा. रामप्रसाद मिश्र सन १९६७) में प्रामाणिक सामग्री के साथ उनके व्यक्ति और साहित्य पर गहरा विवेचन और चिंतन है।

महान पुरुषों की भांति इनका जीवन अलौकिक है। श्रीनाथजी ही तो उनके सर्वस्व बने और वे सबको भूल गये। श्रीनाथ का वैभव, उनका चिंतन, मनन, दर्शन, आसक्ति और भक्ति, अनुरक्ति उनके जीवन का सर्वस्व बना।

श्रीनाथजी की उन पर अनन्य कृपा रही। उनका लेखन, गायन श्रीकृष्णार्पित रहा। वह अपने भक्त के संकल्प से बंधे थे। एक समय पारसोली में रास और गायन हो रहा था। तद्धनन्तर गोंसाई जी के पुत्र श्री गोकुलनाथ

जी ने चतुर्भुजदास जी को आज्ञा दी कि वह भी कुछ प्रस्तुत करें। उन्होंने कहा-''मैं किस प्रकार अपना गायन करूं। हमारा गायन सुनने वाले श्रीनाथजी तो यहां पधारे नहीं हैं। श्री गोकुलदास जी ने कहा, 'चिन्ता नहीं करो, अभी पधारते हैं वे।

भक्त वत्सल श्री नाथ जी वहां तत्काल पधारे और उनका प्रत्यक्ष दर्शन पाकर श्री चतुर्भुजदास जी आत्मविभोर होकर गा उठेः

'अद्‌भुत नटभेस घरे जमुना तट श्याम सुँदर।

गुन निधान गिरिविधर रास-रंग राचे।।

प्यारी-ग्रीवा-भुजमेली, नृत्यत प्रिया सुजान।,

भक्त कवि चतुर्भुजदास पर श्रीनाथजी अनन्य कृपा थी। एक दिन श्री गोंसाई जी ने उन्हें अप्सरा कुंड जाकर रामदास भीतरिया जी को बुलाने तथा वहां से कुछ पुष्प ले आने का आदेश दिया। उन्होने रामदास जी को भेजकर स्वयं कुछ सुमन चुनने लगे। जब वे वहां से लौटने लगे तो उसी काल श्री गोवर्द्धन पर्वत की कन्दरा से श्रीनाथजी श्री स्वामिनी जी संग प्रगट हुए। श्री चतुर्भुजदास श्री प्रभु का दर्शन कर भाव-विह्वल गा उठेः

'गोवर्द्धन-गिरि सघन कंदरा

रैन निवास कियो पिय प्यारी।'

'रजनी राज कियो निकुंज-नगर की रानी।'

ऐसा कहा जाता है कि चतुर्भुजदास जी श्रीनाथजी के ऐसे कृपापात्र थे कि उनके बिना श्री नाथ जी रह नहीं सकते थे। वह नित्य श्री गिरिराज पर बैठकर गीत गाते जहां श्रीनाथजी के सदा सायंकाल गायों के संग आते और इन्हें दर्शन देते-

'श्री गोवर्द्धन वासी साँवरे लाल। तुम बिन रहयो न जाय हो।'

मिश्रवन्धु, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार इनके बनाए तीन ग्रंथ मिलते हैं-'द्वादशयश, भक्ति प्रताप, तथा 'हितजू को मंगल।'डा. रामप्रसाद मिश्र के अनुसार उपरोक्त ग्रंथ चतुर्भुजदास (राधावल्लभीय) कृत हैं जिनका जन्म सन १५२८ ई. में हुआ था। अष्टछाप वाले चतुर्भुजदास के पद 'चतुर्भुज-कीर्तन-संग्रह' कीर्तनावली, एवं 'दानलीला'(कांकरोली से प्रकाशित)में प्राप्त होते हैं। डा. धीरेन्द्र वर्मा ने इनके बारह ग्रंथ बताये हैं तथा 'द्वादश यश' हितजू की मंगल'

'मंगल सार-यश' 'शिक्षा सार यश' आदि कहा है।-

कवि की काव्य-कला तथा शब्द-छटा, शब्द चयन मनोरम, स्निग्ध तथा आकर्षक है। इनके भाषा शास्त्र पर बैसवाड़ी तथा बुन्देली का व्यापक प्रभाव है। गुरु सेवा पर बल, भक्ति से परमधाम की प्राप्ति, मोह-बन्धन से मुक्ति सहजता के पथ को दिग्दर्शित करता है:

जसोदा कहा कहौं हौं बात ?
तुम्हरे सुत के करतब मोपै कहत कहें नहिं जात।
भाजन फोरि ढारि सब गोरस, लै माखन-दधि खात।
जौ बरजौं तो आँखि दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।
दास चतुर्भुज गिरिधर-गुन हौं कहति कहति सकुचात।।

चतुर्भुजदास उच्च कोटि के के प्रेम-कवि थे। उन्होने अपनी सूक्ष्म, पैनी और अनुभवगम्य दृष्टि से गोपिकाओं का विरह संदेश उद्ववजी के माध्यम से भिजवाया है। विरह की ज्वाला अकथनीय तथा अवर्णनीय है। कवि का निम्न 'उद्वव-संदेश' का पद उस अकथनीय पीड़ा की चिर-अभिव्यक्ति में सफल है:

'तुम सों क्यों कहौं ब्रजनाथ।।
मोहु को अति गिरा गदगद देखि विरह अनाथ।।
बांधि साहस लिखी पाती धरी मेरे हाथ।
सिथिल भई फिर फुरी नांही और मुख तें गाथ।।
सुभट वर तुम बिना पिया। तनुदहत मैन अकात।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरधर रति-पति जीति करहु सनाथ।।

कवि का 'उद्धव-संदेश' विरहाग्नि' और 'कामाग्नि की अन्तः ज्वाला को शब्दों के माध्यम से काव्यामिव्यक्ति देना उदात्त रचनाधर्मिता का प्रतीक है। गोपिकाओं का हरि-बिछुरन कठिन विरह के वाण सहना, ब्रज रीति-प्रीति की पहेली न समझ पाना, पावस-ऋतु से प्रेम का तादात्म्य स्थापित करना, तथा गिरिधर के अभाव में रामरत्त सुखों की स्वप्नवत स्थिति को अभिव्यक्त करने में कवि चतुर्भुजदास पूर्णतः सफल हैं। इस गोपिका के विरह वर्णन में कवि ने सूरदास के उद्धव-संदेश के विरह वर्णन से आगे बढ़कर विरह का नया इतिहास रचा है:

ऊधौजू ! कहत न कछू बनै।
हरि-बिछुरेइह कठिन विरह के सहति बान जितनै।।
उद्धव ब्रज-रीति प्रीति पहिली वन कुंज कुटीर ठनै।
रजधानी में कत भावत हैं ए द्रुम ताल घनै।।
पावन रितु के रंग-संग मिलि खेलत प्रेम सनै।
भींजत मोहिं जानि बूंदनि पट-ओट किए अपनै।
घोष-वास रस-रासि औरु सुख नहिं मुख परत गनैं।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरधरन बिना वैभव सब सपनै।।

कवि ने गोपिकाओं की विरहावस्था का जैसा सजीव, सटीक, सूक्ष्म और स्वाभाविक वर्णन किया है वह हिन्दी काव्य संसार की अमित धरोहर है।

कवि चतुर्भुजदास ने विरहावस्था को प्रचुर उद्दीपन-सामग्री से सज्जित किया है, जिसमें प्रभूत प्रकृति-तत्वों का स्वाभाविक समावेश है। कवि का सर्वाविध-प्रकृति चित्रण और महत विरह वर्णन प्रिय अपनत्व तथा शुभाशामय है। प्रेम की यह एकांत निष्ठा कवि के मार्मिक सृजन को नवअभिव्यक्ति प्रदान करती है। उद्धव इस सर्वविध प्रेम-सागर में आकंठ डूब जाते हैं। कवि प्रेम की उच्चतम भावुकता के उन्मेष, गहनतम-समर्पण-दर्शन को विवृत्त करने में पूर्णतः सफल है। कवि प्रकृति-संकेतों से विरह के विभिन्न स्तरों, रूपों, स्वरूपों और परस्पर प्रेम-गतियों को एकाकार करने में अपना दूसरा उदाहरण नहीं रखताः

'नैननि-निर्झर झरत सुमिरि माधौ, वे पहिली बतियां।
नहिं विसरात निरंतर सींचत विरहानल प्रबल भयौ घतियाँ।।
नवल किशोर स्याम घन सुंदर वेनु-ब्याज बोलीं अध रतियाँ।
रास-विलास विनोद महासुख गान वंधान नृत्य बहु भतियाँ।।
संग-विहार भवन वन निसिदिन अब संदेश पठवत लिखि पतियाँ।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर-दरसनु बिनु नीर-विमुख जैसे मीन की गतियाँ।

कवि ने गोपियों की स्थिति जल बिन मीन की गति जैसी वर्णन की है। गोपियां प्रभु गिरधर-दरसनु के लिए व्याकुल हैं। वे उद्धव के माध्यम से श्रीनाथजी को अपनी विहवल स्थिति का संदेशा भेजती हैं। कवि ने बड़ी कुशलता से संयोग तथा वियोग दोनों शृंगार पक्षों का मनमोहक वर्णन कर श्री

कृष्ण से आन्तरिक लगाव स्थापित किया है।

कवि ने सुखद और आनन्ददायिनी वर्षा ऋतु में कुसुम सज्जित नवल किशोर की निराली शोभा का राग-मल्हार में पद गाकर श्रीनाथ को रिझाया है:

'हिंडोरे माई कुसुमन भाँति बनाई।
नवल किसोर मनोहर मूरति, ढिग राधा सुखदाई।
छाय रहे जित-तित तें बादर, बिच दामिनी अधिकाई।
दादुर-मोर-पपीहा बोलैं, नैन्हीं-नैन्ही बूँद सुहाई।
झोंटा देत सकल व्रज-सुन्दरि, त्रिविध पवन सुखदाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल की ये छवि बरनि न जाई।

कवि ने बड़ी कुशलता से नवल किशोर मनोहर मूरति राधा सहित सुखदाई स्थिति का वर्णन कर संयोग-शृंगार का उदात्त पक्ष प्रस्तुत किया है। संयोग का विलोम बियोग है। काव्य में दोनों का समान महत्व है किन्तु उद्धव-संदेश में वियोग-शृंगार की अद्भुत स्थितियां चित्रांकित हैं। चतुर्भुजदास का उद्धव-शन्देश अन्य कृष्णभक्त कवियों द्वारा रचित शतकों से कई रूपों तथा अर्थों में भिन्न है। कवि ने प्रकृति परक उद्दीपन और उपमानों के माध्यम से गोपियों की मानसिक पीड़ा, दुख, कष्ट और स्त्रीगत शरीरिक प्रभाव का विशदतः मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है तथा आध्यात्मिक चेतना के स्वरूप की भी रक्षा की है। गोपियां उद्धव से कहती हैं कि नंद दुलारे से जाकर यह कहिये ब्रजवासी, आपके अधीन तथा दुखारे हैं। ग्वाल बाल काले हो गये हैं तथा गोपियां विरहाग्नि में जल रही हैं तथा उनके नेत्रों से स्मरण होते ही अश्रु के पनाले बह रहे हैं: नैननि बहत पनारे।।

'ब्रजजन अति आधीन दुखारे।
कहियो पथिक संदेश सुरति करि जहं हैं नन्द दुलारे।।
गोप गाँइ गोसुत गुवाल सब मलिन देखियतु कारे।
निरभै जानि गोपाल तुमहिं बिनु विरह दवानल जारे।।
तब इह कृपा नंद-नंदन की गिरिविर धरि जु उबारे।
ते आकुल व्याकुल जु रैनि दिन, क्यों बूझिए तिहारे।।
जे गुन सैल-धरन प्यारे के कहाँ लगि परत संभारे।

'चतुर्भुजदास'प्रभु वे सुमिरत (हीं) नैननि बहत पनारे।।

कवि चतुर्भुजदास का उद्धव-सन्देश भारतीय सांस्कृतिक, दार्शनिक तथा अध्यात्मिक पृष्ठभूमि का अनूठा उदाहरण है। कवि ने स्त्री-पुरुष, आत्मा-परमात्मा, बूंद और समुद्र के बीच अन्तर्निहित भावनाओं तथा संवेदनाओं को बड़ी योग्यता तथा कुशलता से दृढ़ आधार दिया है। कवि ने वियोगावस्था का जैसा चित्रण किया है वह अपने आप में एक उदाहरण हैः

(क) नैनन ऐसी बान परी।
बिन देखैं गिरिधरन लाल मुख, जुग भर जात धरी।।
मारग जात उलट तन चितयौ, मो तन दृष्टि परी।
तब हिं तें लागी अटपटी इकटक कुल मरजाद हरी।।
चतुर्भुजदास छुड़ावन कौं हठ मैं बहु भाँति करी।
तब सरबस हर मन हर लीनो देह दसा बिसरी।।

(ख) बात हिलग की कासों कहिये।
सुनरी सखी व्यथा या तन की समझ समझ मन चुप कर रहिये।।
मरमी बिना मरम को जानै यह उपहास जान जग सहिये।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन मिलैं जब तबही सब सुख पैंये।।

चतुर्भुजदास का उद्धव-संदेश हिन्दी साहित्य की अनुपम-देन है। श्रीनाथजी के प्रति उनकी समर्पित भावना, उनका भक्ति-भाव उनके काव्य का प्रमुख रस है। भक्त के भगवान सदा उसे कृतार्थ करते रहते हैं, उसे पूर्णत्व प्रदान करते हैं, उसके जीवन को सिद्ध और सार्थक बनाते हैं। भक्त कवि चतुर्भुजदास की भक्तिपरक काव्यधारा सदा जीवन के आंगन में महारास रचायेगी, जीवन को श्रीनाथोन्मुख कर पावन और धन्य करेगी, जीवन को 'ॐ हरिः ॐ हरिशरणम्' से जोडने तथा परम धाम पहुंचाने में सहायक सिद्ध होगी।

–प्रभु टाउन, रामबरेली (उ.प्र.)

अष्टछाप कवि श्री चतुर्भुजदास के पदों का वर्गीकरण

✍ डा. हर्षनन्दिनी भाटिया

चतुर्भुजदास जी अष्टछाप के प्रसिद्ध कवि एवं कीर्तनकार थे। इनका जन्म सं.१५८७ के लगभग गोवर्द्धन के समीपवर्ती जमुनावतौ ग्राम में अष्टछाप के वयोवृद्ध के कवि श्री कुंभनदासजी के गृह में हुआ था। ये कुंभनदास जी के सबसे छोटे सुपुत्र थे। चतुर्भुजदास जी ने अपने पिताश्री के पदचिन्हों का अनुसरण कर श्रीनाथजी के चरराविंद में स्वयं को समर्पित कर दिया और कवि व कीर्तनकार के रूप में गायन करते रहे। इस कारण कुंभनदास जो को सुखानुभूति हुई। बाल्यावस्था से ही उत्तमपदों की रचना कर सुरुचिपूर्णा रूप से अपने पिता के साथ कीर्तन में सम्मिलित होकर पद गायन करते थे। श्रीनाथजी के प्रति अनन्य भक्ति-भावना, सेवा-साधना तथा उत्तम पदों की रचना के कारण गो. विट्ठलनाथ जी के कृपा-पात्र बन गए। सं. १६०२ में 'गोसाईंजी ने अष्टछाप की स्थापना की तब चतुर्भुजदास जी को भी सम्मिलित किया वे अपने ग्राम से प्रतिदिन श्रीनाथजी के दर्शन तथा कीर्तन-सेवाके लिए पैदल ही जाते थे। प्रतिदिन दर्शन करने पर ही शान्पूिर्वक रहते अन्यथा व्याकुल हो उठते थे।

चतुर्भुजदास जी ने स्फुट पदों की रचना की। पदों में भक्ति, काव्य-सौंदर्य, तथा शृंगार की अनुपम छटा द्रष्टव्य है। उन्होंने अपने पदों में भगवान श्रीकृष्ण के जन्म से गोपी विरह तक रचित पदों की लीलाओं का वर्गीकरण कर दिया है-

बाल लीला-श्री कृष्ण के जन्मोत्सव पर गोकुल ग्राम में महाजन्म महोत्सव का आयोजन हो रहा है। चहुँ और हर्षोल्लास छाया हुआ है-महामहोत्सव गोकुल ग्राम।

प्रेम मुदित गोपी जस गावत, लै-लै श्याम सुंदर कौ नाम।
जहाँ-तहाँ लीला अवगाहत, खरिक खोरि दधि-मंथन धाम
परम कुतूहल निसि अरू वासर, आनंद ही बीतन सब जाम।
नंद गोप सुत सब सुखदायक, मोहन मूरति, पूरन काम।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर आनन्द-निधि, नख-सिख रूप सुभग अभिराम।।

नन्द यशोदा के सुन्दर पुत्र पालने में झूलते हैं। यशोदा प्रफुल्लित हैं। बाल-लीला की सुखद अनुभूति से हर्षित हैं। मंगल गाती हैं और उनके मुख को बारम्बार निहारती हैं, बलिहारी जाती हैं, शोभा निरखती हैं बाल-स्वभाव का वर्णन पदों में साकार हो उठता है-

'अपने बाल गुपालै रानी जू पालने झुलावै।
बारंबार निहारि कमल मुख, प्रमुदित मंगल गावै।।
लटकन भाल, भ्रकुटि मिस बिंदुक, कठुला कंठ बनावै।
सद माखन मधु सानि अधिक रूचि अपने करहिं चखावै।।
कबहुँक सुरंग खिलौना लै-लै नाना भाँति खिलावै।
निरखि-निरखि मुसिक्यात, साँवरौ, द्वै दंतियाँ दरसावै।।
सागर, कुमुद चकोर चँद लौं, रूप सुधा बरसावै।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन चंद कौ, हँसि-हँसि कंठ लगावै।।

चतुर्भुजदास जी ने यशोदा का वात्सल्य वर्णन सूरदास जी के समान ही मानसिक वृतियों तथा बाल सुलभ चेष्टाओं का स्वाभाविक दिग्दर्शन अपने रचित पदों में अंकित किया है। प्रातःकाल में नन्द-यशोदा दोनों अपने प्रिय पुत्र को जगाते हैं-

भोर भयौ नंद-जसुदा जी बोलत, जागो-जागो मेरे गिरधर लाल।
रतन जटित सिंहासन बैठो, देखन को आई ब्रजबाल।।
तब हरि हरषि गोद उठि बैठे करत कलेऊ तिलक दै भाल।
दै बीरा आरति बारति हैं'चतुर्भुज' गावत गीत रसाल।

यशोदा जी की अभिलाषा यही सदैव रहती है कि मोहन और बलराम उनकी आंखों के सम्मुख ही रहे, दूर न जाये। मोहन तो उनके प्राणों के प्राण हैं बलिहारी जाती हैं और शिक्षा भी देती है

''कान्ह सौ कहत जसोदा मैया।
मेरे मोहन अनत न जैये, घरहिं खेलौ दोऊ भैया।'
सुनि जननी मन अति हरषानी, मुख चूँमत और लेत बलैया।

अपने गोपाल को खोजकर न पाने पर जननी की आकुलता-व्याकुलता चतुर्भुजदास जी ने अपने पदों में अन्तर्मन से उत्पन्न स्वाभाविक भावनाओं को प्रस्तुत किया है-

'जसोमति ढूँढत है गोपालै।
काहू देखौ मेरो अलक लड़ैतों, खेलत है संग बालै।'

नन्द-यशोदा दोनों अपने कृष्ण को प्रेमपूर्वक भोजन कराते हैं-'आरोगत नागर नंद किशोर।'फिर भी ग्वालिनें यही कहती रहती है और उलाहना लाती हैं-घर घर डोलत माखन खात।

ग्वाल बाल सब सखा संग लिऐ, सूने भवन धंसि जात।

जब ग्वालिनि जल भरि लाई, तबहिं भजे मुसिकात।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधन लाल सों नाहिंन कछू बसात।।

यशोदा अमित स्नेहवश विश्वास न करके ग्वालिन से ही कहती हैं कि घर में भंडार भरे हुए है और कान्हा तो बालक है, चोरी करके भला क्यों खाएगा-

'ग्वालिन तोहि कहत क्यों आयौ।
मेरौ कान्ह निपट बालक, क्यों चोरि माखन खायौ।।
बूझ, बिचार देखि जिय, अपने कहा कहौं हौं तोहि।

कवि अपने गिरिधर के कमल मुख को नयन भरि के देखने की इच्छा प्रकट करते हैं-'नैन भरि देखौं गिरिधर कौ कमल-मुख

मंगल आरति करौं प्रात ही, बारत निरखत होत परम सुख।

दानलीला : श्री कृष्णा गोपियों से दही का दान माँगते हैं। उनका यही अभिप्राय है दूध-दही समस्त बालक-वृंद को उपलब्ध हो सके, और ग्राम से बाहर न बेचने जा सके, इस कारण गोपियों को रोक कर मटकी छीन लेते हैं और गोपबालकों को खिला देते हैं। गोपियाँ कहती है-'कहो किनि किनों दान दही कौ।

सदा सर्वदा बेचत इहि मग, है मारग नित ही कौ।।
भाजन दही समेत सीस तें, लेत छीन सब ही कौ।
ऐसौ कबहुँ सुन्यौ नहिं देख्यौ, नयौ न्याव अब ही कौ।।
कमल नैन, मुसक्याय मंद हँसि, अचर पकर्‍यौ जब ही कौ।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर मन, चोरि लियौ सब ही कौ।

मटकी छीन लेने पर गोपियाँ दधि चखने के लिए देने की सहमति दे देती हैं और सारी भीजने की चर्चा करती हैं। कल फिर आने का विश्वास दिलती हैं-

मटुकिया मेरी मोहन दीजै।
जो कछु दधि चाखन कों चाहौ, तौ रंचक पात लै पीजै।
उनआए घन अटक भोर ही, बनत न नौतन सारी भीजै।
रंग बहैगौ अबार मोहि है है, कहा कहे है जो घर कोऊ खीजै।
'चतुर्भुज' प्रभु हौं कालि आय हौं, साँची बात पतीजै।
गिरिधरलाल भयौ दान तुब, आज न हठ प्रभु की जै।

रास लीला : श्री कृष्ण एवं राधिका का शृंगार अद्‌भुत है। दोनों परस्पर सौन्दर्य में अनुरक्त होकर रासलीला करने को उद्यत होते हैं। संयोग शृंगार रस का वर्णन पूर्ण रूप से किया गया है। सप्त स्वर मिलकर रास-रंग करते हैं, नृत्य करते हैं-

प्यारी भुज ग्रीवा मेलि नृत्यत पीय सुजान।

मुदित परस्पर, लेत गति में सुगति, रूप-रासि राधे, गिरिधरन गुन-निधान।

सरस मुरली-धुनि सों मिले सप्त सुर रास-रंग भीने गावैं और तान-बंधान

'चतुर्भुज' प्रभु स्याम-स्यामा की नटनि देखि, मोहे खग मृग अरू थकित व्योम विमान।।

नृत्य करके थक जाने के उपरान्त पिय-प्यारी ने गोवर्द्धन की कंदरा में रात्रि में निवास किया-

श्री गोबरधन गिरि सघन कंदरा, रैन निवास कियो पिय प्यारी।

उठि चले भोर सुरत रंग भीने, नंद-नंदन वृषभान-दुलारी।।

निकुंज लीला : चतुर्भुजदास के निकुंज लीला के पद भी रुचिकर और शृंगार रस से परिपूर्ण हैं। काव्य की दृष्टि से भी श्रेष्ठ पदों की रचना की है, इस कारण पदों में माधुर्य रस का परिपाक हुआ है-

रजनी राज लियौ निकुंज नगर की रानी।

मदन महीपति जीत महारन, श्रम-जल सहित जंभानी।।

परम सूर सौंदर्य भ्रकुटि धनु, अनियारे नैन बान संघानी।

दास 'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर रस, संपति बिलसी ज्यों मन मानी।।

अन्य पद में यमुना-पुलिन पर प्रिया-प्रियतम बिहार करते हैं। उस समय प्राकृतिक सुषमा एवं सौन्दर्य का वर्णन अति मनोरम है-

'प्रानपति बिहरति जमुना कूले।

लुब्ध मकरंद के बस भयौ भँवर जो, देखि रवि उदैमानो कमल फूले।

करत गुंजार मुरली लै जु साँवरौ, सुनत ब्रज-वधु तन-सुधिजु भूले।

'चतुर्भुजदास' प्रभु जमुने प्रेम सिंधु में, लाल गिरिधरन राखि कूले।।

सौन्दर्य वर्णन :श्री कृष्ण के सौन्दर्य वर्णन में कविश्री के पदों की रचना अनुपम है। उनकी वृत्ति कृष्ण के शृंगारपूर्ण सौन्दर्य वर्णन में रम गई है मोहन का सुमग शृंगार मनमोहक है और छवि वर्णन अद्वितीय है। राधारानी भी कृष्ण के सौन्दर्य पर मुग्ध हैं और स्वयं दर्पण दिखाकर बलिहारी जाती हैं। प्रत्येक अंग का शृंगार अवर्णनीय है-

'सुभग सिंगार निरख मोहन कौ, लै दर्पन कर पियहिं दिखावै।

आपुन नैंक निहारि बलि जाऊँ, आज की छबि कछु कहत न आवै।।

राधा रानी के सौन्दर्य को निरखि कर श्याम रीझ उठते हैं। आज श्यामा का श्रृंगार श्री कृष्ण के लिए मनभावन है। परस्पर दोनों ही श्याम-श्यामा अति पुलकित होकर मुस्कान बिखेरते हैं-

'आजु सिंगार निरखि स्यामा कौ नीकौ बनौ स्याम मन भावत।
वे छवि तनहिं लखायौ चाहत,कर गहि कैं नख चंद दिखावत।।'

श्री कृष्ण और राधा दोनों का सौंदर्य अनुपम है। दोनों की जोड़ी विचित्र है। शोभा की सिंधु बने हैं कृष्ण और राधा रूप की राशि है-

'नवल किसोरी नवल किसोर, बनी है विचित्र जोरि,
सोभा-सिंधु मदनमोहन रूप-रासि भामिनी।
राजत वन गौर-स्याम, प्यारी पिय भागवान,
नव घन गिरिधरन अंग, अंग मानहु दामिनी।।

दृष्टि दर्शन : गोपाल के मुखारविंद पर दृष्टि पड़ते ही एकटक देखती ही रह गई। अनायास ही गोपाल के मिलन से मेरी गति-मति ही बिसर गई और आतुरता से बारम्बार निहारती हूँ-

'गोपाल कौ मुखारविंद देख्यौ आज माई।
तन मन त्रै ताप तिमिर, निरखत ही नसाई।।
कहावत जो गोकुल गोपाल।
ते मैं आजु दृष्टि भरि देखे, चलत डगमगी चाल।।
औचक ही मिलि गये नंद-सुत, अंग-अंग रूप रसाल।
तन घनस्याम पीत पट ओढ़ै, उर राजत बन-माल
'चतुर्भुजदास' रासि सब सुख की सोभा भ्रकूटी भाल।
तन बिसरयौ, मन हर्यौ मनोहर, गोबरधन-धर-लाल।।

उद्‌गार : मन की विह्वलता, तन की आतुरता तथा प्रेम की उन्मत्तता के कारण हृदयोद्‌गार विकल हैं। 'कहा कहौं कछु कहत न आवत'

सुध-बुध भूलि गई हूँ:-बात हिलग की कासों कहिऐ।
'सुनि री सखी। विवसता तन की, समुझ-समुझि मन चुप कर रहिए।
मरमी बिना मरम को जानैं, ये बातें सब जिय की सहिऐ।'
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन मिलें जब, सब सुख संपति तप की पहिए।।

प्रेमोन्माद के कारण मुख से गोविन्द का नामोच्चारण होता है।और दधि का नाम बिसर गया। आज ऐसी रटना लगी हुई है-

'आज सखी तोहि लागी है यह रट।
'गोविंद लेहु, लेहु कोउ गोविंद, कहत फिरत वन में औघट घट।
दधि कौ नाम बिसरि गयौ देखत, स्याम सुंदर ओढ़ै पियरौ पट।
माँगत दान ठगौरी मेली, चतुर्भुज प्रभु गिरिधर नागर नट।।'
'बेनु धरयौ कर गोविंद गुन-विधान।
जाति हुती, बन काज सखिन संग, ठगी धुनि सुनि कान।।'

ऋतु-चित्रण : श्रावण मास की सुहावनी एवं मनोरम ऋतु तथा रिमझिम वर्षा अति सुखद प्रतीत होती है। चतुर्भुजदास जी ने वर्षा का वर्णन सुरुचिपूर्ण रूप से किया है। बिजली चम-चम चमकती है-ब्रज में घनघोर घटा छाई हुई है-

'ब्रज पर उनई आजु घटा।
नई-नई बूँद सुहावनी लागति, चमकति बिज्जु-छटा।।
गरजत गगन मृदंग बजावत, नाचत मोर नटा।
गावत ही सुर देत चातक-पिक, प्रगटयौ, मदन घटा।।
सब मिलि भेंट नंदलाले, बैठे ऊँचे अटा।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरनलाल सिर, कसूंभी पीत पटा।।

चारों ओर हरियाली छाई हुई है। हिंडोले पड़ गए हैं। गिरधारी और राधा रानी झूलते हैं। गोपियाँ चहुँ ओर खड़ी होकर तन-मन से बलिहारी जाती हैं। कवि श्री ने अनुपम छटा का वर्णन किया है-

'हिंडोरे माई झूलत गिरिवरधारी।
बाम भाग वृषभानुनंदिनी, पहरैं कसूंभी सारी।।
ब्रज-युवती चहुँ दिसि ते ठाड़ीं, निरखत तन-मन बारी।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल संग, बाढ्यौ रंग अति भारी।।'

बसंतोत्सव के अवसर पर चहुँ ओर बधाई की धूम हैं। नन्द के भवन की शोभा नर-नारियों के आगमन से परिपूर्ण है। सकल शृंगारों से सुसज्जित होकर अपार समूह छा गया-

'नव बसंत आगम नव नागरि, नव नागर गिरिधर सग खेलत।
चोबा, चंदन अगर, कुमकुमा, तकि-तकि पिय सन्मुख मेलत।
पुष्पांजलि जल भरत मनोहर, बदन ढाँपि, आँचल पट-पेलत।
'चतुर्भुज' प्रभु रस-रासि रसिक कौ, रीझि रीझि सुख सागर झेलत।

होलिकोत्सव में चहुँ ओर ब्रजनारियाँ, बालकवृंद, ब्रजवासी होली

खेलते हैं, पिचकारी मारते हैं, अबीर गुलाल उड़ाते हैं, आनन्द वर्षा हो रही है। यह सुख तीन लोक में कहीं भी उपलब्ध नहीं है-

'रतन जटित पिचकारी कर लिये, भरन लाल कों भावै।
चोबा, चंदन अगर कुमकुमा, विविध रंग बरसावै।।
कबहुँ कटि पर बाँधि निसंक है, लै नवला सी धावै।
मानों सरद-चद्रंमा प्रगट्यौ, ब्रजमंडल तिमिर नसावै।।
उड़त गुलाल परस्पर आँधी-सो रहयौ गगन सब छाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरनलाल छवि, मोपै बरनि न जाई।।

पुष्पोत्सव : प्रिया-प्रियतम पुष्पों से सुसज्जित फूलमंडली में सुशोभित हैं, जहाँ विविध प्रकार के फूलों से रुचिपूर्वक प्रत्येक अंग सजाया है। सेज, तकिया और झरोखे फूलों से सुगन्धित हैं-

'फूलन की मंडली मनोहर, बैठे जहाँ रसिक पिय-प्यारी।
सोभित सबै साज नाना विधि के, फूलन के भवन परम रुचिकारी।
फूलन के खंभ, फूलन की चौखँड़ी, फूलन बनी सुदेस तिवारी।
फूलन के झूमिका, फूलन के झरोखा, फूलन के छज्जे छवि भारी।
फूलन की सेज गेंदुआ तकिया फूलन की माला मनुहारी।
'चतुर्भुज' प्रभु फूल राधा उर, रस फूले श्री गोवर्धन-धारी।।

भक्ति-भावना :

ब्रज में यमुना की कुंजों में निवास करने की उत्कट अभिलाषा करने वाले चतुर्भुजदासजी को अपने मन को मधुप के समान गुंजन करना प्रिय है-हेत करि देत जमुना बास कुंजे।

जहाँ निसि-बासर रास में रसिक वर, कहाँ लौं बरनिए प्रेम पुंजे।।
थकित सरिता नाथ ब्रजवधू भीर, कोऊ धरत धीर मुरली सुन लुं जै।
'चतुर्भुजदास' जमुन पंकज जानि, मधुप की नाई चित लाइ गुंजै।

–'नन्दन' भारती नगर
मैरिस रोड़, अलीगढ़।

परम भगवदीय चतुर्भुजदास की मर्मस्पर्शी सेवा-भावना

✍ रामशरण पीतलिया

श्री मन्महाप्रभु वल्लभाचार्य का प्रादुर्भाव १६ वीं शताब्दी में हुआ। तत्कालीन राजनीतिक विप्लव को दृष्टिगत रखते हुए आचार्यचरण ने लोककल्याणार्थ वैष्णव सम्प्रदायाचार्य विष्णुस्वामी मार्ग के सार रूप 'सेवा-तत्व' का पुनः आविष्कार किया। महाप्रभु जी ने अपने 'कृष्णाश्रय' ग्रन्थ में स्पष्ट किया है कि इस कलिकाल में मनोवांछित फल प्रदान करने वाले कर्म-ज्ञान-उपासना आदि सभी मार्ग लुप्त हो चुके हैं। गंगादि मुख्य तीर्थों के अधिष्ठता देवता तिरोहित हो चुके हैं। सज्जन पुरुष भी अभिमान से भ्रान्त होकर स्वार्थसिद्धि के लिए पापाचरण में रत हैं। वैदिक मन्त्रों का भी तिरोभाव हो चुका है। शास्त्र विरुद्ध विवादों के कारण वेदोक्त कर्म-व्रतादि नष्ट हो गए हैं। चारों ओर पाखण्ड-प्रियता व्याप्त है। ब्रह्मादि समस्त देवता भगवान की शक्ति माया के वशीभूत हैं। इसलिए सम्पूर्ण सामर्थ्य से युक्त सभी अवस्थाओं में भक्तों के समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाले अशरण के शरण श्री कृष्ण की परिचर्यात्मक क्रियाओं को स्वीकार करते हुए श्री वल्लभाचार्य आचार्य चरण ने एक अभूतपूर्व एवं विलक्षण सेवा मार्ग का आविर्भाव किया, जिसमें स्नेहात्मक शुद्ध भक्ति को सर्वाधिक रूप में आवश्यक माना गया। गुसाईं श्री विट्ठलनाथजी ने इस मार्ग को व्यवस्थित किया और सेवा पद्धति का निर्धारण किया। इसलिए इस सेवा मार्ग को 'वल्लभी मार्ग' के नाम से जाना गया।

महात्म्य ज्ञान पूर्वक स्नेह वाले इस साधन मार्ग को आचार्य चरण ने 'तनुजा-वित्तजा' सेवा रूप कहा है। इस सेवा को शरीर एवं द्रव्य के सभी अंगों से किया जा सकता है। चतुर्भुजदास ने आचार्य श्री की वधाई में पद लिखकर निज सेवा प्रकट करने को स्पष्ट किया है-

श्री लछमन भट देत बधाई।
प्रगट भए पूरन पुरुषोत्तम श्री बल्लभ भक्त सुखदाई।।
विप्र सबै मिल करत बेद धुनि देत असीस सुहाई।
'चतुर्भज' प्रभु गिरिधर हरखे हें निज सेवा प्रगटाई।।

इस सेवा से ब्रज भक्तों को सर्वोपरि स्नेह वाली 'मानसी' दशा की फलात्मक सिद्धि होती है, जिसे पराभक्ति के नाम से भी जाना जाता है।

'तनुजा-वित्तजा' सेवा में भक्ति की नवधा क्रियाओं का प्रेम संयुक्त विनियोग होता है। नवधा क्रियाएं है-श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्म-निवेदन।

इन नवधा क्रियाओं से ही महात्म्य ज्ञान संयुक्त स्नेह पुष्ट होकर प्रेम लक्षणा भक्ति का रूप ग्रहण करता है। इस प्रकार प्रेम लक्षणा भक्ति ही इस मार्ग की विशिष्ट सिद्धि मानी गई है।

पुष्टिरूप प्रेमात्मक भक्ति की नवधा क्रियाओं का आरंभ 'शरण'-भाव से होता है-

वचन पीयूष मधु सुरत उदधि दरस परस स्मरन त्रिबिध तरने।
अमर नर लोक दुतिय समता नहीं जन 'चतुर्भुज' अंघ्रि कमल सरने।।

प्रेम ही भगवद् धर्म है। इसलिए उसकी प्राप्ति भगवत् कृपा के बिना संभव नहीं है। भगवत् कृपा शरणागति से प्राप्त हो सकती है। इसलिए पुष्टिमार्ग में शरण दीक्षा से ही प्रवेश होता है। शरण प्राप्ति से ही वह जीव अनुग्रह मार्ग का अधिकारी बनता है। 'वरण'-रूप कृपा शरण से ही प्राप्त होती है। पुष्टिमार्ग में शरण दीक्षा का प्रथम स्थान है। इसके पश्चात् उसे तनुजा-वित्तजा सेवा का अधिकार प्राप्त होता है। सम्प्रदाय में शरण की दो दीक्षाएं हैं-एक नाम मंत्र-अष्टाक्षर और दूसरी निवेदन अर्थात् समर्पण। नाम मन्त्र पुष्टि सम्प्रदाय की प्रारंभिक सर्व सामान्य दीक्षा है। इसमें आचार्य मुख से तीन बार अष्टाक्षर मंत्र (श्री कृष्णः शरणं मम)का श्रवण होता है। नाम मंत्र प्राप्त करने के पश्चात् ही सम्प्रदाय में प्रवेश माना जाता है। नाम मंत्र जिसे प्राप्त नहीं हुआ है, उससे वैष्णव जल ग्रहण नहीं कर सकता है। परम भगवदीय चतुर्भुजदास ने एक पद में गाया है-

भक्ति भाव प्रगट्यो इहि मारग कलिजुग सृष्टि सनाथ की।
सरन जात ही करत कृतारथ कर गहि सहज अनाथ की।।

गुरु शरणागति के पश्चात् अनाथ भक्त सहज ही सनाथ हो जाता है। उसका जन्म ग्रहण करना सार्थक हो जाता है। नाम मंत्र स्मरण करने से जन्म के पाप-ताप नष्ट हो जाते हैं। 'चतुर्भुजदास आज इतनी जो उहि समीरनु जनमु सिरै है।' नाम मंत्र की दीक्षा से जीव और ईश्वर के बीच सम्बन्ध स्थापित हो

जाता है। जीव द्वारा भूला 'अंश-अंशी' सम्बन्ध पुन : स्थापित हो जाता है। नाम मंत्र से स्मरण कराया जाता है कि-

जीव तेरा शरण वा आश्रय एक मात्र श्री कृष्ण ही हैं।'

'समर्पण' पुष्टिमार्ग की विशेष दीक्षा है। इससे जीव को दास्य-सख्य-आत्म निवेदन का अधिकार प्राप्त हो जाता है। आत्म निवेदन करने पर जीव प्रभु का विशेष अनुगृहीत माना जाता है। वह देह इन्द्रिय अन्तःकरण सहित प्रभु को समर्पित हो जाता है। उससे संबंधित धर्म दार आगार पुत्र आप्त वित्त इहलोक परलोक तथा आत्मा के समस्त अहन्ता ममतात्मक लोक वेद के पदार्थों का समग्र भावनाओं सहित श्रीकृष्ण के प्रति निवेदन हो जाता है। चतुर्भुजदास ने एक पद में गाया है-

एकहि आँक जपै गोपाल।
अब इहे तन जानें नहीं सखी और दूसरी चाल।
मात पिता पति बंधु वेद-विधि तजे सबै जंजाल।।
स्याम सुरूप चित्त में चुभ्यो परि जो बीते बहुकाल।
गह्यौ नैमु तिनु तोरि जबै हँसि चितए नैन विसाल।
'चतुर्भुजदास' अटल भए उर-घट परसे गिरिधरलाल।।

इस प्रकार समर्पण से सहस्र परिवत्सर काल में ईश्वर से बिछुड़ा हुआ जीव कृष्ण के प्रति भगवदीय दास्य भाव प्राप्त करता है। अपना सर्वस्व प्रभु को समर्पित कर देता है। दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता (सं. २४५) में श्रीनाथजी के गुसाईं जी से स्पष्ट कहा है-

''जा जीव कों तुम ब्रह्म संबंध कराबौगे तिनसों ही बोलूंगो, तिनही के अंग सौं अपनौ अंग स्पर्श करूँगो। तिनही के हाथ कौ अरोगूंगो। ये तीन वस्तु तिहारे सम्बन्ध बिना काहू कों सिद्ध न होंगी।''

इस प्रकार आत्म निवेदन या समर्पण से ब्रह्म के साथ सम्बन्ध स्थापित होता है। इसलिए इसे ब्रह्मसम्बन्ध भी कहते हैं।

नाम निवेदन मंत्र से सेवा हेतु नया देह प्राप्त होता है। इससे उसका प्रथम का सम्बन्ध नष्ट होकर नया सम्बन्ध जुड़ता है। उसका वैष्णवत्व में प्रवेश होता है। वही प्रभु सेवा का अधिकारी भी होता है। गंगाजी के सम्बन्ध मात्र से जिस प्रकार मलीन जल भी निर्दोष हो जाता है, उसी प्रकार ब्रह्म के सम्बन्ध से जीव निर्दोष होकर 'निर्दोष ब्रह्म' की सेवा के योग्य होता है। वह मानता

है, 'मैं सेवक हूँ और श्री कृष्ण मेरे स्वामी हैं।'

'पश्चातापः कथं तत्र सेवकोअहं न चान्यथा।'

सेवक का कर्तव्य है, वह स्वामी की आज्ञा का पालन करे। सब कुछ स्वामी को समर्पित करे। अन्यथा भाव रखने पर वह स्वामी-द्रोह का अपराध भाजन होगा।

आज्ञैवकार्या सततं स्वामी द्रोहो अन्यथा भवेत्।
सेवकस्य तु धर्मो अयं स्वामी स्वस्य करिष्यति।।

(अन्तःकरण प्रबोध श्लोक ४)

सेवक का धर्म है वह भगवद् गुणानुवाद करे, भगवत कथाओं का श्रवण करें। भगवन्नाम का स्मरण करना सेवा भावना में वृद्धि करने वाला है। गुरुचरणों की सेवा पुष्टिमार्ग में पाद सेवन है। चन्दन धूप दीपादि से भगवद् विग्रह की अर्चना करना और गुरु-प्रभु की नित्य वन्दना करना-दोनों अर्चन-वन्दन सेवा हैं।

गुसाईं जी और श्रीनाथजी में अभेद दर्शन करते हुए श्री चतुर्भुजदास पद गायन करते हैं। उनकी मान्यता है-

'आपुही सेवा सिखावत, सकल रीति अनूप।
भोग-राग-सिंगार नाना चरचि दीपरुधूप।।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन जुग बपु लीला सदा अछूप।
नंदनंदन बल्लभनन्दन एक मन द्वै रूप।।'

चतुर्भुजदास ने आधिदैविक मानसीरूप में श्रीविट्ठलनाथ जी गुसाईंजी, श्री वल्लभाचार्य जी का समस्त कुल और गिरिधरन श्रीनाथजी को अनुदिन नमन करना प्रभुलीला प्राप्ति का फल स्वीकार किया है। उनके चरणामृत का पान करना ही जीवन की सफलता है।

पुरुषोत्तम अवतार सुकृत फल फलित, जगतवन्दन् श्री बिट्ठलेश दुलराऊँ।
चतुर्भुजदास पर्‌यौ द्वारे प्रनमति करे सकल कुल चरणामृत भोर उठि पाऊँ।।

दास्य भक्ति पुष्टिमार्गीय परचारगी सेवा है। दासत्व की महानता सेवा है। उत्तम प्रकार के ब्रज भक्तों के आधिदैविक स्नेह रूप दास्य प्रकार से सेवा करने पर, भगवान कृष्ण उनके सहज अधीन होते हैं। इस प्रकार का स्नेहपूर्ण दासत्व सर्वश्रेष्ठ श्री स्वामिनी में ही स्पष्ट है और वह स्वामिनी प्रकार वाला दासत्व श्री आचार्य जी में है। इसलिए महाप्रभु जी स्वामिनी भाव विशिष्ट

परमानन्द स्वरूप हैं। श्री आचार्य के परमानन्द स्वरूप का भगवद्रूप श्री स्वामिनी रूप दोनों का एक साथ अनुभव श्री गुसाईं जी ने किया। उनके हृदय में परमानन्द के लीला विशिष्ट युगल भाव स्वरूप के दर्शन हुए। भावात्मक आधिदैविक साक्षात् स्वरूप वाला सेवा प्रकार स्त्री से ही रसानुभव कराने वाला है। चतुर्भुजदास जी ने एक पद लिखा है-

सखी री ठाडौ हौ नन्दनन्दन।
कदम डार कौ छतना बनायौ करत केलि गिरिधरन।
पियरे बसन पहिरे अति सुन्दर मोतिन माल गरे ढरन।।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरधरज् की बानिक देखत हैं डगभरन।

प्रभु की रूप माधुरी का पान करना, उनके एकटक दर्शन करना, उनके सौन्दर्य-माधुर्य करना, उनकी शोभा का चित्रण करना, और उनकी 'पराचरगी' में ही सर्वस्व समर्पण कर देना दास्य भक्ति में ही संभव है।

सरस सर सरोज सुधा नैननि भरि पाई।
सुख समुद्र सोभा मो पै कही न जाई।।
धरम करम लोक लाज सुत पति तजि आई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर मैं जांच्यौ मेरी माई।।

आनन्द स्वरूप श्रीकृष्ण हैं। यही स्वरूप पुष्टिमार्ग में सेवनीय और भजनीय है। इससे इस स्वरूप की सेवा स्त्री भावापन्न होकर, तत्सुखात्मक भाव भावित होकर कर्त्तव्य है। इसीलिए आनन्दरूप श्रीकृष्ण का श्रृंगार भी स्त्री भावयुक्त होता है, पुरुषोत्तम के स्वरूपान्तर्गत गूढ स्त्री भाव रूप सत्ता स्वरूप श्री स्वामिनी जी की पुष्टिमार्ग में सेवा होती है, क्योंकि स्वामिनी की साक्षात सेवा करने का अधिकार जीव को नहीं है। इसलिए श्री गुसाईं जी ने आचार्य श्री में कृष्ण स्वरूप का दर्शन किया।

आचार्य श्री महाप्रभु जी पूर्ण पुरूषोत्तम के स्वरूप में विद्यमान हैं। गुसाईं श्री विट्ठलनाथ जी में युगल छवि का निवेश है।भक्ति मार्ग का उपदेश देने तथा भक्तों पर कृपा करने के लिए श्री विट्ठलनाथजी ब्रज में बिहार करते हैं-

सदा ब्रज ही में करत बिहार।
तबकें गोप-भेष अबकें प्रगट द्विजवर-अवतार।।
तब गोकुल में नन्दसुवन, अब वल्लभराज कुमार।।
आपहिं चरचि दिखावत औरनु दृढमत सेवा सार।

जुगल रूप गिरिधरन श्री विट्ठललीला ए अनुसार।
'चतुर्भुज' प्रभु सुख सैल-निवासी भक्तनु कृपा उदार।।

इन्होंने भक्तों को पुष्टि सिद्धान्त का उपदेश किया है और दास्य भाव की सेवा का निर्देश दिया है। इन्हें त्यागना, इनके निर्देशों की अवहेलना करना और कुतर्कों में फँसना तो अज्ञान में भटकना है-

सुदृष्टि चिते सिद्धान्त बतायो लीला जग विस्तार।
इह तजि आन ज्ञान कँह धावत भूले कुमति विचार।।

'आत्म निवेदन' रूप समर्पण से जहाँ एक ओर दास्य भाव की परचारगी सेवा प्राप्त होती है, वहाँ सख्य-भक्ति का निवेश भी होता है और परमप्रभु को भोगादि समर्पण एवं प्रभु को साक्षात रूप में अंगीकार करना होता है। चतुर्भुजदास प्रभु के सखा भाव के भक्त हैं। श्रीजी स्वयं उनके साथ विनोद करते हैं। भक्त का वियोग प्रभु को भी सहन नहीं है। चतुर्भुजदास की पत्नी का निधन हो गया। प्रभु की प्रेरणा से उन्होंने पुनर्विवाह कर लिया। चतुर्भुजदास की वार्ता में उनके साथ सख्य भाव का हास्य विनोद इस प्रकार मिलता है-

'ता पाछैं श्रीनाथजी चतुर्भुजदास की नित प्रति हाँसी करन लागे। जो (यह) देखौ कुंभनदास सरीखे भगवदीप कौ बेटा होइकैं स्त्री मरि गई तासों दोइ चार महीना हू नाँय रह्यो गयो। सो तुरत धरेजौ कर लियो। सो या भाँति सौं चतुर्भुजदास की हाँसी श्री गोवर्द्धननाथ जी नित प्रति सखान सों करते। तब चतुर्भुजदास कूँ सुनि कैं लज्जा आवती। ऐसें करत एक दिन श्री नाथजी नैं चतुर्भुजदास सौं कही–देखौ चतुर्भुजदास नैं काम के बस परिकें धरेजौ कियौ, पर या के मन में सन्तोष ना भयौ। तब यह बचन सुन चतुर्भुजदास पै सह्यौ न गयौ। तब चतुर्भुजदास नैं श्रीनाथजी सौं कह्यो–जो मोकों तौ तुम नित्य ही ऐसें कहत हो, पर आप हू तो ब्रजवासीन के घर घर डोलत हौं। तब यह सुनि कैं श्रीनाथजी लजा गए।''

इस वार्ता से सख्य भाव की भक्ति की अवगति होती है।

प्रभु सेवा अहंकार शून्य है, जो समर्पण भाव से ही प्राप्त होती है। इसके भावात्मक और क्रियात्मक दो रूप होते हैं। भावात्मक सेवा ही मानसी सेवा है, जिसमें बाह्योपचारों की आवश्यकता नहीं होती है। जीव सर्वात्मत्ता आत्मभाव से जो कुछ भी करता है वह तदर्थ ही होता है। क्रियात्मक सेवा के तनुजा और वित्तजा दो भेद हैं। तन और वित्त सामर्थ्य को भगवदर्पण और प्रभु के अनुग्रह की कामना

के अतिरिक्त कुछ भी न चाहना, परम प्रभु की क्रियात्मक सेवा है।

भक्ति मार्ग में सेवा का महत्त्व असंदिग्ध है। पुष्टिमार्ग में श्रीकृष्ण क सेवा का सुचिन्तय और व्यवस्थित विधान है। पुष्टिभक्ति से भगवान के सा मानसिक एकीकरण और सेवा उपयोगी देह का अनुसंधान होता है। पुष्टिमा में सेवा के रूप में दैनिक अष्टयाम सेवा के साथ भोग, राग और शृंगार क विधान किया गया है।

वेश विन्यास, गृह प्रसाधन, पाककला, संगीत और कीर्तन साहित्य इर सेवाचर्या की देन है।

चतुर्भुजदास भक्ति मार्ग के साधक कवि हैं जो कीर्तन साहित्य माध्यम से प्रभु की मानसी सेवा करते हैं और तन से प्रभु की अष्टयाम से में संगीत रस निमग्न होकर अपने आपको प्रभु की सेवा में लगाए रखते है भोर उठते ही श्रीनाथजी के दर्शनों का अनुराग ज्ञापित करते हुए पद गाते है

भोर भावतो गिरिधर देखौं।
विमल कपोल लोल लोचन छबि निरखि कैं नैन सुफल करि लेखौ
नख सिख रूप अनूप विराजित अँग अँग मन्मथ कोटि बिसेखौं
चतुर्भुज प्रभु रस रास रसिक कौ बड़े भाग बल इकटकु पेखौं।

पुष्टिमार्गीय अष्टयाम सेवा प्रभाव में मंगला के मंगल-विधान से प्र होती है। गोपी भाव में भक्त नन्दालय में यशोदानन्दन के दर्शनार्थ पहुँचते है प्रभु के दर्शन से जो प्रभात प्रारंभ होता है, वह सम्पूर्ण दिन कल्याणमय हो है। गोपी का दर्शनार्थ आतुर भाव अत्यधिक हृदयाकर्षक है। चतुर्भुजदास लिखा है-

मैया तेरे लाल कौ मुख देखन आई।
कालि देखि मुख गई दधि बेचन जातहिं गयो बिकाई।।
दिन तैं दूनों दाम लाभ भयौ गाइनि बछिया जाई।
आई सबै थँभाइ साथ की मौहन देहु जगाई।।
सुख मृदु वचन बिहँसि उठि बैठे नागर निकट बुलाई।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरनलाल कों चली संकेत बताई।।

चतुर्भुजदास की मंगला सेवा कितनी फलवती है कि प्रभु उसे सामी का फल प्रदान करते हैं और पुनर्मिलन का संकेत देते हैं। मंगला भोग जि चतुर्भुजदास ने कलेऊ कहा है सेवा का अन्यतम भाव है। वात्सल्य भा

बालक को उठते ही माता मंगला-भोग अर्पित करती है। बालक कलेऊ के लिए आतुर होता है। माँ प्यार से कह उठती है-

उठे प्रात गात कहन लगे मात तात, करौ हौं कलेऊ आतुर जिन होउ प्यारे।
चतुर्भुज प्रभु जानि भागि तेरौ पूरन ब्रह्म सौं कहत लला रे।।

गोपी थाल में मधु मेवा पकवान मिठाई लाई है। श्वेत वस्त्र से थाल ढँका हुआ है। श्याम सुन्दर वस्त्र को खींचते हुए कलेऊ करने के लिए आतुर होते हैं। माता उन्हें गोदी में बिठाकर भाल पर तिलक देती हैं और कलेऊ कराती हैं। फिर उन्हें पान का बीड़ा देकर मंगल आरती करती हैं। समस्त सेवा विधान का चित्रण चतुर्भुजदास ने जिस मनोहारी ढंग से किया है, वह दृष्टव्य है-

भोर भयौ नन्द जसुदा जू, बोलें जागो मेरे गिरिधर लाल।
रतन जटित सिंहासन बैठो, टेरन कौं आई ब्रजबाल।।
नियरें जाइ सुपेदी खेंचति, बहुरि बसन सौं ढांपि रसाल।
मधु मेवा पकवान मिठाई भामिनी लाई भरि थाल।
तब हरि हरसि गादी पर बैठे, करत कलेऊ तिलक दै भाल।
दै बीरा आरती उतारति 'चतुर्भुजदास' गावै गीत रसाल।।

माता यशोदा श्यामसुन्दर का शृंगार करती है। उन्हें सुंदर वस्त्र और आभूषण धारण कराती है। तिपची पाग, कुलह, और फूलों का शृंगार करती हैं। माता श्याम सुन्दर को देखकर प्रसन्न होती हैं। शृंगार सेवा में भगवान को धारण कराये जाने वाले साज शृंगार का वर्णन करते हुए चतुर्भुजदास ने पद गाया है-

लाडिले ललित लाल हों बारी हों आजु की या बानक पर।
तिपेची पाग टेढी सोहति श्यामधारी कुलह सूल फूलन भरी सुभर।
भूषण वसन और कहो ठौर ठौर बंक बिलोकनि बेनु लेनि कर।
'चतुर्भुज' प्रभु उर नैननु सींच सिरावत रूप सुधारस लालनु गोवर्द्धनधर।

श्यामसुन्दर का विभिन्न ऋतुओं के शृंगार सेवा का पृथक पृथक ढंग से वर्णन हुआ है। भगवान को शृंगार कराने के पश्चात दर्शन कराने की सेवा की जाती है-

सुभग सिंगार निरखि मोहन को, दर्पन लै कर पियहिं दिखावत।
आपुन नेंक निहारहु बलि गई, आजु की छबि कछु कहत न आवत।।

शृंगार के पश्चात भगवान पर न्यौछावर किया जाता है। सेवा पद्धति

में जिस भाव को दर्शित किया गया है। चतुर्भुजदास ने उसी भावना को पद में निदर्शित किया है-

अंचर फेरि करति न्यौछावर तन मन असि अभिलाखु बढ़ावत।
'चतुर्भुज प्रभु' गिरिधर कौ रूप रस पिवत नयन पुट तृपति न पावत।।

श्रृंगार के इस न्यौछावर भाव के उपरान्त श्यामसुन्दर ग्वाल बालों को टेर कर ग्वाला के वेश में गायों के पीछे वन को प्रस्थान करते हैं। धौरी धूमर आदि गायों का नाम लेकर उन्हें स्नेह देते हैं। मधुर मुरली बजाते हैं। उनके हाथ में लकुट और वेणु सुशोभित हैं-

टेरत ऊँची टेर गोपल।
दूरि गाँइ जिनि जान देहु तुम सब मिल घेरहु ग्वाल।
लै लै नामु धूमरी धौरी मुरली मधुर रसाल।।
चढि कदम्ब चहुँधा निचतव हैं अंबुज नैन बिसाल।
स्रवन सुनत सुरभी समुहानी उलटि पिछौड़ी चाल।।
'चतुर्भुज' प्रभु पीताम्बर फेरत गोवर्द्धनधर लाल।

वन में गायों के साथ भ्रमण के भाव में ग्वाल सेवा का निर्धारण किया गया है। विभिन्न क्रीड़ा वन विहार और ग्वालों के आनन्द की भावना का दर्शन 'ग्वाल-सेवा' का भाव हैं। वन में ही सुन्दर शिला पर बेठकर सखा मण्डल में छाक बाँटकर भोजन करते हैं। गायों को उनके नाम लेकर पुकारते हुए अपनी उपस्थिति का आभास कराते हैं। छाक में छप्पन भोग छत्तीसों व्यंजन समने थालों में सजाया जाता है। ग्वालों के हास परिहास के मध्यु प्रभु छाक अरोगते हैं। राजभोग के पश्चात् प्रभु पान का बीड़ा मुख शुद्धि हेतु चबाते हैं। राज भोग की आरती का पूरा विधान निश्चित परिपाटी के अनुसार नियोजित होता है-

(१) सुन्दर सिला खेल की ठौर।
मदन गोपाल जहाँ नाइक चहुँ दिस सखा मण्डली और।।
(२) तिनि में बैठे छाकें खावत मदन रूप मंडली रची।
छप्पन भोग छतीसों व्यंजन आगे आजें थार सँची।।
(३) बिंजन मीठे खाटे खारे धरे हैं सँवारि परम रुचिकारी।
भरि भरि उलनि अछूते राखे गनतन आवै धरे सुधारी''
(४) बीरी सुबल स्याम कों देत।
स्याम सखा ग्वालन कों बांटत उपजावत अति हेत।।

इस प्रकार वन में वेणुगान, लीला बिलास, रास, हिंडोला, फाग, दान आदि की भावना से वर्ष भर में यथा समय भावात्मक सेवा प्रस्तुत की जाती है। ऋतुचर्या के अनुसार पर्वोत्सवों की सेवा प्रातःकाल मंगला से शयन तक की निर्धारित की गई है। हर एक सेवा भावना की निकटतम जानकारी चतुर्भुजदास का निगूढ भाव सहित ज्ञात हैं। इन्हें भगवान की रहसि लीला में सखी भाव से प्रवेश का अधिकार प्राप्त है। क्योंकि ये दिन की सेवा में विशाल सखा के रूप में तथा रात्रिकालीन सेवा में विमला सखी के भाव में अहर्निश सेवा में विद्यमान रहते हैं।

विशाल सखा के रूप में श्री चतुर्भुजदास श्री गोवर्द्धन नाथ जी के साथ श्यामढाक पर गोचरण सेवा करते हैं। यह लीला रहस्य वार्ता प्रसंगों में वर्णित है। श्री गोवर्द्धननाथ के साथ ब्रजवासियों के घरों में माखन चोरी लीला में चतुर्भुजदास पकड़े जाते हैं और ब्रजवासियों की मार खाते हैं। श्री जी चतुर्भुजदास से हास परिहास करते हैं। चतुर्भुजदास भी श्री जी को उपालंभ देते हैं, ''ब्रजवासियों के दूध दही तो आप खाते हो और मुझे मार खानी पड़ती है।''

विमला सखी के रूप में श्री चतुर्भुजदास को रहस्य लीला प्रवेश का अधिकार प्राप्त था। रात्रि को चित्रसारी में दीपक के प्रकाश के बार में पूछने पर अपने पिता कुंभनदास के पद की पंक्ति पूरी करके उन्हें अपनी सुविज्ञता से परिचित कराते हैं और रहस्यलीला की अवगति का भान कराके भाव विभोर कर देते हैं-

वे देखौ बरत झरोखन दीपक हरि पौढे ऊँची चित्रसारी।
सुन्दर वदन निहारन कारन राखे हैं बहौत जतन करि प्यारी।।
कंठ लगाय भुज दे सिरहाने अधर अमृत पीवत पिय-प्यारी।
तन मन मिली प्रान प्यारें सों जो तन छबि बाढी अति भारी।।
'कुंभनदास' प्रभु सौभग सींवा जोरी भली बनी इक सारी।
नव नागरी मनोहर राधे नवल लाल श्री गोवर्द्धन धारी।।

चतुर्भुजदास अन्तरंग सेवा में विमलासखी के रूप में तत्सुखात्मक भाव से नित्य सेवा में लीन रहकर नव नागरी और नवल लाल के रतिरंग रहस्य को अनुभव करते हैं।

श्री जी को ब्रज भक्तों से बहुत लगाव रहता है। ब्रज भक्तों के मनोरथों के अनुसार श्री गोवर्द्धन नाथ जी उनके मनोरथों को सिद्ध करते हैं। चतुर्भुजदास

ऐसे भगवदीय हैं कि उन्हें श्री जी के सभी भावों का आत्माभास हो जाता है। श्री गोवर्द्धननाथ जी के दिन प्रतिदिन के नवीन श्रृंगार का भाव उनके कीर्तन में अवलोकनीय है-

माई री आज और काल्हि और दिन प्रति और और
देखिए रसिक श्री गिरिराज धरन।
छिन प्रति नव छवि बरने सो कौन कवि
नित ही सिंगार बागे बरन बरन।।
सीमा सिन्धु अंग अंग मोहित कोटि अनंग
छबि की उठत तरंग विश्व कौ मनहरन।
चतुर्भुजदास प्रभु गिरिधर कौ स्वरूप सुधा
पान कीजे जीजे रहिए सदा ही सरन।।

प्रभु के नित्य नव श्रृंगार का आभास सामान्य कवि को हो ही नहीं सकता। केवल वही प्रभु की नित्य नवीन छबि को देख पाता है जो आत्मनिवेदन पूर्वक शरणागत होकर प्रभु की रूप सुधा के पान का अनुरागी होकर जीवन जीता हो। वार्ता साहित्य साक्षी है कि चतुर्भुजदास की भावना के अनुसार श्री गोवर्द्धननाथ जी कोचन्द्रसरोवर पर रास के मंडान में पधारना हुआ। प्रभु ने चन्द्रमा की आभा तथा रात्रि की अवधि को अधिक विस्तृत किया ताकि रास का सर्वाधिक आनंद-उपलब्ध हो सके। चतुर्भुजदास ने रासमण्डल के प्रभु को नटवर वेष में देखकर पद गाया-

अद्‌भुत नट भेखु धरें जमुना तट श्याम सुन्दर
गुन निधान गिरवरधर रास-रंगु नाचें।
जुवति जूथ संग मिलि गावत केदार रागु
अधर बेनु मधुर मधुर सप्त सुरनि साँचें।।
उरप-तिरप लाग-डाट तत-तत-तत थेई-तथेई-थेई
उघटत शब्दावली गति भेद कोउ न बाँचें।
'चतुर्भुज' प्रभु वन विलास, मोहे सब सुर अकास
निरखि थक्यो चन्द-रथ हि पच्छिम नहिं खाँचें।।

अप्सरा कुण्ड पर श्री गिरिराज जी कन्दरा में परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदास को उन्हीं के प्रिया-प्रियतम के दर्शन होते हैं। उन्हें श्री गुसाईं जी के आदेश से श्रृंगार के दर्शन करने का सान्निध्य प्राप्त हुआ। पुष्प चयन सेवा

का सौभाग्य चतुर्भुजदास को ही मिला।

चतुर्भुजदास ऐसे अन्तरंग सेवक है, जिनकी पत्नी का वियोग श्री जी को असहनीय हो गया और भक्त पर कृपा करके उन्हें दूसरा विवाह करने का निर्देश दिया। सद्दू पाण्डे को इस विवाह की पूरी व्यवस्था करने का आदेश भी स्वयं श्री जी ने ही दिया। यह चतुर्भुजदास की अन्तरंग सेवा का ही प्रभाव है।

सारांशत : चतुर्भुजदास तन-मन-धन सर्वस्व समर्पण कर परम प्रभु पर पूर्णतः आश्रित रहे हैं। उन्होंने अपना जीवन 'श्री जी' की सेवार्थ ही स्वीकार किया है। ऐसी मानसी उपासना और मर्मस्पर्शी सेवा के अधिकारी चतुर्भुजदास ही रहे जिन्होंने अपना कुछ समझा ही नहीं। ऐसे भक्त कवि की भावनाओं का उनके इस पद के साथ स्मरण करते हैं-

गोपाल कौ मुखारविन्द जिय में बिचारौ।
कोटि भानु कोटि चन्द मदन कोटि बारौ।।
सरस सरोज सुधा नैन भर पाई।
सुख समुद्र सो कापै कहिय जाई।।
धर्म अर्थ काम मोक्ष सबही जाके हाथ।
'चतुर्भुज' प्रभु गोवर्द्धन धर श्री गोकुल के नाथ''

चतुर्भुजदास अपनी सेवा भावना से धर्मादि चारों पुरुषार्थों को सहज प्राप्त कर लेते हैं। आठों याम प्रभु की सेवा करते करते ही जीवन में देश, काल, ऋतु पर्वोत्सव, परिस्थिति सभी 'परचारगी' सेवा का अनुभव करते हैं। वे श्री जी के अन्तरंग मानस सखा हैं जिन्हें श्री जी की भावात्मक छवि का प्रतिपल आभास होता है और रहस्य लीला की अन्तरंग सखी हैं जिन्हें स्वामिनी जी की अन्तरंग सेवा प्राप्त है। स्वामिनी जी की सुख, साज, सम्पन्नता में आत्मसुख की अनुभूति करना एवं तत्सुख सुखी भाव को जीवन का चरम लक्ष्य मानकर जीवन को सेवा के लिए समर्पित कर देना ही चतुर्भुजदास का भक्त-सेवक स्वरूप है। इनके मर्मस्पर्शी भाव को तब ही जाना जा सकता है जबकि द्रष्टा की भाव भूमि में समर्पण भाव विद्यमान हो। चतुर्भुजदास परम भगवदीय हैं। उनका अन्तरंग सखा भाव ही उनकी सेवा का सच्चा स्वरूप है।

–पीतलिया निवास,
पीर मौहल्ला, कामवन

श्री भक्त चतुर्भुजदास की वर्षोत्सव लीलापदों की भावना-

✍ प्रो. गिरीश चन्द्र चौधरी

भक्त चतुर्भुजदास जी गो. विट्ठलनाथ जी के अपने आशीर्वाद की मौखिक छाप लगने के द्वारा अष्टछाप कवि मण्डली में प्रसिद्ध हुए थे और रास में स्वामिनी जी की सखी के रूप में विशाल, विमला या रंगदेवी के नाम से निकुंज लीला का सुखानुभव करने की मान्यता उन्हें दी गयी थी। सखा सखी रूप में अष्टछाप कवियों का निरन्तर कृष्ण प्रेम में आसक्त रहना ही प्रदर्शित किया गया है। साम्प्रदायिक महत्व के अतिरिक्त अष्टछाप की रचना का मुख्य उद्देश्य श्रीनाथजी कीर्तन सेवा को भव्य स्वरूप प्रदान करना था। श्रीमहाप्रभु जी ने प्रभु के प्रत्येक अष्टयाम सेवा क्रम में एक-एक कवि नियुक्त किए थे और संध्या भोग के लिए चतुर्भुजदास जी प्रधान कीर्तनीया थे। अपने कीर्तन पदों के रूप में ही अपने भावों को प्रकट किया था और किसी ग्रन्थ की रचना नहीं की। इनके पद सरस और काव्य सौन्दर्य से भरपूर हैं। बाललीला तथा संयोग और वियोग में श्रृंगार के सुन्दर पदो की रचना उन्होंने की है। वात्सल्य वर्णन में उन्होंने कृष्ण द्वारा यशोदा पर अभियोग लगाने की नूतन कल्पना की है।

''अजहु व्याह करत नही मेरो होय निसंक नींद क्यों आवै
औट्यो दूध धेनु धौरी कौ भरि कटोरा क्यों न प्यावै।

आपने साख्य भाव से श्री कृष्ण की भक्ति की थी। वे श्रीनाथजी के साथ खेलते हैं झगड़ते हैं और सुबल के साथ चुटिया की लम्बाई को लेकर विवाद का उल्लेख करते हैं।

''चुटिया तेरी बड़ी किधौं मेरी''

मातृ हृदय का सुन्दर चित्र, कृष्ण के गोचारण में खेलने का और फाग व हिण्डोरे के पदो में विभिन्न रंगो की संयोजना के साथ उल्लास को अभिव्यक्त किया गया हैं।

''छबीले लाल के संग ललना झूलत न सुरंग हिंडोरे।
सोभित तन गोरे स्याम पीरो पटु कुसुंभी सारी।

चतुर्भुजदास ने प्रकृति के सुन्दर चित्र कृष्ण स्वरूप चित्रण, रासलीला में नृत्य की विभिन्न भंगिमाओ को कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है। अपने संक्षिप्त जीवन में जो काव्य रचना उन्होंने की उससे उनके सामर्थ्य का परिचय मिलता है। भक्ति भावना तथा कृष्ण के प्रति आसक्ति उनके काव्य का मुख्य विषय है। कृष्ण जन्म से लेकर गोपी विरह तक की लीला का गान उन्होंने

किया है। लोक संस्कृति के विभिन्न रूपों की ओर उनका ध्यान नही गया है। संगीत तथा सम्प्रदाय सम्बन्धी सिद्धान्तों पर ही उन्होने बल दिया है। इस दृष्टि से उनका काव्य सूरदास, परमानन्ददास जैसे महाकवियों की तुलना में न्यून ठहरता है। परन्तु भावाभिव्यक्ति में चित्रात्मकता में वे किसी से कम नही है :-

''नैननि ऐसी बान परी।

बिन गिरधरन लाल मुख देखे जुग भई गनत घरी।

कृष्ण का सुन्दर रूप नेत्रों की आदत उसे देखने की तथा रूप के आकर्षण के सम्मुख सभी प्रयासों के विफल हो जाने की मार्मिक अभिव्यक्ति उक्त पद का सौन्दर्य है। रूपासक्ति के और गोपियों के माध्यम से स्वयं उनके अपने ऐसे अनेक उद्‌गार, उनके काव्य में बिखरे हुए हैं।

विभिन्न पर्व तथा उत्सव भारतीय संस्कृति के प्राण हैं। पर्वों द्वारा सामाजिक आनन्द और उल्लास की अभिव्यक्ति होती है। ब्रज की लोक संस्कृति में भारतीय संस्कृति के पर्व उत्सवों तथा प्रादेशिक पर्वों का समावेश भी हुआ है। इन विविध पर्वों के लिए तिथियां निश्चित हैं। और आज भी उन्हीं तिथियों परम्पराओं तथा रीति-रिवाजों का पालन हो रहा है। अष्टछाप साहित्य, जो लोक को अपने साथ लेकर चलने वाला साहित्य है इसलिए इसमे ब्रज प्रदेश के सभी पर्वो की झलक है। सामाजिक, ऐतिहासिक दृष्टि से तो अत्यन्त महत्वपूर्ण है ही आध्यात्मिक दृष्टि से भी इनकी महत्ता अनुपेक्षणीय है। प्रत्येक पर्व किसी न किसी धार्मिक विश्वास के साथ जुड़ा है इसलिए परम्परा के रूप में इन्हे मानने में व्यक्ति धर्म का पालन करता हुआ पुण्य अर्जित करता है। लौकिक तथा सामाजिक जीवन की सुख-समृद्धि की अभिव्यक्ति भी पर्वों के माध्यम से होती है। सामाजिक रूप से आनन्द मनाने के कारण मनुष्य समाज से जुड़ता है उसके प्रति अपने उत्तरदायित्व को सुनिश्चित करता है। अपने जीवन की एकरसता को पर्वों के माध्यम से भंग करता है और तरो-ताजा होकर फिर अपने कर्म में रत हो जाता है।

अष्टछाप साहित्य में भारतीय संस्कृति में मान्य और ब्रजप्रदेश में प्रचलित सभी पर्वों का वर्णन किया गया है। ब्रज की लोक संस्कृति में प्रचलित गणगौर, अक्षय तृतीया, साँझी आदि उत्सव भी अनिवार्य रूप से वर्णित किए गए हैं। वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित होने के कारण सभी कवियों ने पुष्टि सम्प्रदाय में प्रचलित विशिष्ट पर्वों का निरूपण भी किया है। वास्तव में इन विभिन्न वर्णनों द्वारा इस साहित्य ने पुष्टिमार्गीय भक्ति को लोक संस्कृति से जोड़ दिया है। इस गठबन्धम के कारण ही वल्लभ सम्प्रदाय का आधार भारतीय समाज में पुष्ट हुआ। प्रत्येक ब्रजवासी को कृष्ण अपने समान ही प्रत्येक उत्सव पर्व में भागीदारी करते हुए दिखाई देते हैं इसलिए अष्टछाप का साहित्य भारतीय संस्कृति के साथ-साथ ब्रज

की लोक संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाला साहित्य हैं।

पुष्टिमार्गीय भक्ति लोक संस्कृति में व्याप्त पर्व एवं उत्सवों पर आधारित है। पुष्टि मार्ग के अनुसार जन्माष्टमी अन्नकूट, होली, हिंडोरा, रासलीला आदि का उत्सव श्री कृष्ण के जीवन से सम्बन्ध करके मनाना ही उचित है।वल्लभाचार्य जी की इस मान्यता के कारण ही अष्टछाप साहित्य में पर्वों का महत्व बहुत है। वल्लभ संप्रदाय की अष्टयाम सेवा के माध्यम से विभिन्न कलाओं और कलाकारो का तथा ब्रज के सांस्कृतिक वैभव का पुनरुत्थान किया गया। अष्टछाप साहित्य में दोनों सेवा पद्धति के अनुसार विभिन्न पर्वों की संयोजना की गई है। इन पर्वों को ऋतु के आधार पर तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। ऋतुओं के आधार पर अष्टछाप में छह उत्सव प्रचलित है, ग्रीष्म में फूलमंडली, वर्षा में हिंडोरा, शरद में रास, हेमन्त में, 'देव प्रबोधिनी', बसन्त में डोल और 'होली'।

इन उत्सवों में चतुर्भुजदास जी द्वारा रचित कुछ पदों का उल्लेख आवश्यक हैं।

वर्षा के आगमन के साथ हिंडोरा का पर्व होता है। और भक्त कवि ने भी चार खम्भों वाले झूले और सोने की पटरी का उल्लेख किया है।

''डांडी चारि सुदेस सुहाई चौकी हेम जड़ाए।

अष्टछाप साहित्य में सर्वाधिक विशदता से रास का वर्णन किया गया है। भक्त कवि ने नृत्य के समय हाथ की मुद्राओं की ओर संकेत किया है। रास ज्ञात है कि ब्रज का प्राचीनतम लोक नृत्य है। भक्त कवि ने लिखा कि

''निर्तत सुलप लेत नुपूर सच बहुविधि हस्तक भेद दिखावें।'' ब्रज में रथयात्रा का उत्सव पुरी की जगन्नाथ रथयात्रा के समान होता है और चतुर्भुजदास जी ने ब्रजरानी द्वारा रथ में बैठे गोपाल की आरती करवाई है।

''ब्रजरानी मिलि करति आरती चतुर्भुजदास बलिहारी।''

भाद्रपद मास की शुक्ल पक्ष की अष्टमी को देवी राधा का उत्सव छः दिन तक मनाया जाता हैं। चतुर्भुजदास ने नन्द यशोदा और कृष्ण के आन्नदित होने का उल्लेख भी किया है-

''राधे जू सोभा प्रगट भई।
वृंदावन गोकुल गलियनि में सुख की लता छई।''

श्री महाप्रभु से सम्बन्धित पवित्रा का उत्सव है और सम्प्रदाय में अनिवार्य कर दिया गया है। पवित्रा पहिने कृष्ण के सौन्दर्य तथा शोभा का वर्णन किया है-

''पवित्रा पहिरत गिरिवरधारी
अरु गुंजा के हार मनोहर भामिनी हस्त सँवारी।

इस प्रकार आपने अक्षय तृतीया पर शीतल वस्तुओं का वर्णन, राखी

के दिन तिलक करने का वर्णन, विजयादशमी पर जवारी की सुन्दर पद रचनाएँ की हैं। दीपमालिका पर ब्रज बालाओं के मेवा और यशोदा तथा रोहिणी के डला कर का पकवान लाने को कहा। यह पकवान कृष्ण हटरी में बैठ उसका वितरण नाम लेकर करते हैं। इसी पर्व पर धूपदीप नैवेद्य से गोवर्धन पूजा भक्त कवि ने कराई-

''बहुरि पाखरि अरगजा चर्चित धूप दीप बहु भोग धरावत।

कृष्ण की गायों के प्रति अति प्रगाढ़ स्नेह का वर्णन चतुर्भुजदास जी ने चित्रण किया है कि कृष्ण को यशोदा द्वारा खेल मना करने पर धूमरि भी खेल छोड़ देती है यथा

गाई खिलायो चाहत गिरिधर बरजत है नंद राई।
बिना लाला खेलति नहीं धूमर जब ऐसी सुधि पाई।

ब्रज की विश्वप्रसिद्ध होली को वे कैसे छोड़ते आपने ''मणि खचित चौक'' में होली खेलने का वर्णन किया है। ब्रज बालाओं के श्रृंगार का वर्णन एवं विभिन्न आभूषणों को बताया है। लोक गीत शैली में झूमक को गाते लिखा कि-

'पहिरे दिव्य कटाव की चोली झूमक सारी जू''
होली में कृष्ण-बलराम की गोपियों द्वारा बनायी दशा पर कहा है कि
''मैया मोहन ख्याल परयौ।
ज्यों ज्यों सतराति, त्यों नियरे आवत झटकि अंचलु मोहन अंक भर्यौ।''
होली में ग्वालों के लिए कहा है कि-
''पहिरि वसन अनेक तन नील पीत सतराये जू।
सुरंग गुलाल अबीर फेंट भरि फिरत महारस्स भाये जू।।

ब्रज के चौराहों पर फाग का वर्णन किया-

''आए ब्रज के चौहटें लिए सखा सब संग''
लोक मर्यादा के उल्लंघन की भी खूब चर्चा की-
''रास गारी तारी दै गावै अब तो उघरि नच्यौ है''

और अन्त में ''सब सुख जीति चली ब्रज जुवती गई जमुना के कूलनि जू।''कह कर फाग का अन्त किया।

पर्वो की इस विवेचना से स्पष्ट है कि अष्टछाप काव्य के कवि लोक जीवन को साथ लेकर चले। समाजको केवल एक न कर उसे स्वावलम्बी भी बनाया। यह हर वर्ग के लिए तथा कृष्ण को केन्द्रित कर भिन्न कलाओं का विकास किया। समस्त समाज को स्वस्थ मनोरंजन प्रदान कर मनोविकारों से परे रखने का भरपूर प्रयत्न किया। यह अनुपम योगदान भक्त कवि चतुर्भुजदास जी के काव्य को अमरतत्व प्रदान कर गया।

- भारतेन्दु भवन, चौखंभा,
काशी (उ.प्र.)

अष्टछाप कवि चतुर्भुजदास का काव्य सौष्ठव

✍ डा. रमेशचन्द्र मिश्र

ब्रजभाषा काव्य को एक साथ ही ऐश्वर्य, शोभा महिमा, सौन्दर्य, गरिमा और श्री से सम्पन्न करने वाले अष्टछाप कवियों में चतुर्भुजदास का नाम बड़े गौरव के साथ लिया जाता है। स्वल्प वय में ही उन्होंने जो भक्ति प्रवणता, लीला सम्बन्धी तन्मयता, परमानन्ददायिनी संगीतात्मकता एवं काव्य प्रतिभा प्रदर्शित की, उसी के प्रभाव से उन्हें अष्टछाप में आदरणीय स्थान प्राप्त हुआ। पुष्टिमार्गीय सेवा भावना और प्रिया-प्रियतम की रहस्यलीला की अन्तर्मुखी चिन्तना इन्हें अपने पिता श्री कुम्भनदास के नित्य सान्निध्य से प्राप्त हुई। पिता-पुत्र दोनों ही नित्य नवीनतम पद रचना द्वारा प्रभु चरित्र गुणगान करते थे और भगवच्चिन्तन में लीन रहते थे। भगवल्लीलानुसंधान का प्रसाद इन्हें श्री गुसाँई जी की अहैतुकी अनुकम्पा से प्राप्त हुआ। छोटी अवस्था में ही गुरुवर्य्य श्री गुसाईं (विट्ठलनाथ) जी का कृपा पात्र होकर इन्होंने उनका अप्रितम अनुग्रह प्राप्त किया। आत्म निवेदन के पुनीत अवसर पर इनकी दिव्य प्रतिभा, उदीयमान चेष्टा, और विनम्रतापूर्ण हाव-भाव को परिलक्षित कर गुसाँई जी ने कुम्भनदास को सम्बोधित कर कहा-''कुम्भन, या पुत्र सों तुमको बहौत ही सुख होयगौ, तुम्हारे मन में जैसो मनोरथ है, सोई सिद्ध होयगौ।''आगे चलकर कुम्भनदास ने अपने पुत्र कृष्णदास की गो-सेवा और चतुर्भुजदास जी की भगवदीय सेवा को परिलक्षित कर अपने सप्त पुत्र समुदाय में से स्वात्म भावपूर्ण डेढ पुत्र को स्वीकार कर गुसाँई जी की कृतज्ञता ज्ञापित की।

पारिवारिक शील-सदाचार, पितृचरण का सद्‌विचार, भगवद्‌भक्तिमय संगीतात्मक रस-संचार, श्री गोवर्द्धन प्रभु का नित्य नवीन सेवाचार, साधु सामागम के श्रेष्ठ प्रचार एवं भगवदीय ललित लीलाओं के अनुदिन रसासार से चतुर्भुजदास की काव्य प्रतिभा को नैपुण्य प्राप्त हुआ। गुरुवर्य्य श्री गुसाँईजी के नित्य नवीन प्रोत्साहन से उन्होंने प्रभु लीलानुसंधान पद लिख कर तन्मयता से अभ्यास किया।

उनकी देवरति विषयिणी काव्यधारा का सौष्ठव सहृदयजन को स्पृहणीय रहा है। वे ऐसे भक्त कवि थे जिनके हृदय में जन्मजात भक्तिभाव और सहज काव्य प्रतिभा का विकास हुआ था। इसलिए उनकी काव्य स्त्रोतस्विनी सहज

भक्ति रस प्रस्रविणी कही जा सकती है। उनमें काव्य सौष्ठव तो प्रभु प्रेरणाजन्य ही था अतः उसकी समालोचना कर उसे शब्द रूप देना सर्वथा दुस्साध्य ही है तो भी स्वल्पमति से उनके काव्य सौन्दर्य में अवगाहन करने का प्रयास किया जा रहा है।

भाव पक्ष : अष्टछाप कवियों का प्रमुख प्रतिपाद्य, प्रभु सेवा वर्षोत्सवों का उल्लास, लीलाओ का विलास, भक्तिमय और पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों का अनुसंधानात्मक विकास है। ये सभी कवि भक्ति रस से सम्पूर्णतः सन्तृप्त और प्रेमस्वरूपा तथा अमृत स्वरूपा भक्ति से परिपूर्ण है। नारद भक्तिसूत्र ने भक्ति के सन्दर्भ में यही निर्दिष्ट किया है-

'सा त्वास्मिन् परम प्रेमरूपा अमृत स्वरूपा च।यल्लब्ध्वा पुमान्

सिद्धो भवति अमृतो भवति तृप्तो भवति (ना.भ.सू.२-३/४)भक्ति-मार्ग का प्रमुख तत्व भागवत धर्म है जो प्रधानतः भगवद् अनुग्रह (पुष्टिमार्ग) पर आश्रित है। भगवदीय व्यक्ति अहर्निश भगवद् अनुग्रह के रंग में रँगा रहता है। चतुर्भुजदास ऐसे हीभगवद रति के रसिक भक्त हैं जो क्षण भर भी प्रभु का वियोग सहन नहीं कर सकते। वे कहते हैं ''स्याम सुन्दर प्रान पियारे।

छिनु जिनि होहु निन्यारे।।
नेंकु कि ओट मीनज्यों तलफत इन नैंनन के तारे।।
मृदु मुसुकानि बंक अवलोकनि डगमग चलनि सहज में सुढारे।।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर बानिक पर कोटिक मन्मथ वारे।।''

श्याम सुंदर की छवि तनिक भी दर्शन से ओट लेती है तो नैंनों के तारक दल इस प्रकार तडफते हैं जैसे मीन जल से बहिर्गत होकर व्याकुलभाव से छटपटाती है। प्रभु के निरन्तर दर्शनों से ही नैंनों की सफलता है। प्रभु के इकटक दर्शन का लाभ बड़े भाग्य से ही प्राप्त होता है। चतुर्भुजदास का भक्त-मन भोर से ही गिरिधरन की झाँकी करना चाहता है। उनकी अभिलाषा है-

''भोर भांवतो गिरिधर देखौं।
विमल कपोल लोल लोचन छवि, निरखि कें नैंन सुफल करि लेखौं।।''

चतुर्भुजदास ऐसे भक्त हैं जिनका दृढ विश्वास है कि भक्ति और मुक्ति दोनों प्रभु की दासी हैं, केवल भजनानन्द की उपासना से अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है।

''घर हरि दरसन हरि जसु गावत भक्ति मुक्ति सी दासी।
वदत न कछू 'चतुर्भुज' वैभव भजनानन्द उपासी।।''

इसी सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए पुष्टिभक्त 'मोक्ष का' तिरस्कार कर 'प्रभु सेवा' को महत्व देता है।

चतुर्भुज के काव्य में वैयक्तिक अनुभूति की तीव्रता और संगीतात्मक आवेश विद्यमान है जो गीतितत्व का प्रमुख अंग माना गया है। इसमें पाण्डित्य प्रदर्शन एवं बौद्धिकता का सर्वथा अभाव है। इनमें भावोन्मेष की प्रधानता परिलक्षित होती है। इनके पदों में भावों का परिवर्तन विषयवस्तु के अनुसार स्वतः होता रहता है। 'भाव' तो एक वासनात्मक संस्कार है जो स्थायी रूप से मानव मन में विद्यमान रहता है और परिस्थितिवश चेतनागम कीओर गतिशील रहता है। इसी गत्यात्मकता के आधार पर स्थायीभाव संचारीभाव और संचारीभाव स्थायीभाव के रूप में गति करता देखा जाता है। इसीलिए काव्यशास्त्र में 'भाव' को ही अधिक महत्वपूर्ण माना है। इसी के आधार पर भावपक्ष एवं कलापक्ष की कल्पनाएँ की गई है। काव्य का अन्तः सरूप जो समग्रतः भावमय और रसमय होता है ' भावपक्ष' तथा वाह्य स्वरूप जो शाब्दिक सौन्दर्य एवं रचना शिल्प का जनक है 'कला पक्ष' के रूप में भासित होता है।

चतुर्भुजदास भगवद् विषयक रति भाव के पोषक हैं। उनका लक्ष्य लोक में अवस्थित अलौकिक तत्व के साथ लीला विलास में संभागित्व ग्रहण कर संख्यभाव का निर्वाह करना है। मानव रति का आध्यात्मिक संयोजन ही तो भक्ति का मूलतत्व है। भक्त कवि ने अपने भाव गीति पदों में श्री कृष्ण को परम ब्रह्म मानते हुए भी उन्हें सख्यभाव से स्वीकार किया है। वे यशोदा को कहते हैं-''तेरे भाग्य तो देख, तू पर ब्रह्म को 'लाला' कहकर पुकारती है''।

''चतुर्भुज'' प्रभु जानि भागि तेरौ पूरन ब्रह्म सौं कहति ललारे''

'चतुर्भुजदास' के कवि कर्म में हमें सत्य और कल्पना का अपरिसीम समन्वय दिखाई देता है। उन्होंने श्री कृष्ण से सम्बंधित लीला के पदों में व्यावहारिक जीवन के तथ्यों, घटनाओं, अनुमानों को कल्पना के आवरण में चित्रित किया है। कल्पना सत्य पर आधारित होने के कारण सार्थक होती है।माता यशोदा के मन : पटल पर अंकित भावों को चतुर्भुजदास ने कल्पना के माध्यम से संजोकर एक पद में चित्रित किया है-

''माई लैन देहु जो मेरे लालहिं भावै।
दधि माखन चौगुनौ देऊगी या सुत के लेखें जाकौ जितौ आवै।
पलना झूलत कुल देव अराध्यौ जतन जतन कर घुटरुन ध्यावै।
सर्वसु ताहि देऊगी जो मेरे नान्हरे गोविन्द पाँ पाँ चलन सिखावै।

इहै अभिलाख होत दिन दिन प्रति कब मेरौ मोहन धेनु चरावै।
'चतुर्भुजदास' गिरिधर पिय इहि रस निरखि निरखि उर नैन सिरावै

माता की उत्कट अभिलाषा होती है कि उसका पुत्र शीघ्र बड़ा हो जावे, चलना सीख जावे और अपने साथी गोपों के साथ कुलरीति के अनुसार धेनु चराने हेतु वन को जाने लग जावे। यह भावना केवल यशोदा की ही नहीं है प्रत्येक माता की अपने पुत्र के शीघ्र बड़े होने की अभिलाषा होती है। जगत् के इस सत्य तथ्य को कवि चतुर्भुजदास ने कल्पना के सहारे काव्यरूप दिया है। कल्पना के सहारे कवि अपने भावों को मनोज्ञ काव्यरूप प्रदान करता है। वह अपनी कल्पना को वस्तु जगत् से अधिक सौन्दर्य्य प्रदान करते हुए काव्य का निर्माण करता है। इसीलिए कवि को भाव जगत् का ब्रह्मा कहा गया है।

चतुर्भुजदास पुष्टि परम्परा को दृष्टिगत रखते हुए अपने परम-प्रभु की अहर्निश सेवा करना चाहता है। एक गोपी की अभिलाषा के रूप में इस भाव का चित्रण दर्शनीय है-

आज हमारें आओ नँदनंदन अकेले करि बतराऊँगी।
जो तुम सास ननँद सौं सकुचौ तो उन परकाज पठाऊँगी।।
द्वार कपाट लगाइ जतन सौं तन की साध पुराऊँगी।
करि करि पाक रसाल रसोई अपने करहिं जिमाऊँगी।।
निस दिन खेलौ मेरे आँगन निरखत नैंन सिराऊँगी।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन को हँसि हँसि कंठ लगाऊँगी।।

भक्त कवि परम प्रभु की एक निष्ठ सेवा की कामना करते हैं। परमात्म तत्व को रिझाना, लाड़लड़ाना और उनके साथ हास-विलास में जीवन बिताना ही उनका परम सुख है।

'चतुर्भुजदास' ने प्रभु के प्रति समर्पण-भाव का भी रसपूर्ण चित्रण किया है। सामान्यतः अष्टछाप कवियों के पदों में नायक नायिका भेद के अनुसार रस-तत्व का चित्रण दिखाई देता है, लेकिन काव्यशास्त्र की नायिकाओं का अपने प्रियतमों से प्रेम और समर्पण भाव; भक्तिभाव से परिपूर्ण गोपियों के परम प्रभु श्री कृष्ण के प्रति प्रेम एवं समर्पण से तात्विक दृष्टि से भिन्न है। अतः इन गोपियों के रस तत्व को नायिका भेद के आधार पर समालोचित नहीं किया जा सकता है। यद्यपि अष्टछाप के कवियों ने मान-विरह-मिलन-हिलग खण्डिता-प्रणय आदि से सम्बन्धित पद लिखे हैं, जिन पर 'नायिका-भेद' के

अनुसार विचार करने की विवशता ज्ञात होती है।

चतुर्भुजदास की गोपियाँ, राधा-कृष्ण के मिलन प्रसंग में, तत्सुख-सुखी भाव से निकुंज सेवा में प्रिया प्रियतम के प्रति सेवार्थ समर्पित हैं। वे श्यामा-श्याम के रति सुख के लिए सेज स्वयं बनाती हैं। उनका शृंगार करती हैं। प्रिया-प्रियतम को रतिरस रंग में निमग्न देखकर सुख का अनुभव करती हैं।

पौढे हरि राधिका के संग।
नव किसोर रू नव किसोरी गौर-साँवल अंग।
कुसुम सेज सुगंध सीतल रतन जटित प्रजंग।
दसन खंडित बदलि बीरी भरे रति रस रंग।
उपजि चतुर्भुजदास दुहुँ दिसि प्रेम सिंधु तरंग।
रसिकनी वर रसिक गिरिधर जीति मुदित अनंग।

स्वामिनी जी प्रियतम को रिझाने के उपक्रम में बहुत प्रवीण हैं।रत्नजटित पर्यक पर स्थापित शीतल सुगंधित सेज पर प्रियतम नव किशोर श्री राधिका के साथ रतिरस रंग में निमग्न होकर परम प्रमोद का अनुभव करते हैं। दोनों ही ओर प्रेम सिंधु में आनंद तरंगे उठ रही है।

गोपियाँ श्यामा श्याम के मिलन से बहुत हर्षित होती हैं। उन्हें उनकी रतिरस तृष्टि से बड़ा मनस्तोष होता है।

'रस भरी रसिक रसिकनी प्यारी कोककला नवीन प्रवीना।
'चतुर्भुजदास' निरखि दंपति छवि तन मन धन न्यौछावर कीना''

जहाँ प्रिया-प्रियतम का मधुर मिलन उन्हें रस में सरावोर रखता है, वहाँ प्रियतम से क्षुब्ध होकर मानिनी राधिका 'मानवती' के रूप में क्रोधावेश में खीझभरी दिखाई देती हैं। 'मान' की स्थिति में भी उनमें प्रेम की प्रगाढता में कमी नहीं है। सखी कहती है-

समुझति हों नीके तेरे मानहिं।
प्रगट मौन हरि पिय सों मुख रुख भेद परत नहिं आनहिं।
अंतर ही मिलवति मन सों मन, तकति भृकुटि उनमानहिं।
दुरत न चंद ओर झीने बादर कतहिं रूसनो ठानहिं।
'चतुर्भुजदास' उमगि तन परसै गिरिधर रसिक सुजानहिं।

सखि! मैं तुम्हारे मान भाव को भली भाँति जानती हूँ। प्रकट में रिसौंहा भाव और अन्तर्मन में तरल प्रेम पनपाना आपका स्वभाव है। अन्य कोई सखी

आपके इस भाव को नहीं पहचानती है। प्रबलतम प्रेम को कृत्रिम खीझ से छुपाना उसी प्रकार असंभव है जैसे झीने बादलों में चन्द्रमा को छिपाना। पुनश्च गोपियाँ, श्री राधा से मान त्यागने का आग्रह करती हैं। उनसे निवेदन करती हैं कि वे प्रियतम को मना लें। गोपाल तो रसिक वर हैं, उन्हें रस भरी बातों से रिझाया जा सकता है। रस ही में बस कीन्हे कुँवर कन्हाई।

रसिक गोपाल रसिक रस रिझवत रस ही में तासों रिस तजि री माई।
प्रिय को प्रेम रिस सों न होइ रसीली राधे रस ही में वचन श्रवन सुखदाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर रस बस भए तासों कुरस कत मिलि रहै हिरदें लपटाई।

मानवती विप्रलब्धा राधिका प्रियतम के दर्शनों के बिंना विरह का अनुभव करती हैं। गोपियाँ श्याम सुन्दर से श्री राधा की विरह वेदना का वर्णन करती हुई उन्हें प्रियतमा के उपचार के लिए चलने की मनुहार करती हैं।

चलहु लाल ! गिरिधर नागर चतुर सुजान।
सुनि तुम्हरो संदेस राधिका उर लागे हैं विषम मदन के बान।
गुणपत मते की बात जबहिं मैं हरूवें कहि मेली लै कान।
मुरछि परी तन बिसरि गई सुधि अँग अँग दसा आन की आन।
घूमत सिथिल प्रस्वेद भीजि पट मरमें हैं तन वचन संधान।
औषधि जतन करत अकुलानी सब सखियनु भूले औसान।
बिकल देखि तुम पें उठि दौरी नहिं उपचार हमारे मान।
'चतुर्भुज' प्रभु पिय स्याम सुधा-निधि,, बेगि मिलहु राखहु प्रिया प्रान।।

श्यामसुन्दर से विरह को श्री राधा सहन नहीं कर पाती हैं। मान से समुद्भूत विरह में वे मूर्छित हो जाती हैं उनके शरीर से प्रस्वेद प्रवाहित होने लगता है, अंगयष्टि शिथिल हो जाती है, सिर घूमने लग जाता है, चित्त के व्याकुल होने से अटपटी बातें करती हैं, औषधि करने पर व्याकुलता बढती है, मन चेष्टा शून्य सा हुआ जाता है, वे श्याम सु दर के मिलनोपचार से ही स्वस्थ हो पाएँगी, यह विचार करके सखी श्यामसुन्दर से चलने की मनुहार करती है। .

'चतुर्भुजदास ने खण्डिता से सम्बंधित पद भी लिखे हैं जिसमें नायिका के उद्वेग का चित्रण होता है। वह नायक के अन्यत्र सम्भोग की कल्पना से दुखी पाई जाती है। भानुदत्त ने ''अन्योपभोग चिन्हित : प्रातरागच्छति '' रात्रि में अन्यत्र रमण कर प्रातः परस्त्री संसर्ग के चिन्हों से युक्त नायक प्रियतमा के पास आता है। मुग्धा खण्डिता तो पति पर अपना क्षोध प्रकट करने में भी

सकुंचित होती है। मध्याखण्डिता अपना आक्रोश व्यंग्य से करती है।

"संध्या जु कहि सिधारे वचन जिय में संभारे,
सकुचि कें मंद मंद प्रगटित दसना।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन सिधारो तहाँ
जहाँ रति-रंग-रस पलटाए बसना।।

प्रौढा खण्डिता के निस्संकोच आदरभाव में स्वतः व्यंग्य छुपा रहता है। लड़खड़ाते उनींदे प्रियतम को प्रातः अन्य गोपी के वस्त्रों में परिवेष्टित लक्ष्य कर उन्हें उसी गोपी के पास जाने का निर्देश देती हैं जिसके साथ रात्रि व्यतीत की है और जिसके वस्त्रों को बदलकर पहने हुए तत्काल में वे उपस्थित हुए हैं। श्याम सुन्दर के शरीर पर नख क्षत ब्रण सद्यः परिलक्षित हो रहे हैं। गिरिधरन के भृकुटि बंदन ऐसे प्रतीत होते हैं मानों कामदेव ने अपना चाप श्याम सुन्दर को भेंट कर अपनी पराजय स्वीकार कर ली है। पद की बंदिश प्रस्तुत है-

सुन्दर स्याम सुभगता प्रगटी अंग अंग सक्षत दागे।
मनहुँ कोपि निदरि सनमुख सर साथ भए अरिभागे।।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन अधिक छबि बंदन भृकुटी लागे।
मानहुँ मन्मथ चाप भेंटि धरि रह्यौ जोरि कर आगे।।

'चतुर्भुजदास के खण्डिता के पदों में दिव्यभाव विद्यमान है अतः प्रियतम के प्रति ललित एवं आदरणीय आक्रोश, मानपूर्ण विरह, संकोच पूर्ण परकीया के प्रति वितृष्णा दृष्टिगोचर होती है।

विरह की मृदुलता 'उद्धव संदेश' के पदों में भी देखने को मिलती है। श्रीकृष्ण अपना सन्देश लेकर श्री उद्धव जी को गोपियों के समीप ब्रज में भेजते हैं। गोपियाँ श्याम सुन्दर के साथ रसमसे रास विलास का स्मरण करती हुई विरह वेदना को प्रकट करती हैं और श्याम सुंदर के दर्शनों की अभिलाषा रखते हुए उद्धवजी से अनुनय विनय पूर्वक प्रर्थना करती हैं कि वे श्याम सुन्दर का दर्शन लाभ कराएँ।

संग विहार भवन वन निश दिन अब संदेश पठवत लिखि पतियाँ।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर दरसनु बिनु नीर विमुख जैसे मीन की गतियाँ।।

इस एक पद में पूर्व हास विलास का स्मरण, वेदना, उपालम्भ, प्राणान्तक पीड़ा, मरणोपम स्थिति को एक साथ चित्रण कर विप्रलम्भ शृंगार की अनुभूति कराई है। विप्रलम्भ शृंगार में नायक-नायिका का वियोग दशा में

भी प्रगाढ प्रेम होता है। प्रेमालाप-हास-विलासादि का मानसिक स्मरण, पारस्परिक गुणों का कथन, मिलनोत्कण्ठा, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता, स्मृति आदि काम दशाओं का चित्रण चतुर्भुजदास के पदों में देखने का मिलता है। उद्धव सन्देश के माध्यम से चतुर्भुजदास की गोपियों ने, अन्य कवियों की गोपियों के समान भर्त्सना पूर्ण आक्षेप व उपालम्भ का आश्रय न लेकर प्रभु के साथ मार्दव -स्नेह और प्रणति पूर्ण व्यवहार को प्रदर्शित किया है। उनसे मिलने को तीव्र अभिलाषा प्रकट करती हैं। वे प्रलाप न कर, श्याम सुन्दर के प्रति अपना स्नेह व्यक्त करती हैं-

चतुर्भुजदास ने मिषान्तरदर्शन (बहाने से श्यामसुंदर के दर्शन करना),

युगल रस वर्णन, सुरतान्त, आदि शृंगार परक मिलन प्रसंगों में भी सांस्कृतिक शालीनता का विधिवत् पालन किया है। गोपियाँ श्यामसुन्दर का कौतुल देखने की अभिलाषा रखती हैं। उनकी मिषान्तरोद्भावना बड़ी सुहावनी बन पड़ी है। एक गोपी अपनी मुँदरी तलाशने के बहाने श्यामसुन्दर से मिलने आती है। उसे उत्कट मिलनोत्कण्ठा ने ऐसी चटपटी लगाई है कि वह झटपट उनसे मिलने के लिए आतुर हो जाती हैं-

''नींद न परी रैंन सिगरी मुँदरिया हो मेरी जु गई।
याही तें झटपटाइ झुकि आई चटपटी जिय में बहुत भई।।''
अन्य गोपी यशोदा से दधि मन्थन हेतु रई माँगने के बहाने से आती है।
वैसेई धर्‌यौ दधि बिना मथनु कियें, देहु जसोमति नेंकु रई।
हमारे ह्याँ ढूँढि रही उठि अँधियारे हूँ, पावत न भवन माँहि कहाँ धौं गई।।

एक गोपी यशोदा के घर सेवा करने के बहाने अनुदिन आकर श्यामसुंदर के दर्शन करना चाहती है। वह व्याजोक्ति का सहारा लेकर कहती है-

कहा ओछी है जै है जाति।
सुनु जसोमति तुम बडीनु आगें हम छिनु एक कमाति।
सास ननद अरू पार परौसिन हँसि बहुवार कह्यौ
तद्यपि मोहि तिहारे घर बिनु नांहिन परत रह्यौ
नित बोलहु संकोच करौ जनि जब तुम सुतहि न्हवावहु।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल कहँ मोही पै उबटावहु।।

यशोदा जी आप बडी है, आपकी सेवा करने में हमारी जाति ओछी नहीं होती, सास-ननंद-पडौसिन प्रतिदिन मेरी हँसी करती हैं, किन्तु मुझ पर आपके

यहाँ आये बिना नहीं रहा जाता है। आपके ललन को उबटने से मैं ही स्नान कराऊँगी।

गोपियों का मिलन प्रसंग मात्र संयोग शृंगार नहीं है। आचार्यो ने इसे माधुर्य पूर्ण 'उज्ज्वल रस' कहा है। इसमें प्रेम की शुचिता ही उज्ज्वलता है।

ललित ब्रज देस गिरिराज राजैं।
घोष सीमंतिनी संग गिरिवर धरन करत नित केलि तहँ काम लाजैं।
त्रिविध पवन संचरैं सुखद झरना झरैं ललित सौरभ सरस मधुप गाजै।
ललित तरु फूल फल फलित षट् रितु सदा 'चतुर्भुज' दास गिरिधर समाजैं।।

ब्रजक्षेत्र श्री गिरिराज के पावन धाम में घोष सीमंतिनी श्रीराधा के साथ श्रीकृष्ण का मिलन आश्रय और आलम्बन है। त्रिविध पवन सुखद झरनाकी झरन, ललित सौरभ का परिवहन, सरस मधुप गुंजन, षट् रितु फूल फल फरन आदि उद्दीपन विभाव, दिव्य केलि अनुभाव, जहाँ शृंगार की सहज प्रतीति कराते हैं। यहाँ संचारियों का मनोविकार पूर्ण आवेग नहीं है। यहाँ तो निश्चिन्त्यता, निर्भयता, निरुद्वेगता, आनन्दमयता, अलौकिकता की मधुरिमा है। यही माधुर्य है और मनोविकृति की शून्यता ही उज्ज्वलता है।

श्रावण के हिंडोरे हो या वासन्ती फाग यहाँ सहजता एवं निष्कलुषता का सौष्ठव है। लौकिक धरातल पर अलौकिक मादकता भरे विलास का चित्रण है। श्रीकृष्ण की रूप सुषमा, गोपियों की आसक्ति, राधा कृष्ण के सुरत-सुख में पारस्परिक प्रेम प्रवणता का मर्मस्पर्शी दृश्यांकन विद्यमान है। एक पद की सरसता प्रस्तुत है-

हिंडोरे झूलत लाल गोवर्द्धन धारी शोभा बरनी न जावै हो।
बाम भाग वृखभान नंदिनी नव सत अंग बनावै हो।
अति सुकुंवारि नारि डरपति है, मोहन उरसि लगावै हो।
नील पीत पट फरहरात है मन दामिनि दुरि जावै हो।
मनहुँ तरून तमाल मल्लिका अंग अंग अरूझावै हो।
गौरस्याम छवि मरकत मनि पर कनक बेलि लपटावै हो।
सुरत सिंधु विलसत दोऊ जन सब सहचरी सुख पावै हो।
'चतुर्भुजदास' लाल गिरिधर जसु सुर मुनि सब मिलि गावै हो।।

इस पद में किशोरीजी के डरने पर मोहन से आलिंगन बद्ध होने की उत्प्रेक्षा श्लाघनीय है। श्याम सुन्दर के फहरते हुए पीतपट में दामिनी के दुरने

की उद्भावना, तरुण तमाल पर मल्लिका वल्लरी के उलझने की कल्पना, तथा मरकत मणि पर कनक लता के लिपटने की संभावना से मालोत्प्रेक्षा का सौन्दर्य प्रकट होता है। श्यामा-श्याम के सुरत विलास से सहचरियों का सुखी होना 'तत्सुख-सुखित' दार्शनिक सिद्धान्त का सहज प्रतिपादन है।

चतुर्भुजदास ने अपने पदों में विभिन्न आसक्तियों का भी चित्रण किया है। जब स्नेह, अधिक राग-रंजित हो जाता है तो वह आसक्ति का रूप धारण कर लेता है। 'आसक्ति' का अर्थ है-'मन का लगाव'। चतुर्भुजदास के पदों में गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपासक्ति, स्मरणासक्ति, तन्मयासक्ति, कान्तासक्ति, परम विरहासक्ति, दास्यासक्ति, आत्म निवेदनासक्ति एवं वात्सल्यासक्ति का यथा तथ्य विवरण प्राप्त होता है।

गुण माहात्म्यासक्ति : गोपियाँ श्रीकृष्ण की सर्वदुखहरण सामर्थ्य का अनुदिन बखान करती हैं। उन्होंने उद्धव जी से कहा कि श्रीकृष्ण ने ब्रजवासियों की रक्षा के लिए श्री गिरिराज पर्वत को हाथ पर उठा लिया था। आज समस्त ब्रजवासियों का मन श्रीकृष्ण की ओर लगा हुआ है। उनके बिना ब्रजवासियों का कोई भी रक्षक नहीं है।

ब्रज जन अति आधीन दुखारे।
कहियो पथिक संदेश सुरति कर जहँ है नंद दुलारे।
गोप गाइ गोसुत गुवाल सब मलिन देखियतकारे।
निरभै जानि गोपाल तुमहिं बिनु विरह दवानल जारे।
तब इह कृपा नंद नंदन की गिरि कर धरि जु उबारे।
ते आकुल व्याकुल जु रैंन दिन क्यों बूझिये तिहारे।
जे गुन सैलधरन प्यारे के कहाँ लगि करत संभारे।
'चतुर्भुजदास' प्रभु के सुमिरत ही नैंननि बहत पनारे।।

रूपासक्ति : भक्त कवियों की भक्ति रचनाओं में प्रभु दर्शन के प्रति आतुरता तथा आकुलता देखी जाती है। वे प्रभु के अनुपम रूप पर सदा आसक्त रहते हैं। चतुर्भुजदास के पदों में विभिन्न परिस्थितियों में प्रभु की रूपासक्ति के दर्शन होते हैं। साक्षात् दर्शन में प्रभु के नटवर भेख वेष में गोपाल रूप पर आसक्त रचना अवलोकनीय है-

साजें नटवर गोपाल।
मधुर बैंन सु सब्द उघटत तत्तथेई थेई ताल।

तरनि तनया तीर मरकत मनि जु स्याम तमाल।
ब्रज की नारि समूह मंडल बनी कंचन माल।
रास रस गति निरखि उडुपति तजी पच्छिम चाल।
'चतुर्भुज' प्रभु देव गन मन हर्यो गिरिधरलाल।

जहाँ तरणि तनया तट पर प्रभु को नटवर वेष में मुरली नाद सहित नृत्य करते हुए देखकर देवगण भी मोहित होते हैं। वहीं गोपी इस माधुर्य का आनंद लेने के लिए बार बार वन की ओर जाने को उत्सुक होती हैं। वे श्याम सुन्दर की रूप माधुरी का दर्शन करने के लिए इतनी आतुर हैं कि वे लोक वेद की मर्यादा का भी त्याग कर चुकी हैं।

याही ते फिरत सदा वन खोरी।
मारगु जात आन जुवती बस करत चितै चित चोरी।
कबहुंक मधुर सुनाइ बेनु-सुर राखत इकटक मोरी।
कबहुंक अंचर गहत मंद हँसि सहज लेतरति जोरी।
उलटत नांहि 'चतुर्भुज' प्रभु तजि हारी मनहि निहोरी।
बाढी प्रीति लाल गिरिधर सों लोक वेद तिनु तोरी।

मोहन की मन्द मुस्कान पर आसक्त गोपी को बिना प्रभु दर्शन के एक पल भी युग के समान प्रतीत होता है।

तब तें जुग समान पलु जात।
जा दिन तें देखे सखि मोहन मो तन मुरि मुसिकात।

रूप दर्शनासक्ति में इतनी आकुलता होती है कि बिना प्रियतम के दर्शन के एक क्षण भी चैन नहीं होता है।

नैंननि ऐसीय बानि परी।
बिनु देखे गिरिधरन लाल मुख जुगभर गनत छरी।

इस रूपासक्ति में इतना आकर्षण और एकनिष्ठता होती है कि प्रियतम के अलावा कुछ भी नहीं सुहाता है।

जब तें सखी हौं आई अचानक गिरिधर लाल जो बदन दिखायो।
मोहन रूप अनूप हर्यो मन मांझ कुटुम्ब सबै बिसरायौ।

अद्‌भुत लावण्य लीला ललाम श्याम सुन्दर जिन्होंने अपनी रूप माधुरी से समस्त संसार को आकर्षित कर लिया है वे स्वयं वृषभानु लली की अप्रतिम

रूप माधुरी पर आसक्त हो जाते हैं-

मोहे जीव जेते तेते सब ब्रज भयौ लौ लीन।

एक लली वृषभानु की जिनि उलटि कियौ आधीन।।

स्मरणासक्ति : प्रियतम विरह में प्रिया जी का हरपल उनके स्मरण की ओर मन का लगाव स्मरणासक्ति कहलाता है। परम प्रभु-अज्ञान तिमिरान्धत्व निरसनक्षम गुरुदेव-हृदयोत्पल प्रियतम एवं सर्वसुखदायिनी प्रियतमा का प्रतिपल स्मरण ही इस आसक्ति का मूल जाना जाता है। चतुर्भुजदास ने अपने पदों में उक्त सभी आलम्बनों का चित्रण सुचारू रूप से किया है। गुरुदेव का स्मरण करते हुए वे लिखते हैं-

श्री वल्लभ सुजस संतत नित'गांऊं।

मन क्रम वचन छिनु एक न बिसराऊं।।

श्री बल्लभाचार्य के सम्पूर्ण कुल का स्मरण करते हुए गाते हैं-

'चतुर्भुजदास' परयौ द्वारे प्रनमति करै,

सकल कुल चरनामृत भोर उठि पांऊ।।

'चतुर्भुजदास' ने श्री विट्ठलनाथ गुसाँई जी जिनके ये कृपा पात्र हैं और श्री गोवर्धननाथ परम प्रभु में अभेद पाया है। वे उन्हें अभेद रूप में स्मरण करते हैं।

श्री विट्ठलनाथ गोकुल भूप।

भक्त हित कलिजुग कृपा करि धरे प्रगट सरूप।

'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन जुग बपु लीला सदा अछूप।।

नंद नंदन वल्लभ नंदन एक मन द्वै रूप।।

स्मरणासक्ति में विरह का संयोग भी संभव है, लेकिन विरह की प्रगाढता ही परम विरहासक्ति का रूप धारण करती है। विरह जन्य स्मरणासक्ति में संयोग की ललक की बानगी प्रस्तुत है-

अब मेरे तन की तपत बुझाई।

आज कौ दिन धनि धनि री सजनी पुहुप सुवास छबाई।

'चतुर्भुज' प्रभु ललना पाँव धारें अंगना चौक पुराई।।

तन्मयासक्ति : प्रिया-प्रियतम की एक रस प्रीति ऐसी होती है कि उनमें अलगाव असंभव हो जाता है। भौतिक द्वैत की स्थिति मानसिक अद्वैत में परिवर्तित हो जाती है। अन्यासक्तियाँ स्वतः विलीन हो जाती हैं। चतुर्भुजदास का एक पद देखिये-

माई मेरौ माधों सों मन मान्यौ।
अपनों तन औ कमल नैंन को एक ठौर लै सान्यौ।।
अब कैसे विलगु होइ मेरी सजनी दूध मिल्यौ जैसें पान्यौ।
'चतुर्भुज' प्रभु मिलि हों गिरिधर सों पहिले की पहिचान्यौ।।

गोपी का मन माधव से दूध पानी की तरह एक रस हो गया है। यही तन्मयासक्ति का वास्तविक स्वरूप है।

कान्तासक्ति : कान्त की कान्ता के प्रति अथवा कान्ता की कान्त के प्रति आसक्ति, दोनों ही का आसक्ति भाव कान्तासक्ति का परिचायक माना जाता है। चतुर्भुजदास के पदों में किशोरी जी के प्रति श्याम सुन्दर का आसक्ति भाव दर्शनीय है।

'चतुर्भुज' प्रभु चतुर चूडामनि करत अभिलाष तुव अधर मधुपान की।
अरपि सर्वसु कुसुम सेज सुख बैठि सखि, भेंटि सुंदर सुधर सांवल सुठान की।।

कान्तासक्ति में बाहरी चमक दमक का सर्वथा अभाव होता है आन्तरिक अनुराग की प्रगाढता ऐसी होती है जो 'मान' में भी अनुरक्त रहती है।

रस ही में वस कीन्हें कुंवर कन्हाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर रस बस भए लासों
कुरस कत मिलि रहै हिरदै लपटाई।।

किशोरी जी का श्याम सुन्दर के प्रति आसक्ति भाव देखिये–

मन मृग बेध्यो मोहन नैंन बान सों।
'चतुर्भुजदास' पीर या तन की मिटत न औषधि आन सों।।

प्रिया-प्रियतम पारस्परिक आसक्ति भाव का दर्शन पर्वोत्सवों से सम्बंधित पदो फाग बसन्त, हिण्डोला, हिलग आदि से संबंधित पदों में कान्तासक्ति भाव बहुशः प्राप्त होता है।

परमविरहासक्ति : परमविरहासक्ति का निर्वाह विप्रलम्भ शृंगार पदों में अवलोकनीय है जिनका विवरण पीछे दिया जा चुका है। 'मान' में विरहासक्ति के दर्शन तो होते हैं किन्तु 'परमविरहासक्ति' का भाव उद्धव सन्देश में देखने को मिलता है। एक पद प्रस्तुत है-

ऊधो जू कहत न कछू बनैं।
हरि बिछुरे हू कठिन विरह के सहति बान जितनैं।

उह ब्रजरीति प्रीति पहिली बन कुंज कुटीर ठनैं।
रजधानी में कत भावत हैं ए द्रुम ताल घनैं।
पावस रितु के रंग संग मिलि खेलत प्रेम सनैं।
भीजत मोहि जानि बूंदन पट ओट किए अपनैं।
घोषवास रस रासि औरु सुख नहिं मुख परत गनैं।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन बिनां वैभव सब सपनैं।।

खण्डिता के पदों में भी विरहासक्ति का भाव होता है लेकिन उसे परमविरहासक्ति नहीं कहा जा सकता है।

दास्यासक्ति : दास्य भाव में प्रभु की सर्वसामर्थ्य शक्ति और जन की दीनता व अकिन्चनता का भाव होता है। सेवक सदैव स्वामी की कृपा चाहता रहता है। चतुर्भुजदास ने संस्कृत निष्ठ शब्दावलि में दास्यासक्ति का भाव प्रदर्शित किया है।

भावये मनसि गोकुल नरेशम्।
'चतुर्भुज' मखिल जगदाधार रूरुया निज कृपया निदर्शित सुरूपम्।
भक्त जन दुख विध्वंस कृति तत्परं पालिताशेष यदुवंशभूपम्।।

आत्मनिवेदनासक्ति : भक्त अपने इष्टदेव के चरणों को ही आत्मशरण स्थल स्वीकार करता है। भगवद् अनुग्रह को ही अपना परम पुरुषार्थ मानता है। श्री विट्ठलनाथ जी के चरणों में समर्पित भाद प्रस्तुत है-

कृपा सिंधु श्री विट्ठलनाथ।
हस्त कमल छाया निस्तारी हुते जु अधम अनाथ।
बाधा कहु न रही अब तन मन भए सुदृष्टि सनाथ।
'चतुर्भुज' प्रभु तु सदा बिराजहु श्री गिरिवरधर साथ।।

वात्सल्यासक्ति : अष्टछाप भक्त कवियों की लेखनी से श्रीकृष्ण की वात्सल्य रस पूर्ण कौतुकमयी बाल लीलाओं में मातृममता, गोपियों का बाल कृष्ण के प्रति लगाव, सखाओं का स्नेह, परिजन-पुरजनों का प्रेम, सुहृत्-सम्बंधियों का अनुराग, सरस भाव से चित्रित हुआ है। चतुर्भुजदास भी वात्सल्यासक्ति में अपना स्थान रखते हैं।

इसका चित्रण वात्सल्य में किया जा चुका है।

इस प्रकार भक्त कवि चतुर्भुजदास ने काव्य के अन्तरंग तत्व रस परिपाक में प्राय. सभी प्रकार की आसक्तियों का महत्वपूर्ण संश्रय प्राप्त किया है। संयोग-विप्रलम्भ शृंगार, मिलन-विरह रूप वात्सल्य, लीला विलास में

कौतूहल पूर्ण अद्‌भुत प्रभु के सर्व सामर्थ्य रूप वीर, गोप ग्वालों के क्रीडात्मक हास एवं प्रभु प्रार्थना तथा आचार्य श्री के प्रति आत्म निवेदन रूप सौम्य आदि रसों का परिपाक यथा स्थान प्राप्त होता है। गोपियों का उपालम्म, प्रियतम से मिलन की उत्कण्ठा, दर्शनों की उत्सुकता, रसात्मक अनुभूति, सुरतार्थ अनुनय, प्रिया-प्रियतम का मिलन सौन्दर्य, गौरवपूर्ण मान रूपगर्विता प्रिया जी का खण्डिता भाव, वर्षोत्सवों से सबंधित अनेकानेक भक्तिभाव पूर्ण चित्रण, श्री यमुना जी के प्रति पूज्य भाव, फूल मण्डली का आकर्षण, फाग की रसात्मकता, वसन्त का उल्लास आदि के भली भाँति चित्रण ने चतुर्भुजदास के काव्य में विशेष आकर्षण और सौन्दर्य पूर्ण रस निवेश किया है। प्रकृति को कहीं आलम्बन और कहीं उद्दीपन के रूप में चित्रित कर चतुर्भुजदास ने अपनी सहज काव्य प्रतिभा को प्रदर्शित किया है। गीति तत्व के समावेश से सौन्दर्य की श्री-वृद्धि के कारण चतुर्भुजदास का अष्टछाप में महत्वपूर्ण स्थान है। अष्टछाप कवियों में, भावना की मसृणता, गुरु कृपा, श्रीनाथजी के सख्य भाव, एवं अनुभूति की मृदुलता के कारण चतुर्भुजदास ख्यातनामा कवि हैं।

कलापक्ष : काव्य के अन्तरंग पक्ष में जहाँ भावना, विचार और कल्पना का अन्तर्भाव अनुभूत होता है वहीं बहिरंग पक्ष में छन्दोबद्धता नादमयता शब्द संयोजना आलंकारिकता, प्रतीकात्मकता, सौन्दर्यबोधता, शीतबद्धता एवं गुणात्मकता का महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। काव्य में सौन्दर्य की प्रतीति अन्तरंग एवं बहिरंग दोनों के समन्वय से होती है। इन्हीं अंगों के परस्पर प्रभाव से रस निष्पति होती है और काव्य में वैशिष्ट्य की अनुभूति होती है।

चतुर्भुजदास के सभी पद रागों की ताल व लयबद्धता में आबद्ध गीतिपरक हैं। रागों को ऋतुचर्या, कालानुसारता, पर्व-उत्सव निर्भरता, एवं रसात्मकता के अनुसार नियमित एवं निबद्ध किया गया है। इन रागों में नादमयता के अनुसार ही ताल और लय का निर्धारण किया गया है। इन्होंने अपने पदों में ३५ रागों का निवेश किया है, जिनके नाम निम्न प्रकार हैं-देव गंधार, सारंग, मलार, धनाश्री, कान्हरा, विलावल, काफी, रामकली, मालश्री मारू, नटनारायण, गौरी, नट, आसावरी, भैरव, माल गौरा, केदारो, कल्यान, सामेरी, गंधार, बसन्त, ललित, जैतश्री, धमार गौरी, विहागरौ, अडानो विभास, रामग्री, भूपाली, सूहा, टोडी, संकराभरन, विहाग, सोरठ, पूरबी।

इनमें भी सारंग, भलार, देवगंधार, विलावल, केदरो आदि का अधिक प्रयोग किया है। चतुर्भुजदास ने इन पदों को लोक-छन्दों में आबद्ध किया है,

क्योंकि मात्रिक छन्द लोकगीतों की प्रकृति से पूरा मेल रखते हैं। इन पदों की प्रारम्भिक शीर्ष पंक्ति जिसे "टेक" कहा जाता है वह भी मार्त्रिक छन्द का चरण रूप होता है। छन्दों की गेयता रागों में आबद्ध रहती है। रागों के कारण ही इन पदों में सामान्य छन्दों से अधिक मार्मिकता तथा व्यंजना के साथ भाव सौन्दर्य होता है। छन्द की नादमय़ता ही काव्य का माधुर्य होता है। कविता का गूढ व्यंजन बहुत कुछ छन्दोमयता और गतिमानता पर आधारित होता है। चतुर्भुजदास के पदों में विभिन्न मात्रिक छन्दों का प्रयोग हुआ है। इनमें १६ मात्रा के चौपाई-पं द्धरि-पद्विटिका ; २६ मात्रा का प्लवंगम-चान्द्रायण, २४ मात्रा का दोहा-रोला; २६ सत्ताईस मात्रा का सरसी, २८ मात्रा का सार, ३० मात्रा का चउपैया, का प्रयोग बहुश : मिलता है। कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं-

चौपाई - भाल तिलकु लट लटकन सोहै + मंद हँसनि सब कौ मन मोहै।
गिरिधर कुँवर जननि दुलरावै + चतुर्भुजदास विमल जसु गावै।

पद्धरि- फूल द्रुभ वेली भाँति भाँति + नव वसंत सोभा कहि न जाति।
देखे रँग रंगे हरषि नैन + स्रवननि पोषत पिक मधुप बैंन।।

चान्द्रायण- झूलत जुगल किसोर, सुरंग हिंडोरना।
गरजत गगन चहुँ दिसि, पवन झंकोरना।।

प्लवंगम - द्वै खंभ डँाडी, चारु विस्व कर्मा गढी।
पटलि पिरोजा, लाल चौकी हीरा जड़ी।।

दोहा - गिरि घटिया उठि भोर ही, मारग रोकत आइ।
बहुरि अचानक सीसतें, मटुकी देत ढुराइ।
चतुर्भुज प्रभु चित करषियो, चितवन नैंन विसाल।
रति जोरी मिस दान के गिरि गोवर्द्धन लाल।।

सरसी -जौं लौं नांहिन देखे सुंदरि, कमल नयन मुसिकात।
सब चतुराई विसरि जाति है, खान प़ान की बात।।
सुनि भामिनि के वचन मनोहर, सखि मन अति सकुचात।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरनुलाल सँग, सदा बसौ दिन रात।।

सार - काके तात मात अरुभ्राता, को पति नेह नवेली।
काके लोक लाज अरु कुल व्रत को वन भँवति अकेली।।

चतुर्भुजदास ने ३१ वर्णो का कवित्त घनाक्षरी, ३२ वर्णो का रूप घनाक्षरी

और ३३ वर्णों का देवघनाक्षरी का प्रयोग भी किया है। यथा-देव घनाक्षरी-

वारी मेरे कान्ह प्यारे, अबहिं दिननु वारे, कैसें अतिभारौ गिरि, राखियौ धरि कर पर।

कोमल भुजा तुम्हारी यातै हौं मै भीतमारी, देखि देखि करत है, हिरदौ इह धर धर।।

अनुकूल छन्द से कवि की भावना अधिक आकर्षक बन जाती है। ताल-लय-नाद पूर्ण रागमयी छन्दोबद्धता से काव्य कृति में सहज ही उत्कृष्टता आ जाती है। अतः चतुर्भुजदास के पदों में छन्दोबद्धता से माधुर्य और गतिशीलता सहज ही विद्यमान है।

कला योजना का अन्य पक्ष शब्द योजना एवं वर्णों का शब्दों में गुम्फन है, जिसे कवियों ने काव्य तन श्रृंगार की दृष्टि से शब्दालंकार कहा है। काव्य की आत्मारस, शब्दार्थ शरीर, अलंकार आभूषण, रीति अवयवों का गठन और गुण स्वभाव माना जाता है। काव्य की शोभा यमक, अनुप्रास, श्लेष आदि शब्दालंकारों से प्रकट होती है। चतुर्भुजदास के पदों में वर्ण संयोजनाजन्य नादमाधुर्य स्पृहणीय है। यथा-

ललित ललाट लट लटकतु लटकनु,लाडिले ललन को, लडावै लोल ललना।
प्रान प्यारे प्रीति प्रति पालति परम रूचि, पल पल पेखति पौढ़ाइ प्रेम पलना।।
दरपनु देखि देखि दँतियाँ द्वै दूध की, दिखावती है दामिनी सी दामोदर दुख दलना।
सरोज सो सलोनौ सिसुि स्यामघन से जलधर, चतुर्भुजदास बिनु देखे परै कल ना।।

इस कवित्त मनहरण में सानुप्रासिक शब्द संयोजना में ले प-द-स की आवृत्ति से वार्णिक-थिरकन सी प्रतीत होती है। इनके सभी पदों में कोमलकान्त पदावली अवलोकनीय है। शब्द योजना भी अवलोकनीय है। यथा-

'रूप रासि रस रासि रसिकनी नव अंकुर अनुराग नई।
चिरजीवहु चतुर चिन्तामनि प्रगटी जोरी अति पुन्य मई।।

इनके पदों यमक और शब्द श्लेष की छटा भी दर्शनीय है।

यमक -(१) सारंग नित सारंग मिलि गावत कुंज रहे रंग भारी।
(२) करि सिर तिलकु आरती वारति
(३) चतुर्भुजदास छाक छकि सजि
(४) वारि आरती जुगल रूप पर चतुर्भुजदास वारनें जाइ।

शब्द श्लेष- मन मोहन आनंदनिधि प्रगटी श्री राधा सुखदाई

(५) मन को मोहने वाली (२) श्री कृष्ण

चतुर्भुजदास के पदों में उपमा रूपक उत्प्रेक्षा आदि सादृश्य मूलक अर्थालंकारों से विवेच्य आकर्षक एवं मनोरम बन पड़ा है।

उपमा - दरपनु देखि देखि दँतिया द्वै दूध की

दिखवत है दामिनी सी दामोदर दुख दलना।

उपमेय - श्री कृष्ण की 'दूध की दतियाँ'

उपमान - दामिनी.। वाचक शब्द -सी। गुणधर्म -दामोदर दुख दलना।

अनन्वय - 'उपमा नांहि करी कोउ करता कासों समताई।

रूपक - (१) गौर स्याम छवि मरकत मनि पर कनक बेलि लपटावै हो।

(२) सुरत सिंधु बिलसत दोऊ जन सब सहचरी सुख पावै हो।।

उत्प्रेक्षा - (१) सुनहुँ जसोमति भवन तुम्हारे चित्रे भले चितेरे।अतिनीके भावते जियके मानों बिध आप उकेरे गोपी की संभावना है कि यशोदा के भवन पर चित्र रचना ब्रह्मा ने स्वयं ही की है।

(२) राजत तन और श्याम प्यारी... पिय भाग बाम,

नव घन गिरिधरन, अंग संग मनुहुं दामिनी।

श्याम वर्ण गिरिधरन के साथ गौर वर्णी श्यामा ऐसी लगती हैं मानों नवघन के साथ दामिनी हो।

विरोधाभास, भ्रन्तिमान, सन्देह, मीलित, दृष्टान्त, व्यतिरेक आदि अनेक अलंकारों से पदों में सौन्दर्य वृद्धि हुई और काव्यानुभूति भी प्रभावशाली जान पड़ती है।

काव्य में स्पष्ट अर्थ बोध की अपेक्षा सूचकता अथवा ध्वन्यर्थ का अधिक महत्व है। चतुर्भुजदास अभिव्यन्जना के तो पण्डित हैं। गोपी के प्रेम का ध्वनन निम्न पद में दर्शनीय है-

मथनियां दधि समेत छिटकाई।
भूली सी रहि गई चितै उत किनु न विलोवन पाई।।
आंगन है निकसे नंद नंदन नैंन की सैंन जनाई।
छांडि नेति कर तें घर तें उठि पाछें ही बन धाई।
लोक लाज अरू वेद मरजादा सब तन तें विसराई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन मंद हंसि कछुक ठगौरी लाई।।

इस पद की लोक लाज अरू वेद मरजादा सब तन तें बिसराई'' पंक्ति में गोपी का सर्वस्व समर्पण भाव अभिव्यन्जित हो रहा है। 'लोक लाज' तथा 'वेद मरजादा' की व्यापकता का प्रतिध्वनन और 'तन से विसराई' की व्याप्ति पर जितना चिन्तन किया जाता है उतना ही व्यापक अर्थ और गोपी की समर्पण भावात्मक स्थिति नई से नई प्रतिध्वनित होने लगती है। उनके अधिकांश पद भावाभिव्यन्जन से भरपूर है।

''कैसो हियो माई या अबला को, नेंकु न गांठि हिये की खोलें।''

यहाँ 'अबला' और 'गांठि हिये की खोले' पद अभिधेय अर्थ को त्यागकर लाक्षणिक अर्थ के अभ़िव्यन्जन हैं। इसी प्रकार-''गिरिधर लाल के रंग भरी'' में रंग शब्द अपने भौतिक रन्जक शब्दार्थ को त्याग कर प्रेम रस से ओत प्रोत होना लक्ष्य अर्थ अभिव्यन्जित होता है। 'रंग' शब्द 'स्नेह' का व्यन्जक हो रहा है।

चतुर्भुजदास के पदों में एक ओर उक्ति वैचित्र्य की छटा दिखाई देती है। दूसरी ओर आर्थी व्यन्जना के कारण आलंकारिक सौन्दर्य बोध होता है।

मन मोहन मूरति नैंननि में गड़ी।

लोग कहन लाग्यो कछू हौ, मैं न तज्यौं मुख मौन।

हियो चाहत हिय सों मिल्यौ, भुज चाहें चतुर्भुज हौंन।।

गोपी श्याम सुंदर से आलिंगनबद्ध होने की कामना करती हुई कहती है-मोहन की मूर्ति नेत्रों में ऐसी गढी कि हृदय से हृदय अन्दर ही अन्दर मिल गये, अब भौतिक रूप से वक्ष से वक्ष मिल जाँय तो भुजाओं की तुष्टि हो जाए। वे चतुर्भुज हो जावे।

यह रस की अन्तर्वर्तिनी भाव स्थिति है। 'ध्वनि' अन्तर्मन में निगूढ अनुभवों और सूक्ष्म भावावर्तनों को वस्तु जगत् में उभारने में समर्थ होती है। 'ध्वनि' काव्य भाषा का चमत्कृत प्रयोग हैं।

भाषा काव्य का व्यवहार पक्ष है। लयबद्ध, नादानुकूल, आलंकारिक एवं व्यन्जक भाषा ही आदर्श होती है। चतुर्भुजदास की भाषा सहज सुबोध ब्रजभाषा है जो रस निष्पत्ति में सहयोगिनी है। इन्होंने संस्कृत निष्ठ ब्रजभाषा को भी अपनी काव्य भाषा बनाया है। लोक-कवि यदि काव्य शास्त्र का अध्येता होता है तो उसका लोक तत्व काव्य भाषायी तत्व से सम्पृक्त हो जाता है। चतुर्भुजदास की ब्रजभाषा में काव्य शास्त्रीय परिमार्जन स्पष्टतः परिलक्षित होता है। इनका संस्कृत भाषायी ज्ञान निम्न पदसे स्पष्ट होता है।

भावये मनसि गोकुल नरेशं।

यस्तु तत्पाद पद्म मकरन्द लुब्ध हृदि संचरी कर्त्तु संतत नरेशं।
निज ब्रज-वल्लभी-मध्य वृन्द मध्यस्थ मति चातुरता संस्पृष्ट निवहत उरोजम्।
तादृशीभिर्विविध रासादि लीला सुकण्ठ धृत ललित कर युग सरोजम्।
चतुर्भुजमखिल जगदाधार रूरुया निज कृपया निदर्शित सुरूपम।
भक्तजन दुख विध्वंस कृति तत्परं पालिताशेष यदुवंशभूपम्।।

यह पद संस्कृत के क्रियापदों, कारकों, प्रत्ययों से संयोजित कर 'भैरव राग' में संघटित किया गया है। इससे चतुर्भुजदास का संस्कृत ज्ञान, शास्त्रों का अनुशीलन एवं विद्वत्ता की अवगति होती है। इनके प्रायःसभी पदों में माधुर्य और प्रसाद गुणों की निर्भरता एवं माधुर्य युक्त सरस गेयता है। यथास्थान प्रकृति का चित्रण आलम्बन और उद्दीपन रूप में किया गया है। इनकी यमुना गिरिराज पर्वत-मथुरा पुरी- सजीव रूप में भक्तिभाव पूर्ण निज जन संकल्प तोषिणी हैं। इनके वन उपवनों में मानवीकरण विद्यमान है। सारांशत : कहा जा सकता है कि चतुर्भुजदास ने यथा स्थान प्रकृति के उचित रूप के संयोजन, चित्रण, रूपांकन में विषय वस्तु के वर्णन परिस्थिति के निरूपण, देश-काल के अनुसार रागों के गुम्फन में सिद्ध हस्तता प्राप्त की है। इनका कवि कर्म काव्य शास्त्र की कसौटी पर शुद्ध स्वर्ण के रूप में प्राप्त होता है।

विषय वस्तु की विविधता के रूप में इन्होंने वर्षोत्सव, ऋतूत्सव, पर्वोत्सवों के पद लिखे हैं। परमप्रभु की अष्टयाम सेवा, जन्मोत्सवों पर बधाइयाँ, विविध सेवा प्रकारों को पदों में आबद्ध किया है-श्री कंठमणि शास्त्री ने इनके पदों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया है-

श्री कृष्ण व राधा की जन्म की बधाई, छठी पूजन, पलना झुलाना, माखन खाना, गोपियों से गोरस का दान लेना, दशहरा पर जवारे धारण करना, महारास में गोपियों का विलास, दीपोत्सव, गोवर्द्धन, गोपाष्टमी, देव प्रबोधिनी, वसन्त, फाग, फूल मण्डली, अक्षय तृतीया, पावस-वर्णन, हिंडोला। इनके लीला सम्बंधी पदों में सुरतान्त, मान, खण्डिता या वन्चिता उद्धव सन्देश आदि विषय वर्गीकृत हैं। प्रकीर्ण पदों में श्री यमुना जी व भगवान् के स्तुति परक भाव समावेशित है।

इस प्रकार विषय वस्तु की विविधता, वर्णनशैली की विशदता, रागों में पदों की गेयता, वस्तु कथ्य की सहजता, भाषा की सुबोधता, भावों की ध्वन्यात्मकता, एवं रसात्मक संघटता की दृष्टि से चतुर्भुजदास को अष्टछाप का दिव्य मणि कहा जाए तो अत्युक्ति नहीं होगी। इति शम्.

--काम्यवन शोध संस्थान, पातालेश्वर,
कामाँ (भरतपुर)

अनूठे शब्द चित्रो के सृजनहार कवि-कीर्तन गायक श्री चतुर्भुजदास

✍ चिरंजीवलाल शर्मा'कलाकार'

श्रेष्ठतम लीला पद रच, छोड़ गये निज छाप।
अल्प आयु दस वर्ष में, अष्ट सखा परताप।।

जन्मत ही गोपी विरह, रचा चतुर्भुजदास।
रास हिंडोला होलिका, शब्द-चितेरे खास।।

अष्टछाप कीर्तन मण्डली के सखा चतुर्भुजदास ने ललित चित्र शब्द चित्र योजना से आलम्बन का सहारा ले कन्हैया के बाल रूप के अनेकानेक चित्र शब्दांकित किये है। उन्होंने अपने जीवन का आरम्भ पिता के साथ श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा से आरम्भ किया जो जीवम पर्यन्त चला। बचपन से ही वे कुशाग्र बुद्धि और प्रत्युत्पन्न मति के थें इनका रचा कोई स्वतंत्र ग्रंन्थ नहीं। पर वार्ता साहित्यानुसार स्वतन्त्र पद ही रचे। उनके आधार पर हो उन्होंने न केवल अष्टछाप वरन् कृष्ण भक्त कवियों में यश अर्जित किया। चतुर्भुजदास के पदो को पढ़कर, कीर्तन सुनकर विशेष प्रकार की आनन्दानूभूति होती है। पाठशाला में अध्ययन के अवसर नहीं मिलने पर भी ब्रजभाषा और संस्कृत का उन्हे स्तरीय ज्ञान हुआ। इस तथ्य को स्वीकारते हुए पुष्टि साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर श्री प्रभुदयाल मित्तल ने लिखा है कि उन्होंने श्री कृष्ण के जन्म से लेकर गोपी विरह तक के पदों की रचना की है।

चतुर कवि चतुर्भुजदास द्वारा रचित पदों की पक्तियों में ब्रजराज के अनेकानेक रूपो को रेखांकित कर रंगो से उभारे हैं। श्रीकृष्ण स्वरूप आराध्य का सलौना रूप, माता यशोदा का पुलकित मुदित मुख और उनके वात्सल्य से प्रेरित कृत्य से सम्बद्ध इन तीनों ही बिन्दुओं की रसात्मक अनुभूति विशिष्ट सुखानुभूति प्रदायक है। किशोर लीला के पद रागात्मक अनुभूति प्रधान हे तो नटखट कान्हा और मुग्धा राधा की प्रेम लीला की यथार्थ पूरी कहानी अभिव्यक्त करने में उनका रचना विधान सफल है। पररस्पर प्रेम और पश्चात् तकरार के उपरान्त मान मनुहार के व्यवहार में मध्यकालीन प्रभाव आनें से स्थूलता का आभास होता है। जैसे-भूलि गयो झगरों इह मन्द मुस्कानि में...। कन्हैया की वेश-भूषा और साज-श्रृंगार में चतुर्भुजदास ने परम्परा से हट कर

परिवर्तन का प्रयास किया है। पुष्टिमार्ग ने मुगलिया वस्त्रों व आभूषणों को आराध्य के श्रृंगार में स्वीकार किया उसी का वर्णन तो इस कवि ने किया है। कवि या गायक चित्रकार या मूर्तिकार जैसा देखता है वैसा ही बनाता है। इस तथ्य का परिचायक है यह पद-स्वेत जरी सिर पाग लटकत कलंगी तामें लाल।

तनसुख को बागो अति राजत कुंडल झलके सु लाल।

बाल कवि चतुर्भुजदास ने गोपियों को सजाने-संवारने में जिन साधनों का उपयोग किया है वे मुगलिया प्रभाव से अछूते नहीं। आभूषणों की आभा में रत्नों की चमक से द्विगुणित वृद्धि होना कवि ने माना है। जैसे-

नकबेसरि ताटक कंठ सिरि अनुभूति ;
चौकी बनी जड़ाई दूर कर रति कांति।।
सेंदूर तिलक तम्बोल खुटिला बने विसेख,
सोहत केसरि आइ कुंकम काजर रेख।।

कवि-कीर्तनकार चतुर्भुजदास ने गोचारण से जुड़े कृत्यों का कलात्मक व मनोहारी चित्रण किया है। होली खेलने के प्रसंगो से सम्बद्ध घटनाओं का सरस सुन्दर विवरण इस कवि ने प्रस्तुत किया है। जिसमें रूप, आभा, और कोलाहल तथा संगीत की स्वर लहरियों के शब्द-चित्रों को रेखांकित करने में यह कवि सफल हुआ है। इस प्रसंग के विवरण में चतुर्भुजदास ने रंगो और सौरभ की बौछार भी विशिष्ठता लिये हुए की है। होली खेलते हुए प्रसंग में प्रयुक्त शब्द योजना भी सरल एवं लालित्य मय है। इसकी एक बानगी प्रस्तुत है-रत्न जड़ित पिचकारी कर लिये, मदनलाल को भावे।

चौबा, चंदन, अगर कुमकुम विविध रंग बरसावे।
उड़त गुलाल परस्पर आंधी सो, रहयों गगन सब छाई।
'चतुर्भुज प्रभु' गिरिधरन लाल छवि मो सौं बरनि न जाई।।

झूले में झुलते हुए गिरिवर धारी को कवि ने इस प्रकार रूपायित किया है-

हिंडोरे आई झूलत गिरिवर धारी।
बाम भाग वृषभानु नंदनी, पहिरे कुसुमी सारी।
ब्रज जवती चहूँ दिसि ते ठाडी, निरखत तन-मन वारीं
चतुर्भुजदास' प्रभु गिरिधरन लाल संग, बढ्यो रंग अति भारी।।

लीलाओं का वर्णन करते हुए चतुर्भुजदास ने रास व गिरिकन्दरा में वास का विवरण सटीक किया है जो स्वाभाविक लगता है। कवि कहता है-

श्री गोवर्द्धनधारी गिरि संघन कन्दरा, रैन निवास किये पिय प्यारी।
उठि चले भोर सुरति रंग भीने, नंद-नंदन वृषभान-दुलारी।।
इत विगलत कचमाल मरगजी, अटपटे भूषण मरगजी सारी।

उत ही अधर मसि पाग रही फवि दूहै दिसि छवि बाढ़ी अति भारी।।
घूमत आवत, रति-रन जीते, करनी संग गजवर गिरिधारी।
'चतुर्भुजदास' निरखि दंपति छवि, तन-मन-धन कीन्हौं बलिहारी।।

अष्टछाप के इस कवि ने लटपटी पाग और कुलह में गुलाब के फूल की कल्पना कर वातावरण को गुलाबी आभा मय बनाते हुए गुलाब गंध बिखेरी है। चतुर्भुजदास ने खण्डिता के चित्रण में वस्त्रों की अस्त-व्यस्तता-अंगों की शिथिलता को अभिव्यक्ति का माध्यम बना कर कहा है-मोहन घूमत कजरारे-नैंने सकुचत कंछु कहत बैन सँदूर का तिलक सुभग अधर मसि सौ कारे। इनके पदों में वर्णित कृष्ण जड़ प्रतिमा से लगते हैं जो तत्कालीन प्रभाव दर्शाने वाला है। फिर भी कुसुम सेज पर आभरणों की टकराहट की झनकार से मांसल प्राण तत्व का आभास आनन्द प्रदायक है। इस चतुर भक्त कवि ने आराध्य की महिमा का गान कर ही सन्तोष नहीं माना वरन् आत्म सन्तुष्टि की खातिर भक्त के मन के भावों को भी मूर्त रूप दिया-

सदा ब्रज में ही करत बिहार।
तब के गोप वेष, अब प्रगटे द्विजवर अवतार।।
जब गोकुल में नंद कुंवर, अब वल्लभ राजकुमार।
आय पहुँचि रुचि और दिखावत सेवा मत दृड़सार।
जुग स्वरूप गिरिधरन श्री विट्ठल लीला ए अनुसार।।
'चतुर्भुज' प्रभु सुख लेत निवासी भक्तन कृपा उदार।।

प्रकृति प्रेमी कवि चतुर्भुजदास ने जिस शब्द योजना के माध्यम से लीलाओं का गुण गान कर मानवीय जीवन के उन्नयनार्थ जो क्षेत्र उपलब्ध कराये हैं वे वास्तव में अनूठे हैं। ब्रजधाम केप्रति उनकी रागात्मक आस्था भी अपने आप में अनूठी है। इनके सम्पूर्ण रचना विधान में उपदेशात्मक तत्व गौण और वल्लभ दर्शन व भक्ति भाव की प्रधानता रही है। साथ-साथ कवि ने मानव एवं मानवेत्तर कृत्यों व लीलाओं की माधुर्यानुभूति को कोमल, सात्विक व सरल शब्दों से चित्र सम अभिव्यक्ति दी है। प्रसंगानुकूल शब्दों का चयन कर संवेदनात्मक अनुभूति आदर्श कल्पना की उड़ान और काव्य एवं ललित कुल परिवार की कलाओं का संतुलित समन्वय दर्शानें का सफल प्रयास किया है। चतुर्भुजदास ने अभिव्यंजना शिल्प का निर्वाह करते हुए कृष्ण भक्ति साहित्य सृजन में अपना विशिष्ठ स्थान बनाया हे।

वर्तमान में श्रीनाथजी कीर्तन सेवारत वरिष्ठ कीर्तनकार श्री अमृतलाल से कीर्तनकार श्री चतुर्भुजदास केपद-रचना विशेषता के सम्बन्ध में जानकारी चाहने पर उनका कहना था-श्री चतुर्भुजदास जी की गायकी जीवन में सुखद

अनुभूति बांटने वाली रही। इसके विपरीत वर्तमानिक पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित गायकी जो तड़क भड़क वाली है और है उछल-कूद मयी जिसकी ओर आज लोग तेजी से बढ़ रहे हैं पर वह जीवन को तोड़ने वाली है नाकि जोडने वाली। इससे मन को शान्ति नहीं मिल सकती है। हवेली संगीत परम्परा पाँच सौ वर्ष से चली आ रही है और आगे भी चलती रहेगी। क्या सौ वर्ष पश्चात् भी इसका यह रूप कायम रह पायगा। जल्दी ही इस परम्परागत विद्या से मोह भंग होने वाला है। यद्यपि संरक्षण के अभाव में इसकी प्रगति अवरुद्ध हुई है फिर भी हवेली संगीत के कई गायकों ने न केवल भारत वरन् विदेशों में नाम कमाया है। यदि धर्माचार्यो और सरकार का संरक्षण मिले तो अतीत से अधिक यह लोकप्रिय हो सकती है। क्योंकि इसमें गहराई है, कशिश है और है आत्मा को छूने का पैनापन। यह प्रभु का गुणगान कराते हुए रुला सकती है-हंसा सकती है और चला सकती है मुक्ति के मार्ग पर। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है-श्री चतुर्भुजदास का जीवन ओर उनकी गायकी।

हवेली संगीत गायन में अति निष्णात और राजस्थान सरकार से संगीत अध्यापक पद से सेवा निवृत्त श्री मिश्रीलाल कीर्तनकार का मानना है कि आज पाश्चात्य् संगीत को भारतीय द्रुतगति से अपनाने को आतुर हैं पर शीघ्र ही उनका मोह भंग होगा।श्री चतुर्भुजदास ने आत्म संतोष हवेली संगीत के माध्यम से प्राप्त किया। उसका शतांश भी पोप संगीत नहीं दे सकता है। यह मानव को मुक्ति मार्ग पर चला सकती है तो आधुनिक पश्चिम प्रभावी विद्या विध्वंस के भाव भरने वाली है। इससे मानव मन क्षणिक सुखानुभव भले ही करे पर परम शान्ति नहीं पा सकता है। आत्म सन्तोष के लिए हबेली संगीत-कीर्तन गायन ही सर्वोपयोगी माध्यम है। यद्यपि इसके लिये करनी पड़ती है कठोर अनवरत साधना। इसका भविष्य उज्ज्वल है।

विस्तार भय से बचते हुए इतना ही कहना चाहूंगा कि चतुर कवि कीर्तनकार श्री चतुर्भुजदास को न केवल पद-रचना एवं कीर्तन गायन में महारत हासिल हुई वरन् उनका चित्र, मूर्ति, अभिनय, नृत्य आदि कलाओं की अधिकृत जानकारी थी। उनको तो वस्त्र, रंगाई-छपाई, धातु, मिट्टी आदि उद्योगों की बारीकियों का ज्ञान था। ऐसे संकेत उनकी पद रचना से मिलते हैं। यही कारण है कि उन्होंने अपने भावो को शब्दो के शिष्ट चयन से चित्र सम-अभिव्यक्ति दी और वह भी सफलता से। शब्दो के माध्यम से रंगों और रेखाओं से स्पष्ट व प्रतीकात्मक शब्द-चित्रण से जो बहुआयामी ख्याति अर्जित कर काव्य जगत में स्वयं को अमर बनाया वह अपने आप में अनूठा है, विशिष्ट उदाहरण है।

—नई हवेली का चौक
श्रीनाथद्वारा

श्री चतुर्भुजदासजी की रचनायें और उनकी प्रामाणिकता

✍ लक्ष्मी चन्द्र शर्मा ''मयंक''

ब्रजभाषा साहित्य के गौरव चतुर्भुजदास के पिता कुंभनदास ब्रज मंडल में ''जमनावता'' ग्राम के निवासी गौरवा क्षत्रिय थे। जो ''दैवाललब्धेन सन्तोष : से खेतीबारी और आत्म विच्चरणार्चन'' के लक्षणों का परिपालन करते हुए श्री गोवर्द्धननाथ जी की त्रिविध सेवा में ही अपना सर्वस्व समर्पण कर चुके थे। भगवत्सेवा और भगवल्लीला का गुणगान ही जिनका श्रेय-प्रेय था, भगवद् भक्तत्व ही जिनके पारिवारिक मोह का कारण था। अष्टछाप की वार्ता और दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता में सुविदित होते हुए भी कुंभनदासात्मज चतुर्भुजदास के चरित्र सम्बन्ध में हिन्दी साहित्य में भ्रम विकसित हुआ है। किसी भी विद्वान ने रंचमात्र भी निर्णयात्मक दृष्टिकोण को नहीं अपनाया है। नागरी प्रचारिणी सभा की खोजके आधार पर विट्ठलनाथ जी के शिष्य और कुंभनदास के पुत्र थे। इनका वर्णन २५२ वें वैष्णव वार्त्ता में है। इनकी गणना अष्टछाप में थी। इनकी अल्ल गोरवा थी। इन्होंने मधुमालती की कथा एवं भक्ति प्रताप नामक ग्रन्थ भी बनाए है।

आपका समय १६२५ के लगभग था। उनके ४६ पद एवं समैया के पद नामक ग्रन्थ उपलब्ध है। उनका एक ग्रंथ ''द्वादश-यश'' नामक और दृष्टि पथ पर आया है। जिसमें १५६० लिखा है। जान पड़ता है वह समय अशुद्ध है। संभव है यह ग्रंथ किसी दूसरे चतुर्भुजदास का हो। ''हित जू कौ मंगल'' नामक इनका एक ग्रंथ और खोज में प्राप्त हुआ है।

कुम्भनदास और उनके सपूत चतुर्भुजदास प्रारंभ से ही ब्रजवासी रहे हैं। जैसा कि वार्त्ता में कहा गया है। वे ब्रज छोड़कर कहीं अन्यत्र नहीं गए।

वास्तव में कुंभनदासात्मज अष्टछापी चतुर्भुजदास न तो गौड देशवासी थे और न उन्होंने ''द्वादश-यश'' भक्ति प्रताप और हित जू को मंगल नामक कोई ग्रन्थ ही बनाया है। मधुमालती नामक ग्रंथ भी इनका रचित नही है। वह चतुर्भुजदास कायस्थ का है। श्री विट्ठलनाथ जी के अनन्यशिष्य होने के कारण अष्टछापी चतुर्भुजदास में भक्ति सम्बन्धित पद रचना के अतिरिक्त अन्य कोई ग्रंथ नहीं बनाया है। इनकी छाप के लगभग ४०० पद प्राप्त होते हैं। जिनमें कुछ कुंभनदास जी कृत भी सम्मिलित हो गये हैं। विश्लेषण के बाद इनके ३६५ पद यहाँ प्रकाशित हैं। (कुछ और पद प्राप्त होने से यह संख्या बढकर ४००

के आसपास है) कीर्त्तन पदों में ''दास चतुर्भुज, 'चतुर्भुज, चत्रुभुज और चतुर्भुजदास' इस प्रकार की छाप मिलती है।

नाभादास जी के वर्णित भक्तिभाल चतुर्भुजदास अष्टछापी से भिन्न है। कुम्भनदास के पुत्र चतुर्भुजदास न तो भक्तिभाल में है और न प्रियादास जी कृत उसकी टीका में कहीं उल्लेख हुआ हैं। कुंभनदास पद संग्रह सं. १२६ की मधुर रचना में वे उस साक्षात् चतुर्भुज भगवत्स्वरूप का अनुसन्धान कर रहे थे। जब बालक श्रीकृष्ण दोनों हाथों से दही और माखन की हांडी सँभाले हुए और दो हाथ प्रकट कर कमर में खुलते हुए पीताम्बर की गाँठ लगा रहे थे। कुंभनदास ने उस समय दर्शन किये कि सहसा किसी ब्रजवाला ने आकर ज्योंहि कृष्ण को पकड़ा वे उसकी बड़ी बड़ी अखियांओं में दही का कुल्ला मारकर कीक देते हुए भाग खड़े हुए। ''भरि गंडूस छींटि नैननि में गिरिधर चाइ चले दै किकें, की विनोद पूर्ण सख्य भावना से कुंभनदास ने जिस ''चतुर्भुज स्वरूप के दर्शन किये थे-स्मारकरूप में उन्होंने पुत्र का नाम ''चतुर्भुजदास'' रख दिया। डा. दीनदयाल गुप्त ने ''अष्टछाप और वल्लभसम्प्रदाय'' नामक ग्रन्थ में इसकी प्रामाणिकता दी है।

जैसा की सर्वविदित है सं.१६०२ में अष्टछाप की स्थापना करते हुए गो. श्री विट्ठलेश प्रभु चरण ने चतुर्भुजदास को भी उसमें स्थान प्रदान किया। ''अष्टसखा'' और अष्टछाप'' ये दो एकार्थवाची शब्द हैं। भगवान श्री कृष्ण के अवतार समकालिक उनके सखाओं की भावना पर श्री गोवर्द्धन नाथ जी के साथ भी सख्य भाव के अभिव्यंजक आठ सखा ब्रज में सम्मिलित हुए। गो. श्री द्वारकेश जी ने इस मान्यता का इस प्रकार उल्लेख किया है।

''सूरदास सो तो कृष्णतोक परमानंद जानो।
कृष्णदास सो भोज स्वामि गोविंद श्री दामानो।
''अष्टछाप आठों सखा श्री द्वारकेश परमान।
जिनके कृत गुणगान करि निज जन होत सुजान।

अष्टछाप के आठ भक्त सखाओं में संयोगात्मक सख्य भक्ति में

(१) सूरदास-निर्गुण (गुणातीत-सखा भक्त)

(२) परमानन्ददास - सान्त्विक सखा भक्त।

(३) कुंभनदास - राजस सखा भक्त।

(४) कृष्णदास - तामस सख भक्त

ये चारों श्री वल्लभाचार्य जी के शिष्य थे।

विप्रयोगात्मक सख्य भक्ति में -

(५) नन्ददास -निर्गुण (गुणातीत) सखा भक्त।

(६) गोविन्ददास - सात्त्विक सखा भक्त।
(७) चतुर्भुजदास - राजस सखा भक्त
(८) छीतस्वामी - तामस सखा भक्त।

ये चारों श्री विट्ठलेश जी केशिष्य थे। अष्टछाप में समावेश के लिए नवद्या भक्ति के अन्तर्गत सख्यभाव की अपेक्षा होतीहै। सख्य भावाभिव्यक्ति में काव्यमयी पद रचना और संगीत साधना की विशेष कारणता है तो तदर्थ सत्संग शिक्षा एवं अनुभव की परिपक्वता भी उपादेय होती है। जो कम से कम कैशोर और तारुण्य की संधि में संभव है।

चतुर्भुजदास की कृतियाँ-

(१) वर्षोत्सव तथा नित्य कीर्तनपद-संग्रह हि.न.१/१ पत्र १६२ पूर्ण/प्रतिपत्र पंक्ति २७ लेखन काल सं.२८८८ आषाद कृष्ण ६ भृगौ।
(२) कीर्तन संग्रह –(चतुर्भुजदास पद संग्रह)
हि. सं. २/१ पत्र से २ से २३/अपूर्ण पंक्ति २१
लेखक - ओंकार जी भूषणदास मोदी
लेखन समय - लगभग २०० वर्ष पूर्व
(३) कीर्त्तन संग्रह -(प्रातःकाल के)हि. सं. ३/१ पत्र ४१० /अपूर्ण -पंक्ति १६
(४) कीर्त्तन संग्रह (उत्सव के हि. सं. ३/२ पत्र ४६८)
पूर्ण पंक्ति १४/ लेखन सं १८४६
लेखक -द्वारकादास भगवान दास पखावजी-
(५) कीर्त्तन संग्रह - चतुर्भुजदास/हि. बं. १६/५ पत्र ७० अपूर्ण पंक्ति १४)
(६) कीर्त्तन संग्रह - चतुर्भुजदास /हि. बं.१०६/४ पत्र १६५ से २३६ अपूर्ण पंक्ति १६।
लेखन समय-सं. १६५५ के लगभग।

जीर्ण पत्र/कीट कर्त्तित। इसमें अष्टछाप के अन्य कवियों के पदों का भी समावेश है। यह अशुद्ध और प्रामाणिक संकलन है। जो सर्वापेक्षया उपादेय है। इसमें लगभग २०० पदों की सामग्री है।

(७) कीर्त्तन संग्रह (नित्य पद हि. बं. २७/४ पत्र २४५ / अपूर्ण/पंक्ति १४)
(८) कीर्त्तन संग्रह-। चतुर्भुजदास हि. बं. ८१३/२
पत्र २१/पूर्ण पंक्ति २७।
(६) कीर्त्तन संग्रह (नित्य पद-राग क्रम से)हि. बं. ११६/१ पत्र २५२/अपूर्ण।
श्री गब्बू लाल जी वर्मा कांकरौली द्वारा समर्पित।
चतुर्भुजदास कृत पदों में उनकी छाप तीन रूपों में मिलती है।
(१) चत्रुभुज (२) चत्रुभुज (३) दास चतुर्भुज।

संगीत सबंधी माधुर्य के लिए नाम का रूपान्तरित होना सहज है। जिसके लिए अन्य कृत होने की क्लिष्ट कल्पना नहीं करनी चाहिए।

(१) अछन-अछन पगु धरनि धरै।
अँधियारी निसि कोउ न जाने, नूपुर धुनि जिनि प्रगट करै।।
किसलै कुसुम सुहाथ रची है री रचना, चालि निहारि नव कुंज धरै।
चत्रुभुजदास स्वामिनी बेगि मिलि, रसिक राइ गिरिधरन वरै।

(२) आरोगत नागर नंद किसोर।
चहुंदिसि तें घन उमड घुमण्ड आए गरजत हैं घनघोर।।
नान्ही नान्ही बूँदनि बरसन लाग्यौ पवन झकझोर।।
'चत्रुर्भुज' प्रभु पातर लै भाजे सघन कुंज की ओर।।

(३) चलि अंग दुराये संग मेरें।
मुखहिं मुनि व्रत गहें, अधरनि ओट दिये ;
दसन दामिनि चमकति तेरें।।
बाजि नूपुर कटि छुद्र घंटिका श्रवन सुनत खग मृग घेरें।
''चतुर्भुजदास'' स्वाभिनी। सिंगार सजि निपट इन्हें गिरधर नेरें।।

(४) ब्रज पर नीकी आजु घटा।
नान्ही नान्ही बूँदें सुहावन लागी चमकत बीजु छटा।।
गरजत गगन मृदंग बजावत नाचत मोर नटा।
गावत स्रवन देत चातक पिक प्रगट्यो है मदन भटा।।
सब गुन भेंट धरत नंद लालै बैठे ऊँच अटा।
''चत्रुभुज प्रभु गिरिधरन लाल सिर कसुंभी पीत पटा।।

(५) श्री लछमन भट देत बधाई।
प्रगट भए पूरन पुरुषोत्तम श्री वल्लभ भक्त सुखदाई।
विप्र सबै मिलि करत वेद धुनि देत असीस सुहाई।
'चत्रुभुज'' प्रभु गिरिधर हरखे है, निज सेवा प्रगटाई।।

(६) स्याम सुनु नियरौ आयो मेहु।
भीजेगी मेरी सुरंग चूनरी ओर पीत पर देहु।।
दामिनी ते ' डरपति हौं मोहन निकट आपुने लेहु।
दास 'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर से बाढ्यो है अधिंक सनेहु।।

श्री चतुर्भुजदास ने समय समय पर विविध लीला, उत्सव, भावना के पदों की रचना कर अपनी काव्य प्रतिभा को पूर्णता कर लोक में धन्य हो गए। श्री चतुर्भुजदास जी मर्म-स्पर्शो प्रतिभा के धनी रहे हैं। पृथक किसी ग्रन्थ का उन्होंने निर्माण नहीं किया है।

–डूबलदेवपुरी
महाली रोड़ -मथुरा

श्री चतुर्भुजदास की रचनाएँ और उनकी प्रमाणिकता

✍ गोपाल प्रसाद मुद्गल

ब्रजभूमि धन्य हैं, जहाँ श्री कृष्ण जन्मे और खेले। इस खेलन भूमि में जमुनावतो धन्य है, जहाँ अष्टछाप के दो-दो भक्त कवि हुए। एक थे कुंभनदास और दूसरे थे उनके बेटे चतुर्भुजदास। यों तो कुंभनदास के सात बेटे थे किन्तु वे अपने डेढ़ बेटे ही बताते। एक में चतुर्भुजदास को बताते, आधे में कृष्णदास को गिनते। उनकी मान्यता थी-कृष्णदास श्रीनाथजी गाय चराते हैं, अतः वे आधे बेटे हैं। चतुर्भुजदास श्रीनाथजी की सेवा में रहकर कीर्तन करते हैं अतः पूरे बेटे हैं। उनका कहना था जो श्री नाथ जी की सेवा में रहे, भक्ति भावना में श्री नाथ जी की आराधना करे, पद रचे, कीर्तन करे वही सच्चे अर्थो में पूरा बेटा है। अन्य सभी संसारी जीव हैं।

कुंभनदास जी ने सही अर्थो में सही आंकलन किया था। चतुर्भुजदास वास्तव में अपने पिता के आज्ञाकारी पुत्र थे। वे अपने पिता को श्रीनाथजी की कीर्तन में पूरा पूरा सहयोग देते थे। उनके सान्निध्य में बचपन से ही उन्होंने काव्य और संगीत की विधिवत और व्यावहारिक शिक्षा ग्रहण की। अपने पिता के साथ बचपन से ही श्रीनाथजी के उत्तम पदों की रचना और गायन करने लग गए थे। वे आशु कवि थे इसका वृतांत वार्ता के एक प्रसंग में स्पष्ट रूप से दिया गया है।

चतुर्भुजदास ने जीवन पर्यन्त श्रीनाथजी का कीर्तन करते हुए श्री कृष्ण की लीलाओं को अपने पदों में उतारा। उनके पद इस बात के साक्षी हैं कि उन्हें ब्रजभाषा के साथ-साथ संस्कृत का अच्छा ज्ञान था। उनको विरासत में कुंभनदास से ऐसा सुखद वातावरण मिला जिससे उनको साम्प्रदायिक रहस्य का अच्छा ज्ञान हो गया। तभी तो वे श्रीनाथजी की भक्ति और अनन्य सेवा भावना में तल्लीन होकर कीर्तन के उत्तम पदों की रचना कर सके। इसीलिए गो. विट्ठलनाथ जी ने उन्हें अपने अनन्य कृपापात्रों में स्थान प्रदान किया। सन्१६०२ में जब बिट्ठलदास जी ने अष्टछाप की स्थापना की तब कुंभनदास के साथ चतुर्भुजदास को भी शिष्यत्व का गौरव मिला। यह एक अनूठा

उदाहरण है कि पिता के साथ पुत्र को भी समकक्ष स्तर दिया गया। बिट्ठलनाथ जी ने चतुर्भुजदास की भक्ति और सेवा भावना के साथ उनके कीर्तन के सरस पदों को ध्यान में रखकर ही उन पर अनुग्रह किया। सदा वरद हस्त रखा।

चतुर्भुजदास ने भी गो. बिट्ठलनाथजी के प्रति जो अपनी अपार श्रद्धा अभिव्यक्त की वह भी अनूठी रही। स. १६४२ में गो. विट्ठलनाथ जी का देहावसान हुआ तो चतुर्भुजदास जमुनावतौ से गोवर्द्धन आए। श्रीनाथजी के दर्शनों के पश्चात गुसाईं जी की स्तुति में पद गाते हुए रुद्रकुंड पर आए और इमली के पेड़ के नीचे अपने लौकिक शरीर को छोड़ दिया अतः स.१६४२ ही उनका लीला प्रवेश का समय सर्वमान्य है।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि से चतुर्भुजदास की सृजन यात्रा की झाँकी, उनकी रचनाएँ और रचनाओं की प्रामाणिकता को आधार मिल सकेगा। श्री प्रभुदयाल मितल ने अपने 'अष्टछाप-परिचय' ग्रन्थ में पृष्ठ २७५ पर चतुर्भुजदास की काव्य रचनाओं पर प्रकाश डाला है। उन्होंने लिखा है "चतुर्भुजदास के तीन संग्रह, 'चतुर्भुज कीर्तन संग्रह' 'कीर्तनावली' और 'दान लीला' काँकरौली विद्या विभाग में हैं जो स्वतंत्र ग्रन्थ न होकर उनके पदों के संग्रह हैं। ये संग्रह स्वयं उनके द्वारा अथवा उनके पश्चात किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किए गए होंगे।"

श्री प्रभुदयाल मीतल ने वल्लभ सम्प्रदाय के विवरण सहित आलोचनात्मक जीवनी और काव्य संग्रह छापा है उसमें ५५१ पदों को संकलित किया हैं जिनमें परमानंददास और चतुर्भुजदास के प्रामाणिक पद दिए हैं। चतुर्भुजदास के पद भी अन्य भक्त कवियों के पदों की भांति द्रुष्प्राप्य हस्तलिखित ग्रन्थो की प्रतियों से संगृहीत एवं वंश परम्परागत कीर्तनकारों से प्राप्त किए गए हैं।

यहां यह और स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि प्राचीन पद साहित्य का एक वृहद संकलन 'राग कल्पद्रुम' नाम से कलकत्ता से बहुल पहले छपा था उसमें सूरदास और नंददास के पदों के अतिरिक्त अन्य भक्त कवियों की रचनाएं संग्रहीत थीं किन्तु वह अप्राप्य है। इसी प्रकार सोमनाथ गुप्त ने भी अष्टछाप पदावली का संकलन किया है किन्तु यह ग्रन्थ भी हाथ नहीं लग पाता, अतः प्रभुदयाल मीतल ने 'अष्ट छाप परिचय' छह परिच्छेदों में रचकर एक अभाव की पूर्ति की है। इस ग्रन्थ में पंचम परिच्छेद बहुत महत्वपूर्ण है जिसके आधार पर हम कह सकते हैं कि चतुर्भुजदास की सरस रचनाएं संगीत

की खराद पर खरी उतरती हैं। चतुर्भुजदास का काव्य कीर्तन काव्य कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं। उनके पद कीर्तन के पद हैं इसलिए वे गेय हैं। गेय होने के कारण उन्हें गेय काव्य कह सकते हैं।

श्री प्रभुदयाल ने खोज रिपोर्ट के आधार पर चतुर्भुजदास कृत 'मधु मालती ', 'भक्ति प्रताप', 'द्वादश यश' और 'हितजू कौ मंगल' नामक कई ग्रन्थों का उल्लेख किया है किन्तु उन्होंने अपनी राय प्रकट करते हुए स्पष्ट लिखा हैं ''हमारे मत्तानुसार ये ग्रंथ अष्टछाप के चतुर्भुजदास के न होकर इसी नाम के किसी अन्य कवि के रचे हुए हैं। अंतिम ग्रन्थ तो स्पष्ट रूप से राधा वल्लभ सम्प्रदायी चतुर्भुज कवि की रचना है।''

चतुर्भुजदास के पदों से उनकी प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध होती है। उनमें शृंगार और भक्ति भावना की अच्छी छटा दिखलाई देती है। काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से भी उनके पद उत्तम हैं। उन्होंने अपने पदों में भगवान श्री कृष्ण के जन्म से लेकर गोपी - विरह तक की ब्रज लीलाओं का गायन किया है अतः उनका वर्ण्य विषय भी उनकी प्रामाणिकता सिद्ध करने को पर्याप्त है। अष्टछाप परिचय में बृहत् संख्या में प्रस्तुत १२ पदों को संग्रहीत किया है जिनकी बानगी यहां दी जा रही है-

झूलौ पालने गोविंद।
दधि-मथौ, नवनीत काढ़ौ, तुम कौं आनँद कंद।
कंठ कंठुला, ललित लटकन भ्रकुटि मन के फंद।
निरख छवि, छिन-छिन झुलाऊँ, गाऊँ लीला छंद।
द्वै दूध की दतियां, सुख की निधियाँ, हँसत जब कछु मंद।
'चतुर्भुज' प्रभु जननि वलि, गिरिधरन गोकुल चंद।।
मैया मोहिन माखन मिश्री भावै।
मीठौ दधि मधुघृत अपने कर क्यों नहिं मोहि खबावै।
कनक दोहिनी दै कैं मोकौं, गौ दोहन क्यों न सिखावै।
औट्यौ दूध धेनु धौरी कौ भरि कटोरा क्यों न प्यावै।
अज हूँ व्याह करत नहिं मेरौ, होय निसंक नीद क्यों भावै।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर की बतियाँ, लै उछंग पय पान करावै।।

उक्त दोनों पद 'बाल लीला' के पद हैं। ''झूलौ पालने गोविंद'' पद में जसोदा की स्नेहमयी आकांक्षा परिलक्षित है। दधि मथकर नवनीत खिलाने की हर माँ की इच्छा होती है। इन पदों का वर्ण्य विषय, शब्द विन्यास, शैली, साम्प्रदायिक स्थिति का निर्वाह सिद्ध करता है कि इनका सृजन अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास जी का ही है। उनके दान लीला के पदों में से भी एक दो पद यहाँ उदाहरण स्वरूप दिए जा रहे हैं-

कहो किनि लीनों दान दही कौ।
सदा सर्वदा बेचत इहि मग, है मारग नित ही कौ।
भाजन दही समेंत सीस तें, लेत छीन सब ही कौ।
ऐसौ कबहु सुन्यौ नहिं देख्यौ, नयौ न्याब अब ही कौ।
कमल नैन मुसक्याय मंद हँसि अंबर पकर्‌यौ जब ही कौ।
'दास चतुर्भुज प्रभु गिरिधर मन चोरि लियौ सब ही कौ।।

मटुकिया मेरी मोहन दीजे।
जो कछु दधि चाखन को चाही, तौ रंचक पात लै पीजे।
उन आए घन अटक भोर ही, बनत न नौतन सारी भीजै।
रंग बहैगों अवार मोहि है है, कहा कहैं हो जो घर कोऊ खीजै।
'चतुर्भुज' प्रभु हौं कालि आय हौं, साँची बात पतीजै।
गिरिधर लाल भयौ प्रगट दान तुव, आजु न हठ प्रभु कीजे।।

इन पदों में भी चतुर्भुजदास की छाप, ठेठ ब्रजभाषा और संस्कृत के शब्द और दान लीला का वर्णन, चतुर्भुजदास के पदों की प्रमाणिकता की सत्यता पर मुहर लगाता है। श्री कृष्णा की छवि का वर्णन, रूपासक्ति, रास रंग, प्रेमासक्ति विविध लीलाएँ, हिंडोला वर्णन, होली वर्णन, वसंतोत्सव, उत्सव सम्बन्धी तथा भक्ति की भावना के छंद अष्टछाप परिचय ग्रन्थ में दिए हैं। ये सभी पद कीर्तन के स्फुट पद हैं। इन पदों की सरसता अद्वितीय है। इन की सरस रचनाओं की प्रामाणिकता केलिए वार्ता साहित्य सर्वोपरि है। श्री प्रभुदयाल मीतल ने विभिन्न विद्वानों के साथ जो शोधपूर्ण सामग्री चतुर्भुजदास जी की कृतियों के सन्दर्भ में प्रस्तुत की है, वह प्रामाणिक धरोहर है।

श्री चतुर्भुजदास की कृतियों के सन्दर्भ में एक भ्रम आचार्य रामचन्द्र

शुक्ल कृत हिन्दी साहित्य का इतिहास है। उन्होंने उक्त ग्रन्थ में पृष्ठ २०० पर जो उल्लेख किया है वह इस प्रकार है-चतुर्भुजदास कुंभनदास जी के पुत्र थे और विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे वे भी-अष्टछाप के कवियों में हैं। उनकी भाषा चलती व सुव्यवस्थित हैं। इनके बनाए ग्रन्थ है-द्वादशयश, भक्ति प्रताप और हितजू कौ मंगल। इनके अतिरिक्त फुटकर पदों के संग्रह भी पाए जाते हैं उन्होंने एक छंद का भी उल्लेख किया है जो इस प्रकार है-

जसोदा कहा कहौं हौं बात।
तुम्हरे सुत के करतब मो पै कहत कहे नहिं जात।
भाजन फोरि, डारि सब गोरस ले माखन दधि खात।
जो बरजौ तौ आँख दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।
और अटपटी कहँ लौं वरनौं, छुवत पानि सौं गात।
दास चतुर्भुज गिरिधर सुन हौं कहत-कहत सकुचात।

श्री शुक्ल जी केवल तीन ग्रन्थों का जो उल्लेख किया है उनके पदों के कोई उदाहरण नहीं दिए है अतः उक्त तीनों ग्रन्थों की प्रामाणिकता सिद्ध नहीं होती अपितु भ्रम उत्पन्न करती है। यही बात डा. प्रभुदयाल जी मित्तल ने अपने अष्टछाप परिचय में स्पष्ट की है। श्री रामनारायण अग्रवाल ने भी यह साक्षात्कार में बताया कि 'हितजू का मंगल'' राधा वल्लभीय सम्प्रदाय का ग्रन्थ है जो राधावल्लभीय सम्प्रदाय के कवि चतुर्भुजदास की रचना है जो अष्टछाप के कवियों से भिन्न हैं- हिन्दी साहित्य में चतुर्भुजदास नाम के तीन चार कवियों का उल्लेख है। पर अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदासजी ने जो लीला गान किया है वह कीर्तन ग्रन्थों में ही उपलब्ध है। उनका कोई स्वतंत्र ग्रन्थ प्राप्त नहीं होता।

—पाण्डेय मोहल्ला, डीग (भरतपुर)

चतुर्भुजदास का प्रकृति-चित्रण

✍ डा. पुष्पा चौरसिया

जिसे हम 'प्रकृति' कहते हैं वह मूलतः मानवेतर सृष्टि है, किंतु दर्शन शास्त्र की दृष्टि से शरीर, मन, इन्द्रियाँ, बुद्धि, अहंकार आदि भी प्रकृति के अन्तर्भूत हैं। सांख्य दर्शन ने जिसे प्रकृति कहा है उसे ही वेदान्तियों ने माया कहा है। सांख्य वादी प्रकृति को सद् मानते हैं। वेदान्ती उसे सद्-असद् से विलक्षण मानते हैं। व्यापक अर्थों में महत् तत्व अहंकार और अहंकार से सोलह पदार्थ निष्पन्न हैं।

सांसारिक दृष्टि से 'प्रकृति' से आशय है मनुष्य से इतर जगत-इसमें पर्वत, वन, नदी, सूर्य, चन्द्र आकाश आदि सभी आ जाते हैं। प्रकृति या प्राकृतिक का एक अर्थ है स्वभाव या स्वाभाविक। ईश्वरीय कृतित्व को प्रकृति और मानवीय कृति को कला कहते हैं।

सृष्टि के अति प्राचीन काल से मनुष्य का हृदय प्रकृति के क्षण-क्षण, नव-नव रमणीय रूप-सौन्दर्य से अभिभूत होता रहा है।

प्रकृति ही अपनी कोख में जीव मात्र को धारण करती और पालन करतीहै। जन्म से मृत्यु तक मनुष्य प्रकृति के आँगन में ही साँस लेता है। आलम्बन रूप में प्रकृति मनुष्य को आकर्षित और प्रभावित करती है। प्रकृति के विभिन्न दृश्य आलम्बन के भावों को उद्दीप्त करने में सहायक होते हैं।

संसार के सभी पुराने कवियों ने प्रकृति के विराट् भयंकर और सुन्दर रूपों का विशद् वर्णन किया है। वे प्रकृति के प्रांगण में स्वच्छन्द विहार किया करते थे। उन्होंने प्रकृति का अत्यन्त निकट से सूक्ष्म निरीक्षण किया था। कालीदास, भवभूति, भास, जायसी, तुलसी आदि ने अत्यन्त निकट से देखने के कारण ही उसे अपने काव्यों का उपजीव्य बनाया है।

सामान्य रूप से 'प्रकृति-चित्रण के विविध रूपों' को आलम्बन, उद्दीपन और अलंकरण रूपों के ही अन्तर्गत समाहित किया जाता है। व्यापक दृष्टि से प्रकृति-चित्रण को हम निम्नलिखित विभागों के अन्तर्गत ले सकते हैं-

१. अलंकरण रूप-उपमान रूप में किया गया प्रकृति-चित्रण
२. वातववरण-निर्माण हेतु किया गया प्रकृति-चित्रण।
३. उद्दीपन रूप और विप्रलम्भ शृंगार-रूप में प्रकृति-चित्रण।

४. मनुष्य के सुख-दुख की अभिव्यक्ति के लिए किया गया प्रकृति-चित्रण।

५. उपदेश और नीति रूप में किया गया प्रकृति-चित्रण। और ६ -ईश्वर के वैभव तथा आध्यात्मिक अभिव्यक्ति वाला प्रकृति-चित्रण।

अष्टछाप के अन्य भक्त कवियों की भाँति चतुर्भुजदास की भावाभिव्यक्ति का मूल केन्द्र है-भगवान् कृष्ण और राधा की भक्ति तथा उनका लीलागान, और इस माध्यम से उनके पोषण या अनुग्रह की प्राप्ति। प्रकृति तो इन कवियों की भावाभिव्यंजनाओं में 'बाई प्रोडक्ट'•अथवा सहायिका के रूप में गृहीत की गई है। अन्य कवियों की भाँति चतुर्भुजदास ने भी इस माध्यम से उन्होंने अपने कत्थ्य के सौन्दर्य को अधिक मार्मिक और प्रभुविष्णु बनाया है। उन्होंने अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकारो के द्वारा अपने पदो में प्रायःतीन प्रकार के उपमानों का उपयोग किया है-

(१) रूढ़ि बद्ध या परम्परा प्राप्त उपमान।

(२) लोक के उपमान।

(३) मौलिक उपमान-(चतुर्भुजदास के पदों में मौलिक उपमान अत्यन्त कम मिलते हैं।)

चतुर्भुजदास ने भी घटना वर्णन और वातावरण चित्रण के लिए प्रकृति-वर्णन किया है। इस रूप में कवि के लिए साधन न रह कर साध्य बन गई है। ऐसे स्थलों पर कवि प्रकृति के प्रति आकृष्ट होता है, उसका सूक्ष्म निरीक्षण करता है और उसका संश्लिष्ट वर्णन करता है, उसमें प्रत्यक्ष दर्शन सदृश आनन्द मिलता है।

चतुर्भुजदास के पदों में शुद्ध प्रकृति-वर्णन बहुत कम मिलते हैं। यह सही है कि जब भी ब्रज और कृष्ण से सम्बद्ध वातावरण की विनिर्मिति के लिए वे प्रकृति-चित्रण करते हैं तब ब्रज की प्रकृति श्री का आलम्बनगत रूप मुखर हो उठता है। ब्रज-बीथियाँ, कुंजें, लताएँ, तमाल वृक्ष, यमुना, यमुना-तट शरद चाँदनी, शीतल छाया, नीला आकाश आदि का आलम्बनगत वैभवमय वातावरण निर्मित हो उठता है।

वस्तुतः चतुर्भुजदास मूलतः एक महान् कृष्ण भक्त थे। उनके जीवन से सम्बद्ध दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता (तीन)अष्ट सखान की वार्ता' (सात) 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम', श्री कण्ठमणि शास्त्री, दीनदयाल गुप्त ,'अष्टछाप (डा. धीरेन्द्र वर्मा) प्रभृति ग्रन्थों और विद्वानों के जो भी तथ्य उपस्थित हैं उन्हें

दृष्टि-पथ में रखते हुए हम कह सकते हैं कि उनके पदों का एक-एक शब्द भगवद्भक्ति और लीला गान से प्लावित है। जहाँ तक प्रकृति-चित्रण का प्रश्न है वह उनके पदों में आनुषंगिकतः स्वाभाविक रूप में अनुस्यूत है। आलम्बन, उद्दीपन, अलंकरण आदि प्रकृति-चित्रण के जो भी अंग हैं वे सब उनके पदों में आरोपित नहीं हैं-पदों की धारावाहिकता में प्रकृति-चित्रण के ये सभी रूप समाविष्ट हैं-कहीं प्रथक् रूप में और कहीं अंगीभूत रूप में।

प्रकृति-चित्रण में प्रकृति स्वभाव और रूप-चित्रण (प्रकृत, स्वभाव, स्वाभाविक) रूप में भी आती है। गोविन्द पालने में झूलते हैं। उस समय की उनकी प्रकृत, स्वाभाविक छटा आत्यन्तिक रूप में ललित-ललाम हैः-

'झूलौ पालने गोविन्द।
दधि मथौ', नवनीत काढ़ौ, तुमकों आनन्द कंद।।
कंठ कठुला, ललित लटकन, भ्रकुटि मन के फंद।
निरखि छवि छिन-छिन झुलाऊँ गाऊँ लीला छंद।।
द्वै दूध की दतियाँ, सुख की निधियाँ, हँसत जब कछू मंद।
'चतुर्भुज' प्रभु जननी बलि, गिरिधरन गोकुल चंद।।'

परम रूपराशि अमृतमय गोकुल के चन्द्रमा की प्रकृति वाले श्रीकृष्ण का यह अलंकरण रूप प्रकृति की सुषमा को और अधिक संवर्द्धित करने वाला है।

श्रीकृष्ण के मुख -मण्डल को देखकर उडपति भी लजा जाता है-''निरखि बदन उडपति जिय लाजैं।''

उनके सुभग कपोल नाक बिम्बाधर सदृश हैं-'सुभग कपोल नाक बिम्बाधर।'

ब्रज के जन प्रकृत भाव से ठगे से ठाड़े रहते हैं-

'चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन लाल को ब्रज जन निरखि ठाढ़े ठग-ठग।'

श्रीकृष्ण सो रहे हैं, गोपियाँ जगा रही हैं। वे कहती है-'जागो गोपाल लाल दोहौ धौरी गैयाँ,

भोर भयो,खग, तमचुर बोलै-' अपनौ अपनौ दह्यो बिलौवैं।'

'या मुख छवि पर बलि गई महतारी।' गोपियों, महतारी यशोदा और कृष्ण की यह प्रकृति छवि किस सुधी जन का मोहित नहीं कर लेगी ?

श्रीकृष्ण की 'अरोगत' स्थिति में प्रकृति का उद्दीपन रूप प्रबल रूप में मुखर हो उठा है-चारों दिशाओं से घनघोर घटाएँ उमड-घुमड कर आ गई हैं, बूंद बरसाने लगी हैं, विद्युत की कौंध और पवन के झकोरे झंकृत कर रहे हैं,

भगवान् कृष्ण ऐसी उद्दीपन की स्थिति में सघन कुंज की ओर राधा को लेकर भागे। कृष्ण को केन्द्र में रख कर बाल-लीला दान-लीला, रूपासक्ति, रासरंग, हिंडोला वर्णन, होली वर्णन व वसन्तोत्सव आदि के पदों में चतुर्भुजदास ने प्रकृति के एक से एक अनूठे आलम्बन, उद्दीपन और अलंकरण के दृश्यों-चल और अचल बिम्बों को उपस्थित किया है। ऐसे स्थलों पर स्पष्ट होता है कि सांकेतिकता और बिम्ब-प्रस्तुतिकरण में चतुर्भुजदास कालिदास के समान उपस्थित हैं-

'' मार्गच्चलावति कराकुलितेव सिन्धु-शैलाधिराज तनया न ययौ न तस्यौ।'' (कुमार सम्भवम्)।

प्रकृति-चित्रण के ऐसे सन्दर्भ अपनी समस्त बिम्बग्रहणता के साथ चतुर्भुजदास के पदों में उपस्थित हैं। उदाहरण स्वरूप एक पद पर्याप्त है-'जागो गोपाल लाल दोहौं धौरी गैंया, सद्य दूध मथि पीवो धैया

भोर भयो खग तमचुर बोलें। घर - घर गोपर द्वार सब खोलें।।
गोपी रई, मथनीयाँ धोवें। अपनौ - अपनौ दह्यो बिलोवें।।
सकल सखा बुलावन आवें। कृष्ण नाम लै-लै मंगल गावें।।
भूषन-बसन पलटि पहिराऊँ। चन्दन तिलक ललाट बनाऊँ।।
'चतुर्भुज' प्रभु श्री गोवर्द्धन धारी। या मुख छबि बलि गई महतारी'।।

कमल, सारंग, चन्द्रमा, सूर्य प्रभृति उपमान रूप चतुर्भुजदास ने श्री कृष्णं के सौन्दर्य-वर्णन में प्रयुक्त किये हैं। यह उनके बाललीला और दानलीला के पदों में द्रष्टव्य है-गिरिधर लाल की आरती सांगीतिक गरिमा के साथ ही प्राकृतिक छटा से आप्लुत है-''घननन घन, घटा घोर, झननन झालर टंकोर,

तननन तत थेई थेई , करत हैं एक दाई। ''

श्यामा और श्याम की छवि का वर्णन करते हुए उन्होंने प्रकृति के अलंकरणगत सौन्दर्य की पराकाष्ठा कर दी है-'भूषन रहे ठाँव-ठाँवहिं फबि, अंग-अंग अद्‌भुत चितहिं चुरावैं आदि। श्याम के नय भ्रमर हैं और वे गटक कर श्यामा का रूप रसपान कर रहे हैं-

'स्याम सरोज नैन तेरे षटपद, पियौ रूप-रस गटक।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर नागर सौं, लेते हैं रति रन झटक।

साँवरे गोपाल के सौन्दर्य-अंकन में चतुर्भुजदास ने आलम्बन और उद्दीपनगत प्रकृति का सुन्दर गंगा-जमुनी रूप प्रस्तुत किया है-''आजु को सिंगार सुभग साँवरे गोपाल कौ, कहति न आवे, देखै ही बनि आवे,

आजु अरूण नैनन की छवि नीकी।

रति रस रंग निरखि उपमा कों, कोटि मदन दुति फीकी।।'

कृष्ण के दर्शन में भोर का तमचोर आता है और भी अनेक प्रकृति-गृहित उपमान रूप आते ही रहते हैं। चतुर्भुजदास कहते हैं कि -'हे, श्याम, तुम्हारी कंचुकी, लहँगा, रंगमयी सारी की उपमा कौन सी दी जाय। चिबुक-बिन्दु बर नैन, सुअंजन चतुरों का मन मोह लेता है (चतुरो कला दक्षः)। हे सखी, आज मैंने गोपाल का मुख-अरविन्द देखा। वह सुख-समुद्र की शोभा थी'। श्याम कमल-दल लोचन हैं। उनकी शोभा अपार सिंधु है। उनकी चाल गयन्द-सरिस है-

'सुन्दर स्याम कमल दल लोचन सोभा सिंधु अपार।..................चलत गयन्द सुढार।

प्रकृति-चित्रण के जो तीन विशिष्ट प्रकार (आलम्बन, उद्दीपन एवं अलंकरण) बताए गए हैं। उनके एकमेवस्य रूपांकन और बिम्बांकन का सहज रूप निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य हैः-

''कहावत जो गोकुल गोपाल।

ते मैं आजु दृष्टि भर देखे, चलत डगमगी चाल।।

पहुनाई हौं करन गई ही, सजन हेत प्रतिपाल।

औचक ही मिलि गये नन्द-सुत, अंग-अंग रूप रसाल।।

तन घनस्याम पीत-तट ओढ़े, उर राजत बन-माल।

सीस मुकुट-मुरली कर लीनें, चितवनि नैन विसाल।।

'चतुर्भुजदास' रासि सब सुख की, सोभा भ्रकुटी भाल।

तन बिसर्‌यो, मन हर्‌यो मनोहर गोबरधन-धर लाल।।''

उपर्युक्त पद में भगवान् श्री कृष्ण की सौन्दर्य-राशि का प्रकृति-चित्रण किसी भी प्रकृति-चित्रण से बीस है उन्नीस नहीं। चतुर्भुजदास जब भी रूपासक्ति का अंकन करते हैं तो 'नयन कुरंगी', नवनिधि वारे' का उल्लेख करना नहीं भूलते। जब कृष्ण के नैनों की कोर राधा को निहारती है तो चतुर्भुजदास को बरबस कहना पड़ता है कि-हे सखि, कमल, मीन, खंजन की उपमा नहीं दी जा सकती, अँखियाँतो चकोर हो गई है :-

'कमल मीन मृग खंजन की सखि दै न सकी उपमा कहु जोर।

'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर मुख विधुए अँखियाँ भई चकोर।'

रारा के सन्दर्भ में अष्टछापीय भक्तों ने प्रकृति-चित्रण के उद्दीपन-रूप

को अधिक महत्त्व दिया है। आलम्बन तो श्री कृष्ण हैं, उनकी छबि है। उद्दीपन रूप में शरद-चन्द्र हैं, चाँदनी है, प्यारियाँ हैं, उनकी रूप राशियाँ हैं मुरली की ध्वनियाँ हैं, गान, तान, नृत्य हैं, खग-मृग सब थकित हैः-

''प्यारी भुज ग्रीवा मेलि, नृत्यत पीय सुजान।
मुदित परस्पर, लेत गति में सुगति,
रूप-रासि राधे, गिरिधरन गुन-निधान।
सरस मुरली-धुनि सों मिले सप्त सुर
रास रंग भीने गावैं और तान बंधान।
'चतुर्भुज' प्रभु स्याम-स्यामा की नटनि देखि,
मोहे खग, मृग अरू थकित व्योम विमान।''

रास लीला के उपर्युक्त पद की अंतिम दो पंक्तियों में-स्याम-स्यामा की नटनि देखि, मोहे खग मृग अरु थकित व्योम विमान' की प्रकृति-बिम्ब मूलक, चित्रात्मकता और व्यंजकता अपूर्व बन पड़ी हैं।

आलम्बनगत प्रकृति-चित्रण का एक उदाहरण निम्न लिखित पद में बड़े ही भक्ति-विह्वल रूप में उरेहित है।

''ठाँ ही ठाँ नाचत मोर, सुनि-सुनि नव वन की घोर,
बोलत हैं और अति ही सुहावने।
घुमड़न की घटा निहारि, आगम सुख जिय बिचारि,
चातक पिक मुदित गावत द्रुमनि बैठि सुहावने।''

भगवान् कृष्ण के रास-रंग में मयूर नृत्यरत हैं, अति सुहावने बोल बोल रहे हैं, घटा की घुमड़न को निरख-निराख कर आगम सुख को विचार-विचार कर चातक और पिक प्रमुदित मन से सुहाने द्रुमों पर बैठ कर गा रहे हैं। पावस ऋतु का रंग उसमें चार चाँद लगा रहा है। प्रकृति-चित्रण का एक परम सुहावन रूप निम्नलिखित पद में परम मनोहर रूप में दर्शनीय हैः-

'सावन तीज' हरियारी सुहाई माई, रिमझिम-रिमझिम बरसत मेह भारी।

चुनरी की पाग बनी चुनरी पिछौरा कटि, चुनरी चोली बनी चुनरी की सारी।

दादुर मोर पपैया बोलत कोयल सब्द करत किलकारी।
गरजत गगन दामिनी दमकत, गावत मलार तान लेत न्यारी।
कुंज महल में बैठे दोऊ, करत विलास भरत अंकवारी।

'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर कवि निरखत , तन मन धन न्यौछावर वारी।

सावन महीने की सुहावनी तीज, रिमझिम-रिमझिम वर्षा, दादुर, मोर पपीहे की बोली, कोयल की किलकारी, बादल का गरजना, दामिनि का दमकना और कुंज महल में बैठकर श्यामा श्याम का परस्पर अंकवारी में भरना, विलास करना आदि ऐसे प्रकृति-चित्र हैं जिनमें आलम्बन और उद्दीपन एक दूसरे में समाविष्ट हो गए हैं। प्रकृति श्यामा-श्याम मिलन में उद्दीपन का संचार करती है।

'हे श्याम, सुनो। मेघ आगए। मेरी सुरंग चुनरी भीजेगी इसलिए आप पीत पट की ओट दे दें। हे मोहन मैं बिजली से डर रही हूँ। अपने शरीर को मेरे निकट कर दो। चतुर्भुजदास कहते हैं कि श्यामा-श्याम में परस्पर स्नेह संवर्द्धित हो गया :-

''श्याम। सुन नियरौ आयौ मेहु।
भीजेगी मेरी सुरंग चूनरी, ओट पीत पट देहु।।
दामिनी ते डरपति हौं मोहन, निकट आपुनौ देहु।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सौं, बाढ़्यौ अधिक सनेहु।।''

राधा तो सदैव चाहती है कि प्रकृति के सभी खग, मृग, पशु, कुलवधुएँ, देव, मुनि सब की गति श्याम बिसरादें,-यहाँ प्रकृति के माध्यम से श्यामा अपनी गति को भुला देना चाहती है जैसे-'ब्याध मृग को बेध देता है वैसे ही मोहन ने श्यामा के मन को बेध दिया है। ब्याध की भ्रकुटि के समान अपनी कमान से, जैसे ब्याध अपनी तान से, मृग को मोहित कर लेता है वैसे ही मुरली के स्वरों से मोहन ने हमें बाँध दिया है, पश्चात् मधुर बंक चितवनि से उन्होंने घात की, इन तन की पीर अन्य औषधि से नहीं मिटेगी। यह तभी मिटेगी जब गिरिधर सुजान उर-अन्तर में आकर सुखी करेंगे।'

''मन मृग बेध्यौ मोहन नैन बान सों।
गुप्त भाव की सैन अचानक, तकि तान्यौ भ्रकुटि कमान सों।।
'चतुर्भुजदास' पीर या तन की, मिटत न औषधि आन सों।''
है है सुख जब हो उर अन्तर, आलिंगन गिरिधर सुजान सों।

उपर्युक्त पद में मृग, ब्याध, मोहन, नाद, बंक चितवन आदि के माध्यम से एक ओर सांसारिक प्रकृति और दूसरी ओर सामानान्तरत : राधा की प्रीति का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया गया है।

राधा मोहन के मुख-चन्द्र का पान करना चाहती है। यहाँ 'बदन चन्द्र

कौ मुख' का रूपक प्रकृति गत अलंकरण विधान के अन्तर्गत आता है-'बदन चन्द कौ रूप, मम लोचन कियौ चाहत पाना

राधा गा रही है-कोकिला ने मुख बंद कर लिया है। कृष्ण गा रहे हैं। खग नयन मूँद लेते हैं। यहाँ एक प्रकार से आलम्बन और उद्दीपन दोनों का समभाव सुन्दर रूप में प्रभावापन्न और रमणीय बन पड़ा है।

हिंडोला वर्णन के अर्न्तगत चतुर्भुजदास ने प्रकृति के तत्वों का बड़ा सुन्दर आनयन किया हैं। दामिनि दमक रही है, बादल गरज रहे हैं, भामिनियाँ मंगल गा रही हैं, श्यामा-श्याम झूल रहे हैं-'गरज-गरज दामिनी दिमकत, राग मलार जमाए।'

इसी प्रकार एक अन्य पद में राधा-माधव झूला झूल रहे हैं। प्रकृति के उपकरण मयूर, पपीहा बोल रहे हैं, नन्हीं-नन्हीं सुहानी बूंदें बरस रही हैं, सुखदायी हवा चल रही है :-

'दादुर मोर, पपैया बोलत, न्हैनी बूंद सुहाई। '

यहाँ प्रकृति का उद्दीपन गत रूप द्रष्टव्य है। राधा सोलह सिंगार मण्डिता होकर झूलने आई है, उसका नील पट फहरा रहा है, मोहन का पीत पट भी फहरा रहा है। ऐसा लगता है मानो घन और दामिनी जुड़ आई हैं। यहाँ भी हिन्डोला झूलने के माध्यम से प्रकृति का उद्दीपन गत चित्रण सुन्दर बन पड़ा है :-

'नील पीत पट मिलि फहरत हैं, घन दामिनी जुर आई हो।'

इस पद में चतुर्भुजदास ने संयोगावस्था के झूलन वर्णन में राधा-माधव के हृदयों में प्रकृति के माध्यम से उद्दीपना का संचार किया है और अगली पंक्ति में उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग करते हुए उन्होंने परम्परा प्रथित और मौलिक अलंकृति प्रस्तुत की है :-

'मानहुँ तरुन तमाल मिलन कौं, अंग-अंग मुरझाई हो।
गौर-स्याम मरकत-तन परसत, कनक-बेलि छबि पाई हो।'

यह 'कनक बेलि छवि' की उत्प्रेक्षा चतुर्भुजदास की प्रकृति योजना का एक अत्यन्त सुन्दर नमूना है।

आलम्बन और उद्दीपन गत प्रकृति चित्रण का एक अद्भुत संगमित रूप निम्नलिखित पद में द्रष्टव्य है:-

''ब्रज पर उनई आजु घटा।
नई-नई बूंद सुहावनी लागति, चमकति बिज्जु छटा।
गरजत गगन मृदंग बजावत, नाचत मोर नटा।

गावत ही सुर देत चातक-पिक, प्रगट्यो मदन-घटा।

सब मिलि भेंट देत नंद लालैं, बैठे ऊँचे अटा।

'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल सिर, कसूंभी पीत पटा।

ब्रज में आज घन-घटा उनई है, नई-नई बूंदें सुहानी लगती हैं, बिजली (की छटा) चमक रही है, गगन, गरज रहा है, मानों मृदंग बजा रहा है, मोर नर्तित है, चातक और पिक स्वर दे रहे हैं-यह मौलिक प्रकृति-चित्रण चतुर्भुजदास ने ही प्रस्तुत किया है।

होली-वर्णन के सन्दर्भ में चतुर्भुजदास-'बाल वृन्द स्याम घन सोभित,' 'शीश चन्द्रिका मोर' और युवतियों के सौन्दर्य का चित्रण करते हुए, उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग करते हुए कहते हैं कि-मानों प्रेम-समुद्र अधिक बल, उमगि चल्यौ मति फेर।'

एक अन्य पद में भी उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग करते हुए वे कहते हैं-'मानों सरद-चन्द्रमा प्रगट्यौ, ब्रज-मण्डल तिमिर नसावै। वसन्तोत्सव के सन्दर्भ में कृष्ण मौर-मंजरी धारण करके शोभित हैं। नई नागरियाँ हैं, नवल वसन्त है, चोवा, चन्दन, अगर, कुमकुमा, मनोहर पुष्पांजलि, आँचल पद से बदन ढँकना; एक अन्य पद में फूलों की मनोहर मण्डली और वहाँ बैठे हैं श्याम-श्यामा फूलों के परम रुचिकारी भवन में बैठे हैं, फूलों के खम्भे, फूलों की चौखण्डी, फूलों की झूमिका, फूलों के झरोखा, फूलों के छज्जे, चारों ओर फूलों के कंगूरे, फूलों के वन्दनवार, फूलों के कलश, फूलों से रची चित्रसारी, फूलों की सेज, गण्डुवा तरिया,फूलों की मालाएँ-चतुर्भुजदास कहते हैं कि -प्रभु राधा-उर के फूल हैं और गोवर्धन धारी रस फूले हैं':-

'चतुर्भुज प्रभु फूल राधा-उर, रस फूले श्री गोवर्धन-धारी।'

यहाँ फूलों को दृष्टि में रखते हुए चतुर्भुजदास ने अत्यन्त मनोहर उद्दीपनगत प्रकृति-चित्रण किया है।

चतुर्भुजदास के पदों में अभिव्यक्त प्रकृति प्राय : उद्दीपना का संचार करती हुई प्रकट होती है। पावस वर्णन के सन्दर्भ में वे कहते हैं कि-नव घन की घोर सुन-सुन कर ठाँव-ठाँव मोर नाचते हैं, चातक और पिक द्रुमों पर बैठ कर घुमड़ती घटा को देख कर मुदित मन गाते हैं और यह सब श्याम-सुन्दर और राधारानी के ही बहाने चित्रित है:-

'श्याम सुन्दर सुभग ओढ़े बसन पीत सुहावने।'

अलंकंरणगत प्रकृति-चित्रण में उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकारों की बड़ी

सुन्दर योजना चतुर्भुजदास ने की है-यथा

''दास चतुर्भुज दंपति उपमा कहँ नाहिन औरु
काम-मूरति कमल-लोचन , मृगनयनी कामिनी।'
'नील पीत पट फहरात है, मन दामिनि दुरि जावै हो
मनहुँ तरुन तमाल मल्लिका, अंग-अंग अरुझावे हो
गौर-स्याम छवि मरकतमनि पर कनक-बेलि लपटावे हो।'''

वर्षा ऋतु सुहानी है, सावन मास की थोड़ी-थोड़ी फुहार और वैसी ही हरित भूमि-'नव घन,नव बन, नव पिक-चातक, नवल कुसुम्भी सारी' और नवल किशोर के वाम अंग में-'सोभित नव वृष भानु दुलारी।'

वृन्दावन की सुषमा देखने ही योग्य हैं-'इधर मोहन की मधुर मुरली है उधर नवघन की गरज है, उधर श्याम बादर है इधर श्याम तन कृष्ण हैं, उधर बग पाँति है इधर मुक्ताहार है, उधर इन्द्रधनुष है तो इधर रूचिर बन माल है, उधर चपला चमकती है तो इधर पीतपट फहराता है, उधर बूंदें द्रुम-बेलि को सींचती हैं तो इधर मन का प्रेम-नीर है।' यहाँ भी प्रकृति श्याम-श्यामा के मिलन-सुख में उद्दीपना का ही संचार करती है।

उद्दीपन गत प्रकृति-चित्रण के एक अत्यन्त सुंदर पद के निम्नलिखित अंश अति प्रभविष्णु और मनोरम बन पड़े है :-

''जमुना के तीर बजाई बाँसुरी नंदलाल री।
अधर-करन मिलि सप्त सुरन सौं. उपजत राग रसाल री।।
बहत न नीर समीर न डोलत, वृंदा विपिन संकेत।
सुनि थावर अचेत चेत भए, जंगम भए अचेत री।''
'अफल फले फल फूल भए री, जरे हरे भए पात।'
'तृन न चरत हैं मृगा-मृगी री, तान परी जब कान।
सुनत गान गिरि पर्यो धरनि पर मानों लागे बानरी।''

अभी तक काँकरोली, मथुरा आदि से प्रकाशित चतुर्भुजदास के जो पद प्राप्त हैं उनके आधार पर संक्षेप्त में हम कह सकते हैं कि चतुर्भुजदास का मूल प्रतिपाद्य भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान था। इस महान भक्त कवि के पदों में भक्ति ही प्रधान है। ब्रजमण्डल की प्रकृति श्री अपनी पूरी वैभववन्तता के साथ सहचरी रही है और उसका उद्दीपनगत रूप ही प्रमुख रहा है।

–'चन्द्रालय'११, वराह मिहिर मार्ग
उज्जैन (म.प्र.)

श्री चतुर्भुजदासजीके पदों में प्रकृति-वर्णन

✍ भगवान 'मकरन्द'

अष्टछाप के परम भगवद्भक्त व लीलारस अनुभूति के दिव्य प्रतीक श्री चतुर्भुजदास महान कीर्तनकार थे। अष्टछाप के कवियों में से महाप्रभु जी के प्रथम सेवक श्री कुम्भनदास जी के पुत्र होने के कारण प्रभु की लीलाओं एवं चरणारविन्दों में अविरल अनुरक्ति इन्हें विरासत में मिली थी। इनके द्वारा रचित पद भावात्मक एवं कलात्मक रूप से अत्यन्त समृद्ध हैं तथा कीर्तन साहित्य के अद्वितीय उदाहरण हैं। प्रस्तुत आलेख में हम श्री चतुर्भुजदास के पदों में किए गये प्रकृति वर्णन का विवेचन करेंगे।

साहित्य में प्रकृति वर्णन आदि–काल से ही पाया जाता है। विश्व के रचनाकारों में शायद ही ऐसा कोई रचनाकार हो जिसने अपनी कृतियों में प्रकृति वर्णन की पूर्णतः उपेक्षा की हो। प्रकृतिवादी विचारधारा के अनुसार देखें तो संसार में प्रकृति से परे कोई वस्तु नहीं है परन्तु सामान्य रूप से प्रचलित मान्यता के अनुसार देखें तो प्रकृति वर्णन साहित्य में मुख्यतः निम्नांकित स्वरूपों में पाया जाता है।

१. प्रकृति के उपादानों का उपमान के रूप में प्रयोग,
२. किसी रस की सर्जना में उद्दीपक के रूप में,
३. मानवीकरण के रूप में वर्णन,
४. प्रकृतिका किसी अन्य उत्प्रेरक के माध्यम से उद्वेलित होने के रूप में,
५. रस परिपाक या रस परिपुष्टि हेतु प्रकृति चित्रण,
६. काव्य सौष्ठव हेतु अलंकारिक रूप से वर्णन आदि।

श्री चतुर्भुजदास के पदों में पाया जाने वाला प्रकृति वर्णन अद्वितीय है। उनके पदों में उनके आराध्य देव भगवान श्री कृष्णचन्द्र की मुरली की तान में उस रस माधुर्य की अनुभूति होती है जो प्रकृति में उद्वेलन उत्पन्न कर देती है। नन्दलाल जब यमुना के तीर पर बाँसुरी बजाते हैं तो प्रकृति के जड़ व चेतन सभी स्वरूप इतने उद्वेलित हो उठते हैं कि वे प्रकृति के शाश्वत नित्यक्रम को त्यागकर विपरीत व अप्राकृतिक व्यवहार करने लग पड़ते हैं। अधिकांशतः प्रकृति अन्य को उद्वेलित करने का कार्य करते हुए पाई जाती है परन्तु प्रकृति के स्वयं के उद्वेलित होने का उदाहरण विलक्षण परिस्थितियों में ही परिलक्षित होता है। भगवान की मुरली की तान के अलौकिक रस–सिंधु में प्रकृति इतनी अभिभूत हो जाती है कि पानी, बहना

त्याग देता है। हवा, चलना बन्द कर देती है। सूख पत्ते भी हरे हो जाते हैं तथा फल–फूल खिलने लग जाते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप निम्न पद द्रष्टव्य हैं।

नन्दलाल बजाई बाँसुरी श्री यमुनाजी के तीर री।
बहत न नीर समीर न डोलत वृन्दाविपिन संकेत री।।
सुनि थावर अचेत चेतभये जंगम भये अचेत री।
अफल फले फल फूल भये री जरे हरे भये पात री।।
उमग प्रेम जल चल्यौ सिखर ते गरे गिरिन के गात री।
तृण न चख मृगा-मृगी दोउ तान परी जब कान री।।
भेक भुजंग फण चढ़ि बैठे निरखत श्री मुखचार री।
खग रसना रस चारव बदन नयन मूँद मौन धार री।।

इसी तरह से प्रकृति को प्रभावित करने में भगवान रास–रासेश्वर श्रीकृष्ण के रासमण्डल में मालव राग के गायन को हेतु बताया गया है। यहाँ श्री चतुर्भुजदासजी पद में वर्णन करते हैं कि भगवान के रासमण्डल में मालवराग गाने से प्रकृति की दैनिक गति में विराम आ गया। चन्द्रमा ने थककर अपनी गति को विस्मृत कर दिया और प्रभु की राग रस मोहिनी में बँधकर एक स्थान पर ही रुक गया। खग, नग, मृग सभी मोहित हो गए। यह पद देखने योग्य है।

मदन गोपाल रासमण्डल में, मालव राग रस भर्‌यौ गावै ।
थक्यौ चन्द्र मोहे खग, नग, मृग, प्रतिक्षण अमित अनागति लावै।।

श्री चतुर्भुजदास जी ने अपने पदों में प्रकृति का मानवीकरण करके भी उसे चित्रित किया है। साहित्य में प्रकृति के साथ मानव के समान व्यवहार करते हुए उसे मानवीय क्रियाओं के तुल्य क्रिया करते हुए देखने की कल्पना कई स्थानों पर मिलती है। चतुर्भुजदास जी ने शरद की रैन, यमुना पुलिन व कुंज का वर्णन मानवी रूप में किया है।

पिय सनमुख गवनत गज गामिनी।
यमुना पुलिन सुभग वृन्दावन तैसीय सुभग शरद की जामिनी।।
कुंज कुंज प्रफुलित द्रुम बेली देखत प्रेम मन भर भामिनी।

प्रकृति के विभिन्न उपादानों से उपमान प्रस्तुत करके भी काव्य का कलात्मक व भावात्मक पक्ष परिपुष्ट किया जाता है। चतुर्भुजदास जी ने प्रकृति के उपादानों से भगवान श्यामसुन्दर के श्री अंगों के उपमान प्रस्तुत कर बेजोड़ कलात्मकता का परिचय दिया है। कई स्थानों पर प्रकृति को विभिन्न उपमानों के साथ सादृश्य मूलक अलंकार के रूप में प्रस्तुत किया गया है। प्रकृति के

उपमानों व अपने भगवान के सुन्दर स्वरूप में सादृश्यता प्रदर्शित कर अलंकारिता का उदाहरण प्रस्तुत किया है –

गोरज राज़त साँवल अंग।
अंबुज बदन नयन युग खंजन क्रीड़त अपने रंग।।
कुंचित केश सुदेश मानों अलि शोभित ये संग प्रसंग।
अपने बाल गोपालै रानी जू पालने झुलावै।
सादर कुमुद चकोर चंद ज्यों रूप सुधारस प्यावै।।

एक अन्य पद में चतुर्भुजदासजी ने श्यामसुन्दर के एक एक अंग के रूप की तुल्यता वर्षा ऋतु के प्रकृति के विभिन्न उपादानों से की है। इस पद में सांग रूपक अथवा सावयव रूपक में उपमेय व उपमान का आरोप तो होता ही है साथ ही उसके सहचर अंगों का भी उपमेय के अंगों पर आरोप दिखाई देता है। इस सांगरुपक तुल्यता में भगवान के श्याम अंग की तुलना काले बादलो से तथा ह्रदय में सुसज्जित वनमाल की तुलना इन्द्रधनुष से की है। पीताम्बर के लहराने को चपला दामिनी के दमकने के रूप में देखा गया है नवघन गर्जन की सादृश्यता मोहन के मुख से उत्पन्न मुरली के माधुर्य से की गई है। प्रभु के अंग प्रत्यंग व क्रियाओं की ऐसी श्रैष्ठ तुल्यता व सादृश्यता अन्य कही नहीं देखी जा सकती।

सखी री देख शोभा वन की।
इत मोहन मधुर मुख मुरली उत गरजन नवघन की
उतही श्याम बादर सोहत इत राजत सामल तन की
इत ही रुचिर बनमाल बनी उर उतही रहेन इन्द्रधनु की
उत दामिनी चपला चमकत इत फरकनि पीत वसन की
उत बुंदे द्रुमबेली सींचत इत प्रेम नीर बरखन की

प्रकृति जब अपने रूप सौन्दर्य से, क्रियाओं से जगत को प्रभावित करती हुई चित्रित की जाती है तो उसे प्रकृति–उद्दीपक के रूप में वर्णन कहा जाता है। चतुर्भुजदास जी के एक पद में नवघन की घोर सुनकर उससे उद्दीपित होकर जगह जगह पर मोरों के नाचने और बोलने का वर्णन बड़े ही सुन्दर तरीके से किया गया है। उमड़ती घुमड़ती हुई घटाओं को देखकर पेड़ों पर बैठे चातक पिंक प्रेम मुदित होकर गा उठते है। मल्हार के पदों में से प्रकृति का उद्दीपक के रूप में अन्य को प्रभावित करने का एक सजीव चित्रण प्रस्तुत करने योग्य है–

ठाँय ठाँय नाचत मोर सुन सुन नवघन की घोर बोलत हैं
चहुओर अति ही सुहावने।
घुमड़त घन घटा निहार आगम सुख जाय विचार चातक पिक मुदित गावत
द्रुमन बैठे सुहावने।।

श्री चतुर्भुजदास जी ने उपमेय को उपमान से भिन्न मानते हुए भी उपमेय में उपमान की प्रकृति मूलक बलपूर्वक सम्भावना व्यक्त की हैं। इस तरह इन्होंने प्रकृति को उत्प्रेक्षा के रूप में चित्रित किया है। हृदय पर विराजित लटों की बलपूर्वक सम्भावना कनकलता से उतर कर सर्पों द्वारा कनक घट से अमृत पान करने के प्रकृति मूलक उपमान से की गई है यहाँ यह उदाहरण अत्यन्त सुन्दर है। –

सहज उरज पर छूट रही लट
कनक लता ते उतर भुजंगनि अमृतपान मानों करति कनक घट

चतुर्भुजदास जी ने भगवान रास–रासेश्वर कृष्ण की कुंज भवन की विभिन्न लीलाओं में प्रकृति को सहचरी व सेविका के रूप में प्रस्तुत किया है। जब भगवान कुंज भवन में विराजित हैं तब प्रकृति अपने विविध स्वरूपों से भगवान को सुख देने वाली सेवाओं में रत है। वह अनेक तरह से ऐसी क्रियाऐं करती है ताकि प्रभु को कोई कष्ट न हो तथा प्रभु के लीलास्थल की अद्भुत शोभा में प्रकृति अपने विभिन्न स्वरूपों से चार चाँद लगाकर उसे अप्रतिम सौन्दर्य प्रदान करने का कार्य करती है। यहाँ यह उदाहरण द्रष्टव्य है –

१. **त्रिविध पवन संचरे सुखद झरणा झरे ललित सौरभ सरस मधुप भ्राजे।**
ललित तरु फूल फूलित खट ऋतु सदा चत्रभुजदास गिरधर समाजे।।

२. **बैठे लाल फूलन की चौखण्डी।**
चंपक बकुल गुलाब निवारौ रायवेलि श्री खण्डी।।
जाई जुई केवरो कुंजोकनक कठोर सुरंगी।

श्री चतुर्भुजदास जी का कीर्तन साहित्य कलात्मक सौष्ठव के साथ–साथ भगवद्भक्ति के रस–सिन्धु में आप्लावित करने वाला है। उनके प्रत्येक पद कला एवं भाव पक्ष के अनुपम उदाहरण हैं। उनके पदों में भगवान से उनके जिस निकटस्थ साहचर्य के दर्शन होते हैं वह इतना दिव्य एवं सरस है कि एक एक पद की रसधारा में अवगाहन करते हुए मन नहीं थकता है। वल्लभ सम्प्रदाय व प्रकृति का अटूट सम्बन्ध है। पुष्टिमार्ग में प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों को अवतार के रूप में स्थापित किया गया है। पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक महाप्रभुजी की चौरासी बैठकें उनके प्रकृति प्रेम को प्रदर्शित करती हैं। भगवान कृष्ण की सम्पूर्ण लीलास्थलियाँ प्रकृति की गोद में ही हैं। अतः पुष्टि साहित्य में प्रकृति वर्णन अनेक स्थानों पर अप्रतिम सौन्दर्य लिए हुए मिलता है।

–कीर्तनियाँ निवास,
गोविन्द मौहल्ला, कामां

अष्टछाप के कवि श्री चतुर्भुजदास के काव्य में विभिन्न कलाओं का चित्रण

✍ चिरंजीवलाल शर्मा 'कलाकार'

पद रच कीर्तन गान कर, निखरे बारम्बार।
कुम्भनदास सुत 'चतुर्भुज', जाना-जग निस्सार।।
दस वर्ष अल्प आयु में, बन सखा अष्टछाप।
जीवन भर श्री जी सेव, छोड़ गये निज छाप।।
सर्व कलामय पद रचे, आराध्य अनुग्रह पाय।
चित्रित किये बहु शब्द चित्र, नवीन राह दिखाय।।

अष्टछाप कवि मंडली के सर्वाधिक अल्प आयु कवि श्री चतुर्भुजदास की ललित शब्द चित्र संयोजन कला अपने आप में विशिष्ठता लिये है। इनकी शब्द–चित्र योजना में आलम्बन के सहारे बाल कृष्ण का रूप चित्रण अन्य कृष्ण भक्त कवियों के समान हुआ है पर इनके सर्वकला मय पदों को पढ़कर या उनका गान सुनकर भक्त जनों को विशिष्ठ आनन्दानुभूति होती है। श्री चतुर्भुजदास ने बाल्यावस्था में ही कीर्तन गान व पद रचना में पिता श्री कुम्भनदास का सहयोगी बनकर जीवन का आरम्भ किया। ये अल्प आयु में ही उत्तम पद रचना करने लगे थे, साथ ही हवेली संगीत के विधानानुसार कीर्तन गान करना आरम्भ किया जो जीवन पर्यन्त अनवरत चला।

श्री चतुर्भुजदास बालपन से ही प्रत्युत्तपन्न मति एवं कुशाग्र बुद्धि के थे। पद रचना क्षमता की एक बानगी वार्ता साहित्यानुसार प्रचलित है– "एक बार रात्रि में श्री कुम्नभदास को श्रीनाथजी के शयन की अनुभूति हुई तो तुकबन्दी की– 'वह देखो बरत झरोखन दीपक, हरि पौढ़े ऊँची चित्रसारी', पास बैठे श्री चतुर्भुजदास ने तत्काल पूर्ति कर कहा–सुन्दर बदन निहारन कारन, राखे है, बहुत जतन कर प्यारी।"

आत्मज की इस हाजिरजवाबी पर उन्हें सन्तोष हुआ और प्रसन्न हुए। श्री चतुर्भुज जीवन भर श्रीजी कीर्तन सेवा में रत रहे। किया कितने ही अनूठे शब्द चित्र का सृजन पद सहित्य में। पद साहित्य के पारखियों की अवधारणा रही है कि कृष्ण भक्ति सृजन क्षेत्र में इस कवि ने अपनी छाप छोड़ी है। इनके पदों को पढ़कर व गायन सुन कर वैष्णव जन ही नहीं वरन् साहित्यानुरागी विशेष प्रकार की आनन्दानुभूति करते हैं। पुष्टि सृष्टि का वार्ता साहित्य यह भी जानकारी कराता है कि इन्होंने किसी स्वतन्त्र ग्रन्थ की रचना नहीं कर

केवल फुटकर पद रचना से ख्याति अर्जित की। काव्य कसौटी की दृष्टि से पूर्ण रचना विस्तार उत्तम कौटि का है। उसका अध्ययन करने पर अध्ययनकर्त्ता इस निर्णय पर पहुँचता है कि वे ब्रजभाषा के साथ–साथ संस्कृत के भी ज्ञाता थे। उनके द्वारा रचित साहित्य में भक्ति भावना के अतिरिक्त शृंगार की उत्तम छटा का समावेश हुआ है। ब्रजराज के जन्म से लेकर गोपी विरह तक की ब्रजलीला का अनूठा विवरण प्रस्तुत किया है। पुष्टिमार्ग साहित्य सृजनकर्त्ता व अधिकृत हस्ताक्षर श्री प्रभुदयाल मीतल का भी ऐसा मानना है।

श्री चतुर्भुजदास के प्रत्येक पद में आराध्य के चित्रण को रेखांकित किया गया है। मात यशोदा का पुलकित मुख, श्रीकृष्ण का सहज, सुहावन बाल रूप और मां के वात्सल्य प्रेरित कृत्य–इन तीन बिन्दुओं को कवि ने अपनी दृष्टि से उत्तमोत्तम बनाने का सतत् प्रयास किया है। यशोदा अपने बाल गुपाल को पलने झुलाते कल्पना लोक में विचरण करते हुए कहती है–

साँवरो सुत पालनै झूलै। निररित-निरखि जसुमति जिय फूले।।
नैन विशाल भ्रकुटि मिस राजैं। निरखि बदन उडपति जिय लाजै।।
भाल तिलक लट लटकनि सौ है। मन्द हँसन सब को मन मोहै। ।
कठुला कंठ रूचिर पहुँची कर। सुभग कपोल नाक बिंबाधर।।
माखन मिश्री मोलि चखावै। बारबार प्रमुदित उर लावै।।
गिरिधर कुँवर जननी दुलरावै। 'चतुर्भुजदास' विमल जस गावै।।

श्री चतुर्भुजदास के किशोर लीला पदों में नटखट कृष्ण और मुग्धा राधा की प्रेम लीला सम्बद्ध अनुभाव शब्द चित्रों में स्पष्ट रेखांकित हुई है। इसमें प्रेम, तकरार के उपरान्त की मान मनुहार विस्तार से की गई है, पर पारखियों का कहना है कि स्थूलता का आभास होता है फिर भी सजीव है। ऐसा ही प्रभाव सर्व कला मर्मज्ञों को हुआ है। तत्कालीन चित्रकला व मूर्ति शिल्प इससे अछूती नहीं रही। कवि कहता है– भूलि गयो झगरो मृद मन्द मुस्कान में....। कन्हैया के वेश अरु रंगों में इस कवि ने परम्परा से हट कर कुछ परिवर्तन किया है। जिस प्रकार मध्यकालीन मूर्ति व चित्रकला में राधा–कृष्ण को भी भवनों की वेशभूषा से अलंकृत करना आरम्भ हुआ तो पुष्टिमार्गीय आराध्य को शृंगारित करने में पाग, सूथन और मुगलिया प्रभावी आंभूषणों को कृष्ण भक्तों ने भी धारण कराये। इसके सिवाय कृष्ण भक्त कवियों के रचना साहित्य में भी ऐसा प्रभाव आया, दिन पर दिन पौराणिक परिवेश परिवर्तित होता गया और मध्यकालीन सांस्कृतिक भाव जुड़ते गये। जब अष्टछाप की सखा मण्डली भी इससे नहीं बच सकी तो यह बाल कवि कैसे बच पाता। इसका प्रमाण है यह पद–

'खेत जरी, सिर पाग, लटक रही कलंगी तामे लाल।
तन सुख को वागो अति राजत कुंडल झलके सुलाल।।

भक्त–कवि–कीर्तनकार श्री चतुर्भुजदास ने गोप ललनाओं को सजाने संवारने में जो उपकरण प्रयुक्त किये हैं उनके रंग काफी गहरे एवं प्रभावोत्पादक है।' उनके पहने हुए आभूषणों की आभा से रत्नों की चमक–दमक द्विगुणित हो गई है। इस पद के सम्पूर्ण चित्रण में लाल–श्वेत–पीले आदि रंगों की अधिकता के कारण रूप चित्रण सुन्दर व आकर्षक बन पड़ा है। जैसे–

नकबेसरि ताटक कंउ सिरि अनुमति। चौकी बनी जराई दूरी रवि कान्ति।।
सैंदूर तिलक तम्बोल खुटिला बने विरेख। केसरी आयी कुंकुम काजर रेख।।

बाल कवि श्री चतुर्भुजदास के गोचारण लीला सम्बन्धी पदों में कृष्ण की लीला से जुड़ी कतिपय घटनाओं का सुन्दर व मनोहारी चित्रण हुआ है। कवि ने कहा– आज गोपाल कूक मारत है, गो सुत को मारि कोटि घै–घै करन लकुटि कर जिन्हैं मुख सों... आगे कहा– भौम बुलाई घूमरि धोरी ऊँचे ले ले नाम बुलावत। इनके द्वारा रचित पदों में होली का वर्णन रूप, आभा और संगीत मय ध्वनित कोलाहल के साथ सम्पूर्ण समां सजीव व वैभव पूर्ण लगता है। इस प्रसंग का वर्णन कवि ने एक पद में इस प्रकार किया है–

अंगिया लाल लसत तन सारी झूमक उर नवहार।
अलके सिंथिलित-पाग सिथलानी वे फुनि बांधि बनावे।।

सावन मास की हरियाली में श्री चतुर्भुजदास ने वैभव का प्रदर्शन करते हुए अनेक उपकरणों के योग से उल्लास मय चित्र सम शब्दों में समा बांधा है। सावन शोभा से सम्बद्ध संयोजन ध्वनि के हल्के संस्पर्ष द्वारा सजीवता प्रदान करने का प्रयास किया है। जैसे–गरजत गगन दामिनी कौंधति राग मल्हार गाये.....रमकति झमक बनि पिय प्यारी किंकनी शब्द सुहाये।। सावन मास वर्णन को आगे बढ़ाते हुए हिंडौला प्रसंग को विभिन्न वर्णों की मनोहारी संगति में संतुलन स्थापित करके यह सिद्ध किया कि श्री चतुर्भुजदास को चित्रकला की जानकारी ही नहीं वरन् स्तरीय अंकन अभ्यास भी होना चाहिए, साथ ही रचना विधाान भी प्रभावोत्पादक बन पड़ा है। छबीले लाल के संग झूलत नव सुरंग हिंडोरे।...तेसिय भावती तिय तेसोई घन मधुर–मधुर घोरे।। हिंडोले से जुड़े इनके शब्द चित्र सृजन स्वभाविकता लिये हुए हैं। इसके अतिरिक्त इसमें संगीत के अलौकिक योग से चित्रण में स्तब्धता का समावेश हुआ जो स्तुत्य है। प्यारी के मुख से गान सुनते ही कोयल अपना मुख बन्द कर लेती है क्योंकि उसे अपनी वाणी से प्यारी की वाणी मधुर रस मय लगती है और अन्य को लगती है कर्णप्रिय । जब कन्हैया मुरली पर मनहार राग अलापता है तो उस वाणी का वर्णन शब्दों के माध्यम से सम्भव नहीं। श्री चतुर्भुज के पदों में शृंगार रस विस्तार और सजावट में प्रयुक्त हुआ है। एक–एक उपकरण की बनावट, सही उपयोग एवं उसकी कलात्मक विशेषताओं

से यह गायक कवि भली भाँति परिचित था। कहीं कहीं कुसुम सेज और आभूषणों की कोमलता व कठोरता में टकराहट का आभास होता है जो गति में व्याघात प्रदायक होते हुए भी रचना कौशल से जड़ता को निष्प्रभावी बनाना है, फिर भी मांसल प्राण तत्व का समावेश कराने का सफल प्रयास रहा है। कुसुम सेज मांझ करत श्रृंगार तथा कुसुम कलियों से मोड़ बनाया, सुखान्त प्रसंग में वस्त्रों, आभूषणों, आभरणों आदि उपकरणों की अस्त–व्यस्तता अंगो की शिथिलता को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर श्री चतुर्भुजदास कहते है कि मोहन घूमत कजरारे नैन सकुचत कछु कहत बैन तथा सिन्दूर का तिलक सुभग अधर मसि सों कारे। इस प्रकार से इनकी ललित सृजन योजना में परम्परा से हट कर कतिपय नवीन प्रयोग जुड़े।

श्री चतुर्भुजदास के रचना विधान में रंगों का प्रयोग व परस्पर प्रभाव नवीनता लिये हुए है। मध्यकालीन प्रभाव से प्रभावित होने के कारण कृष्ण को सूथन, पहना कर गुलाब के फूलों से मुकुट को सजाया हैं। कहीं कूलह में गुलाब की कल्पना कर पूर्ण वर्णन को गुलाबी रंगत प्रदान की है। पाग सोहै लटपटी गुलाब के फूल कूल्ह भरे। इसके द्वारा कल्पित कृष्ण का व्यक्तित्व और मोहक मुद्राएं भी दृष्टव्य हैं। श्याम की टेढ़ी रूचिर भृकुटि पर करोड़ों कामदेव के अभाव व प्रभाव को तुच्छ ठहराना विलक्षण रचना–क्षमता का परिचायक प्रसंग बने हैं। चित्रण विवरण में काले–पीले वर्णों की प्रतिकूलता–अनुकूलता की भी इनको समुचित जानकारी थी। इनके द्वारा रचित श्रृंगारिक प्रसंगों में लौकिक उष्णता, का आभास मध्यकाल के प्रभाव से समाविष्ट हो पाया है। किन्तु बाल लीला वर्णन कर बालक के स्वाभाविक कृत्यों के यथार्थ व सजीव विवरण प्रस्तुत कर इन्होंने भक्तों के मन में अपना विशेष स्थान बनाया है। श्रीकृष्ण को देखे बिना स्वजनों को चैन नहीं मिलता है, गोपांगनाओं के मन में उनकी चितवन बस गई है–

आजु श्रृंगार निरख श्याम कौ, नीको बन्यो स्याम मन भावत।।
गोपियों से कहलवाया है कि चितवन तेरी जीय बसी।

रास के सम्मोहक रंग में रंग कर श्री चतुर्भुजदास ने नन्द–नन्दन व वृषभानु दुलारी के कन्दरा में निवास कर प्रातः उठ चलने का इतना स्वाभाविक व मोहक वर्णन किया है कि कवि की काल्पनिक क्षमता के महत्त्व व विशेषता को स्वीकार करना ही पड़ता है। इस प्रसंग को इस प्रकार रूपायित किया है–

श्री गोवर्द्धन गिरि सघन कन्दरा, रैन निवास कियौ पिय-प्यारी।
उठि चले भोर सुरत रंग भीने नन्द-नन्दन, वृषभानु-दुलारी।।
इत विगलत कच माल मरगजी, अटपटे भूषण मरगजी सारी।
उतही अधर मसि पाग रही फवि, दूहूँ, विधि छवि बाढ़ी अति भारी।।

घूमत आवत, रतिरन जीते, करनी संग गजवर गिरिधारी।
'चतुर्भुजदास' निरखि दंपति छवि, तन, मन, धन किन्हौ बलिहारी।।

श्री चतुर्भुजदास विचचित पदों के कीर्तन श्रीनाथजी के सानिध्य में अनेक प्रमुख उत्सवों पर गाये जाते हैं। बसन्त पंचमी के दिन शृंगार–दर्शन में इस कवि के पद का कीर्तन गान होता है–

माई री आज और काल्ह और दिन प्रति प्रति और देखिये रसिक गिरिराज धरन।
दिन दिन नव छबी वरने सो कौन कवि नित ही सिंगार वागे बरन-बरन।।
सोभ सिंघु अंग, मोहत कटि अनंग छवि की उठे तरंग विश्व के मन हरन।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर को स्वरूप सुधा पान कीजैं जीजे रहीये सरन।।

कृष्ण जन्माष्टमी के शुभ दिन कान्हरो राग और ताल–धमार में गेय यह पद स्पष्ट करता है कि ग्वाल दूध से भरी गागर और घृत से लबालब भरी मटकी को लेकर आये–गिरिधारी का जन्म हुआ यह सुनकर। इससे यह स्पष्ट आभास होता है कि नन्दालय में पुत्र जन्म की खुशी का अनुभव सब ब्रज जन को हुआ। यह दर्शाता है कि स्वामी की प्रसन्नता के साथ सर्व सेवक भी मुदित हुए–

रावल कहे गोप आज ब्रज धुनि ओप कान दे दे सुनो बाजे गोकुल मंदिलरा।
नन्दजू के पुत्र भयो वृषभान जू सो कहयौ गोपी ग्वाल ले ले घाये दूध घृत गगरा।
आगे गोप वृन्द भयो पाछें त्रिय मनोहर चल न सकत कोऊ पावत न डगरा।
'चतुर्भुज प्रभु' गिरिधारी को जन्म सुन फूल्यो फिरत नारद जैसे भँवरा।।

इसी प्रकार चतुर्भुजदास ने राधा अष्टमी के अवसर पर पद रचा कि वृषजानजी के घर राधा प्रकट हुई है। वह रूप राशि की खान है। राधा–कृष्ण की अद्भुत जोड़ी की शोभा तीनों लोक में वर्णन से परे है। यह पद शृंगार दर्शन में गाया जाता है तथा अहेल्या बिलयक राग है–

रावल राधा प्रकट भई हो।
श्री वृखभान गोप गरुवे कुल प्रगटी अति आनन्द मई हो।।
रूप रासि रस रास रसाकनि नव अंकुर अनुराग नई।
चिरजीवो चतुर चिंतामन प्रगटी जोरी पुण्य मई।।
मंगल रूप निधान नागरी करत ध्यान गिरधर सई ।
'चतुर्भुज प्रभु' अद्भुत यह जोरी त्रिभुवन शोभा नहीं जात कही।।

ब्रज मण्डल में श्रीकृष्ण जुग–जुग राज करे, इस भावना को प्रमुखता देते हुए श्री चतुर्भुजदास ने कान जगाई के अवसर पर वृदावनी सारंग राग तथा धमार ताल का निर्वाह करते हुए जो पद रूपी शब्द वर्णन किया वह इस प्रकार है–

खेली वहो खेली गांग बुलाई घूमर धोरी।
बछरा पर उपरेना फेरत डाढ़ मोल के दौरी।।
आय गोपाल कूक मारत गो सुत को भटकारी।

घों घौं करत लकुट कर लीने मुख पर फेर पिछोरी।।
मुदिंत गोप अरु ग्वाल सुबल मिल घेर करत एक ठोरी।
'चतुर्भुज प्रभु' गिरधरन सदा ब्रज युग युग राज करो री।।

होली खेलते–पिचकारी मारते कृष्ण अच्छा लगता है। पर साथ ही पिचकारी कैसी व किसकी होनी चाहिए इसका भी इस कवि को अच्छा भान था, इससे सम्बद्ध कला का भी।

आभरणों की चमक अन्धकार को दूर करती है। परस्पर गुलाल उड़ाने से ऐसा भास होता है मानो आसमान में धूंध छा गई है। पर भक्त कवि अन्त में विवश है आराध्य के रूप वर्णन में। इसी क्रम को आगे बढ़ाते देखे तो पाएँगे कि हिंडोला, बंगले सर्व स्वर्ण एवं रजत के पहने जाने वाले मोती की लड़ियों और रत्न जड़ित आभरणों की बनावट और पहने जाने वाले वस्त्रों, ठाड़े वस्त्र, पिछवाई तकियों की बनावट व प्रकार का भी उन्हें गहन ज्ञान था। या यो कहें तो भी अनुचित अप्रासंगिक नहीं होगा कि सेवा पूजा में प्रयुक्त सभी साधनों से जुड़ी कला एव द्योगों की उन्हें अच्छी जनकारी थी।

श्रीजी की सेवा में कीर्तन गान को समर्पित श्री चतुर्भुजदास भक्त थे और उन्होंने एक भक्त की भावना को मार्मिक शब्दों में व्यक्त करते हुए कहा था कि वह सदा ब्रज में ही विहार करना चाहता है। जैसे रसखान की अपेक्षा थी। अष्ठछाप के इस कवि की यह भी चाहना थी कि गोकुल के नन्द कुमार, जो अब वल्लभ कुल के राजकुमार हैं, की सेवा में ही सार है। इसीमें सुख है–

सदा व्रज ही मैं करत बिहार।
तबके गोपवेश, अबके प्रगटे द्विजवर अवतार।।
जब गोकुल में नन्द कुंवर अब वल्लभ राजकुमार।
आय पहुँचे रूचि और दिखावत सेवा मन दृढ़ सार।।
जुग स्वरूप गिरिधरन श्री विट्ठल लीलाएं अनुसार।
'चतुर्भुज प्रभु' सुख लेत, निवासी भक्तन कृपा उद्धार।।

काव्यकला की दृष्टि से देखें तो भी श्री चतुर्भुजदास ने ललित शब्द चित्र सृजन में अपना विशिष्ट स्थान कृष्ण भक्त साहित्य के रचनाकारों में बनाया है। उन्होंने कन्हैया के बाल स्वरूप श्रीनाथजी के रूप,गुण, लीलाओं व ब्रज मण्ड़ल के प्रति रागात्मक उन्नयन को विस्तृत क्षेत्र उपलब्ध कराया है, जिसमें उपदेशात्मक तत्व गौण तथा दार्शनिक मान्यताओं को रागात्मक तत्वों के आवरण में अति विस्तार से अभिव्यक्ति दी है। यही कारण है कि चतुर्भुजदास के पदों में ब्रजराज के रूप तथा उनकी लीलाओं को माधुर्यमय बनाकर सौन्दर्यानुभूति को अति कोमल सात्विक और सजीव रेखांकित किया है। उन्होंने आराध्य के जीवन वृतान्त के विविध रूपों को नाना रूपों में परखा

है। इसीलिए साहित्य क्षेत्र में इनकी शब्द चित्र योजना भक्ति और कीर्तन साहित्य की विशिष्ठ पहचान बनी।

इस आलेख के लेखक ने वर्तमान में कृष्ण स्वरूप श्रीनाथजी के साथ ब्रज से आये कीर्तनकार परिवारों के प्रमुख कीर्तन गायकों से भी कुम्भनदास सुत चतुर्भुजदास के सम्बन्ध में जानना चाहा। सर्वप्रथम लगभग पचास वर्ष से श्रीनाथजी के देवालय में आठों ही दर्शनों में कीर्तन सेवा करने वाले वरिष्ठ कीर्तनकार श्री अमृतलाल से प्रश्न किया कि हवेली संगीत इतना जन प्रिय क्यों है ?

उनका कहना है कि यह गीत पद्धति जीवन के अनुभवों को बांटने वाली है–जबकि आधुनिक शैलियां तोड़ने का काम कर रही हैं। आज लगभग पांच सौ वर्षो से यह अनवरत चल रही है। हर कला प्रेमी जानता है कि पांच सौ वर्षो पश्चात् इनका अस्तित्व क्या रह पाएगा ? हवेली संगीत, जिसे श्रीचतुर्भुजदास कवि–कीर्तनकार ने समृद्ध किया, वह आज जीवन्त है तथा जब तक पुष्टिमार्ग का अस्तित्व है तब तक यह कायम रहेगा; क्योंकि यह पुष्टिमत की विशिष्ट गायकी है। इसमें गहराई, कशिश और आत्मा को छूने का पैनापन है, जो मानव को प्रभु का स्मरण करा निकटता प्रदान करती है। यह वैष्णव जन को हंसा सकता है, रूला सकता है और स्मरण कराता है प्रभु को। इनका यह भी कहना है कि इस विधा में गान के लिए इसकी निपुणता के लिए अनवरत अभ्यास की आवश्यकता है। आज भी अष्टसखा–कीर्तन मण्डली के सर्वाधिक कम आयु के कीर्तनकार श्री चतुर्भुजदास की जीवनी हमें सतत् प्रेरणा प्रदान करती है। उनकी संगीत साधना, श्रेष्ठ ज्ञान, निष्ठा और दृढ़ संकल्प शक्ति हर एक को सद् प्रेरणा प्रदायक है।

संगीत की प्रमुख विधाओं के जानकार, कीर्तन करने में माहिर और संगीत शिक्षक पद से सेवा निवृत्त श्री मिश्रीलाल नाथद्वारा के जाने माने गायक हैं। एक बार काशी से पधारे मौनी बाबा के सम्मान में अनौपचारिक संगीत आयोजन के अवसर पर इनसे जो जानकारी हवेली संगीत व कीर्तन विधा के समबन्ध में मिली वह इस प्रकार है। उनसे पूछा गया कि अष्टछाप मण्डंली से प्रारम्भ इस संगीत के प्रति सम्मान क्यों कम पड़ रहा है? उनका कहना था कि संगीत की इस विधा को जो संरक्षण आरंभ व पश्चात् मिलता रहा अब उसमें अभाव है। अधिकांश कीर्तनकार केवल परम्परा का अन्धानुकरण कर रहे हैं। उनका लक्ष्य केबल आजीविका कमाना मात्र है। साथ ही आज की मानव संतति हल्की और तड़क भड़क की जिन्दगी की ओर अन्धी दौड़ लगा रही है। फिर भी चतुर्भुजदास जैसे निष्णात कवि का पद साहित्य युगों–युगों

तक अपनी विशिष्ताओं का अक्षुण्ण रखेगा। हवेली संगीत गायक श्री चतुर्भुजदास के अतिरिक्त अन्य अष्टसखाओं के बनाये कीर्तन का गान भी, विशाल पैमाने पर आयोजित समारोहों में गाते हैं। अनेकों ने अर्न्तराष्ट्रीय ख्याति अर्जित की है। इस सम्बन्ध में मेरी धारणा है कि कीर्तनगान को सुनकर आज के भागम–भाग युग में मानव को सुकून की जिन्दगी जीने का प्रोत्साहन मिलता है। क्योंकि इन कवियों द्वारा विरचित पदों को पढ़ने व सुनने से मानव मन को श्रद्धा, प्यार व सन्तोष मिलता है। पर व्यक्ति में होनी चाहिए अराध्य के प्रति आस्था और दृढ़ निश्चयी शक्ति।

श्री चतुर्भुजदास के पद साहित्य में मानव एवं मानवेतर प्रकृति का प्रयोगानुसार उचित समन्वय हो पाया है। अतः प्रकृति का प्रकटी–करण, धार्मिकता प्रधान तो है ही पर साथ–साथ कल्पना प्रिय भी है। प्रसंगानुसार प्रकृति वर्णन आदर्श भावना एवं, आलंकारिकता मय हैं। इनके पद रचना की यह भी विशेषता देखने में आती है कि पाठक को संवेदना की अनुभूति होती है। इसमें कला–उद्योग तत्वों का विन्यास इतना संश्लिष्ठ है कि उसका विश्लेषण करने में ऐसा अनुभव होता है मानो प्राण और शरीर को पृथक किया जा रहा हो। आराध्य के रूप वर्णन में, उपकरणों और उपमानों का अभाव नहीं है। वे भी जिन कलाओं से जुड़े हैं वे कलातत्वों की पूर्णता लिये हुए हैं। इनके रचना विधान का विहंगम दृष्टि से सर्वेक्षण करने पर ज्ञात होता है कि अभिव्यंजना शिल्प का क्रम सतत् बना रहा है। यही कारण है कि कृष्ण के रूप तथा माधुर्य मय सौन्दर्यानुभूति की कोमल, सात्विक और सजीव चित्र सम प्रस्तुति की गई है।

कतिपय कला पाराखियों की धारणा है कि श्री चतुर्भुजदास काव्य कला के निष्णात रचियता तो थे ही पर संगीत, चित्र, अभिनय, नृत्य कला के अतिरिक्त वस्त्र, उद्योग, रंगाई–छपाई, काष्ठ, मृत्तिका, धातु आदि के सम्बन्ध में भी पर्याप्त जानकारी रखते थे। उन्होंने अनेक भावना प्रधान शब्द चित्र को रेखांकित ही नहीं किये वरन् उनमें स्वभाविक रंग भी भरे हैं। इनके सम्बन्ध में रायकृष्ण दास जी ने उचित ही कहा है कि उनके समकालीन कृष्ण भक्ति साहित्य के सृजनहारों में इनका प्रमुख स्थान रहा। पुष्टि मत के प्रधान आराध्य श्रीनाथजी की लीलाओं और स्तुति गान मय शब्द चित्रों की आज तक मांग है, क्योंकि उनमें है, भक्ति में समर्पित सच्चे साहित्यकार संगीतज्ञ की आत्मा की सच्ची अभिव्यक्ति । उन्होंने रेखाओं और रंगों के द्वारा प्रतीकात्मक वर्णन कर जो प्रवीणता अर्जित की वह अपने आप में अनूठी है।

- नई हवेली का चौक
नाथद्वारा

श्री चतुर्भुजदास के पदों में ब्रज-महिमा

✍ सर्वोत्तम त्रिवेदी 'लघु'

पीत कसै कटि में कछनी बनमाल गरे सिर मोर की पाँखें।
गोल-कपोलन पै मकराकृति मार अनेकन के मद नाखें।।
टेरत वेणु कदंब तरे लखि 'उमा' हिये उपजै अभिलाखें।
या छवि देखन कों करता, करौ प्रति रोम हजारन आँखें।।

स्कंद पुराण के विष्णु खंड में, शाण्डिल्य ऋषि राजा परीक्षित और राजा वज्रनाभ के साथ संभाषण में कहते हैं-

''श्रुणुतं दत्तचित्तौ में रहस्यं ब्रजभूमिजम्।
व्रजनं व्याप्तिरित्युक्ता व्यापनाद् ब्रज उच्यते।।''

अर्थात् हे राजाओ। ब्रजभूमिजनित रहस्य को ध्यान देकर सुनो। 'व्रजन' शब्द का भाव है 'व्याप्ति'। व्यापन करने के कारण इसका नाम ब्रज' है। जो सर्वव्यापी है, उसी को 'ब्रज' कहा गया है।

भगवान श्री कृष्ण को गर्ग संहिता में परात्पर ब्रह्म के रूप में वर्णित किया गया है जो कि श्रीराधा जी के साथ नित्य गौलोक धाम में विराजते हैं। वहाँ वृंदावन धाम, वंशीवट, यमुना जी, गिरिराज पर्वत, गोपालों और गोपांगनाओं का नित्य निवास है। पृथ्वी पर विराजमान 'ब्रजभूमि' साक्षात् गौलोक धाम का ही प्रतिरूप है। सारे ब्रजवासी भगवान श्री कृष्ण को प्राणों के समान प्रिय हैं।

ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार श्री कृष्ण के पृथ्वी पर अवतरित होने की इच्छा प्रकट करने पर, श्रीराधा ने गौलोक धाम से ब्रज को भी भूमि पर ले चलने की चाहना प्रकट की थी। पृथ्वी पर विराजमान ब्रजभूमि में श्री कृष्ण और राधा का नित्य निवास है।

ब्रह्मपुराण में श्री कृष्ण ने नंदराय जी से कहा कि- पिताजी। हमारे देवता तो गौएँ ही हैं। हम वनवासी हैं। हमारे वनों की सीमा के मध्य गिरि राज गोवर्द्धन पर्वत है। हम जैसे वन और पर्वतों में रहने वाले जन यदि गोवर्धन पूजा और गोधन की पूजा करें तो श्रेष्ठ रहेगा। बाबा नंदराय जी की सहमति रही और गोवर्धन पूजा के रूप में पर्वत व गायों की पूजा की गई। ब्रजमण्डल में तो गौचारण ही गोप संस्कृति का मूल आधार रहा है।

ब्रज के सम्बन्ध में कहा गया है कि- यह 'ब्रज ही गुणातीत, पर ब्रह्म व्यापक, सदानंद, उत्तम ज्योति एवं मुक्त पुरुषों का अव्यय पद है। व्यापकता के कारण ही 'ब्रज' त्रिगुणातीत परब्रह्म का नित्य विहारस्थल है। इसीलिए यह भूमि ज्ञान व भक्ति देने वाली है।इस ब्रज में 'भक्ति' नित्यलीला पुरुष में निमग्न होकर नृत्य करती रहती है।

वराह पुराण में ब्रजभूमिका क्षेत्र अस्सी कोस माना गया है।

ब्रजभूमि में , नारदपुराण के अनुसार निम्नलिखित १२ वन हैं-

(१) मधुवन (२) तालवन (३) कुमुदवन (४) बहुलावन (५) काम्यवन (६) खदिरवन (७) विल्ववन (८) लोहवन (९) भाण्डीरवन (१०) भद्रवन (११) वृहद् वन तथा (१२) महावन

ब्रज में २४ उपवन हैं-(१) गोकुल (२) गोवर्धन (३) बरसाना (४) नंद गाँव (५) संकेत (६) परमाद्रि (७) अड़ीग (८) शेषशायी (९) माट (१०) ऊँचा गाँव (११) खेलवन (१२) श्री कंठ, (१३) गंधर्ववन (१४) परासौली (१५) विलछूवन (१६) वच्छ वन (१७) आद्रिवन (१८) करहला (१९) आँझनोंख (२०) पिसाया (२१) कोकिला वन (२२)दधिवन (२३) कोटवन और (२४) रावल।

इसी ब्रज के सम्बन्ध में भक्त रसखान ने कहा था कि -

(१) मानुस हों तौ वही रसखान, बसौं ब्रज गोकुल गाम के ग्वारन।।
(२) जो खग हों तौ बसैरो करौं नित कालिंदी कूल कदंब की डारन।।
(३) पाहन हों तौ वही गिरि को जो धर्यो कर छत्र पुरंदर कारन।
(४) जो पसु हों तौ कहा बस मेरौ, चरौं नित नंद की धेनु मझारन।

ब्रज और वल्लभ कुल : पुष्टि सम्प्रदाय के प्रवर्तक जगद्गुरु श्री वल्लभाचार्य का प्रादुर्भाव संवत् १५३५ (सन्१४७९) वैशाख कृष्ण एकादशी के पुण्य दिवस पर मध्यप्रदेश में रायपुर के पास चम्पारण्य में हुआ। ये अग्निकुण्ड से प्रगटे इसलिए 'इनको अग्निकुमार' भी कहा जाता है। इनके पिता श्री लक्ष्मण जी भट्ट तेलंग ब्राह्मण थे और इनकी माता का नाम इल्लमागारू था। वल्लभाचार्य जी को आठ वर्ष के आयु में गायत्री मंत्र का उपदेश प्राप्त हुआ। इनको श्री माधवानन्द तीर्थ ने विद्याध्ययन कराया। कुछ ही समय में आपने वेद-वेदांग उपनिषद् पुराण ब्रह्मसूत्र व गीता आदि का अध्ययन कर लिया। इन्होंने तीन बार भारतवर्ष क परिक्रमा की तथा इन्हें ब्रज के गोवर्धन पर्वत की कन्दरा में श्रीनाथजी का प्राकट्य हुआ। यह सुयोग ही है कि इनके जन्म दिन

के पुनीत दिवस को ही ब्रज में श्रीनाथजी के मुखारविन्द का प्राकट्य हुआ था।

इस मुखारविन्द का दर्शन कर वहाँ के सद्दू पाण्डे व मानिकचन्द आदि ब्रजवासी आदि ने उत्सव मनाये। इन्हें देवदमन, इन्द्रदमन, नागदमन नाम से संबोधित किया गया। सं १५५६ में वल्लभाचार्य जी जब दूसरी बार ब्रज पधारे तब उन्हें इस प्राकट्य की जानकारी मिली। उन दिनों सिकन्दर लोदी के आदेश से मंदिर निर्माण पर पाबंदी थी। मंदिर का जीर्णोद्धार कराने पर भी उसे ध्वंस कर दिया जाता था। तब भी अपूर्वसाहस के साथ वल्लभाचार्य जी गिरिराज पहुँचे, इस देवस्वरूप के दर्शन किये, इन्हें 'श्री गोवर्धननाथजी' अथवा 'श्रीनाथजी' के नाम से प्रसिद्ध किया और ब्रजवासियों को कृष्णाश्रय का मन्त्र प्रदान किया। पर्वत पर एक मंदिर बनवाकर श्रीनाथजी को प्रतिष्ठित किया एवं रामदास चौहान को सेवार्थ नियुक्त किया। कुम्भनदास व अच्युतदास आदि भी सेवा में सहयोगी हो गये।

श्री मद्वल्लभाचार्य, आचार्य रूप में प्रभु के ही अवतार थे। अपनी तीन पृथ्वी परिक्रमाओं में आपने जहाँ जहाँ भी विश्राम किया वहीं श्री मद्भागवत का पारायण भी किया। पूरे भारतवर्ष में इन महाप्रभु की ८४ बैठकें हैं।

इनके दो पुत्रों में से कनिष्ठ श्री विट्ठलनाथ जी ने 'गोसाईं' उपाधि को धारण कर सम्प्रदाय का गठन किया और पूजा पद्धति व भोग-राग-शृंगार का नियमन कियां। आपने अपने सात पुत्रों को सात पीठों पर अधिष्ठापित करते हुए उनको सात स्वरूपों की सेवा प्रदान की। इन्होंने भी पुष्टिमार्ग के प्रसार हेतु यात्राएँ की और भगवत् पारायण किये-वहीं वहीं गुसाईं जी की बैठकें प्रसिद्ध हुई।

श्रीनाथजी और अन्य सातों श्री विग्रहों के समक्ष कीर्तन सेवा हेतु अष्टछाप के आठ कविभक्त सखाओं में सूरदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास और कृष्णदास ये चार श्री वल्लभाचार्य के शिष्य और शेष चार छीतस्वामी गोविन्ददास, चतुर्भुजदास और नन्ददास श्री विट्ठलनाथ जी के शिष्य-नियुक्त किये गये थे।

श्री चतुर्भुजदास : इनका जन्म अष्टछाप के सर्वाधिक वायेवृद्ध कवि कुंभनदास जी के यहाँ संवत् १५७५ से १५८० के बीच में माना जाता है। जन्म के ४१ वें दिन, ये पिता के द्वारा श्रीनाथजी के शरणागत हुए। गुसाईं जी के ब्रज में आने पर सं १५६७ में वैष्णवधर्म दीक्षा में आत्मनिवेदन दीक्षा हुई और काव्य-प्रतिभा के उदय होने पर सं १६०२ में इनकी 'अष्टछाप' में प्रतीष्ठा हुई।

आप कृष्णसखा विसाल के अवतार थे। ये बचपन से ही भक्तिभावना को समझते थे और नित्य श्रीश्रीनाथजी के साथ खेलते थे। ठाकुर जी जो-जो लीला करते उसी का गान किया करते थे।

एक बार गुसाईं जी आप को साथ ले कर चले। जैसे ही ब्रज से बाहर हुए तब चतुर्भुजदास विरह से व्यथित हो गये।आपने तब एक विरह पद गाया-

"गोवर्धन वासी सांभरे तुम बिन रह्यौ न जाय" तब प्रभु ने उसी स्थान पर आपको दर्शन दिये और वरदान भी दिया कि जो भी इस पद को प्रेम से नित्य गायेगा उसे.मैं वर्ष में एक बार अवश्य दर्श.न दूंगा-

गुसाईं जी श्री विट्ठलनाथ जी ने सं. १६४२ में गिरिराज जी की एक गुफा (कन्दरा) में जाकर भगवल्लीला में प्रवेश किया-यह समाचार सुनकर आप भी गुरुदेव की विरह में बहुत दु:खित हो गये और विरही मन से पदों का कीर्तन-करते हुए आप भी उसी दिन नित्यलीला में पधार गये।

चतुर्भुजदास द्वारा ब्रज-महिमा वर्णन-

वैसे श्री चतुर्भुजदास जी ने मंगलाचरण जन्म-समय, पलना, छठी, राधाष्टमी दान-प्रसंग, दशहरा, रास, दीपमालिका, अन्नकूट, कान जगाई, दीपदान, हटरी, गोवर्धन पूजा, गोवर्धनोद्धरण, गोपाष्टमी, प्रबोधिनी, श्री वल्लभ-वंशोद्‌गान, वसंत डोल, फूलमंडली, आचार्य जी की बधाई, अक्षय तृतीया (चंदन), रथ-प्रसंग, पावस वर्णन, हिंडोरा, पवित्रा और राखी के वर्षोत्सवों के पद तथा जगावनो, मंगला (कलेऊ), बाल-लीला, उराहनौ, भिषान्तर दर्शन, वनगमन, वनक्रीड़ा, छाक, वेणुगान तथा प्रभु के, स्वामिनीजी के व युगल स्वरूप के वर्णन, के आवनी आसक्ति गोदोहन व्यारू, आरती, लीला, मान, युगल रस वर्णन सुरतान्त, खण्डिता व उद्धव संदेशादि के पद और भक्तों की प्रार्थना व श्री यमुना जी के लगभग ३८५ पद लिखे व गाये थे किंतु सम्प्रति उनमे से ब्रज महिमा वर्णन के अंश ही यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

ब्रजभूमि महिमा :

पावस वर्णन के प्रसंग में भूमि की हरियाली का वर्णन करते हैं-

"हरित भूमि तामें कसूँमी चीर सखी समूह ओढें बनि जोरी जोरी।"

और हिंडोरा के प्रसंग में भी-

"पावस ऋतु नीकौ रंगु लाग्यौ हिंडोरें संग झूलें ब्रज नारी।
सावन मास फूलीं थोरी-थोरी तैसिये भूमि हरियाली।" तथा "सावन

मास हरित वन में रिमझिम रिमझिम बूँद सुहाई।
कछु भींजे पट अंग झलमले, नव नव छवि बरनी नहिं जाई।।''
और वन क्रीड़ा के प्रसंग में-
''सखि देखि री आजु सोभा वन की।
इत मोहन मुख मधुर मुरलि उत मधुर गरज नव घन की।
उतहि स्याम बादर सोभित इत राजनि साँवल तन की।
उत बग पाँति समूह इतहि हारावलि मुक्ता गन की।।
इतहि रुचिर बनमाल बनी उर उतहि रहनि इंद्रधनु की।
उत दामिनि-चपला चमकति उत फहरनि पीत वसन की।।
'चतुर्भुज' प्रभुगिरिधरन रसिक रस कर बिनवति बिलसन की।''-

पद के द्वारा वन क्रीडा करते हुए प्रकृति, ब्रजभूमि, बादल, बिजली, इन्द्रधनुष आदि से समानता रखती प्रभु की छटा का वर्णन अत्यन्त ही मन मोहक है।

ब्रज प्रकृति महिमा :

बसंत वर्णन के प्रसंग में ब्रज-प्रकृति का वर्णन किया है-
''मुकुलित नव द्रुम पल्लव मंडल, कोकिल कल कूजत बिसेस।
फूली नव मालती मनोहर, मधुर गुंजार करत मझेस।।''
इस समय इतना आनंद है कि-
''जानत नहीं जाम धरी बीतत अति आनंद हृदै प्रवेस।
'दास चतुर्भुज' प्रभु सब सुख निधि गिरिवर धर ब्रज-जुव नरेस।।'' तथा
''दखि सखी नव बसंत आगम नीके लागत नव फूल पल्लव नए।
नाना बरन सकल वृंदावन, जहाँ तहाँ द्रुम बेलन भए।।
प्रगट्यौ रति-पति अहि सुखद रितु, हेम काल कलह जु गए।
गूँजत मधुप, कीट, पिक कूजत, ठौर-ठौर आनंद ठए।।
जमुना-तट रमनीक परम रुचि कुंज बितान ललित छए।
तहाँ सजि नटवर नंद नंदन बैठि रहे तेरे जु लए।'' -

इस पद के द्वारा वसंत को साक्षात कामदेव के रूप में सुखद, स्थान-स्थान पर आनंद देने वाला चित्रित किया है। यमुना के किनारे सुंदर कुंज का छप्पर (छापन) अत्यन्तरमणीक बन पड़ा है। तथा

''सरस वसंत हँसत वृन्दावन, ऋतु-प्रभाव जनाए''- में वृंदावन हँसता है।

तथा ''नव ऋतुराज लता द्रुम फूले, वरन वरन छवि न्यारी हो।

गुंज मधुप कीर पिक कुंजत, स्रवन सुनत सुखकारी हो।।''- में लता-वृक्षों के विरल रंग और पक्षियों के सुखद कलरव का वर्णन है तथा वसंत विभिन्न इंद्रियों को पोसित करने वाला है यह वर्णित है-

''फूली द्रुम बेलि भाँति-भाँति। नव वसंत सोभा कहि न जाति।।
देखें रंग-रंग हरखें नैन। स्रवननि पोषत पिक मधुप बैन।।
सुख दाइक नासा नव आमोद। रसना मधु स्वादनि बहु विनोद।।
कुसमनि कुसुमाकर सहाह। त्रिविध समीर हिरदौ सिराइ।।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गोपाल। बन बिलसत गिरिधरन लाल।।''

इसमें इन्द्रियों को ही नहीं, हृदय को भी शीतल करने वाली त्रिविध वायु का वर्णन है तथा-युवतियाँ मस्त होकर वृक्षों से भी होली करती हैं-

''जुवति-कदंबनि ऊपर बरखत सुरंग गुलाल अबीर''

तथा बसंत में-गहवर वन में भी-

''फूले लता नवल गहवर वन, बरन बरन बहु भाँति।
कुलकत सुक पिक आनंद भरे, मनोहर मधुपनि-पाँति।।''

और फूल मंडली के प्रसंग में-फूलों की चौखंडी किन किन फूलों से बनी ? देखें

''अति विचित्र फूलन की चौखंडी, बैठे तहाँ रसिक गिरधारी।
राई बेलि, मालती, माधवी, चंपक, बकुल, गुलाब, निवारी।।
जूही, जई, केवरो, केतकी, सौरभ सरस परम रुचिकारी।
पाडल, झरी, सेवती, मल्ली, मोलसरी रुचि रुचिर सँवारी।।''

तथा ''बैठे लाल फूलनि की चौखण्डी।
चंपक बकुल गुलाब निवारौ राहवेलि सी खंडी।
जूही जई केवरा कूजौ करनि कनेर सुरंगी।।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरधरन लाल की बानिक नव-नवरंगी।।''-मैं राहवेलि कन्नेर आदि और भी नयेनये फूलों से प्रभु के नये नये रूप रंग में दिखने का वर्णन किया है। तथा गिरधारी जो फूलों की तिवारी में बिराजे हैं उनका सारा श्रृंगार बागे, पाग, सब फूलों का है। तिवारी के छज्जे और झरोखा ही नहीं, ऊपर अटारी भी फूलों से सजी है-ऐसी फूलों से फूली ब्रज प्रकृति की महिमा श्री चतुर्भुजदास ने गाई है। इतना नही नहीं-पुष्पवत् सुख सिक्त ब्रज संस्कृति के दर्शन करें-हिंडोरा के प्रसंग में भी पुष्पित ब्रज प्रकृति देखें-

''फूलन कौ हिंडोरौ बन्यो, फूलनि की डोरी।

फूले नंद लाल, फूली नवल किसोरी।।

फूले सघन वन, फूले नवल कुंज, फूली फूली जमना बहे हिलोरी

फलन के खंभ दोऊ चारि फूलनि पटुली बैठे इकजोरी।

'चतुर्भुज' प्रभु गिरधर फूले झूलत, फूली फूली भामनी देति झकझौरी।।''

और वन क्रीड़ा के प्रसंग में झरनों का भी वर्णन है-

''त्रिविध पवन संचरें सुखद झरना झरें, ललित सौरभ सरस मधुप गाजें।
ललित तरु फूल फल फलित षट ऋतु सदा चत्रभुजदास गिरधर समाजें।

इसमें ब्रज में छैओ ऋतुओं के फलवती होने का भी वर्णन है। और हरियाली तीज का वर्णन भी मनोहारी है-'

''सावन तीज हरियारी सुहाई माई, रिमझिम रिमझिम बरसत मेहभारी।
दादुर मोर पपैया बोलत, कोयल सब्द करत किलकारी।।''

ब्रज पक्षी महिमा-

ब्रज में कौन-कौन से विशेष पक्षी कूकते कूजते हैं उनके वर्णन इस प्रकार हैं-

''मुकुलित नवद्रुम पल्लव मंडल, कोकिल कल कूजत बिसेस।
फूली नव मालती मनोहर, मधुप गुंजार करत मझेस।।''

तथा- ''गुंजत मधुप कीर पिक कूजत, ठौर ठौर आनंद ठए''
तथा- ''देखें रंग रंग हरखें नैन। स्रवननि पोषत पिक मधुप बैन''
तथा- ''कुलकत सुक पिक आनंद भरे, मनोहर मधुपनि पाँति।।''
तथा- ''नव-नव मोर झकोरत वन में, दादुर नवल रहत झिंकारी''

गौचारण संस्कृति महिमा-

ब्रज संस्कृति तो गोचारण संस्कृति है। ब्रजवासी तब न तो किसान थे और नही व्यापारी। मात्र गाय ही चराते थे। माँ यशोदा, कृष्ण को चलना सिखाने वाले को सर्वस्व, सब कुछ देने को तैयार हो जाती हैं। क्या करेंगी क्या करवाएंगी कृष्ण के पैदल चलने पर ? मोहन से गाय चरवाना चाहती है-देखें

(५) ''माई लैंन देहु जो मेरे लालहि भावै।।
सरबस ताहि देहुँगी जो मेरेन्हेनरे गोपालें चलन सिखावै।।२।।

यह अभिप्राय होत दिन दिन प्रति कब मेरौ मोहन धेनुं चरावै।''

तथा-मोहन माँग कर माखन खाते हैं। कैसे देखें-

''मृदुवानी तुतरात माँगि नवनीत खात भुजन भाव जैसे जनावत बाल खग'' और वनक्रीडा के प्रसंग में गौचारण देखें-

''टेरत ऊँची टेर गोपाल।
दूर गाँइ जिनि जान देहु तुम, सब मिलि घेरहु ग्वाल।।
लै लै नामु धूरी धौरी मुरली मधुर रसाल।
चढ़ि कदंब चहुँधा चितवत हैं अंबुज नैन बिसाल।।
स्रवन सुनत सुरभी समुहानी उलटि पिछौंडी चाल।
'चत्रुभुज' प्रभु पीतांबर फेरत गोवर्धन घट लाल।।''

इसमें कदंब पर चढ़कर दूर दूर तक फैली गायों को, अब और दूर न जाने देने हेतु घेर कर लाने का ग्वालों को निर्देश भी है और श्री कृष्ण की आवाज पर सुरभी आदि गायों के स्वयं ही वापिस आने का भी वर्णन है।

और जब माँ दूध धाप कर पिलाये तभी कृष्ण गाय चराने जायें यह भी हुआ-

''कान्ह सों कहति जसोदा मैया।

तुम तो मेरे प्रान जीवन-धन मथिकैं दूध पिवाऊँ धैया चत्रुभुजदास गिरधरन कहयौ तब हों बनजाउं मौया चरावन गैया।।''

तथा-कृष्ण स्वयं गाय दुहना क्यों सीखना चाहते हैं-देखें इस पद में-

''मैया मोहिं माखन मिश्री भावै।
मीठौ दधि मधु घृत अपने कर क्यों नहिं मोहिं खवावै ?
कनक दोहिनी दैकर मोकौं गो-दोहन क्यों न सिखावै ?
औट्यौ दूध धेनु धौरी कौ भरि कटोरा क्यों न पियावै ?
अजहूँ ब्याह करति नहिं मेरौ, तोइ निसंक नींद क्यां आवै ?
'चतुर्भुज प्रभु गिरिधर की बतियाँ लै उछंग पय पान करावै''

तथा माखन के लिए कृष्ण क्या क्या नहिं करते यह भी देखें-

''घर-घर डोलत माखन खात।
ग्वाल बाल सब सखा सँग लियें सूने भवन घसि जात।।
जब ग्वालिनि जल भरि घर आई, तबहि भजे मुसिकात।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर लाल सौं, नाहिन कछू बसात।''

तथा-ग्वालिन जब यह सब यशोदा से कहती हैं तो विश्वास नहीं करती है

माँ-''ग्वालिनि तोहिं कहत कौं आयौ।
मेरौ कान्ह निपट बालक, क्यों चोरी माखन खायौ।।
'चतुर्भुजदास' लाल गिरिधर सौं झूठी कहत बनाई।
मेरौ स्याम सकुच कौ लरिका, पर घर कबहुँ न जाइ।।''

श्री चतुर्भुजदास जी ने गोदोहन के पदों के द्वारा भी ब्रज की गौचारण संस्कृति की महिमा का गान किया है-

''कर लै निकसी धन दोहिनी।
गाँइ दुहावन के मिस नव तिय नंद-नदन मुख-जोहनी''

तथा-''मोहन पूरे हो सतभाइ।
कहत लयाउ नीकें दुहि देहों ग्वालि तुम्हारी गाँइ।।
आतुर व्है दोहनी कनक की कर तें लीनी आइ।
दै ध्यौ बेगि पाट की नोई, बछरा चौखें जाइ।।''-

इस पद में गोदोहन की सेवा सहायता का वर्णन किया गया है। तथा-इसीलिए सखि कहती है कि-

''कान्ह! दुहि दीजै हमारी गैया।
तुमहिं जानि सतभाइ लै नित मोहिं पठावत मैया।।
सब कोउ कहत परम उपकारी संकर्णन के लहुरे भैया।
गहहु कमलकर दोहनी नंद-नंदन! लेउँ बलैया।।
तुम्हारे दुहत हमारें पूजत बहुते दधि बहुतें घृत घैया।
चतुर्भुज प्रभु नित करहु कृपा इहि गिरिगोवर्धन रैया।।''-

इसमें कृष्ण के दुहने से गायें दूध अधिक देती है यह भी स्पष्ट हो गया है-

(६) गो दोहन का समय चूक जाने से क्या कठिनाई होती है यह देखें-

''देहु री माइ! खरिक जान, गो-दोहन की टरति बार।
पराई अरप तुम जानति नाहिनें बातहि बात होति अति अवार।।

कधु नहिं सुहाइ, जो लौं न दुहाउँ गाइ, याही ते अगमनि आइ रहौं बछरानु द्वार।

गोरस छीजै हमारे, कान्ह जू कहूँ सिधारे, चतुर-सिरोमनि दोहन हार।।

ब्रज स्नेह संस्कृति महिमा :

ब्रज की मिट्टी में, ब्रजभाषा में, ब्रज संस्कृति में सभ्यता में-व्यवहार में कार्य में सभी में स्नेह, समभाव, सामंजस्य भाव सुसिक्त है। यह नीति वनक्रीड़ा के समय छाक (अल्पाहार या भोज) अरोगने के समय के वर्णन से प्रकट होती है-

''सुंदर सिला खेल की ठौर।
मदन गोपाल जहाँ मध्य नाइक, चहुँ दिसि सखा मंडली और।।
बाँटत छाक गोवर्धन ऊपर बैठत नाना बहु विधि चौर।
हँसि हँसि भोजन करत परस्पर, चाखि लै माँगतकौर।।

छाक खाकर मुहँ धोना और पान का बीड़ा चबाना यह सब देखते हैं इस पद में-
''छाक खाइ बंसीवट फेरि चलत जमुना तट,जहाँ जाइ धोवत मुख धीर समीरन।
फैंटि खोलि पौंछत हाथ, सखा सब लिए साथ,चले जात बन ही बन खात मुख बीरन।।''

तथा-''टेरति जसोमति मैया ग्वालिनि छाक लेहु बन जाहु सवारी।
बड़ी बेर भई है आ कब के पैंडो देखत कुँवर तिहारी।।
विंजन मीठे खाटे खारे धरे हैं सँवारि परम रुचिकारी।
अहो अहो सुबल अहो श्रीदामा बोलहु ग्वालिनि अब इक ठौरी।।
जेंबत राम कृष्ण दोउ भैया ग्वाल मंडली सबै सम्हारी।
गिरि गोवर्धन पर बैठे हँसत परस्पर सब रुचिकारी।।''-

इस पद में एक साथ बैठकर भोजन करने और बाद में एक दूसरे सभी को प्रिय लगने वाला परिहास करने और भोजन पचाने का वर्णन है। तथा-''छप्पन भोग छत्तीसों व्यंजन आनि आगे थार सँची।
एक खात इक हँसत परस्पर, सब हिन के मनमें सैना बैनी मची।।''-

में विविध भोजन करते समय नैन चलाकर और बोल बोलकर हँसने का वर्णन भी है।तथा-''सभी आपस में बाँट कर खातें हैं यह भी दर्शनीय है-
''बीरी सुबल स्याम कों देत।
स्याम सखा ग्वालिनि कों बाँटत, उपजावत अति हेत।।'

ब्रज सरिता यमुना महिमा-

ब्रजवासी कृषक, गोपाल और अन्य जन सामान्य के लिये यमुना जी जीवन जल तो हैं ही, यहां ये कृष्ण पटरानी जगद् आराध्या भी हैं। इसलिए-
''चित्त में जमुना निसि दिन जो राखौ।
भक्ति के बस कृपा करत हैं सर्वदा, ऐसौ जमुना जी कौ है जु साखौ।।
जाहि मुख तें 'जमुना ' नाम उचरै, संग कीजे अब जाइ ताकौं।
'चतुर्भुजदास' अब कहत हैं सबन सों, तातें 'जमुने' यह नाम भाखौ।।''
तथा-''प्रानपति विहरत यमुना-कूले।
लुब्ध मकरंद के बस भए भ्रमर जे, रवि उदै देख मानौं कमल फूले।।
करत गुंजार मुरली के, साँवरो ; ब्रजवधू सुनत तन-सुधि जो भूले।
'चतुर्भुजदास' जमुना-प्रेम-सिंधु में, लाल गिरिधरन अब निरसि झूले।।'
तथा-प्रेरणा है, आग्रह है कि-
''बार बार यमुने। गुन -गान कीजे।

वही रचना भजौ नाम रस अमृत, भागि जाकौ जोई सोइ लीजै।।
भानु-तनया-दया अति ही करुणामय, इनकी करि आस अब सदा जीजै।
'चतुर्भुज दास' कहै सोइपिय पास रहै, जोई जमुना जी के (सु) रस-भीजै।।''

प्रभु कृपा से ही यमुना जी, अपने निकट की कुंजों का वास देती हैं-

''हेत करि देत जमुने वास कुंजे।
जहाँ निसि वासर रास में रसिक वर, कहाँ लौं बरनिये प्रेम-पुंजे।।
थकित सरिता नीर, थकित ब्रजवधू-भीर, कोउ बन न धरत धीर मुरली सुनि रुंजे।
'चतुर्भुजदास' जमुन पद-पंकज जानि, मधुप की नांई चित लाइ-जाइ गुंजे।।-''

ब्रज फाग-साधन-वाद्य-महिमा-

ब्रज में फाग का विशेष महत्व है। यह आनंदकंद कृष्ण चन्द्र की आनंद लीला है-

''होरी खेलत ब्रज नंद-लडैतौ लाल।
चोबा चंदन और अरगजा कंठ सोहत मोतिन माल।।
कोउ गुलाल केसरि भरि लीयें, कोउ कंचन थाल।
इक नाचत, इक मृदंग बजावत, गावत गीत रसाल''
तथा-''होरी खेलत साँवरौ, ग्वाल बाल संग कीन्हे जू।
मृगमद चोबा केसंरि सों पिचकाई भरि लीन्हे जू।
छिरकत भरत आनंद सौं प्यारी अति रस भीने जू।
तन मन धन सब बार हीं 'चतुर्भुज' प्रभु बस कीन्हे जू।।''

होली के साधन देखें-विभिन्न पदांशों में वर्णन देखें-

''चोवा चंदन अगर कुमकुमा, तकि तकि पिय सनमुख मेलति''
''केसरि कुमकुम घोरि कें भाजन भरिभरि लाई।''
''चोबा सारु अरगजा चंदन, केसर सुरंग मिलाई।
तकि-तकि तरुनि गोपालहि छिरकति, करनि कनक पिचकाई।''
''चोबा चंदन औरु अरगजा, अरु छिरकति कुमकुम कौ नीर।
बरखत मेंघ मानों चहुँ दिसितें, सोभित है तन स्याम सरीर।।''
पहिरें बसन अनेक तन, नील पीत सेत राते जू।
सुरंग गुलाल अबीर फेंट भरि, फिरत महा रसमाते जू।।''
''उड़त गुलाल परस्पर आँधी रह्यौ गगन लौं छाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल, छबि मो पै बरनि न जाइ।।''

ब्रज में विविध वाद्य यंत्रों का वर्णन चतुर्भुजदास नें इस तरह किया है-

''बाजत ताल, मृदंग, झाँझि, डफ, पखावज, बीना किन्नरेस।''
''श्रृंग, बेत्र, मुरली, महुवरि धुनि नीके सब्द सुनाए।''
''बाजत ताल मृदंग पखावज डफ मुख चंग।
मदन भेरि सुर बीन गिरिगिडी झाँझि उपंग।।''
''विविध भाँति बाजे बजे ताल मृदंग उपंग।
दुंदुभि डिमडिम झालरी पखावज कर मुख चंग।।''
''दुदुभि झाँझ मुरज डफ बाजें मृदंग उपंग अरु तार।''
''रूज, मुरज अरु झाँझ झालरी, बाजत कर करताल उपंगा।''

ब्रज लोक संस्कृति महिमा-

ब्रज में समृद्धि रही है। घर घर में मोतियों से चौक पुराये जाने का वर्णन मिलता है-

''श्री चन्द्रभान गोप गृह निधि सुखमा कूख सुहाई जु
गाम दिगैरा घरन घरन प्रति मोतिन चौक पुराई जु।''
श्रृंगार देखें-''कंठसिरी मखतूल मोति अरु उर गज मोतिन हार जू।
कट कंकन, कटि किंकिनी की छबि, पग नूपुर झनकार जू।।
कुटिला खुंभी रुचिर नकबेसरि, दूरि करत रवि कांति जू।।''
होली के प्रसंग में पिचकारी भी रत्न जटित है तो सोहत मोतिन माल।
हिंडोरा के प्रसंग में''कंचन खंभ सुजटित मनि पटली, डाँडी सरल सँवारी।''

तथा- ''कंचन खंभ सुढार बनाए, बिच बिच हीरा लाए।
डाँडी चारि सुदेस सुहाई, चौकी हेम जड़ाए।''
''सोभित तन गौर स्याम पीरौ पट कसूंभी सारी।
जटित मानिक मनि पटिला बैठे इन जोरें।।''
''पटुली पिरोजा लाल चौकी हीरा जड़ी''-वर्णन मिलते हैं।
और प्रभु के तो-''स्याम सीस सीखंड सम कनक के आभरन।''
वस्त्र भी सुहावने हैं-

''नवल वन में पहरि तन में कसूंमी चीर कनक बरनि।
स्याम सुंदर सुभग ओढें वसन पीत सोहावने।''
''नवल पीताबंर ओढ़ें गिरधारी लाल नवल घटा अरु नौतन गोरी।''
''भीजैगी मेरी सुरँग चूनरी ओट पीत पट देहु।''

तथा-''पहिरें पटपीत राते, भूषन भूषित मनोहर

गज बर गोपाल नागर नागरी गज गामिनी।''

ब्रज गीत संगीत महिमा-

इस प्रसंग में-''गरजत गगन दामिनी दमकति, गावत मल्हार तान लेत न्यारी''-इस तरह का वर्णन मिलता है।

ब्रज भोग महिमा-

ब्रज के भोजन में मिस्सी रोटी, टैंटी के अचार, चने के साग को भी विशेष महत्व मिला है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि यहाँ विभिन्न स्वाद युक्त व्यंजनों का अभाव रहा है। श्री चतुर्भुजदास जी ने वर्णन किया कि-

''विंजन मीठे खाटे खारे धरे हैं सँवारि परम रुचिकारी।

भरि भरि उलाने अछूते राखे, गनत न आवै धरे सुधारी।।''

अनगिनती क्या-''छप्पन भोग छत्तीसों व्यंजन आनि आगें थार सँची।।''

ब्रज जन महिमा : ब्रज के गोप गाय गोसुत ग्वाल सभी कृष्णमय है। कृष्ण के अधीन हैं। ब्रज की संस्कृति ही कृष्ण संस्कृति है। इनके बिना सभी दुखी रहते हैं। देखे उद्धव प्रसंग में-''ब्रज जन अति आधीन दुखारे।

कहियो पथिक! संदेस सुरति करि जहं हैं नंद दुलारे।।

गोप गांइ गोसुत गुवाल सब मलिन देखियतु कारे।

निरभै जानि गोपाल तुमहिं बिन विरह दवानल जारे।।''

ब्रज की तो महिमाँ ही अपार है। और श्री चतुर्भुजदास जी ने इस का वर्णन भी विशद रूप से किया है। सभी पदों को पूरा-पूरा प्रस्तुत किया जाना तो यहाँ कठिन था इसलिए संकोच कर कुछ अंश मात्र ही प्रस्तुत किये गये हैं। ब्रज महिमा अर्थात् प्रभु महिमा जन जन तक पहुँच सके इस हेतु यह प्रयास किया गया है। यह सब प्रभु अर्पण है, जनता जनार्दन की सेवा रूप में।

आलेख के अंत में ब्रजवासी के हृदय की पुकार कवि अखैराम के शब्दों में-

एक ब्रज रेनुका पै चिन्तामनि बार डारूँ, बार डारूँ विश्व सेवा कुंज के बिहार पै।
ब्रज की पनिहारिन पै सची रची बार डारूँ, रम्भा कूँ बार डारूँ गोपिन के द्वार पै।।
ब्रज की लतान पै कोटि कल्प बार डारूँ, बैकुण्ठकूँ बार डारूँ कालिन्दी की धार पै।
कहत अखैराम एक राधेजू कूँ जानत हौं, सब देवन बार डारूँ नन्द के कुमार पै।।

-''चतुर्भुज प्रासाद'', कुटी मौहल्ला,
कामवन, (जिला-भरतपुर)

श्री चतुर्भुजदास का युगल वर्णन

✍ डा.जगदीश लवानिया

समस्त अष्टछाप कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अपना अलग अलग अस्तित्व एवं महत्व है परन्तु उन सब की 'काव्य-सृजन-धर्मिता 'प्रभु श्री कृष्ण के लीलागत-प्रभुत्व के गुणगान-हित समर्पित रही है। ये ''आठो महानुभाव दैवी जीव और श्रीनाथजी के अन्तंरग सखा माने जाते थे। उनको श्रीनाथजी का साक्षात्कार प्राप्त था वे अहर्निश श्रीनाथजी के दर्शन प्रत्यक्ष करते थे। यहां तक कि श्रीनाथजी बालरूप में उनके साथ-साथ खेलते थे।''अतः यह निरपेक्ष यथार्थ है कि सभी अष्टछाप कवियों ने अपने सृजित काव्य में श्री कृष्ण चन्द्र जी की विभिन्न लीलाओं के सरस वर्णन के साथ साथ गोपी ग्वाल विरत वारत राधाकृष्ण युगल लीला का भी मनोहारी काव्य-चित्रण प्रस्तुत किया है, जिनमें चतुर्भुजदास जी का युगल लीला वर्णन अपने में अलग ही विशिष्टता सम्पन्न एवं अनुपम काव्य-समृद्धि से परिपूर्ण दर्शित होता है।

गोपी -ग्वाल विरत युगल लीला वर्णन-

श्री चतुर्भुजदास जी को ''बाल्यावस्था से ही भगवान की अन्तरंग लीलाओं की अनुभूति होने लगी थी, उन्हींके अनुरूप वे पद रचना किया करते थे।''इतना ही नहीं ''कृष्ण लीला का वर्णन ये सूरदास के समान ही करते थे।'' इनके पद अधिकतर कृष्ण के क्रिया कलापों से ही सम्बन्ध रखते थे। यही कारण है कि श्री चतुर्भुजदास जी के युगल-लीला वर्णन में ''लीला-बिहारी ब्रजराज के जहाँ एकल स्वरूप के नित नूतन समष्टिगत शारीरिक-चित्र दर्शित होते हैं व अंग-प्रत्यंग का पृथक-पृथक सौन्दर्य प्रकीर्णित परलक्षित होता है; यथा-

आज और कलि और दिन प्रतिदिन और और, देखिये रसिक गिरिराज धरन।
छिन प्रतिदिन नवछवि बरनै सो कौन कवि, नित ही सिंगार बागे बरन-बरन।।
सोभा सिन्धु अंग-अंग मोहित कोटि अनंग, छवि की उठत तरंग, विस्ब कौ मनहरन।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरधर कौ सरूप सुधा, पीजे जीजे रहिये सदा ही सरन।।

-तो वहीं कृष्णस्वरूपाभिव्यक्ति श्रीराधाजी के साथ सुरम्य कुंजों में एक प्राण दो शरीरों में नित्य केलिरत लीला-बिहारी की रूप दिखाई पड़ता है ; यथा-

बिहरत कुंज भवन में माधौ राधा नदी यमुना तीर।
त्रिविधि समीर सुबन घन बरसत चंदन चरचत नीर।।
हंस-चकोर-कोकिला बोलत तहाँ भँवरनि की भीर।
पीत बसन वन माला राजति स्रवननि झलकत हीर।।
ज्यों गजराज फिर गज गवनी मत्त मये रनधीर।
'चतुर्भुजदास' विलास वृन्दावन मदन मोहन बलवीर।।

श्री चतुर्भुजदास जी के ''श्री युगल' ''क्रीड़ाशील रस की दो मूर्तियाँ है, जिनमें आनन्दघन रसिक हैं-श्रीकृष्णा और आल्हादिनी रसकिनी है-''श्रीराधा''। श्री कृष्ण रसिक बिहारी हैं, राधा पर बलिहारी हैं तो श्री राधा रसस्वरूप श्री कृष्ण की रस लीलाओं की संचालिका हैं। कहीं श्रीकृष्ण की आराधना के रूप में ''राधा''बन जाती हैं तो कही श्री कृष्ण की आराधना कर 'राधिका' दर्शित होती हैं और कहीं कहीं तो 'श्री युगल' 'श्याम और श्यामा' के नाम धारण कर एक दूसरे की अनोखी छबि पर बलिहारी जाते हैं ; रीझते हैं, रिझाते हैं और तन से तन व मन से मन मिलाये रहने को आतुर रहते हैं। दृष्टव्य है एक उदाहरण-

आज श्रृंगार निरखि श्यामा कौ, नीकौ बनै स्याम मन भावत।
ये छवि तनहि लखायौ चाहत, कर गहि के नख चंद दिखावत।।
मुख जौरें प्रतिबिम्ब विराजत, निरखि निरखि मन में मुसकावत।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर श्री राधा, अरस-परस दोउ रीझ रिझावत।।

'श्री युगल' के रास-विलास सन्दर्भ में चतुर्भुजदास जी के रासेश्वर जी श्याम सुन्दर अपने रमणीय रूपगार का रास विलासनी श्री राधा की अनुपम छवि में एकाकार करने को आतुर प्रतीत होते हैं। वे दो शरीरों की व्यतिरेकता में एकतां स्थापित करने की चाहत में निमग्न हो जाते हैं। इतना ही नहीं रास-विलास-बिहारी श्री कृष्ण रास-लीला के माध्यम से स्वयं को राधा में रमण कर 'राधारमण' की यथार्थता को प्रमाणित करने हेतु रास-रस-मग्न दर्शित होते हैं। प्ररतुत है इस सन्दर्भ में **चतुर्भुजदास जी का एक पद-**

प्यारी भुज ग्रीवा मेलि, नृत्यत पीय सुजान।
मुदित परस्पर, लेत गति में सुगति, रूप रासि राधे, गिरिधरन गुन निधान।।
सरस मुरली ध्वनि सों मिले सप्त स्वर, रास-रंग भीने गावें और तान बंधान।
'चतुर्भुज' श्री श्यामा श्यामा की नटनि देखि, मोहे खग मृग अरु थकित व्योम विमान।

यह सत्य है कि श्रीचतुर्भुजदासजी के युगल लीला वर्णन के सन्दर्भ में

रास नृत्य के पद अन्य अष्टसखाओं की तुलना में अत्यल्प हैं परन्तु जितने भी हैं मनमोहक और रासमंचीय वैशिष्ट्य से परिपूर्ण है;, यथा-

अद्‌भुत नट-भेष धरें जमुना तट स्याम सुन्दर।
गुन निधान, गिरवर धर रास रंग नाँचें।
जुबति जूथ संग मिलि गावत केदार राग
अधर बेनु मधुर-मधुर सदा सुरनि साँचे।।
उरप-तिरप लाग डाट, तत तत तत
थेई, तथेई-थेई , उघटत शब्द बिलगति भेद कोउ न बाँचे।।
'चतुर्भुज' प्रभु वन विलास, मोहे सूब सुर अकास।
निरखि थक्यो चंद, रथहि पच्छिम नहिं खाँचे।।

श्रीकृष्ण के साथ श्रीराधा के माधुर्यमय स्वरूप की प्रतिष्ठा कर उनकी दिव्य युगल लीला का मनोरम-चित्रण चतुर्भुजदास जी के पदों में सहज देखने को मिल जाता है। एंक ओर राधा जी श्री कृष्ण की हृदयेश्वरी बनकर उनके साथ अनेक- विद्य प्रेम-क्रीड़ा में सम्पन्न करने हेतु तत्पर प्रतीत होती है, तो दूसरी और श्रीकृष्ण 'प्रियाजू' के अंग-अंग की अमृत माधुरी के रसास्वपादन हेतु सदा सर्वदा के लिए अत्यातुर जान पड़ते हैं श्री चतुर्भजदास जी के कतिपय पद तो श्री राधा-माधव की युगल क्रीड़ा की रासस्थली सरिस दृष्टिगत होते हैं। इन पदों में दो रूप होते हुए भी एक स्वरूप सें युगल श्री राधा- माधव की शृंगारमयी विलास क्रीड़ा दृष्टि गोचर होती है। कहीं-कही तो स्वामी हरिदास जी के ''चिरन्तन केलि क्रीड़ा तत्लीन श्री श्यामा-कुंजबिहारी घन-दामिनि के समान एक दूसरें से अभिन्न, सहज, स्वाभाविक, सदासंग रहने वाले श्री युगल छबि माई री सहज जोरी प्रगट भई जु रंग की गौर-स्याम घन-दामिन जैसे,-चतुर्भुज के पदों में अद्वय जोड़ी के अशांवतार के रूप में दिखाई पड़ने लग जाते हैं। इसी संदर्भ में प्रस्तुत है हिंडोला वर्णन का चित्रांश-

झूलत लाल गोवरधन धारी, सोभा वर्णन न जाई हो।
बाम भाग वृषभानु-नंदिनी, नव सत अंग बनाई हो।।
अति सुकुमारि नारि उरपति है, मोहन उर सों लाई हो।
नील पीतपट मिलि फहरत है, घन दामिनि जुरि आई हो।।
मानहु तरुन तमाल मिलन को, अंग-अंग मुरझाई हो।
गौर-स्याम मरकत तन परसत, कनक-बेलि छवि पाई हो।।
सुंरति सिन्धु मिलि बिलसे दोउ जन सब सहचरि सुख पाई हो।
चतुर्भुजदास 'लाल गिरिधर,जस सुर नर मुनि मिलि गाई हो।।

श्री चतुर्भुजदास जी के श्री युगल कहीं-'नवल किशोर मनोहर छवि ढिग राधा सुखदाई-' के रूप में सुखद त्रिविध पवन से पूरित पावन-ऋतु में हिंडोरा पर 'सकल ब्रज सुन्दरियों' से झोटा लेते हुए 'युगल-लीला रत दिखाई देते हैं तो कही 'फूलन रचीविचित्र चित्रसारी' में 'फूलन की सेज गेंदुआ तकिया' से सुसज्जित फूलों के मध्य 'प्रभु फूल राधा उर' धारण कर 'रसफूले श्री गोवर्धन धारी'-'फूलन की मंडली मनोहर, बैठे जहाँ रसिक पिय-प्यारी' के सरिस रसमग्न दर्शित हाते हैं। एक ओर 'प्यारी के गावत कोकिल मुख' मूँदें बिनानहीं रहती हैं तो दूसरी ओर 'पिय के गावत खग नैंना' मूँदे बिना नहीं रह सकते।इतना ही नहीं 'नागरि के रति गिरिधरन रसिक वर' जब मुरली पर 'मधुर मलार राग अलापते हैं तो 'दंपति तान सुनहिं ललितारिक' तन-मन वारने को उद्यत होजाती हैं। अतः कहा जा सकता है कि श्री चतुर्भुजदास जी श्री युगल कीं विभिन्न लीलाओं के पद गायन में सफल कीर्तनकार सिद्ध हुये हैं।

एकल स्वरूप युगल लीला का वर्णन - श्री चतुर्भुजदास जी ने जहाँ श्री राधा कृष्ण की गोपी-ग्वाल विरत विशुद्ध युगल लीला का सुरम्य चित्रण किया हैं, वहीं युगल लीला के एकल स्वरूप का भव्य काव्यांकन करने में भी पीछे नहीं रहे हैं। रासमंच पर 'साँवरे गोपाल' का छवि चित्र मानिनी राधा के समक्ष उनकी अभिन्न सखियों द्वारा इस प्रकार स्मृति पटल पर अंकित किया जा रहा है कि अपने मन मोहन की मोहिनी निहारने को वह लालायित हो उठती हैं। एक पद--

आज कौ सिंगार सुभग, साँवरे गोपाल कौ,
कहत न कहि आवे सखि देखे बनि आवै।
भूषन बसन भाँति-भाँति, अंग-अंग अद्भुद छवि,
लटपटी सुदेस पाग, चित्त कों चुरावै।।
मकर कुंडल तिलक भाल, कस्तूरी अति रसाल,
चितवनि लोचन विसाल, कोटि काम लजावै।
कंठसरी बनी माल, पटुका कटिछोरन छवि,
त्रिभुवन त्रिय कौ जु निरखि धीरज उड़ावै।।
मेरे संग चलि निहारि निकुंज, महल बैठे हरि,
हों तोसों निज बात कहौं, जो तेरे जिय भावै।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर अंग-अंग कोटि-मदन-मूरति,
बड़ भागिनि जुवति क्यों न हिरदै लपटावै।।

ब्रज बिहारी श्रीकृष्णजी के मन में भी सुन्दरता की सौभाग्य शिरोमणि रस की राशि श्री राधिका की सौन्दर्य-छटा को निहारने की ललक कम प्रतीत नहीं होती। वे 'राधा जी' की अनुपम छवि के वशीभूत हो रसानन्द की अनुभूत करते हैं। यहाँ तक कि-''ये छवि तनहिं लखायौ चाहत, कर गहि कें नख चंद दिखावत की सीमा तक पहुँच मुख समीप राधा-प्रतिबिम्ब को ''निरख' कर अत्यंत हर्षाल्हादित हो उठते हैं तो साथ ही ''चिबुक बिन्दु, वर नैन, सुअंजन धरिकें जब जा जाहै'' के अलौकिक रूप-सौन्दर्य को देखकर उनका मन मयूर मोहित हो थिरकने लगता है। इससे विदित होता है कि चतुर्भुजदास जी के सृजित काव्य, मध्य श्री युगल की प्रति इकाई-चाहे कृष्ण हों या राधा-दोनों ही परस्पर एक दूसरे के रूप-सुधा का पान करने के लिये प्रतिपल आतुर जान पड़ते हैं।

विरह जनित युगल लीला वर्णन-

श्री चतुर्भुज जी के पदों का सूक्ष्म अवलोकन किया जाय तो सहज स्पष्ट हो जाता है कि ''नित्य बिहारी की रसमयी लीलायें पल भर के लिये भी ''प्रिया-प्रियतम'' व 'राधा-कृष्ण' की पृथकता स्वीकार नहीं कर पाती। संभवतः इसलिये उन्होंने राधा और कृष्ण को 'श्याम-श्यामा' नाम से सम्बोधित करते हुये अनेक विधि लाड-लड़ाये हैं। वे श्री श्याम-श्यामा की युगल लीला को आदि अंत से नित्य-नूतन पृथकता रहित बनी रहने की कामना करते हैं। फिर भी ''विवरण की दृष्टि से अत्यन्त संक्षिप्त होते हुये भी विरहातुर हृदय के मर्मोद्‌गारों के चित्रण में 'चतुर्भुजदास' जी की तलस्पर्शिनी प्रतिभा का चमत्कार विलक्षण मार्मिकता लिये हुये है।

श्री राधा जहाँ संयोग युगल लीला में अत्यन्त मुदित, विलासपूर्ण, चपल और हास्यप्रिया दर्शित होती है ; वहीं विरह में प्रियतम के लिये व्यथित होती हुयी अपनी निज सखियों से हृदय की टीस को चतुर्भुजदासजी की शब्दावली में इस प्रकार प्रस्तुत करती है-

बात हिलग की का सौं कहिये।
सुन री सखी विवरथा तन की, समुझि मनहिं मन चुप करि रहिये।।
मरमी बिना मरम को जानें, इहि उपहास जनि जिय सहिये।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधरन मिलें जब, तब ही जब सुख-सम्पति लहिये।

सखा-सखी रत युगल लीला-

श्री राधा कृष्ण की युगल लीला सम्पादन में गोपी-गोप अथवा सखी-सखाओं की अहम् भूमिका है। "इनके अभाव में राधा-कृष्ण की लीलाओं का निरन्तर प्रवाह अवाध गति से चलही नहीं सकता। युगल लीला में राधिका ब्रजनन्दन से रूठकर जब मानवती बन बैठती हैं तब ये सखियॉ ही श्री श्याम सुन्दर के मेल मिलाप में साधनभूता सिद्ध होती है। श्री राधिका एवं श्रीकृष्ण को अभिसार के लिये तत्पर करना एवं वियोग में मिलन सुख को उपलब्ध कराना इन की समग्र चेष्टाओं पर ही आधृत है"। वस्तुतः सहचरी ही श्री युगल की रसमयी युगल क्रीड़ाओं की प्रकाशिका है। वही उनकी परम इच्छा शक्ति हैं। जैसी युगल की इच्छा होती है उसी के अनुरूप सहचरी लीलाओं का विधान रचदेती हैं। यह बात अलग है कि ये श्री कृष्ण की सुहृद-मंडली तथा स्नेही परिकर (गोपि गोप आदि) दूर ही रहते हैं।

श्री चतुर्भुजदास जी ने भी अपने पदों में ब्रज गोपियों को श्री युगल की लीला-केलि में सहायिका दर्शाया है। यथा

नागरि के रति गिरिधिरन रसिक वर, मुरलि मलार राग अलापौ धुर जब।।
दंपति तान सुनहिं ललितादिक, वारहिं तन मन फेरहि अंचर तब।
'चतुर्भुज' प्रभु कौ निरखि सुख दंपति, कहत कहा धौ किजे गवन अब।।"

जब कहीं 'करत गुंजार मुरली जु लै साँवरौ" श्री जमुनातट पर बिहार करते हैं

तो "सुनत ब्रज-बधु तन सुधि जु भूले ' की भावना से सराबोर हो प्रेम सिन्धु में डुबकी लगाने लग जाती हैं। साथ ही "लोक लाज अरु वेद-मरजात सब तन तें बिसराई" के वशीभूत दही का बिलोना छोड़ ब्रजबाला "नैंनन हू के सैंन जनाई" संकेत पर 'ब्रज नन्दन को पीछे लग जाती हैं। इतना ही नही सखी सहचरी श्री कृष्ण लीला-रस के रसपान हेतु इतनी आतुर हैं कि अपने तन मन की सुधि बुधि भूलकर ठगी सी रह जाती हैं-

"आवत हुती चली मारग सखि, हों अपने सतभायं
मदन गोपाल देखिके इक टक, रही ठगी मुरझाय।।
बिसरी लोक लाज, गृह कारज, बंधु पिता अरु माय।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिवर धर, तन मन लयौं चुराय।।"

साथ ही चतुर्भुजदास जी की ब्रज-बालायें अन्तर मन से तो श्रीकृष्ण प्रेम रंग में रारोवर होजाना चाहती है पर लोक-लाज और सामाजिक बन्धनों की आड में दिखावा करती हैं। दृष्टव्य है दानलीला का पदांश-

उत आए घन अटक भोर ही, बनत न नैनन सारी भीजै।
रंग बहैगौ अबार मोहि है है, कहा कहैं हों जो घर काऊ खीजै।।
'चतुर्भुज' प्रभु हो कालि आप हों, साँची बात पतीजै।
गिरिधर लाल भयौ प्रगट दान तुव, आनु न हठ प्रभु कीजै।।"

उक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि श्री चतुर्भुजदास जी का युगल लीला वर्णन भले ही थोड़ा हो परन्तु सारगर्भित है, प्रसादमयी भाषा में काव्यांकित है और रासमंचीय विविध सजीव झांकियों एवं मनोहर दृश्यावली से परिपूर्णा है। वे अष्टछाप के वयोवृद्ध कवि कुम्भनदास जी के सबसे छोटे पुत्र थे, और मात्र दस वर्ष की अल्पआयु में पुष्टिमार्ग में दीक्षित हो गये थे ; फलतः उन्हें भक्ति के संस्कार जन्म से ही विरासत थें मिले थे, साथ ही उन्हें "बचपन में ही साम्प्रदायिक रहस्य का ज्ञान भली भाँति प्राप्त हो गया था। इन दोनों तथ्यों से उनकी काव्य शक्ति भी प्रभावित हुयी। यही कारण है कि चतुर्भुजदास जी का सम्पूर्ण सृजित काव्य श्रीनाथजी की भक्ति एवं अनन्य सेवा भावना से ओत प्रोत है जिसका प्रभाव उनके युगल लीला वर्णन ने भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

अस्तु श्री चतुर्भुजदास जी के युगल लीला वर्णन में राधा-कृष्ण के युगल रूप की भक्ति का प्राचुर्य है, जो दाम्पत्य रति एवं माधुर्य भाव की कान्तारति की महत्ता से प्रतिपादित और अलौकिक काम-भावना से पूरित है जिसमें वासना का कोई स्थान नहीं है।

सन्दर्भः

(१) **अष्टछाप-परिचय,** प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रैस मथुरा
(२) **ब्रजस्थ वल्लभ सम्प्रदाय का इतिहास,** प्रभुदयाल गुप्त, हिन्दी साहित्य सम्मेलन मथुरा
(३) **अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय** डा. दीनदयाल गुप्त, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
(४) **अष्टछाप काव्य की अर्न्तकथाओं का अध्ययन,** डा. सरोज जैन, राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली
(५) **हिन्दी साहित्य कोश,** ज्ञान मंडल लिमिटेड, बनारस
(६) **स्मृतिग्रन्थ-अष्टछाप कक्ष,** साहित्य–मंडल नाथद्वारा

– सिंघानिया कॉलोनी, हाथरस

श्री चतुर्भुजदास के काव्य की पुष्टिमार्गीय समीक्षा ।

✍ हरिनारायण नीमा

आचार्य वल्लभ पुष्टिमार्ग को ''कृष्णानुग्रह रूपाहि पुष्टि :''कहकर परिभाषित करते हैं। भगवान श्रीकृष्ण का अनुग्रह ही पुष्टि है, अनुग्रह भगवान स्वयं करते हैं, इसका हेतु भक्त का साधन न होकर केवल मात्र भगवान की इच्छा होती है।

पुष्टि भक्ति मार्ग प्रवर्तक श्रीमद्‌वल्लभाचार्य महाप्रभु के अनन्य सेवक जिन्होंने 'सीकरी' के सम्मान को ठुकराकर अभावों में जीवन यापन करने में परम सुख माना था और आचार्य आज्ञा को शिरोधार्य कर प्राण प्रेष्ठ प्रभु श्रीनाथजी को अपनी सांगीतिक साधना-कीर्तन-के द्वारा रिझाया था। जिनकी गणना श्री महाप्रभु के 'निजजनों' में होती हैं ऐसे लीला चिन्तक रसकंद कुंभनदास के प्रिय पुत्र थे चतुर्भुजदास। बालक चतुर्भुजदास जब ४१ दिन के थे तभी श्री गोवर्द्धननाथ जी के सन्मुख उनको गो. श्री विट्ठलनाथजी ने दीक्षा दी थी। बालक चतुर्भुजदास की किलकारी और हाव भाव देखकर श्री गुसाँई ने प.भ. श्री कुंभनदास जी को कहा था-

''या पुत्र सों तुम को बहुत ही सुख होयगो।''

समर्थ गुरु की भविष्यवाणी, पिताश्री के जीवनादर्श, सेवा संस्कार, भगवत् लीला परक रचनाओं का गान, सत्संग और स्वाध्याय के अलौकिक प्रकाश में चतुर्भुजदास ने कृष्ण भक्ति के दुर्लभ तत्व को सहज ही में प्राप्त कर लिया।

''महतां कृपया यद्‌वत् कीर्तनं सुखदं सदा।''

सूत्रानुसार महत् पुरुषों की परम कृपा से भक्तों द्वारा लीला आदि के विविध कीर्तन सर्वदा सुख की अनुभूति कराते हैं। श्री चतुर्भुजदास द्वारा रचित पद अपने में अप्रतिम-माधुर्य और आध्यात्मिक रसात्मकता रखते हैं। भक्ति परक उनके काव्य में वल्लभ सिद्धान्त यत्र तत्र सर्वत्र विद्यमान है। श्री जी की सेवा के समय प्रातः मंगला से सायं शयन तक ऋतु अनुसार विभिन्न राग रागिनियों में गेय पदों की रचनाओं के साथ वर्षोत्सव एवं अति विशेष पर्वोत्सवों पर स्वरचित अनेक पदों में कल्पना की उडान नहीं वरन् प्रत्याक्षानुभूति का प्रकटीकरण है। माता यशोदा बाल कृष्ण को प्रातः जगाते हुए गा रही है :-

"उठो हो गोपाल दुहो धोरी गैया।"

और सुख शैया से उतरकर माँ की गोद में बैठे बैठे बाल कृष्ण जब कहते हैं "मैया मोहि माखन मिश्री भावें"।

तब क्या ऐसा नहीं लगता बालक चतुर्भुजदास गोकुल स्थित नंदालय में ही कही बैठे हों ?

'पुष्टिमार्ग में प्रभु सुख को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। श्री हरिराय महाप्रभु का मत है- "सापेक्षता स्वामि सुखे पुष्टिमार्ग : स कथ्यते। प्रभु को विविध सामग्री आरोगाहि जाती है, पलना में झुलाते हुए अनेक तरह के खिलौनों से खिलाया जाता है, लालन की ललित लीला जो है। श्री 'चतुर्भुजदास के पलना पद को देखिये'

"झूलो पालने गोविन्द।
दधि, मथों नवनीत काढ़ों तुमकों गोकुल चंद।।
कंठ कठुला ललित लटकन, भ्रकुटि मन के फंद।
निरख छबि छिनु-छिनु झुलाऊँ गाऊँ लीला छंद।।
द्वै दूध की दतियां सुख की निधियां हसत जब कछु मंद।
'चतुर्भुज प्रभु' जननी जु बलि गिरिधरन गोकुल चंद"।।

(राग रामकली।)

प्रस्तुत पद ब्रज संस्कृति को उद्‌घाटित करता है और कठुला लटकन आदि 'शृंगार' का। स्वरूपात्मक बोध भी कराता है। श्री जी को धराए जाने वाले प्रत्येक आभूषण भावपूर्ण हैं। श्रीमत प्रभुचरण श्री गुसाँई जी ने पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तों के मद्देनजर इन्हें प्रणालिका में स्थान दिया है। श्री मद्‌वल्लभाचार्य षोडशग्रंथ में कहते हैं :-

"गुणगाने सुखावाप्ति गोविन्दस्य प्रजायते।
यदा तदा शुकादीनां नैवाल्यनि-कुतो भवः।।"

तात्पर्य यह है कि जैसा सुख गोविन्द के गुणगान में प्राप्त होता है, वैसा सुख शुकदेव महामुनि को आत्मज्ञान द्वारा अन्तः करण में प्राप्त नहीं होता। श्री चतुर्भुजदास ने लगभग ३६५ पदों की रचना की थी। उनकी रचनाओं में अतीव उच्च कोटि की समर्पण-भावना, भगवदीय दृष्टि तथा- "दैहिकम् कर्म निखिलं प्रभु सेवोपयोगिनाम्" परिपूरित पुष्टि भक्ति प्रत्यक्ष है। यही कारण है कि वे आचार्य गो. श्री विट्ठलनाथ जी के प्रिय बन गये थे।

श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा को पुर्नगठित करते समय उन्होंने ''अष्टछाप'' मंडली में सब से कम आयु वाले श्री चतुर्भुजदास जी को भी स्थान दिया था। श्री द्वारकेश जी महाराज ने 'अष्टछाप' के सम्बन्ध में यथार्थ ही कहा है- ''अष्टछाप आठों सखा श्री द्वारकेश परमान। जिनके कृत गुणगान करि निज जन होत सुधान।।'' अष्टछाप के संस्थापक और अपने गुरु श्री विठ्ठलेश्वर महाप्रभु की वंदना करते हुए श्री चतुर्भुजदास अपने पद में कहते हैं :-

''सेवक की सुख रास सदा- श्री वल्लभ राज कुमार।
दरसन ही तें प्रसन्न होत मन, श्री पुरुषोत्तम लीला अवतार।
सुदृष्टि चितें सिद्धान्त बतायो, लीला एक अनुराग।
यह त्यजि आन ज्ञान को ध्यावत, भूले कुमति विचार।
जकि कहीं गही भुज दृढ़ करि श्री गिरिधर नंद कुमार
'चतुर्भुज प्रभु' उद्धरे पतित श्री विठ्ठल कृपा उदार।।''

इस रचना में श्री चतुर्भुजदास ने गुरु पद वंदना पुष्टिमार्गीय भावनानुसार ही की है। गुरुदेव के कहने से ही श्री जी शरणस्थ जीवों को अंगीकार करते हैं।

अष्टछापीय श्री कृष्णदास भी कहते हैं-

''जे जब शरण आय अनुसरहिं गृहि सौंपत श्री गोवर्द्धननाथ।''

पुष्टिभक्ति मार्ग में हरि-गुरु-वैष्णव में भेद नहीं है। गुजरात के कवि श्री दयाराम भाई अपनी गरबी में इसी तथ्य को उजागर यों करते हैं :-

''हरि, गुरु, वैष्णव सरखा लेखो, भिन्न भाव इनमें नहिं पेखो।।'' अस्तु

'अष्टछाप' के आठों भक्त कविगण वाग्गेयकार थे और श्रीनाथ की लीला के सखा भी। चतुर्भुजदास इस क्रम में राजससखा 'विशाल' हैं। सख्य भक्ति में भक्त भगवान के अत्यन्त समीप होता हैं भक्ति सुधा की वर्षा में भीगने, नहाने तथा भावना की नाव तैराने में जो सुख बालकवि चतुर्भुजदास ने लिया उसकी तुलना में उनके वरिष्ठ सात सखाओं को कम ही मिला होगा। मित्रता वह भी श्रीनाथजी के साथ सौभाग्य की पराकाष्ठा थी यह !

गो. श्री विठ्ठलनाथ जी के परम अनुग्रह से उन्हें भगवत सामीप्य मिला। रसिकेन्द्र शेखर प्रभु से वो कभी दूर नहीं रहे, निमिष मात्र की विलगता उन्हें कल्प समान लगती थी। उनका अग्रांकित विरह पद आज भी वैष्णव जन सायंकाल आतुर भाव से श्री सन्मुख हेतु गाते हैं। पद की हर पंक्ति नें ऐसा बोध होता हैं मानों चतुर्भुजदास ने अपने आंसुओं की स्याही से लिखे हों।

पद की प्रथम पंक्ति हें-

"श्री गोवर्द्धन वासी सांवरे लाल तुम बिन रह्यो न जाई।"

आचार्य श्री हरिरायजी महाप्रभु की उक्त पंक्तियां लीला प्रवीण भक्त चतुर्भुज के भावों से कितना साम्य रखती हैं

"न लीला चिन्तनं नैव दीनिता विरहाद्धरे :।
न वा कृष्णाश्रय : पूर्णो वृक्ष तज्जन्म भूतले।।"

शरण में प्रवाह, जप में मर्यादा और आत्म निवेदन में पुष्टि की परिकल्पना शारदीय चन्द्र की चन्द्रिका तुल्य अमृत की वर्षा करती है। विश्व विमोहन, चितचोर, माखनचोर मदनमोहन की मधु मोहिनी पर श्री चतुर्भुजदास पूर्णत : मोहित थे। उनका सामुख्य उनके जीवन का परम लक्ष्य था। ब्रजेश्वर भगवान श्रीनाथजी के बिना वो रह नहीं सकते थे। उनका सखा भाव, उनका पद लालित्य, उनकी विरह भावना-असीम है। कविश्री की ये पंक्तियां कितनी सटीक हैं-

'सब चतुराई बिसर जात है- खानपान की वात।
बिन देखें छिन कल न परत है पल भर कल्प विहात।।

आचार्य वल्लभ चतुः श्लोकीं में आज्ञा करते हैं :-

"सर्वदा सर्व भावेन भजनीया- ब्रजाधिपः। स्वस्यायमेव
धर्मोहि नान्यः क्वापि कदाचन्।।"

उत्तम श्लोक प्रभु के अहर्निश गुणगान में रत महानुभावी श्री चतुर्भुजदास जी की पावन गाथा विगत पांच शताब्दियों से भी ज्यादा समय से भक्ति पथ को आलोकित कर रही है और आने वाले हजारों बरस बाद भी संगीत के सिंहासन पर विराजित हो संतप्त मानव समाज को परम शांति प्रदान करती रहेगी।

अन्त में विद्वद्वरेण्य प्रो. कंठमणि जी शास्त्री की इन पंक्तियों के साथ लेख को विराम देना चाहूँगा।

"अष्टछाप से उनमें और उनसे- (चतुर्भुजदास) अष्टछाप में ऐसी परिपूर्णता आई जो हिन्दी साहित्य की अप्रतीक निधि बनकर आज भी आदरणीय हो रही है।"

—अनुग्रह २०, रामेश्वर गली
गोपाल मंदिर मार्ग, उज्जैन

पुष्टि भक्ति के परिप्रेक्ष्य में- "श्री चतुर्भुजदासजी का काव्य"

✍ डा.श्याम शर्मा वशिष्ठ

वैष्णव आचार्य शिरोमणि श्री महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी का दार्शनिक सिद्धान्त शुद्धाद्वैत के रूप में प्रतिष्ठित है, जिसे आचार्य श्री ने ब्रह्मवाद भी कहा हैं।[१] आचार्य शंकर के द्वारा प्रतिपादित अद्वैतवाद में ब्रह्म माया से परिच्छिन्न माने गये हैं, जब कि वल्लभ दर्शन में माया से परे जगत, जीव और ब्रह्म को ही पारमार्थिक सत्य स्वीकारते हुए "एक मात्र (शुद्ध) ब्रह्म की ही सत्ता स्वीकार की गई हैं।[२] इसलिए यह शुद्ध अद्वैत (ब्रह्म) है।

आचार्य श्री वल्लभाचार्य के ब्रह्म साकार हैं।[३] वही सच्चिदानन्द है, उन्ही के अनुग्रह के बिना कोई साधन न संभव है, और न प्रभु की प्राप्ति ही संभव है। इसी भगवदनुग्रह :।" इस पुष्टि या अनुग्रह "पोषणं तदनुग्रह :।" इस पुष्टि को केन्द्र में रखकर की गई भक्ति ही पुष्टिभक्ति है।

आचार्य वल्लभ का परब्रह्म पुरुषोत्तम रस स्वरूप श्री कृष्ण है। वल्लभाचार्य के अनुसार परमानन्द रसस्वरूप श्री कृष्ण की प्राप्ति भगवदनुग्रह से केवल पुष्टिमार्गीय भक्तों ही सुलभ है।[४] आचार्य के अनुसार ब्रह्म (निगुर्ण) अनाविर्भूत लीलावान् रस स्वरूप है तो श्रीकृष्ण (सगुण) आविर्भूत लीला

मय रस स्वरूप "रसो वै सः हैं।[५] श्रीकृष्ण की भक्ति नवधा बतलाई गई है।[६] किन्तु रस प्राण श्री कृष्ण का शृंगारी लीलारूप ही सर्वश्रेष्ठ है, जिसका आस्वादन केवल गोपियों को हुआ है।[७] अतएवं गोपियों को ही श्री नारद एवं श्री शांडिल्य ने भक्ति की आचार्या माना है।

प्रायः संस्कृत के काव्य शास्त्रियों ने भक्ति का रसत्व स्वीकार्य नहीं किया है, जब कि रूपगोस्वामी ने "उज्जवलनील मणि" एवं भक्ति रसामृतसिन्धु" आदि में प्रबलतर्कों के आधार पर भक्ति-रस की स्थापना की है। पंडित राज जगन्नाथ ने भी बड़े सटीक शब्दों में भक्तिरस का समर्थन किया है।[८] फलतः साम्प्रतिक आचार्य एवं आलोचकों ने भी उसे स्वीकार्य माना है।[९] भक्तिरस की व्यापकता देखते हुए कुछ विद्वान उसे "वैष्णव रस" भी कहते हैं। भक्ति रस का परिपाक "मधुरा भक्ति" के माध्यम से मधुर रस के रूप में होता है। मधुरोपासना कान्ता भाव या सखीभाव की साधना है। "जिन कृष्णोपासकों की भक्ति का रूप कांताभाव अथवा दाम्पत्य भाव की हुआ करता है वे गोपीनाथ

को विशेष महत्त्व देते हैं।। "राधा भी मूलतः एक गोपी मात्र है।[११] "वे राधा की निकट वर्तिनी सखियाँ थी : और उन्हें इसकी

सहचरी' का भी पद दिया जाता है।"[१२] मधुर भाव ही कान्ताभाव को केन्द्र में रखकर दास्यमूलक और सख्यमूलंक होता है।[१३] (रस गंगाधर पृ. ४५)

प्रेमोपासना का मूलतत्व कान्ताभाव है। कान्ताभाव में ऐकान्तिक प्रेम की प्रबलता होती है, और प्रायः इसमें दाम्पत्यभाव व्यंजित होता है। भक्ति की यही स्थिति सर्वोत्कृष्ट मात्र गई है। इसे राधाभाव भी कहते हैं। इसमें "तत्सुख सुखित्व" की भावना से ही रसानुभूति होती है।

राधाकृष्ण का अन्तरंग प्रेम महाभाव भी कहलाता है। भक्तों में महाभाव को एक विशेष मनोदशा के रूप में देखा जाता है। गोपी भी सामान्यस्त्रियाँ माना नहीं होती हैं बल्कि इसका अर्थ है गोपि : अर्थात् इन्द्रियों से, आराध्यस्य प्रेम रसं पिवन्ति, जो आराध्य के प्रेमरस का पान करती हैं। अतः प्रत्येक रसिक सहृदय भावुक भक्त गोपी ही होता है। यह एक भाव है।[१४] यही सखी भाव के अन्य रूपों में भी जाना जाता है।

सखी भाव का आधार सख्यभाव है। सख्य को ही मित्र, बन्धु आदि रूपों में जाना जाता है।[१५] किन्तु इनमें सूक्ष्म अन्तर भी है[१६] वह सख्य में विशुद्ध रूप में 'अभेद स्थिति' होती है। सख्य एक दशा विशेष हे,[१७] जो प्रेम की प्रथमावस्था मानी गई है।[१८]

कृष्णोपासक अपने ने इष्ट को परमात्मा मानते हुए भी

सखा कहते हैं।[१९] सखी भाव में प्रत्यक्ष लीला विलास नहीं होता है, वरन् लीला विलास का साक्षी भाव होता है या उसके अंग या परिकर के रूप में सेवा परिचर्या आदि के द्वारा प्रेम की चरितार्थता होती है। श्रीकृष्ण लीला पुरुष या लीला पुरुषोत्तम हैं, उनका लीला विलास ही भक्तों का आनन्द स्रोत है। अतएवं भक्त कवि श्रीकृष्ण की विभिन्न लीलाओं का आनन्दानुभव करते हुए लीला वर्णन करते रहे हैं।

महाप्रभु वल्लभ ने प्रारम्भ में वात्सल्यभक्ति को ही प्रमुखता दी थी और उसका प्रचार किया था, किन्तु बाद में अपने जीवन के उत्तरार्ध में उन्होनें युगल स्वरूप की उपासना की।[२०] वल्लभ सम्प्रदाय के ग्रंथों में, इसीलिए बाल स्वरूप d sl [illegible] साथ युगलस्वरूप की उपासना भी मिलती है। महाप्रभु ने विशदरूप से रसस्वरूप कृष्ण के मधुररस का उल्लेख किया है।[२१] यही नहीं श्री वल्लभाचार्य ने प्रेमासक्ति में विरहानुभूति को अतिशय महत्वपूर्ण माना है।[२२]

श्री हरिराय जी ने तो शृंगारिक किशोर लीलाओं का प्रचुरता से वर्णन किया है, और वल्लभ सम्प्रदाय के अन्य कवियों ने भी मधुर भक्ति के रूप में युगलोपासना, निकुंजलीला, नित्यविहार एवं सखी भाव का प्रचुर साहित्य रचकर इस परंपरा को समृद्ध किया है।

अष्टछाप के कवियों में सर्वाधिक उल्लेखनीय सूर परमानन्द तथा नन्ददास को माना जाता है। इनके काव्यों में सर्वाधिक रस प्रवणता शृंगारी विरह में प्राप्त हैं। अष्टछाप के कवियों ने वात्सल्य, सख्य व माधुर्य की भावसाधना की है, विशेषतः मधुराभक्ति की दृष्टि से संयोग व वियोग दोनों पक्षों की परिकल्पना गोचर होती है।[२३] अष्टछाप के प्रमुख कवि सूर ने "सूरसखी" व "सूर सुजान" के सख्य रूप में रचना की हैं तो कृष्णदास अपने उद्दाम सखी भाव के कारण" ललिता सखी के अवतार ही माने गये हैं। कुंभनदास जैसे वरिष्ठ कवि के काव्य में भी मधुररस की प्रचुरता है।[२४]

श्री चतुर्भुजदास का काव्य : श्री चतुर्भुजदास जी भी अष्टछाप के कवियों में अपने प्रकार के विशिष्ट कीर्तनकार थे। आप श्री विट्ठलनाथ जी के अनुगत थे तथा उन्हीं की कृपा से सन् १६०२ में अष्टछाप में सम्मिलित हुए। श्री चतुर्भुजदास संध्या भोग के कीर्तनकार थे। इनका काव्य परिमाण अधिक नहीं है, फिर भी रस प्रवण सख्यभक्ति एवं मधुररस का विशिष्ट काव्य है। चतुर्भुजदास के काव्य में युगल भक्ति के ऐकान्तिक शृंगार लीलाओं की प्रचुरता है। सामान्यतया लौकिक दृष्टि सम्पन्न प्राकृत जन ऐसे काव्य में लौकिक शृंगार तथा कामुक वृत्ति का दर्शन करते हुए भटक जाते हैं, जबकि भक्ति दर्शन एवं रस प्रवणता की दृष्टि से यह अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

सखीभाव में युगल सरकार की केलिलीला-विलास का ध्यान एवं वर्णन विरल सौभाग्यशाली भक्त ही कर सकते हैं। तत्वतः राधा एवं कृष्ण में कोई अन्तर नहीं है और वे परस्पर नित्य संपृक्त रहते हैं, चन्द्रमा की चांदनी की तरह उनके पृथकत्व की कल्पना ही असंभव है।

श्री चतुर्भुजदास के शृंगारिक लीला वर्णन में अलौकिक आलंकारिकता का सहज सान्निवेश हुआ है। एक स्थान पर उन्होंने लिखा -है-

"खसकि कंचुकी, पिय परसत परसत, बरसत रस दृग कोरे" (पद १२८)

प्राकृत जनों के ऐसे स्थलों पर भले ही लौकिक कामवृत्ति के दर्शन हुआ करें, पर भक्त को अपने आराध्य के ऐसे नित्य विहार एवं निकुंज लीला के रहस्यमय ऐकान्तिक प्रसंगों में अपूर्व दिव्यता की ही अनुभूति होती है।

चतुर्भुजदास जी के श्री कृष्ण साक्षात् रसस्वरूप हैं और श्री राधारानी रसराशि की अनुरागमयी अंकुर। उन्होंने लिखा है-''रूप राशि रसरासि रसिकनि नव अंकुर अनुराग मई।'' आदि

श्री चतुर्भुजदास जी का संपूर्ण काव्य लीलाधर्मी है। यूं तो श्री कृष्ण की सभी लीलाएं रसमयी हैं, किन्तु संयोग शृंगार तो महारास ही है। श्री राधाकृष्ण सदा ही अपने सनातन दिव्य रतिरस में निमग्न रहते हैं। भागवत कवि श्री चतुर्भुजदास जी ने आराध्य की निकुंज लीला एवं संयोग-वियोग को अपने दिव्य नेत्रों से अनुभव किया है। अतएवं वे बार-बार लिखते हैं -

''रतिपति रसरंग सहित तन निहारती'' तथा ''रतिरसपागे श्याम'' आदि। चतुर्भुजदास जी रसिक-सिरमौर की लीलाओं पर विमुग्ध हैं। उन्हीके शब्दों में-

''चतुर्भुज प्रभु लीलारस रीझत, गिरिधर लाल रसिक-सिरमौर।'' तथा'' चतुर्भुज प्रभु गिरिधर कौ रूप-रस पिबत नयन पुट तृपिति न पाबत।।''

श्री चतुर्भुजदास ने अपने आराध्य श्री राधा कृष्ण की लीलाओं का शब्द चित्रमय प्रभावी वर्णन किया है। श्री कृष्ण अपने लीलारस पर स्वयं आसक्त हैं और रसमय होकर ही क्रीड़ा करते हैं-

''खेलत अति रसभरे मगन-मन नवल किशोर रु नवल किशोरी।

श्री कृष्ण का लीलारस कोई सांसारिक रस नहीं, बल्कि अनेक गुणों की राशि है, जिसका कवि गान करता है-अगणित गुन रसगान करति है। ''प्रभु के रास-रस को देखकर चन्द्रसूर्य ही अपनी गति से विरत नहीं होते, वरन् सारा जड चेतन ही स्तम्भित हो जाता है :-

''चतुर्भुज प्रभु'' स्यामास्याम की नटनि देखि, मोहे खग मृग वन, व्योम थकित विमान।''आदि,

श्री राधाकृष्ण के नित्याविहार में एकाकारहोने पर रसरंग और भी गहरा होकर व्यंजित होता है-

''चतुर्भुज स्याम तमाल पर लपटी कनक बेलि। मानो रति रन चढयौ प्रेम रंग रस बोरें।''

इस में रूपक, उपमान, उत्प्रेक्षा का सहज प्रयोग देखते ही बनता है। श्री चतुर्भुजदास जी बडे ही भावुक एवं रसिक कवि थे। उन्होंने प्रत्येक लीला का हृदयस्पर्शी स्वाभाविक वर्णन किया है, किंतु मन संयोग में ही रमा है।

संयोग में प्रेम मग्न होने पर एक घनीभूत रस वशता की अनुभूति रह जाती है। कवि ने लिखा है-

''प्रेम मगन रसबस भई स्याम मनोहर नारिं।''

कवि के अनुसार रसवश की अवस्था अद्भुत 'रसभीनी' अवस्था होती है। उस रसमयी अवस्था को कौन कवि वर्णन कर सकता है, कोई नहीं। अतः कवि ने लिखा है-

''चतुर्भुज प्रभु रसराशि रसिक की बानक बरनै को ऐसो कवि।''

श्री चतुर्भुजदास के लीलामय श्री कृष्ण रस के निर्झर हैं। पुष्टिभक्ति के अनुसार भी रसस्वरूप का ध्यान व गान करते हुए रसपान करना ही अभीष्ट होता है। यह आत्म विगलन सुलभ अनंदानुभूति सौभाग्यवान को ही सुलभ होती है। चतुर्भुजदास इस अर्थ में बड़भागी है, उन्हीं के शब्दों में-''चतुर्भुज प्रभु रसराशि रसिक को बड़े भाग बल इकटकु पेखें।''

भक्ति काव्य में लीला के दो रूप प्रमुखता से मिलते हैं ; बालरूप तथा किशोर रूप। मधुर रस के गायकों ने बाल वर्णन के प्रसंग में भी गोपियों का प्रेम प्रदर्शित किया है। यहाँ प्रेम वर्णन में रति या प्रीति प्रदर्शित करने में आयु बन्धन नहीं माना है। क्योंकि मधुर रस कामवृत्ति न होकर आत्मिक मनोवृत्ति है। मधुररस के भक्त कवि प्राय : लीलागान या आत्माभिव्यंजन के रूप में काव्य रचना करते रहे हैं। ब्रज के अधिकांश कवियों ने लीलागान किया है, जबकि आत्माभिव्यंजना में मीरा एवं सूर बेजोड हैं। लीला गान में भी मधुर रस के कवियों ने श्रांगारिक लीला विशेषतः संयोग-वियोग की लीलागान को ही भक्ति की चरितार्थता माना है।

यूं अष्टछाप के कवियों का काव्य या वर्णन बहुत संयत व मर्यादित है। श्री चतुर्भुजदास के कुछ पदों में अवश्य उन्मुक्त श्रांगारिक चित्र दीख पड़ते हैं, अन्यथा नित्य लीला वर्णन में भी वैष्णव व मर्यादा का निर्वाह हुआ है। श्री चतुर्भुजदास के काव्य में भाव प्रवणता का सहज निर्वाह हुआ है। राधाकृष्ण का अन्योन्य, नित्यविहार तथा नित्य संयोग वर्णन भी, कवि के काव्य में, भक्ति दर्शन की दृष्टि से परम निर्मल, आत्मोन्नायक तथा ब्रह्मानंद की अनुभूति कराने वाला है। श्री चतुर्भुजदास के किशोर लीला के पदों में अनेक प्रकार के वर्णन है , विशेषतः गोपी प्रेम के पदों में संयोग की घनीभूत मधुर व्यंजना हुई है और रूप सौन्दर्य और साहचर्य दोनो रूपों में मधुर रस की मार्मिक अभिव्यंजना हुई

है। निःसन्देह चतुर्भुजदास जी ने पुष्टिभक्ति की मार्यादा में ही सफलतापूर्वक उत्कृष्ट भावप्रधान माधुर्यपूर्ण काव्य की रचना की है।

-४४. स्कीम ५, मंगल विहार
अलवर(राज.)

---

(१) देखो, अणुभाष्य १/२/५/२६, १/४/१//, २/२/८, आदि तथा तत्व दीप निर्णय निबन्ध आदि।
(२) "सर्वस्व शुद्ध ब्रह्मत्वं दर्शितव्यम् "अ. भा १/२/४/६
(३) तस्मात्साकार ताहशमेव ब्रह्म अ.भा.१/१/६/१६
(४) "पुष्टिमार्गीयस्य भक्तस्य तु स्नेश्नुत इत्यनेनोक्ता पर प्राप्ति रिति" अ.भा. ४/४/२/११-
(५) 'यदा भगवान् लीलारूपेण प्रकटो जातः तदा तस्यां लीलायां यो रसः स एवं ब्रह्माणि, परं नायिवयक्त :।" सुबोधिनी।
(६) श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चन्नं वंदनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।। भागवत ७/५/२३
(७) "रसस्तु गोपिकाविरेव मुक्त :, त एव हि रसं जानन्ति। " सुबोधिनी १०/१२/४३
(८) रस गंगाधर पृ. ४५ सुबोधिनी १०/१२/४३
(६) 'भक्ति की रससस्थिति" लेख डा. श्याम शर्मा वशिष्ठ 'परिषद पत्रिका", विहार,
(१०) भक्ति साहित्य में मधुरोपासना : परशुराम चर्तुवेदी, पु. १६०, (११) वही,
(१२) भक्ति सा. में मधुरोपासना :चतुर्वेदी, पृ. १६०
(१३) भक्ति काव्य ....में रसः प्रेमस्वरूप, पृ. २१५।
(१४) भक्ति साहित्य में मधुरोपासना प्र. १६५ ;
(१५) वही, पृ. १६५-८। (१६) वहीं, पु. १५१। (१७) वहीं, पृ. १५२।
(१८) हरिभक्ति रसामृतसिंधु पृ. १०२ (१६)भक्ति साहित्य में मधुरोपासन। पृ. १५३
(२०) अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय : दीनदयालु गुप्त, पृ. ५२७,
(२१) महाप्रभु जी ने मधुर रूप के सम्बन्ध में लिखा है
-"गोपिकाव्याप्त सर्वागः स्त्री संभाष विशार दः।"
रासोत्सव महासौख्य गोपी संभोग सागरः।। पुरुषोत्तम नाम संग्रह
तथा दृष्टव्य-श्री कृष्ण प्रेमामृतम् श्लोक ३३, एवं २४;
(२२) हिन्दी
(२३) हिन्दी वैष्णव में रस परिकल्पना, पृ. २८६,
(२४) भक्ति सा. में मधुरोपासना, पृ. १८७।
(२५) वही, पृ.१६७-८।

साक्षात् सत्संग भगवदीय चतुर्भुजदासजी

✍ गोपेशशरण शर्मा 'आतुर'

परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदास जी परम भागवत श्री कुंभनदासजी के पुत्र थे। इनका जन्म जमुनावता में हुआ था। श्री कुंभनदास जी तथा श्री चतुर्भुजदासजी दोनों अष्टछाप के भगवदियो में से है। श्री कुंभनदासजी जगद्गुरु महाप्रभु श्रीमद् वल्लाभाचार्य जी के शिष्य थे तथा श्री चतुर्भुजदास श्रीमद्विट्ठलेश प्रभुचरण के शिष्य थे। वह परिवार धन्य है जिसके ये पिता-पुत्र दोनों भगवदीय अष्टछाप के अंतर्गत हैं।

जिस प्रकार भगवान् के विषय में कहा गया है - 'वागीश किं ते वचनीयमस्ति' उसी प्रकार जीव अपने लौकिक मन, बुद्धि एवम् वाणी से इन भगवदियों के अलौकिक चरित्रों का वर्णन करने में समर्थ नहीं है। महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्य जी 'पुष्टि प्रवाहमर्यादा भेद' ग्रन्थ में भक्तों के विषय में आज्ञा करते हैं :-

स्वरुपेणावतारेण लिंगेन च गुणेन च।

तारतम्यंन स्वरूपे देहे वा तत्क्रिया सुवा।

अर्थात् भगवान् के स्वरूप से भक्तों के स्वरूप में भगवान् की देह से भक्तों की देह में तथा भगवान् की क्रिया से भक्तों की क्रिया में तारतम्य नहीं है अर्थात् भगवान् के समान ही हैं। भक्तों के चरित्र भी भगवान के चरित्रों की तरह ही अलौकिक होते हैं अतः उनका वर्णन लौकिक वाणी से किस प्रकार किया जा सकता है। फिर भी श्री चतुर्भुजदासजी के विशद चरित्र में से कतिपय बातों का उल्लेख कर, प्रभुकृपा से, अपनी वाणी को पवित्र करने का प्रयास किया जाता है।

श्री मद् भागवत के प्रथम स्कंध में उल्लेख है - .

''तुलयाम लवेनापि न स्वर्ग नापुनर्भवम्।

भगवत्संगिसंगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः।।''

अर्थात् भगवान् के संगी भक्त के एक क्षण के संग के बराबर स्वर्ग तथा

मोक्ष भी तुलना में नहीं हैं तो मरणधर्म वाले राज्यादिक के मनोरथ की तो कैसे तुलना की जा सकती है।

श्रीमद् भागवत के ही एकादश स्कंध में श्री भगवान् उद्धव जी से कहते हैं -

''न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्त न दक्षिणा।।
व्रतानि यज्ञश्छंदासि तीर्थानि नियमा यमाः।।
यथावरुंधे सत्संगः सर्वसंगापहो हि माम्।।

तभी तो कुंभनदास जी जैसे परम भगवदीय, जिनके साथ श्रीनाथजी क्रीड़ा करते तथा जिनसे बातें करते थे, भी सत्संग के लिए उदास रहते थे। छः पुत्र होने के बाद भी श्रीकुंभनदास जी के मन में यह मनोरथ रहता था कि कोई ऐसा पुत्र नहीं हुआ जिससे अपने मन का सब भाव कहा जा सके और भगवद्वार्त्ता की जा सके। इस सत्संग के लिए वे उदास रहते थे।

'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' के अनुसार ''एक दिन श्री गोवर्द्धननाथजी ने परासोली में कुंभनदास सों पूछी, जो कुंभना! तू उदास क्यों है ? तब कुंभनदास ने कही, महराज! सत्सग नाहीं है। फेरि श्री गोवर्द्धननाथजी ने मुसिक्याय के कहयौ, जो अरे कुंभना! सत्संग कौ फल जो मैं सो तेरे पाछें पाछें डोलत हों, तोहू तोकों सत्संग की चाहना है ? तब कुंभनदास ने कही, जो महाराज। भगवदियन के संग बिना जीव आपके स्वरूपानंद कों कैसे जाने ? आप के स्वरूप में रह्यौ जो आनंद सो तो भगवदीय ही जानत है, और जानत नाहीं। तातें, भगवदीय के संग बिना आपके स्वरूप में मन उरझत नाहीं है। तब श्री गोवर्द्धननाथजी ने हँसि कै आज्ञा करी जो कुंभना ! तू धन्य है, जा मैंने तोकों सत्संग के लिए भगवदीय पुत्र दियो।''

श्री गोवर्द्धननाथजी ने कृपा करके श्री कुंभनदासजी को चतुर्भुजस्वरूप से दर्शन दिया तथा तदुपरान्त उनके जो पुत्र हुआ उसका नाम उन्होंने चतुर्भुजदास रखा।

धन्य हैं कुंभनदासजी जो श्रीनाथजी के साक्षात्कार के उपरान्त भी भगवदीय के सत्संग के लिए इतने लालायित रहे तथा उनकी इच्छा पूर्ण करने के लिए श्रीनाथजी ने परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदासजी के रूप में मूर्तिमान् सत्संग उन्हें प्रदान किया।

'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' के अनुसार, ''सो जब एकांत में कुंभनदासजी बैठे होई तब चतुर्भुजदास श्री गोवर्द्धननाथजी की वार्ता, लीला कौ भाव और श्री आचार्यजी श्री गुंसाई जी की वार्ता करें। तब दोऊ जने परस्पर आनंद कों पावें। और जब कोऊ तीसरो जनो आवे तब चतुर्भुजदास बालकों की नांई मुग्ध होय रहें।''

एक दिन अर्द्धरात्रि के समय श्री गोवर्द्धननाथजी के मंदिर में दीपक बलता हुआ देखकर कुंभनदासजी ने चतुर्भुजदासजी को सुनाकर कहा :-

'' वे देखो बरत झरोखा दीपक हरि पोढ़े ऊँची चित्तरसारी।''

यह सुनकर चतुर्भुजदासजी ने कहा :-

''सुंदर बदन निहारन कारन राखे हैं बहुत जतन करि प्यारी।।''

यह सुनकर कुंभनदासजी बहुत प्रसन्न हुए और चतुर्भुजदास जी से पूछा, ''तोकों या लीला कौ अनुभव भयो ?''

चतुर्भुजदास जी ने कहा, ''जो श्री गुसाईंजी की कृपा तें और श्री आचार्य जी महाप्रभुन की कानि ते यह लीला कौ अनुभव श्री गोवर्द्धन नाथजी आप जनावत हैं।''

यह सुनकर कुंभनदासजी बहुत प्रसन्न हुए तथा पद पूर्ण करके चतुर्भुजदासजी को सुनाया। इस प्रकार पिता-पुत्र का अंतरंग सत्संग होता था तथा वे श्रीनाथजी के स्वरूपानंद में सदैव मग्न रहते हुए उनकी लीलाओं का गान तथा रसास्वादन करते थें।

श्री विट्ठलेश प्रभुचरण के अनन्य सेवक तथा श्रीनाथजी के सखा परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदासजी का ब्रजभाषा साहित्य उच्चकोटि का सरस तथा अलौकिक साहित्य है।

–'वल्लभीय'५६, कृष्णनगर,
भरतपुर (राजस्थान)

हिन्दी साहित्य में चतुर्भुजदास

✍ डा. रामप्रकाश कुलश्रेष्ठ

हिन्दी साहित्य ग्रंथों का अध्ययन करने पर अनेक चतुर्भुजदास से भेंट होती है। हिन्दी साहित्यकोश[1] (भाग २) में निम्नलिखित उल्लेख मिलते हैं –

१. **चतुर्भुज** - रीति परम्परा में इस नाम के दो कवियों का उल्लेख मिलता है। एक अयोध्या प्रसाद वाजपेयी 'औध कवि' के भाई थे, जिनका जन्म–स्थान सातन पुरवा (जिला–रायबरेली) था। भगवतीप्रसाद सिंह ने इनका उपस्थिति–काल १८०३ ई. माना है और दूसरे कुलपति मिश्र के वंशज भरतपुर के राजा जसवन्तसिंह के दरबारी कवि हुए हैं। इनका समय १८१२ ई. के आसपास माना गया है। ' दिग्विजय भूषण' में प्रथम के छंद उदाहृत हो सकते हैं, क्योकि गोकुल कवि तथा औध कवि में मित्रता थी और ' अलंकार आभा' नामक काव्यशास्त्रीय ग्रंथ द्वितीय का माना जा सकता है। भगीरथ मिश्र ने इस ग्रंथ का रचना–काल १८३६ ई. माना है।

२. **चतुर्भुज औदीच्य** - चतुर्भुज औदीच्य (रचना काल १६०४ ई.) द्विवेदी युग के निबन्धकार थे। ऐसा लगता है कि वे उन लेखकों में से थे, जो साहित्य को जीवन का अनिवार्य अंग या व्यापार न बनाकर कभी–कभी लिखते हैं। ऐसे लेखक गौण होते हुए भी साहित्य के लिए अपेक्षित वातावरण बनाने में सहायक होते हैं। औदीच्य का 'कवित्व' नामक निबन्ध बहु प्रशंसित है। 'कवित्व' निबन्ध में भाव, उपादान और शैली सभी महत्त्वपूर्ण थे। इस निबन्ध का मूलाधार बंगला के पंचानन तर्करत्न का 'कवित्व' शीर्षक निबन्ध है। यह रुप और शैली में खंडकाव्य के निकट पहुँचता है। यह चार अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में कवित्व की प्रशंसा, द्वितीय में कवित्व का जन्म, तृतीय में कवित्व का भाषा से विवाह तथा चतुर्थ में मिथ्या (कल्पना) का कवित्व से सम्बन्ध स्थापन किया गया है। 'इस प्रकार लेखक ने एक बहुत ही कवित्वपूर्ण रूपात्मक कहानी की स्रष्टि की, जिसमें कवित्व, भाषा, मिथ्या और कल्पना का मानवीयकरण हुआ है।'' सम्भवतः ऐसे ही निबन्धों को ध्यान में रखकर रामचन्द्र शुक्ल ने कविता की भाषा का प्रयोग आलोचना के क्षेत्र में अनुचित माना है। वस्तुतः इस निबन्ध को अलोचना के क्षेत्र से अलगकर शुद्ध कलात्मक निबन्ध के अन्तर्गत परिगणित करना चाहिए ।

---

१. वर्मा, धीरेन्द्र (सं.) – हिन्दी साहित्य कोश (भाग–२), पृ. १६६–१७०

३. **चतुर्भुजदास (अष्टछापी)** - हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में चतुर्भुजदास नाम के दो प्रसिद्ध कवियों का उल्लेख प्राप्त होता है। चतुर्भुजदास नाम के एक भक्त कवि अष्टछाप के सुप्रसिद्ध कवि हैं और दूसरे राधावल्लभ सम्प्रदाय के भी एक भक्त कवि इसी नाम के हुए हैं। प्रारम्भ में दोनों की ही रचनाओं को भ्रमवश एक ही समझा जाता रहा, किंतु डा. दीनदयालु गुप्त ने 'अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय' ग्रंथ में इस भ्रम का निवारण किया है।

अष्टछाप के भक्त कवि चतुर्भुजदास का चरित 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' और 'अष्टसखान की वार्ता' में मिलता है। उनका जन्म सन् १५३० ई. में स्थिर किया जाता है। 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम' के अनुसार उन्होंने सन् १५४० ई. में दीक्षा ग्रहण करके पुष्टिमार्ग स्वीकार किया था। उनका निधन सन् १५८५ ई. में हुआ। चतुर्भुजदास की शैशव से ही कविता में रूचि दिखने लगी थी। अष्टछापी कवि कुंभनदास की वे सातवीं संतान थे। अपने पिता के काव्य रचना संस्कारों से परिपूर्ण होने के कारण आपने पिता द्वारा सर्वाधिक प्रेम तथा वात्सल्य प्राप्त किया था। उनका जन्म स्थान जमुनावतो नामक गाँव था, जो गोवर्धन के समीप ही है।

चतुर्भुजदास ने किसी ग्रंथ विशेष की रचना नहीं की। स्फुट पदों के रूप में ही उनकी काव्य–रचना प्रक्रिया अजीवन चलती रही। उनके पदों के तीन संग्रह काँकरोली विद्या विभाग की ओर से 'चतुर्भुज कीर्तन संग्रह, कीर्तनावली और 'दानलीला' शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं।' उनकी कविता में भक्ति–भावना और माधुर्य श्रृंगार की अच्छी छटा दृष्टिगत होती है। भगवान कृष्ण के जन्म से लेकर गोपी विरह तक के प्रसंगों का उनके पदों में वर्णन है।

'मधु मालती' नामक एक रचना चतुर्भुजदास के नाम से प्रसिद्ध है, किन्तु यह रचना किसी और चतुर्भुजदास की प्रतीत होती है। सभी अन्वेषक विद्वान इसे अन्य व्यक्ति की कृति स्वीकार करते हैं।

४. **चतुर्भुजदास (राधावल्लभीय)**[१]– राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रसिद्ध भक्त चतुर्भुजदास का वर्णन नामा जी ने अपने 'भक्तमाल' में किया है। उसमें जन्म स्थान, सम्प्रदाय, छाप और गुरु का भी स्पष्ट संकेत है। ध्रुवदास ने भी 'भक्त नामावली' में इनका वृत्तान्त लिखा है। इन दोनों जीवन वृत्तों के आधार पर चतुर्भुजदास गोंडवाना प्रदेश, जबलपुर के समीप गढ़ा नामक गाँव के निवासी थे। इन्होंने अपनी प्रसिद्ध कृति 'द्वादश यज्ञ' में रचना संवत् दिया है। सेवक जी दामोदरदास के समकालीन थे, अतः इन दोनों आधारों पर इनका जन्म संवत् १५८५ (सन् १५२८ ई.) के आसपास निश्चित

१ वर्मा, धीरेन्द्र (सं.) हिन्दी साहित्य कोश (भाग–२), पृ. १६६–१७०

किया जाता है। इनके बारह ग्रंथ उपलब्ध हैं, जो 'द्वादश यज्ञ' नाम से विख्यात हैं। सेठ मणिलाल जमुनादास शाह ने अहमदाबाद से इनका प्रकाशन करा दिया है। ये बारह रचनाएँ पृथक्–पृथक् नाम से भी मिलती हैं। 'हितजू को मंगल', मंगलसार यश' और 'शिक्षा सार यश' इनकी उत्कृष्ट रचनाएँ हैं।

चतुर्भुजदास की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा नहीं है, उस पर बैसवाड़ी और बुन्देली का गहरा प्रभाव है। वे संस्कृत भाषा के भी विद्वान थे, उन्होंने अपने 'द्वादश यश' ग्रंथ की टीका स्वयं संस्कृत में लिखी है। उनकी संस्कृत भाषा में अच्छा प्रवाह है।'द्वादश यश' के अध्ययन से यह भी विदित होता है कि भक्ति को जीवन का सर्वस्व स्वीकार करने पर भी उन्होंने दम्भ और पाखण्ड का पूरे जोर के साथ खण्डन किया है। कुछ स्थलों पर अपने युग के दुष्प्रभावों का भी वर्णन है। गुरु सेवा आदि पर बल दिया गया है। काव्य की दृष्टि से बहुत उच्च कोटि की रचना इसे नहीं कहा जा सकता, किन्तु भाव–वस्तु की दृष्टि से इसका महत्व है।

'भरतपुर कवि–कुसुमांजलि' में 'चतुर्भुज मिश्र' और 'रावत चतुर्भुजदास' का उल्लेख मिलता है

चतुर्भुज मिश्र–ये भरतपुर निवासी तुलसीराम के आत्मज खुस्याली राम के पुत्र और जाति के ब्राह्मण थे। इन्होंने 'अलंकार आभा' नामक ग्रंथ की रचना की है, जिसमें अप्पै दीक्षित के आधार पर अलंकारों के बड़े ही रोचक उदाहरण दिये हैं। ग्रंथ रचना–काल के विषय में कवि ने लिखा है–

सम्वत् रस निधि वसु ससी, सिसिर मकर गत भान।
पाख असित तिथि पंचमी, सुरगुरु समय प्रमान।

इस प्रकार इनका कविता काल १८९६ वि. ठहरता है। इनके ग्रंथ की भाषा बड़ी ही रोचक तथा शैली प्रभावोत्पादनी है। उदाहरणार्थ–

विशेषोक्ति लक्षणम् (दोहा) -

पूरन कारन होत हू, कारज उपजै नाहिं।
ताहि 'विशेषोकति' वरण, बुध जन सकल 'सिहाहिं।।

उदाहरण (सवैया) -

हुँ न करूँ सुधि भूलि अबै तउ जात उतै चित मान बसेरौ।
भूख लगै तउ स्वात बनैं न सुनूँ न कछू श्रुति राखहुँ नेरौ।।

१. भरतपुर कवि–कुसुमांजलि, पृ. ११०

सोऊँ तऊ नहिं आवत नींद सह्यौ किन जातरी सो दुख रेरौ।
काम मसाल जरे उर में तऊ नेह न रंच घटै बलि मेरौ।।[1]

रावत चतुर्भुजदास साहित्याचार्य –आपका जन्म एक प्रतिष्ठित चतुर्वेदी कुल में संवत् १६६० वि. में हुआ। इनके पिता का नाम श्रीराधामोहन चतुर्वेदी था। ये बड़ी ही हँसमुख और सरली प्रकृति के थे। शैशव से ही आपकी अभिरूचि काव्य सृजन की ओर थी परन्तु इसका प्रस्फूटन विशेषरूपेण युवा काल में ही हुआ। आप ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों पर समान अधिकार रखते थे और पद्य तथा गद्य दोनों में सामंजस्य पाया जाता है, भाषा भावानुकूल बदलती रहती है। इन्होंने विविध विषयों पर अब तक लगभग ५१ पुस्तकें लिखी हैं, जिनमें से अधिकांश मुद्रित हो चुकी हैं। आपने भरतपुर स्थित राजकीय अद्भुतालय के अध्यक्ष पद पर रहते हुए हिन्दी की असाधारण सेवाएँ की हैं। 'चतुर्भुज सतसई' से उदाहरण द्रष्टव्य है–

ओछे घट उछरें बहुत, भरे न बोलें बोल।
नीच कीच पांयन खुंदत, अमल कमल सिर डोल।।
जब तक चिनगारी नहीं, चमकैगी तुम माँहि।
तब तक तकते रहोगे, सदाँ और की छाँहि।।[1]

डा. सत्येन्द्र ने 'ब्रज साहित्य का इतिहास'[2] में तीन चतुर्भुजदास का उल्लेख किया है। 'चतुर्भुजदास' अष्टछाप के ही एक कवि कुंभनदास के पुत्र थे। इनका जन्म सं. १५८७ में जमुनामतौ गाँव में हुआ था। ये दस वर्ष की आयु में ही पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए थे। ये पद गाकर श्रीनाथजी के कीर्तन में आजीवन मग्न रहे। काव्य शक्ति का प्रादुर्भाव तो इनमें बचपन से ही हो गया था। इनके रचित पदों के तीन संग्रह मिलते है। कीर्तनावली, दानलीला तथा कीर्तन संग्रह।

डा. सत्येन्द्र लिखते हैं, 'मधुमालती', 'भक्ति प्रताप', 'द्वादशयश' तथा 'हितज्' कौ मंगल नामक ग्रंथ भी इनके रचित माने जाते हैं, पर 'मधुमालती' तो प्रेमगाथा है और चतुर्भुजदास निगम की रचना है। 'हितजू कौ मंगल' राधावल्लभी चतुर्भुजदास की है। इसी प्रकार भक्ति प्रताप तथा द्वादश यश भी किसी अन्य के प्रतीत होते हैं।''

श्री चतुर्भुजदास का जन्म गौड़ देश में गढ़ा नामक प्रसिद्ध गाँव में हुआ। श्री सेवक जी के आप परम सुहृद कहे जाते हैं। सेवक जी के समवयस्क होने के कारण आपका जन्म सं. १५८५ के आसपास ठहरता है। 'द्वादशयश' नामक

---

१. बद्री, पृ. १८७–१८८
२. डा सत्येन्द्र–ब्रज साहित्य का इतिहास, पृ. १५४

ग्रंथ के द्वितीय यश में रचनाकाल इस प्रकार दिया है–

सम्वत् सोरह सौ चौरासी अधिक द्वै वरष सिरानी जू।
मुरलीधर वर भक्ति चतुर्भुजदास प्रताप बखानी जू।।

इसके आधार पर सं १६८६ इसका रचना–काल निर्धारित होता है। यदि इसी को अंतिम रचना माना जाय तो सं. १६६० के आसपास इनका निधन–काल ठहरेगा।

श्री चतुर्भुजदास के ग्रंथ 'द्वादशयश' नाम से प्रसिद्ध है–शिक्षा सकल समाज यश, धर्म विचार यश, भक्ति प्रताप यश, सत प्रताप यश, शिक्षासार यश, हितोपदेश यश, पतितपावन यश, मोहिनी यश, अनन्य भजन यश, राधा सुप्रताप यश, मंगल सार यश, विमुख भंजन यश। 'द्वादश यश' के अतिरिक्त चतुर्भुजदास के फुटकर पद भी मिले है।[1]

डा. सत्येन्द्र के अनुसार चतुर्भुजदास निगम कायस्थ थे। नाथा के पुत्र राम के ये पुत्र थे। इन्होंने ही यह मधुमालती कथा लिखी–

कायथ निगम सकुल इहैं, नाथा सुत भयौ राम।
तनय चतुर्भुज तास कर, कथा प्रकासी ताम।।

यह कथा भी कामकथा या काम प्रबन्ध है-

काम प्रबंध प्रकासफुनी, मधुमालती विलास।
प्रदुमन की लीला इहै, कहत चतुर्भुजदास।।

प्रद्युम्न काम के अवतार माने गये हैं और कवि अपने 'मधु' को भी काम–अंश बताता है–

किशन देव कौ कुँवर कहावै, प्रदुमन काम अरू मधु गावै।'

'मधुमालती' के सम्बन्ध में कवि ने यह भी बताया है कि –
राजनीति की यामै साखी – राजनीति है
पंचाख्यान बुद्धि इहि भाखी – पंचतंत्र भी है
चानाइक चातुरी बताई, थोरी थोरी सबही आई – चाणक्य नीति है
फुनि बसंत राज रस गायो– बसंत और श्रृंगार रस का वर्णन

रसिक के लिए इसमें रस है, आत्मा के लिए अध्यात्म है, चतुर पुरुष के लिए रसकथा है–इस प्रकार प्रेमकथा के बहाने कई काम चतुर्भुजदास ने साधे

१. डा. सत्येन्द्र ब्रज साहित्य का इतिहास, पृ. २२६
२. बही– वही, पृ. ४६२–४६३
३. गुप्त, मोतीलाल डा.–मत्स्य–प्रदेश की हिन्दी–साहित्य को देन, पृ. २४८,२७५ 'चत्रभुजदास कृत मधुमालती कथा की दो प्रतियाँ मिली जिनमें एक सचित्र है। चतुर्भुजदास कामस्थों में निगम कुल में उत्पन्न हुए

हैं। 'मधुमालती' बहुत लोकप्रिय रचना थी। यह मंझन की मधुमालती' से पहले की कृति है और अकबर के समय में बनारसीदास जैन ने अर्द्धकथा में इसी मधुमालती का उल्लेख किया है।

'शिवसिह सरोज' में दो चतुर्भुज कवियों का उल्लेख मिलता है। प्रथम कवि है–चतुर्भुज (२३०/१६१)। इनकी सुन्दर कविता है। सरोज सर्वेक्षणकार ने लिखा है, 'सरोज वाले यह चतुर्भुज कवित्त सवैया रचने वाले शृंगारी कवि हैं। इनकी कविता दिग्विजय भूषण से उद्धृत की गई है। रीति परम्परा पर चलने वाले निम्नांकित दो चतुर्भुज खोज में मिले हैं। इन्हीं में से एक प्रसंग प्राप्त चतुर्भुज होने चाहिये–

(१) चतुर्भुज वाजपेयी– नन्द किशोर के पुत्र, सातन पुरवा, जिला रायम बरेली, अयोध्या प्रसाद वाजपेयी 'औध' के भाई, सं. १८६० के लगभग वर्तमान।

(२) चतुर्भुज मिश्र– गौतम गोत्रीय अहलुवा अल्ल के सुकुल । राम कृष्ण मिश्र के पुत्र कुलपति मिश्र के वंशज, भरतपुराधीश महाराज बलवंत सिंह के आश्रित। सम्वत् १८६६ में 'अलंकार आभा' की रचना की।

"चतुर्भुजदास (२३१/१६४), संवत् १६०१ में उ. । राग सागरोद्भव में इनके बहुत पद हैं। यह महाराज स्वामी विट्ठल नाथ करौली के राजा गोकुलस्थ के शिष्य थे। अष्टछाप में इनका भी नाम है।"

'शिवसिंह सरोज' के इस विवरण पर टिप्पणी करते हुए सरोज सर्वेक्षणकार ने लिखा है, 'भक्तमाल में अष्टछापी चतुर्भुजदास का उल्लेख नहीं है, यहाँ दो अन्य चतुर्भुजदास हैं–

(१) करौली नरेश चतुर्भुज की, छप्पय११४–
यह रीति करौलीधीश की तन मन धन आयो धरैं।
चतुर्भुज नृपति की भक्ति को कौन भूप सरबर करैं।।

सरोजकार ने प्रमादवश विवरण में अष्टछापी चतुर्भुजदास एवं इन करौलीधीश चतुर्भुज का घालमेल कर दिया है। करौली नरेश कवि नहीं थे। सरोज में उदाहरण अष्टछापी चतुर्भुज का है।

(२) कीर्तन करने वाले, हित हरिवंश के अनुयायी, मुरलीधर छाप रखने वाले राधावल्लभी चतुर्भुज, छप्पय १५८। सरोज में इनका उल्लेख नहीं है।

चतुर्भुजदास अष्टछाप के प्रसिद्ध एवं सबसे ज्येष्ठ कवि कुम्भनदास के पुत्र थे एवं स्वयं भी अष्टछाप में थे। यह गोरवा क्षत्रिय थे। सं. १५८७ के लगभग इनका जन्म हुआ था। सं. १५६७ वि. में १० वर्ष की वय में यह विट्ठलनाथ द्वारा

पुष्टि–सम्प्रदाय में दीक्षित हुये। इन्हें बचपन से ही काव्य और संगीत की शिक्षा मिली थी तथा साम्प्रदायिक रहस्य की भी जानकारी हो गई थी। इनका देहावसान गोसाईं विट्ठलनाथ जी की मृत्यु के अनन्तर ही संवत् १६४२ में गोवर्धन में रूद्रकुण्ड पर हुआ। इनका कोई काव्य ग्रंथ नहीं, फुटकर पद हैं जिनका प्रकाशन सं. २०१४ में विद्या विभाग, काँकरोली से हुआ है। इसमें कुल ३६५ पद हैं। कल्पद्रुम द्वितीय भाग में इनके पर्याप्त पद हैं।[1]

डा. प्रभुदयाल मीतल ने 'अष्टछाप–परिचय' में क्रम संख्या ७ पर चतुर्भुजदास का उल्लेख किया है।[2] डा. धीरेन्द्र वर्मा ने 'अष्टछाप' में क्रम संख्या ६ पर 'चतुर्भुजदास' का उल्लेख किया है। ' अष्टछाप' में 'श्री गुसाईं जी के सेवक चतुर्भुजदास कुम्भनदास के बेटा तिनकी वार्ता[3] का उल्लेख मिलता है। प्रभु दयाल मीतल चतुर्भुजदास का जन्म संवत् १५८७ मानते हैं। उनका शरण–काल 'सम्प्रदाय–कल्पद्रुम के अनुसार सं. १५६७ मानने में कोई बाधा नहीं है। उनका देहावसान भी गो. विट्ठलनाथ जी के लीला प्रवेश के अनंतर सं. १६४२ में होना सर्वमान्य है। चतुर्भुजदास ने कीर्तन के केवल स्फुट पदों की रचना की थी। श्री द्वारिकादास पारीख ने चतुर्भुजदास कथित

ब्रजभाषा गद्य की एक पुस्तक 'खट ऋतु की वार्ता' प्रकाशित की है, किन्तु यह हरिराय जी की रचना ज्ञात होती है।[4] डा. प्रभुदयाल मीतल ने 'ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास' में अष्टछाप के चतुर्भुजदास का उल्लेख किया है। अष्टछाप के उन आठों महानुभावों ने गोवर्धन में निवास कर श्रीनाथजी के कीर्तन के लिए जिन अगणित पदों की रचना की थी, उनसे ब्रज की भक्ति भावना क प्रसार के साथ ही साथ ब्रज के साहित्य और संगीत की बड़ी समृद्धि हुई थी।[5] मीतल जी ने यह भी उल्लेख किया है कि अकबर के दरबार में अनेक हिन्दी कवि थे, नरहरि, गंग, मनोहर, चतुर्भुज ब्राह्मण उसके दरबार में स्थायी वृत्ति पाते थे।[6]

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' (प्रथम भाग) में निम्नलिखित चतुर्भुज[6] का उल्लेख मिलता है–

(१) चतुर्भुज – अकबर बाद्शाह के आश्रित । पिंगल के लेखन।

(२) चतुर्भुज मिश्र - गौतम गोत्रीय शुक्ल ब्राह्मण । राम कृष्ण मिश्र के पुत्र। कुलपति मिश्र के वंशज। भरतपुर नरेश महाराज बलवंत सिंह के आश्रित।

---

१ सरोज– सर्वेक्षण, पृ २८०–८१
२ मीतल, प्रभुदयाल – अष्टछाप–परिचय, पृ ३५
३ डा. धीरेन्द्र वर्मा–अष्टछाप , पृ १०४११२
४ मीतल, प्रभु दयाल–अष्टछाप–परिचय, पृ २७२
५ मीतल, प्रभु दयाल– ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास, पृ ४४०
६ मीतल, प्रभु दयाल ब्रज का वही, पृ. ४६६

सं. १८६६ के लगभग वर्तमान। 'अलंकार आभा' (पद्य) के रचयिता।

(३) चतुर्भुज मिश्र - संभवत : औरंगजेब के सेनापति सायरस्ता खाँ के आश्रित। सं. १७०२ के लगभग वर्तमान। भाषा संग्रह (पद्य) के लेखक।

(४) चतुर्भुज मिश्र - चतुरदास (संतदास के शिष्य) उपनाम चेतनदास। रतलाम या सलेमाबाद निवासी। पूर्व नाम चतुर्भुज मिश्र । निर्मल सम्प्रदाय के साधु। सं. १८६२ के लगभग वर्तमान। कूर्माष्टक (पद्य), गुरु अष्टक (पद्य), जनक नंदिनी अष्टक (पद्य), भागवत (एकादश स्कंध) (पद्य), रामाष्टक (पद्य), वृन्दावन अष्ट (पद्य), सत्यनारायण अष्टक (पद्य), सर्वेश्वर जी का अष्टक (पद्य) के रचयिता।

(५) चतुर्भुजदास– कुंभनदास के पुत्र। गोसाईं विट्ठलनाथ के शिष्य। ये अष्टछाप के कवियों में से हैं। कीर्तन संग्रह (पद्य), चतुर्भुजदास का कीर्तन (पद्य), चतुर्भुज पदमाला (पद्य), द्वादश यश (पद्य), भक्ति प्रताप (पद्य), मृग कपोत की लीला (पद्य), हितजू को मंगल, (पद्य), के रचयिता।

(६) चतुर्भुजदास–वैष्णव। रामपुर मुड़िया (जहाँगीराबाद, (जि. बाराबंकी) निवासी। सं. १६८४ के लगभग वर्तमान। इनके अनुयायी चतुर्भुजी कहलाते हैं। दोहावली (साखी) (पद्य), पद (पद्य), रामचरित्र (पद्य), हरि चरित्र (पद्य) के रचयिता।

(७) चतुर्भुजदास – संभवतः अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास । गोवर्द्धन रूप माधुरी (पद्य) के रचयिता।

(८) चतुर्भुजदास – ब्रज के प्रसिद्ध हित हरिवंश के शिष्य। अष्टछाप के चतुर्भुजदास से भिन्न। सं. १६३२ के लगभग वर्तमान । 'ख्याल टिप्पा' नामक संग्रह ग्रंथ में इनकी रचनाएँ संगृहीत हैं।

(६) चतुर्भुजदास (कायस्थ) निगम कामस्थ। संभवतः राजपूताना (राजस्थान) निवासी। सं १८३७ के पूर्व वर्तमान। मधु मालती कथा (पद्य)के रचयिता।

(१०) चतुर्भुज स्वामी (हित) वनचंद जी के शिष्य और राधावल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी। वृन्दावन निवासी। चतुर्भुज स्वामी जी की बानी (पद्य) के रचयिता।[१]

(११) चत्रर्भुजदास–चतुर्भुजदास (अष्टछाप के प्रसिद्ध .कवि)

'राजस्थानी–हस्तलिखित ग्रंथ–सूची (भाग–२) में 'मधुमालती' चोपई के रचयिता चतुर्भुजदास का उल्लेख मिलता है। चतुर्भुजदास कृत मधुमालती सचित्र, मधुमालती कथा, मधुमालती की बात का उल्लेख मिलता है।

---

१ हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण (प्रथम भाग) पृ. २८२–२८५

'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण (पॉचवाँ खण्ड) में चतुर्भुज कृत 'त्रिविधाद्भुत सागर सार' का उल्लेख मिलता है। इस ग्रंथ का लिपिकाल सं. शाके १७८६ है और लिपि मैथिली है।[1]

पं. गोपाल नारायण बहुरा जी ने 'लिटटेरी हेरिटेज ऑव द रूलर्स ऑव आम्बेर एण्ड जयपुर' में चतुर्भुज मिश्र कृत 'महाभारत टीका (सं. १६६० वि.) वनपर्व, भीष्म पर्व तथा द्रोण पर्व का उल्लेख किया है।[1] इसके अतिरिक्त चतुर्भुज कृत नासकेतु पुराण भाषा, विमुखमुख भंजन तथा साधुमहिमा तथा चतुर्भुजदास कायस्थ कृत मधुमालती कथा (सचित्र १८५० वि. सं.) का उल्लेख किया है।[2]

डा. नरेन्द्र भानावत ने 'आचार्य श्री विनय चन्द्र ज्ञान भंडार ग्रंथ सूची (भाग–एक) में चतुरदास कृत दोहा संग्रह का उल्लेख किया है।[3] बहुरा जी ने संतदास शिष्य चतुरदास का उल्लेख करते हुए उनके दो ग्रंथ–भागवत एकादश स्कंध भाषा तथा वामन चरित्र का भी उल्लेख किया है।[4] डा. कस्तूरचन्द कासलीवाल ने १७ वीं शताब्दी के कवि चतुर्भुज कृत मधुमालती तथा सचित्र ग्रंथ का उल्लेख किया है।

मिश्रबन्धु ने 'मिश्रबन्धु–विनोद' में 'स्वामी चतुर्भुजदास जी का उल्लेख किया है जो अष्टछाप वाले चतुर्भुजदास से भिन्न है। उनका समय १६२५ और इनका सं. १६८४ था। इनके बनाए हुए धर्मविचार, बानी, भक्त प्रताप, संत प्रसाद सिच्छासार, हित उपदेश, पतितपावन, मोहनीजस, अनन्य भजन, राधा प्रताप, मंगलसार, विमुख सुख भंजन हैं। इन ग्रंथों में पदों में ही वर्णन हैं। 'द्वादश–यश' भी इन्हीं की एक रचना है। प्रथम त्रैवार्षिक खोज से इनके एक और ग्रंथ हित जू को मंगल का पता चलता है। मिश्रबन्धु इनको साधारण श्रेणी का कवि मानते हैं। कविता उदाहरणार्थ प्रस्तुत है–

मन ते तन नीचो अति कीजै, देह अमान मानता दीजै।
सहन सुभाव वृक्ष को सो करि, रसना सदा कहत रहिए हरि।
वृषभ वृक्ष पर पाँव न दीजै, क्रीड़ा अर्थ न नीर तरीजै।
आगि गाँव वन में न लगावैं, भोजन जल न अनर्पित पावै।

'मिश्र बन्धु–विनोद में चतुर्भुजदास कायस्थ का उल्लेख किया है। उनके ग्रंथ 'मधुमालती की कथा' का उल्लेख करते हुए उनका रचनाकाल १८३७ के पूर्व माना है।[1]

'मिश्रबन्धु विनोद में 'चतुर्भुज सहाय कायस्थ, महम्मदनगर जिला छपरा का उल्लेख मिलता है, कविता काल है १८०८। ये हतरपूर के दीवान थे। इनको स्फुट रचनाओं का उल्लेख किया है।[2]

मिश्रबन्धु–विनोद (तृतीय भाग) में चतुर्भुज मैथिल का उल्लेख है। इनके ग्रंथ 'भवानी स्तुति' का भी उल्लेख है।[३] चतुर्भुज मिश्र, आगरा का कविता काल १६०० लिखा है। ये महाशय प्रसिद्ध कवि कुलपति मिश्र के वंशज थे। ब्रज परिक्रमा सतसई तथा वंशविनोद ग्रंथों का उल्लेख है। मिश्रबन्धु इनको साधारण श्रेणी का कवि मानते है एक अन्य चतुर्भुज मिश्र भरतपुर निवासी ने भरतपुर के महाराजा बलवंत सिंह जी आज्ञानुसार सं. १८६६ में संस्कृत ग्रंथ कुनलयानंद का हिन्दी–कविता में भाषांतर किया है, जिसका नाम 'अलंकार आभा' रखा है।[५]

चतुर्भुज ब्राह्मण वृन्दावन निवासी का जन्मकाल १६१६ लिखा है।[६]

मिश्रबन्धु–विनोद (चतुर्थ–भाग) में चतुर्भुज कवि, ओरछा का उल्लेख है। जन्मकाल अनुमानतः १६२० वि. तथा कविता काल अनुमानतः १६४७ वि. है। महाराजा श्री वीरसिंहदेव प्रथम के आश्रित थे। कविता का उदाहरण प्रस्तुत है–

सेत चमर चिलकंत दंत डगमगत डगत डग,
शीश हलत तन डुलत चित्त चिल मिलत धरत पग।
द्रग्ग झरत श्रुत अश्रुत वास नासा भ्रम भुल्लिय;
काल ढिकह दुक्कियह आन यह औसर चुक्किय।[७]

चतुर्भुज सहाय कायस्थ, छतरपुर निवासी का जन्म सं. १६३४ है। इनके ग्रंथ हैं लंबे घूँघटवाली, बाबू ताराचंद (१६६३), उपन्यास गद्य, बीबी हमीदा (१६६४) मंत्री हरिशचन्द्र (१६६५), मधुमालती[८], चतुर्भुजदास स्वामी, बीकानेर का जन्मकाल सं. १६३८ है। ग्रंथ है भवानी–मंगल । आप नागौर (बीकानेर) के महंत हैं।[६]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी–साहित्य का इतिहास' में चतुर्भुजदास का उल्लेख करते हुए लिखा है कि ये कुंभनदास जी के पुत्र और गोसाईं विट्ठलनाथज के शिष्य थे। ये भी अष्टछाप के कवियों में हैं। इनकी भाषा चलती और सुव्यवस्थित है। इनके बनाये तीन ग्रंथ मिले है–द्वादशयश, भक्ति प्रताप, हितजू को मंगल। इनके अतिरिक्त फुटकर पदों के संग्रह भी इधर–उधर पाये जाते हैं।[२]

---

१. गुनि जिन विजय (स.)–राजस्थानी– हस्तलिखित ग्रथ सूची, (भाग–एक) पृ. ६१–६२
२. आचार्य नलिन विलोचन शर्मा (स.) प्राचीन हस्तलिखित पोथियो का विवरण (पाँचवाँ खण्ड)
3. Bahura Gopal Narayan - LIterary Heritage of the Rules of Amber and Jaipur p232
४. वही – वही, पृ. २६०
५. भानावत, डा नरेन्द्र (स.)–आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भडार ग्रथ सूची (भाग एक)पृ. २३८
६. Bahura Gopal Narayan - LIterary Heritage of the Rules of Amber and Jaipur p299
७. Kasliwal, Dr Kastoor Chand - Jain Granth Bhanders in Rajasthan p 58 & 222
८. मिश्र बन्धु – मिश्रबन्धु–विनोद (द्वितीय भाग) पृ. ४०१–४०२

'हित हरिवंश' का वर्णन करते हुए उनके शिष्य चतुर्भुजदास का नामोल्लेख शुक्ल जी ने किया है। शुक्ल जी ने लिखा है ''चतुर्भुजदास ने 'हित जू को मंगल, लिखा है।[३]

आचार्य चतुरसेन ने 'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास'[४] ग्रंथ में चतुर्भुजदास के सम्बन्ध में लिखा है–चतुर्भुजदास : ई. सन् १५६५ – ये कुंभनदास के पुत्र और विट्ठलनाथ के शिष्य थे। इनकी भाषा सरल, स्वाभाविक और सुव्यवस्थित है। इनकी पदावली में विशेषकर कृष्णलीला विषयक गानों का बाहुल्य पाया जाता है–इनके तीन ग्रंथ मिलते हैं। द्वादशयश २. भक्ति प्रताप, ३. हितजू को मंगल।

मंगल आरती गोपाल की।
नित उठि मंगल होत निरखि मुख चितवन नैन विशाल की।
मंगल रूप स्याम सुन्दर को मंगल छवि भृकुटी माल की।
'चतुर्भुजदास' सदा मंगल निधि बानिक गिरधर लाल की।

पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने 'हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास' कृति में 'चतुर्भुजदास जी के सम्बन्ध में लिखा है, 'चतुर्भुजदास जी कुंभन दास जी के पुत्र थे। वे बाल्यकाल ही से कृष्ण–लीला–गान में मत्त रहते थे। लीला सम्बन्धी उनकी अनेक रचनायें हैं। उन्होंने द्वादशयश, भक्ति प्रताप और हितजू को मंगल नामक तीन ग्रंथ बनाये। उनकी रचना देखिये–

जसोदा कहा कहौं बात ?
तुम्हरे सुत के करतब मोपै कहत कहे नहिं जात।
भाजन फोरि, ढारि सब गोरस, लै माखन दधि खात।
जो बरजौ तौ आँखि दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।
दास चतुर्भुज गिरिधर गुन हौं कहति कहति सकुचात।।[१]

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी कृति 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में रूद्र–सम्प्रदाय पर विचार करते हुए लिखा है, 'रुद्र सम्प्रदाय असल में वल्लभाचार्य के प्रवर्तित सम्प्रदाय के रूप में ही जीवित है। वल्लभाचार्य के पुत्र

---

१ मिश्रबन्धु– विनोद (द्वितीय भाग), पृ. ८१७, (२) मिश्रबन्धु–विनोद (द्वितीय भाग), पृ ६४७

(३) मिश्रबन्धु– विनोद (तृतीय भाग), पृ. ६६६, (४) मिश्रबन्धु–विनोद (तृतीय भाग), पृ. १०८४

गोसाई विठ्ठलनाथ बाद में आचार्य पद के अधिकारी हुए थे। गोसाई विठ्ठलनाथ ने अष्टछाप की प्रतिष्ठा की थी। इन आठ शिष्यों के नाम इस प्रकार हैं–सूरदास, कुंभनदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास । इनमें सूरदास और नन्ददास बहुत अच्छे कवि हो गये हैं।[१] 'हिन्दी' साहित्य–उसका उद्‌भव और विकास' में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं, 'चतुर्भुजदास तो प्रसिद्ध फक्कड़ कुंभनदास के पुत्र थे। इनकी तीन पुस्तकें–द्वादशयश, हितजू को मंगल (?) और भक्ति प्रकास तथा कुछ फुटकल पद भी प्राप्त हुए है। भाषा और कविता साधारण कोटि की है।[३]

डा. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने 'आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका' में लिखा है, 'प्रेम सागर' (स्वयं लल्लू लाल के अनुसार सं. १८६० में प्रारम्भ कर सं. १८६६ में पूरा कर छपवाया : प्रकाशन तिथि १८१० ई. चतुर्भुज मिश्र कृत ब्रजभाषा रचना से) ''आधुनिक हिन्दी साहित्य'' में डा. वाष्णेय ने लिखा है', प्रेमसागर (१८०३--१८०१) चतुर्भुज मिश्र की पद्यात्मक ब्रजभाषा–रचना पर आधारित है।[५]

हिन्दी साहित्य (द्वितीय खंड) में डा. ब्रजेश्वर वर्मा ने लिखा है', अपने पिता कुंभनदास की भाँति चतुर्भुजदास (अनुमानतः १५२७–१५८५ ई. १५८४–१६४२ वि. स) भी गृहस्थ–जीवन बिताते हुए श्रीनाथजी की सेवा में संलग्न रहते थे। भक्ति और कविता, दोनों उन्हें उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुई थी तथा जन्म के समय ही उन्हें सम्प्रदाय प्रवेश का सौभाग्य मिल गया था। कहते हैं कि गोस्वामी विठ्ठलनाथ के साथ ही इन्होंने भी देह छोड़कर नित्यलीला में प्रवेश किया था। [७]

डा. ब्रजेश्वर वर्मा ने आगे लिखा है, 'सेवक जी के मित्र और कुटुम्बी स्वामी चतुर्भुजदास (अनुमानत : सन् १५२८–१६३३ सं. १५८५–१६६० वि.) ने गढ़ा से वृन्दावन आकर गोस्वामी वनचन्द्र से दीक्षा ली और अपने प्रदेश (वर्तमान मध्य प्रदेश) में राधावल्लभी सम्प्रदाय की कृष्ण भक्ति का व्यापक प्रचार किया। एक चोर को परम साधु बना देने में तथा पकी खेती को साधुओं द्वारा उजाड़ दिए जाने पर प्रसन्न होने की घटनाँए इनके उच्च भगवदीय जीवन का संकेत देती हैं। इनका 'द्वादश यश' तथा इन्हीं के द्वारा लिखी उसकी संस्कृत टीका से इनकी धर्मनिष्ठा, प्रतिभा और विद्वता प्रमाणित होती है।[१]

डा. विजयेन्द्र स्नातक ने 'हिन्दी साहित्य' (तृतीय खंड) में लिखा है कि मुहावरदानी के साथ प्रवाहपूर्ण निबंध लिखने वालों में अयोध्या सिंह उपाध्याय, चतुर्भुज औदीच्य, माधव सप्रे आदि हैं।[२]

डा. रामकुमार वर्मा ने 'रीतिकालीन साहित्य का पुनर्मूल्यांकन' में चतुर्भुजकृत

'अलंकार आभा' तथा अष्टछाप के अन्तर्गत चतुर्भुजस्वामी का उल्लेख किया है।[३]

'हिन्दी साहित्य का मध्यकाल' के लेखकों ने कुंभनदास के पुत्र चतुर्भुजदास का उल्लेख किया है। कीर्तनावली, दानलीला तथा कीर्तन संग्रह इनके पद संकलन हैं। कुल पद संख्या ३६५ है। राग कल्पद्रुम के द्वितीय भाग में इनके पर्याप्त पद संकलित हैं। गायक होने के कारण ध्वन्यात्मक शब्द योजना का सौन्दर्य इनके पदों में अधिक है। उदाहरणार्थ –

अगरादिक चन्दन अति बहु सुगन्ध भाई।
घननन घन घटा घोर, झननन झालर झकोर, तननन तन थेई थेई करत हैं एक दाई।
तननन तन तान पान राग रंग स्वर बंधान, गोपीजन गावें गीत मंगल बधाई।
चतुर्भुज गिरधर लाल आरती बनी विसाल, बारत तन मन प्रान जसोदा नंदराई।[४]

लेखक द्वय आगे लिखते हैं, 'चोथे कवि (राधावल्लभीय सम्प्रदाय) हैं चतुर्भुजदास। इनका उल्लेख नाभादास कृत भक्तमाल में है। ध्रुवदास कृत भक्त नामावली में भी इनका वृतान्त मिलता है। इनका जन्म १५२८ ई. के लगभग जबलपुर के गढ़ नामक स्थान पर हुआ था। ये सेवक जी के समकालीन थे। इनके द्वारा रचित बारह ग्रंथो का संकलन द्वादश यश के नाम से मिलता है। इनका रचना काल १६२६ ई. है -

संवत सौरस सौ चौरासी अधिक द्वै वरस सिरानी जू।
मुरलीधर कर भक्ति चतुर्भुजदास प्रताप बरवानी जू।

इनका निधन काल १६३३ ई, के लगभग सिद्ध होता है। भाषा की दृष्टि से बुन्देली और ब्रजी का प्रयोग अधिक है। द्वादश यश की इन्होंने संस्कृत टीका भी की। भक्ति प्रताप यश, राधा सुप्रताप यश, मोहिनी यश, मंगलसार यश तथा हितोपदेश यश द्वादश यश की अच्छी रचनायें हैं।[५]

'राजधानी भाषा और साहित्य' में डा. मोतीलाल मेनारिया ने चतुर्भुज सहाय (सं. १६७७) का उल्लेख किया है। इनकी महत्ता गीत, दोहा, कवित्त आदि के रचयिता के रूप में स्वीकार की है।[६] डा. मेनारिया ने हिन्दी और राजस्थानी साहित्य के शक्तिशाली लेखकों के अन्तर्गत चतुर्भुजदास चतुर्वेदी का उल्लेख किया है, साथ ही नाटककार पं. चतुर्भुजदास का उल्लेख किया हैं। 'इस समय राजस्थान में पं. चतुर्भुजदास, पं. प्रभुनारायण, पं. ज्ञानदत्त, पं. जनार्दनराय, श्री

---

१. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'– हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास, पृ. ३०१ ०२

कृष्णलाल वर्मा आदि अच्छे नाटककार हैं।''[1]

''रीति – साहित्य को बिहार की देन'' में डा. अमरनाथ सिन्हा ने 'समवाय विवेचन एवं निष्कर्ष में चतुर्भुजदास और उनकी मधुमालती वार्ता का उल्लेख किया है। साथ ही निम्न उदाहरण प्रस्तुत किया है –

बदन कलानिधि रूपइ तरुनी, कवि को (३) उपमा रूप न बरनी।।

ससि कला घटि-घटि केतन बाढ़ै, मुख सोभा दिन दिन अति चाढ़ै।।

बेणी माँग मध्य दई पाटी, मानुं सेस फुनि करवट काटी।।[2]

डा. जयकान्त मिश्र ने अपने ग्रंथ 'ए हिस्ट्री आव मैथिली लिटरेचर' में चतुर्भुज नाम के तीन कवियों की चर्चा की है। एक चतुर्भुज 'साहित्य विलास' (काव्य प्रकाश के पंचम अध्याय की टीका) का रचयिता है। दूसरा चतुर्भुज 'अद्भुत–सागर' का प्रणेता और तीसरे चतुर्भुज 'विद्भाकर–सहस्रकम्' में उल्लिखित व्यक्ति हैं।[3]

आचार्य शिव पूजन सहाय ने 'हिन्दी–साहित्य और विहार' (प्रथम खण्ड) में चतुर्भुज के सम्बन्ध में निम्न विवरण प्रस्तुत किया है – **चतुर्भुज** – आपका नाम चतुर चतुर्भुज भी कहा जाता है। किन्तु, वस्तुत 'चतुर' अंश का आपके वास्तविक नाम का विशेषण मात्र समझना चाहिए। आपका निवास स्थान मिथिला कहा गया है। आपने संस्कृत में 'तात्पर्य–वर्णन' (महाभारत की टीका), 'गति गोपाल तथा 'हरि चरित' नामक ग्रंथो की रचना की थी। इनमें से अंतिम ग्रंथ की रचना श्री हर्ष के 'नैषध चरित' की परम्परा में हुई है। मिश्रबन्धुओं ने आपके एक और ग्रंथ 'भवानी–स्तुति' की चर्चा की है। मैथिली में कृष्ण सम्बन्धी भी बहुत से पदों की रचना आपने की थी जिनमें से बारह –कंस नाराण–पदावली' में संग्रहीत है। आपका एक पद 'राग तरंगिणी' में भी मिलता है। उदाहरणार्थ –

साँझक अतिथ भागें विहिआन, विमुखें पापवड अछए गेजान।
हमरेओ कन्त बसए परदेश, अथिक पथिक देखिमोहि कलेस।।
पथिकवास भमि अनतए लेह, हमरा दोसर तेसर नहि गेह।
चतुर चतुरभुज ई रस जानि, कौसले अभिमत करए सजानि।।[4]

आचार्य शिवपूजन सहाय ने चतुर्भुज मिश्र का विवरण निम्नांकित रूप से प्रस्तुत किया है,

(१) मनारिया, डा. मोतीलाल–राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ. ३०८,३११
(२) सिन्हा अमरनाथ – रीति–साहित्य को बिहार की देन, पृ. २७२
(3) Mishra, Dr Jaykant - A History of Marthili Lecterature- P 211-212
(४) सहाय शिव पूजन (स.) – हिन्दी साहित्य और बिहार (प्रथम खण्ड) पृ. ११८

'चतुर्भुज मिश्र' आप मिथिला के निवासी थे। मिश्रबन्धुओं के अनुसार आपने हिन्दी के 'भवानी–स्तुति' नामक ग्रंथ की रचना की थी। मैथिली में आपके कुछ पद भी मिलते हैं –

नव तनु नव अनुराग। माधव। नव परिचय रस जाग।।
दुहु मन बसु एक काज। माधव। आँतर भए रहु लाज।।
दिनदिन दुहु-तनु हीन। माधव। एकओ ने अपन अधीन।
विनय न एको भाख। माधव। निअ किए गौरव राख।
हृदय धरिअ जत गोए। माधव। नयन बेकत तत होए।
चतुर ' चतुरभुज भान। माधव। प्रेम न होए पुरान।[2]

आचार्य शिवपूजन सहाय ने 'हिन्दी' साहित्य और विहार। (द्वितीय खण्ड) में एक अन्य चतुर्भुज मिश्र का उल्लेख किया हैं, जो गया जिले के डुमरिया नामक स्थान के निवासी थे। आपका जन्म सं. १६०३ वि. (सन् १८४६ ई.) में, श्रीरामनवमी को हुआ था –

गुन नभ निधि पुनि चन्द्रमा, विक्रम संवत् क्यार।

राम जन्म नवमी तिथि, जन्म दीन करतार। (यह उल्लेख 'गयावासी भागवत में मिलता हैं।

आपके पिता का नाम था पं. यदुराज मिश्र और पितामह का पं. देवराज मिश्र। आपके एक सहोदर ज्येष्ठ भ्राता नूनूराम के नाम से विख्यात थे। संस्कृत ओर हिन्दी की प्रारम्भिक शिक्षा आपको अपने पिता से प्राप्त हुई थी। पच्चीस वर्ष की उम्र से ही आप साहित्य सेवा की ओर प्रवृत्त हुए। आप भक्ति–साहित्य के कवि थे। भक्तों के बीच आपकी रचनाओं को आज भी सम्मान प्राप्त है। आपके ग्रंथ हैं –

(१) आल्हा रामायण, (२) गयावासी रामायण, (३) गयावासी भागवत, (४) सरोज–रामायण (५) उद्देश्य–आनन्द–कल्लोलिनी, (६) सुबोध–सूर्योदय (उपन्यास), (७) मनोहर–रामायण, (८) सुबोध चन्द्रोदय, (स्वामी दयानन्द सरस्वती के मत का खण्डन), (६) गीता सार, और (१०) विरह बत्तीसी। इनमें आपकी प्रथम रचना सर्वाधिक प्रसिद्ध है। आप सं. १६७५ वि. (सन् १६१८ ई.) में हजारीबाग–जिले के

---

(१) सहाय, शिवपूजन (स) – हिन्दी साहित्य और बिहार (द्वितीय खण्ड), पृ. ६२
(२) वही, पृ. १२१
(३.) वही – वही, पृ. ३१२
(४.) अग्रवाल, डा. सरयू प्रसाद – अकबरी दरबार के हिन्दी–कवि, पृ. ३८

'जोरी नामक ग्राम में ७२ वर्ष की आयु में परलोक सिधारे। कविता का उदाहरण 'गयावासी भागवत' से उद्‌धृत हैं –

समय को पापकर कन्हुआ, तुरत घर से पधारा है।
मिली पुनि राधिका जाकर, जहाँ यमुना किनारा है।।
नहीं कोई तीसरा वहवाँ, मिले दोउ वीर हैं जहवाँ।
विहरते तीर पै तरुतर, मानो गोटा किनारा है।

आचार्य शिव पूजन सहाय जी ने चतुर्भुज सहाय का उल्लेख किया है। आप सारन जिले के 'मुहम्मद नगर' नामक ग्राम के निवासी और छतरपुर राज के दीवान थे। आपकी पुस्तकाकार किसी रचना का उल्लेख नहीं मिलता है। केवल स्फुट रचनाओं के सम्बन्ध में ही सूचना मिलती है। मिश्रबन्धुओं ने आपका रचना–काल सं. १८८८ वि. (सन् १८३१ ई.) बतलाया है।[१] शिव पूजन सहायजी ने एक अन्य चतुर्भुज की चर्चा की है। आपकी रचना के उदाहरण 'जर्नल ऑव द एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल' में प्रकाशित हैं। आपकी चर्चा डॉ० ग्रियर्सन ने अपने ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' में भी की है।[३]

'अकबरी दरबार के हिन्दी–कवि' में डा. सरयूप्रसाद अग्रवाल ने 'चतुर्भुजदास ब्राह्मण को उल्लेख किया है। डा. दीनदयालु गुप्त ने 'अष्टछाप और वल्लभ–सम्प्रदाय' में लिखा है कि चतुर्भुजदास ब्राह्मण, अष्टछापी चतुर्भुजदास जी से भिन्न व्यक्ति थे। चतुर्भुजदास ब्राह्मण अकबरी दरबार से राजकीय वृत्ति पाते थे। इनका वेतन एक हजार रूरुये महीने तक हो गया था। ये विद्वान, पंडित तथा विद्यानुरागी थे। बीरबल की सभा में रहने पर अपने गुणों के कारण इनका प्रवेश अकबरी दरबार में भी हो गया था। दरबार में आने जाने वाले पंडितों के साथ इनका वाद-विवाद होता था और अपनी विद्वता से ये उनको बहुधा परास्त भी कर देते थे। बाद में ये 'वल्लभ सम्प्रदाय' में श्री गुंसाई विट्ठलनाथ के सेवक हुए और जीवन पर्यंत श्री गोवर्धन जी की सेवा मे रहे। अकबर द्वारा पुनः निमंत्रित किये जाने पर उन्होंने निम्नांकित पंक्तियाँ लिख कर भेज दीं थीं –

जाको मन नंदनंदन सुं लाग्यो नीको।
सुख सम्पत को कहाँ लग बरनो सब जग लागत फीको।

इनके पदों से उच्च भक्ति भावना और भाषा पर समुचित अधिकार का परिचय मिलता है।[४]

'चारण साहित्य का इतिहास' में डा. मोहनलाल जिज्ञासु ने चतुर्भुज के सम्बन्ध मे लिखा है, 'ये बारहठ शाखा में उत्पन्न हुए थे और किशनगढ़ राज्यान्तर्गत उदयपुर गाँव के निवासी थे। ये भक्त थे और सदैव भगवत भक्ति में लीन रहते थे। अपनी कन्या का विवाह इन्होंने ढोकलिया (मेवाड़) के ठाकुर कम जी दघवाड़िया के साथ किया जिनकी कुक्षि से कालान्तर में कविराजा श्यामलदास उत्पन्न हुए।[1] इनका स्फुट काव्य मिलता है। मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) द्वारा राजकवि की उपाधि मिलने पर चतुर्भुज कहता है –

अभंग साख सस सूर जुग च्यार राखण अचड़, छीजबण दळ दखणाण छातां।
यळ तणो हुंतां अभसेस राणे अमर, पोरू रो दियो अभसेस पातां।।
इन्द्र अवतार दातार गुरु अरेहण, सुदन संसार गुण करण सीलो।
चत्रगढ़ तणो टीलो कमळ चड़तां, ताकुआं दियो दरबार टीलो।[2]

चतुर्भुज ने वर्णनात्मक शैली में पौराणिक एवं ऐतिहासिक विरुदावली के द्वारा भगवान का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है कि वे इसका पालन करते हुए उसकी दीन दशा पर ध्यान दें तथा सब दुःख दूर कर अपना सेवक बना लें –

बारहठ चत्रभुज करै यूं वीनती, दीन तो अधारे कांन दीजै।
सरब सुख मेट म्हारो अने सांवरा, कृपा कर आपरै थको कीजै।।
ऊधारे कीर कालू कुटम आपरो, लहै कुण आपरा गुणां लेखो।
रमापति राज रा विरद राखौ रिधू, दसा मो दीन री ओर देखो।।[3]

चतुर्भुज के सम्बन्ध में इसी प्रकार के विचार डा. जग मोहन सिंह परिहार ने अपने ग्रंथ 'मध्यकालीन चारण काव्य' में व्यक्त किये हैं।[4]

चतुर्भज मिश्र–चतुरदास–चेतनदास एक कवि थे और तीन नामों से रचना करते थे। ये संतदास के शिष्य थे। डा. हीरालाल माहेश्वरी ने 'जाम्भोजी, विशोई सम्प्रदाय और साहित्य' में चतरदास का उल्लेख किया है।[5] स्वामी मंगल दास जी चतरदास नाम के एक दादू पंथी कवि का उल्लेख करते हैं, जों इनसे भिन्न है।[6]

–भगवती निलयम्
१ त २, जवाहर नगर, जयपुर

भारतीय दर्शन की पृष्ठभूमि में - अष्टछाप और सुकवि चतुर्भुजदास

✍ वसन्त यामदग्नि

जीवनाधार सम्बन्धी संकल्पना की गवेषणा का स्वरूप विश्व व्यापी हैं।जगत में मानव की अवतारणा के साथ ही इस संकल्पना ने जन्म लिया है और अद्यावधि इसने तत्व चिन्तन की अनेक दिशाओं को आलोकित किया है। विश्व की कोई जाति–विशेष हो अथवा धर्म–सम्प्रदाय, कोई वर्ग–भावना हो अथवा क्षेत्रीय अवधारणा– यह प्रश्न आज भी ज्वलन्त रूप से सभी के समक्ष बना हुआ है। अन्वेषण की प्रक्रिया में इसने समाज में अब तक अनेक विश्वासों एवं आस्थाओं को प्रकाशित भी किया है। 'हम कौन हैं', 'कैसे हैं', कहा से हमारा आगमन हुआ है, 'क्या हमारा गन्तव्य है' आदि प्रश्नों के समाधान में अनेक दर्शन आज विश्व में आविर्मूत हैं। इन दर्शन–गत विशेषताओं को स्थूल रूप से द्विविध देखा–परखा जा सकता है। प्रथम धारणा पाश्चात्य मत–मतान्तरों पर अवलम्बित है, जब कि द्वितीय की पल्लवन–भूमि भारतवर्ष है। पश्चिम में जहाँ भौतिकता को ही जीवन का आधार माना गया वहाँ पौर्वात्य–चिन्तन में भौतिकता के साथ आध्यात्मिकता को भी इसमें जोड़कर देखा गया। परिणामतः भारतीय धरा पर यह जीवनाधार स्वरूपगत भौतिक होते हुए इसमें निहित आध्यात्मिक कलेवर को भी सदैव स्वीकार किया गया।

यह जीवनाधार जहाँ वेदों–उपनिषदों में 'नेति–नेति' के व्याज से निर्गुण–निराकार मान्य हुआ, वहाँ इसे यज्ञ–पुरुष अथवा यज्ञभोक्तृ के रूप में सगुण–साकारता भी सहज प्राप्त हुई। श्रुतियों में इसी जीवनाधार को सर्वनियन्ता, सर्वात्मा, सर्वरक्षक, सर्वपालक, सर्वत्रव्याप्त, अक्षर ब्रह्म अथवा परमात्य रूप में तरह–तरह से व्याख्यायित किया गया। श्रीमद्भागवत् का कथन है–

परावरेषु भूतेषु ब्रह्मान्तस्थावरादिषु।
भौतिकेषु विकारेषु सूक्ष्मेषु च महत्सुच।।
गुणेषु गुणसाम्ये च गुणव्यतिकरे तथा।
एक एव परोह्यात्मा भगवानीश्वरोऽव्ययः।। (७/६/२०-२१)

अर्थात् ब्रह्मा से तिनका पर्यन्त छोटे–बड़े समस्त प्राणियों में, पंचभूतों से निर्मित वस्तुओं में, पंचभूतों में, सूक्ष्मतन्मात्राओं में, महत्तत्त्व में, सत–रज–तम

तीनों गुणों में, और गुणों की साम्यावस्था प्रकृति में, – सभी में एक ही अविनाशी तत्त्व– परमात्मा विराजित है। यही सृष्टि से समस्त सौन्दर्य, माधुर्य और ऐश्वर्य की खान है। अपने स्वरूप में यही अणोऽणीयान महतोमहीयान' है। चर–अचर में इसीका निवास है। वेद–वेदान्त का यही ब्रह्मवाद है, जैन–बौद्धों का निरीश्वरवाद अथवा शून्यवाद है, और प्रकारान्तर से यही शंकर का अद्वैतवाद भी है। शंकराचार्य के अद्वैतवाद की प्रतिक्रिया में प्रादुर्भूत वैष्णवाचार्यों का विशिष्टाद्वैत, द्वैत, द्वैताद्वैत, शुद्धाद्वैत अथवा अचिन्त्यभेदाभेद – सभी मतवाद इसी जीवनाधार की नियमानुसार अपनी–अपनी व्याख्यायें हैं। इन्हीं विभिन्न दर्शनिक पृष्ठभूमियों में भक्ति की निर्गुण–सगुण धाराओं का पोषण हुआ है। आचार्य वल्लभ ने इसी जीवनाधार को तीन परिवेशों में व्याख्यायित किया है – आधिदैविक परब्रह्मरूप, आध्यात्मिक अक्षर ब्रह्म रूप और अधिभौतिक जगत रूप। आचार्य श्री के अनुसार यह जीवनाधार प्राकृत धर्मों से परे सत्–चित्–आनन्दधन है। अपने विरूद्ध धर्माश्रयी स्वरूप में यह जीवनाधार कर्तुम् अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम् सर्वभवनसमर्थ पुरुषोत्तम है। महाकवि सूर की वाणी में यह पुरुषोत्तम –

अविगत आदि अनंत अनूपम अलख पुरुष अविनाशी।
पूरन ब्रह्म प्रगट पुरुषोतम, निजनिज लोक विलासी।।

अर्थात् समस्त देवों सहित यह सम्पूर्ण जगत इन्हीं पुरुषोतम का प्रकट रूप है। वेद–वेदान्त का ध्येय तत्त्व भी यही पुरुषोतम है –

यस्यात् क्षरमतीतो ऽहमक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोतमः।।(श्रीमद् भगवद्गीता १५/१८)

क्षर से अतीत और अक्षर से श्रेष्ठ लोक और वेद में ज्ञेय यह पुरुषोत्तम ही कहीं ब्रह्म, कहीं परमात्मा और कहीं भगवान् नाम से पुकारा गया है –

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्वं यज्ज्ञानमद्वयम्।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानेति शब्द्यते।। (श्रीमद्भागवत १/२/११)

ब्रह्म, परमात्मा और भगवान वाची यह पुरुषोत्तम ही आचार्य श्रीवल्लभ की दृष्टि में साक्षात् 'श्रीकृष्ण' है। कर्षण इसका धर्म है। सबसे यह आकर्षित होता है अथवा सबको यह आकर्षित करता है। अतः अपने अभिधेयार्थ में यही 'कृष्ण' है। सन्तों–भक्तों के लिये। इसी कृष्ण को इन्होंने अपना परम प्राप्तव्य बताया है। श्री मधुसूदन सरस्वतीपाद का परम विश्वासपूर्ण यह कथन– कृष्णात परम किमपि तत्वं अहं न जाने' इसकी कितनी सार्थक एवं बलवती व्याख्या है, कहने की आवश्यकता नहीं। सर्वांग सुन्दर एवं सर्वस्वसार अपने

परम प्राप्तव्य इसी श्रीकृष्ण के न केवल स्वरूप को वरन् इसके प्रत्येक क्रिया–व्यापार की सारभूत मधुरिमा को शब्दायित करते हुए अपने मधुराष्टक में आचार्य श्रीवल्लभ कहते हैं–

अधरं मधुरं वदनं मधुरं, नयनं मधुरं हसितं मधुरम्
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं, मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्
वचनं मधुरं चरितं मधुरं, वसतं मधुरं बलितं मधुरम्
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं, मधुराधिपतेरलिखं मधुरम्

श्रीमद्भागवद्कार ने भी 'वस्तुतों जानतामात्र कृष्णं स्थास्नु–चरिष्णु च' कहकर चराचर जगत में एकमेव जानने योग्य एवं प्राप्त करने योग्य 'श्रीकृष्ण' की ओर ही संकेत किया है। आचार्य वल्लभ के परम–कृपा–पात्र एवं अष्टछापी वयोवृद्ध महाकवि सूर भी श्रीमद्भागवत (२/६/३२) की छाया में इन्हीं श्रीकृष्ण की सर्वाश्रयता को इस प्रकार शब्दायित कर रहे हैं –

पहलै हौं ही हैं, तब एक।
अमल अलक अज भेद-विवर्जित, सुनि विधि विमल विवेक।।
सो हौं एक, अनेक भाँति करि, सोभित नाना भेष।।
ता पाछैं इन गुननि गये तै, हौं रहि हौं अवशेष।। (सूरसागर पद–३८२)

अपने 'अमल अलक अज भेद विवर्जित' रूप में नाना भेष धारण करना और भाँति–भाँति से शोभित होना ही उस परम पुरुष पुरुषोत्तम की लीला है और यही 'लोकवतु लीला कैवल्यम्' (ब्र.सू. २/१/३३) के अनुसार ध्येय तत्त्व है, समस्त जगत का जीवनाधार है, सारसर्वस्व है। इन्हीं की विलासेच्छा ही यहाँ 'लीला रूप में भजनीय है। श्रीकृष्ण की यह लीला अथवा व्यापार विशेष बिना किसी कार्य के ही सम्पन्न हो रहा है। सुबोधिनी के अनुसार यह कृति तो है परन्तु इससे इसके बाहर कोई कार्य उत्पन्न नहीं होता। अर्थात् उत्पन्न कार्य में कोई अभिप्राय नहीं रहता। यह कृति ऐसी विलक्षण है जिसकी अभिव्यक्ति अन्तःकरण में पूर्ण आनन्द के उदेक का बोध कराती है। (सुबोधिनी ३/७/२)[१]।

भक्त के हृदय में आनन्दोद्रेक का कारण होने से यह लीला अपनी विशिष्ट गायन–पद्धति में स्वीकृत की गई। अपने इष्ट के समक्ष इनकी मधुरातिमधुर लीला का गायन भगवदीय–सेवा का प्रधान रंग माना गया। पुष्टिमार्गीय सेवा–पद्धति में भोग–श्रृंगार के साथ राग–सेवा को भी समुचित स्थान प्राप्त हुआ। वैष्णवीय–दर्शन की पृष्ठभूमि में भारतीय चिन्तन की इस धारा ने जहाँ एक सुस्पष्ट विचारणा को सम्बलित किया, वहाँ उसका एक

१ विशेष दृष्टव्य लेखकीय रासलीला तथा रासानुकरण विकास पृ. ४५

अनुष्ठानिक स्वरूप भी प्रकाश में आया। भगवदीय राग-सेवा के लिये भगवान की किसी मूर्ति, प्रतीक, देवालय एवं पूजन विधि में अष्टप्रहरी सेवा-पूजा एवं उत्सव और ऋतु के अनुकूल भगवदीय शृंगार-भोग-सेवा-विधि का विधान भी समायानुसार स्थिर हुआ।

आचार्य वल्लभ की प्रथम ब्रज यात्रा के अवसर पर श्रीगिरिराज-पहाड़ी पर जो 'देवदमन' नाम से ब्रजवासियों में विख्यात विग्रह था, वही श्रीविग्रह आचार्यश्री द्वारा श्रीनाथ अथवा गोवर्धननाथ नाम से कालान्तर में प्रचारित हुआ। सम्वत् १५५६ वि॰ में इस देव-विग्रह के हेतु एक मन्दिर-निर्माण का आरम्भ आचार्यश्री के निर्देश पर आम्बाला के भक्त पूरनमल खत्री द्वारा कराया गया, जिसके अर्धनिर्मित भाग में सम्वत् १५६६ वि॰ में एक वृहद् उत्सव पूर्वक श्रीनाथजी को विराजमान करा दिया गया।यहीं पर जमुनावतौ ग्राम के निवासी एक गोरवा खत्री श्री कुम्भनदासजी को राग-सेवा हेतु नियुक्त किया गया। श्रीनाथजी की इसी सेवा के लिए कालान्तर में गोस्वामी विट्ठलनाथजी द्वारा एक विस्तृत व्यवस्था दी गई। उन्होंने सम्वत् १६०२ वि॰ में श्रीनाथजी की अष्टप्रहरी सेवा हेतु पृथक-पृथक लीला-कीर्तनियों की नियुक्ति की। यह व्यवस्था ही अष्टछाप नाम से विख्यात है। अष्टछाप की इस व्यवस्था में श्री वल्लभ के चार सेवक- कुम्भनदास, सूरदास, परमानन्ददास और कृष्णदास थे और चार सेवक-- गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास श्री विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। सम्प्रदाय में इन अष्ट--कीर्तनियाओं को अष्टसखा अथवा अष्टछाप नाम से जाना जाता है। राग-सेवा की यह व्यवस्था वृन्दगान के रूप में सम्पन्न होती थी। श्रीनाथजी की अष्टप्रहरी झाँकियों में मंगला के लिए परमानन्ददास और सूरदास, शृंगार के लिए नन्ददास, ग्वाल के लिए गोविन्द स्वामी, राजभोग के लिए कुम्भनदास, उत्थापन के लिए सूरदास, संध्या-भोग के लिए चतुर्भुजदास, संध्या-आरती के लिए छीतस्वामी और शयन के लिये कृष्णदास प्रायः उपस्थित रहते थे। पुष्टिमार्गीय भावात्मक सेवा का यह विधान पुष्टिमार्गीय मन्दिरों में अद्यावधि प्रचलित है। राग-सेवा हेतु जिन पदों का गायन इन अष्टछापी महानुभावों द्वारा किया जाता था, आज निःसन्देह विश्व-साहित्य की एक अक्षय निधि है।

अष्टछापी सभी महानुभावों को सम्प्रदाय में लीला-भावना के अनुसार सखा एवं सखी स्वरूप नाम भी प्रदान किये गये हैं। पुष्टिमार्गीय भावनानुसार ऐसे सभी महानुभाव श्रीकृष्ण के नित्य परिकर हैं[1] और लीला योजना में सम्मिलित होने के लिए गोप-गोपी रूप में अवतरित हुए हैं। आचार्य वल्लभ ने कृष्ण, स्तोक, ऋषभ, सुबल, अर्जुन, विशाल, और श्रीदामा आदि गोपों को

क्रमशः वाणी, रसनेन्द्रिय, चरण युगल, भुज युगल, श्रोत्र, त्वक, चक्षु आदि इन्द्रियों का अधिष्ठान देव माना भी है। ये अष्टसखा सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार श्रीकृष्ण–पार्षद तो हैं ही साथ ही भगवत्–शक्ति अंश रूप में अवतरित भी माने गये हैं। इस सन्दर्भ में 'श्रीगोवर्धननाथ जी की वार्ता' प्रसंग में श्री द्वारिकेशजी कृत एक छप्पय भी विशेष अवलोकनीय है–

सूरदास सो-तौ कृष्ण, तोक परमानन्द जानौ।
कृष्णदास सो ऋषभ, छीतस्वामी सुबल बखानौ।।
अर्जुन कुम्भनदास, चतुर्भुजदास विसाला।
विष्णुदास सो भोज, गोविन्दस्वामी श्रीदामा।।
अष्टछाप आठौ सखा श्री द्वारीकेश परमान।
जिनके कृत गुनगान करि निजजन होत सुधान।।

अपरिउद्धृत छप्पय के सखास्वरूप नामों के विवरण में नन्ददास के स्थान पर विष्णुदास नाम का संकेत उपलब्ध है। अष्टछाप के स्थापना सम्वत् १६०२ वि॰ तक नन्ददासजी के पुष्टि सम्प्रदाय में दीक्षित (सम्वत् १६०७ वि॰) न होने के कारण सम्भवतः पहले इन्हीं विष्णुदास छीपाजी को स्थान प्राप्त था, जो कालान्तर में नन्ददास जी को प्राप्त हो गया।

अष्टछाप के इन कीर्तनकारों में सर्वाधिक वयोवृद्ध महाकवि हैं श्री कुम्भनदास, जिनके सुपुत्र श्री चतुर्भुजदासजी प्रस्तुत सन्दर्भ में विशेष विवेचनीय हैं। इनका जन्मकाल विद्वानों की सम्मति में सम्वत् १५७५ वि॰ से १५८० वि॰ का मध्यवर्ती माना गया है। गोवर्धन कस्बे के दक्षिण–पूर्व में लगभग ढाई किमी॰ की दूरी पर स्थित जमुनावतौ ग्राम के ये निवासी थे। यह ग्राम एक मान्यतानुसार सारस्वत कल्प में यमुना का तटवर्ती ग्राम था। कहते हैं, उस काल में यमुना त्रिविध प्रवाहित थी। मथुरा में कालिन्दी, गिरिगोवर्धन की पूर्व दिशा में यमुना और कामवन से गोवर्धन की धारा को स्वर्ण रेखा पुकारा जाता था। जमुनावतौ ग्राम से सम्बन्धित एक जनश्रुति के आधार पर इसी क्षेत्र में श्रीयमुना ने गोपीवेश में चन्द्रसरोवर के महारास में प्रवेश पाया था। अतः चतुर्भुजदासजी का यह क्षेत्र अद्यावधि जमुनावतौ नाम से विख्यात है।

वार्ता-साहित्य के अनुसार चतुर्भुजदासजी की प्राप्ति श्री विट्ठलनाथजी के आशीर्वाद से कुम्भनदासजी को हुई थी। अपनी अबोधावस्था में ही इन्हें कृष्ण नाम श्री गुसाईजी से प्राप्त हो गया था। भक्त–हृदय पितृचरण के सान्निध्य में इन्हें भक्ति का वातावरण जन्म से ही उपलब्ध था, अतः वे भक्ति

---

१ सखास्वरूप यह विवरण भागवत (१०/२२/३१) के अनुरूप हुआ प्रतीत होता है।

भावना से प्रेरित कविता भी अपनी बाल्यावस्था में ही करने लगे थे। वार्ता–साहित्य (चतुर्भुजदासजी की वार्ता पृ. ४७४, कांकरोली) के अनुसार एक बार वे अपने पिता कुम्भनदास जी के साथ रात्रि में अपनी झोंपड़ी के बाहर बैठे थे। उसी समय इनके पिता कुम्भनदासजी को गिरि शिखर पर श्रीनाथजी के मन्दिर के एक झरोखे से कुछ प्रकाश पुंज दिखाई दिया। इनके अन्तस में तत्काल श्रीनाथजी की शयन–झाँकी अवतरित हो उठी –

वह देखौ बरत झरोखन दीपक, हरि पौढ़े ऊँची चितर सारी।

समीप ही बैठे चतुर्भुजदासजी ने तुक जोड़ते हुए पद को आगे बढ़ाया–

सुन्दर वदन निहारन कारन, राख्यौ है बहुत जतन करि प्यारी।

अपने प्रिय पुत्र के कण्ठ से यह सुनना ही था कि कुम्भनदास जी का मन–मयूरा थिरक उठा। उन्हें अब यह विश्वास हो गया कि उनका यह सपूत वैसा ही प्रभु–भक्त है, जैसा वे कभी चाहते थे।

चतुर्भुजदासजी ने जीवन पर्यन्त श्रीनाथजी की कीर्तन–सेवा करते हुए अनेक लीला–पदों की संरचना की। दिवा–लीलाओं में वे विशाल सखा थे तो रात्रिकालीन निकुंज लीलाओं में उन्हें विमला सखी का स्वरूप प्राप्त था। कहते हैं श्रीनाथजी अपने इस विशाल सखा के साथ नित्य क्रीड़ा किया करते थे। एक दिन की बात है– श्रीनाथजी ने चतुर्भुज स्वरूप अपने विशाल सहचर को बुलाया और अपने साथ चलने को प्रेरित किया। कहने लगे–

चलहि संग नौनीत खबाऊँ। कछुक दिनन में मल्ल बनाऊँ।।

बात इतनी भर थी कि दोनों सखा समीपवर्ती ब्रजवासी के घर में जा घुसे और लगे खाने दही–दूध और मलाई। कुछ छीना–झपटी हो ही रही थी कि एक घर की बालिका की दृष्टि चतुर्भुजदास पर पड़ी। जोर–जोर से वह चिल्लाने लगी –

अरे कुम्भना को धसि आयौ। दही दूध भाखन सब खायौ।।

बस श्रीनाथजी तो भाग निकले, चतुर खिलाड़ी जो ठहरे। बेचारा दबोचा गया यह भोला–भण्डारी कुम्भना का चतुर्भुज। अनाड़ी ही जो था– भौंचक्का सा देखता रहा खड़ा का खड़ा। आनन फानन में ही यह सब घर गया।

बिटिया की चिल्लाहट सुन उसका काका भी तुरन्त वहाँ आ धमका। ताड़ना भरे स्वर में तान ऐठते हुए चतुर्भुजदास से वह बोला –

या प्रकार यदि फेरि धसैगौ, तो कुम्भना के भलौ पिटैगौ।

बेचारा चतुर्भुज गरदन नीची किये अपराधी–सा सब कुछ सुनता रहा– आखिर कर भी क्या सकता था ! किसी तरह अनुनय–विनय करता अपना

पीछा छुड़ाता अब यह आ पहुँचा अपने सखा श्रीनाथ के पास। बोला–

दहि माखन तौ तैने खायौ, भाजि चल्यौ मोकुँ पिटवायौ।

अपने सखा के आँसू पौंछते हुए नटखटी स्वर में श्रीनाथजी बोल उठे–

कहा भयौ द्वे चारि लगायौ, अरे! गोरस कौ कछु स्वाद तौ आयौ।

यह सुन चतुर्भुज कुछ कहना ही चाहता था कि वे फिर बोले – अरे बावरे !

कुटे पिसे बिनु मल्ल न होई, अस कहि भवन गये सब कोई।

वाह रे नटखट। कैसी अनोखी तेरी लीला है। तुम अपने सखा को पिटवाने का बानग रचते हो फिर भी वह तुम्हारी दर्शन की लालसा लिये छटपटाता रहता है। कहते हैं एक बार गुसाईं जी कहीं बाहर यात्रा के लिये निकले। उनकी अनुपस्थिति में गुसाईंजी के पुत्र श्री गिरिधरजी ने श्रीनाथजी को मथुरा में अपने निवास पर पधरा दिया। बस फिर क्या था। अपने प्रिय सखा का विरहताप अब चतुर्भुदासजी क्यों कर सहपाते। अपने प्यारे की दर्शन–लालसा में वे सुख–बुध ही खो बैठे। कातर वाणी में वे अपने यार को इस प्रकार पुकारने लगे–

गोवर्धनवासी साँवरे हो, तुम बिनु रह्यौ न जाय।
ब्रज राज लडैते लाड़िले लाल।
दरसन को नैना तपै, बचन सुनन कौ कान हो,
मिलिबे कौ हियरा तपै मेरे जिय के जीवन प्रान हो,
ब्रजराज लडैते लाड़िले लाल।

विरहातुर सखा की यह दशा भला श्रीनाथजी भी क्यों कर देख पाते? कहते हैं अपने गिरिधरजी को गोवर्धन चलने की प्रेरणा देकर वे श्रृंगार–भोग के लिये गोवर्धन में आ पहुँचे। भक्त का मनचीता करना ही तो इनका स्वभाव है– 'हम भक्तन के भक्त हमारे।'

इनका विमला सखी का स्वरूप भी निकुंज लीलाओं में कुछ कम मर्मस्पर्शी नहीं है। चतुर्भुजदासजी की तल स्पर्शनी प्रतिया का चमत्कारिक विश्लेषण इनके सखी स्वरूप के मर्योद्गारों में अपेक्षाकृत अधिक साकार हुआ है। चतुर्भुजदासजी के सखी स्वरूप की हृदयगत टीस का एक शब्द चित्र यहाँ दृष्टव्य है–

सुनरी सखी ! विवस्था तन की, समुझि मनहि मन चुप करि रहियै।
मरमी बिना मरमु को जानै, इहिबातें सब जिय हौं सहियै।।

ठीक ही है, बिना मरमी बने भला मर्म की बात कौन जान सकेगा–

जाके कबहुँ न फटी बिवाई, बु का जानै पीर पराई। इनके विमला स्वरूप को देख वे जा दिन ते मुरि मुसकानें हैं तभी से विमला सखी का मन उसी माधुरी में अटक–सा गया है। घड़ी, पल बीतते जा रहे हैं, पर बेचारी यह सखी हाथ मलती, पछताती–सी रह जाती है। अब उसके पास धैर्य के लिए अन्य कोई उपाय भी तो नहीं है–

हृदै में गढ़ी मदन मूरति, मन अटयौ साँवल गात।
चत्रभुज प्रभु गिरिधरन मिलन कौं, नैन बहुत अकुलात।।

हृदय की यह अकुलाहट बढ़ती ही जा रही है। अपनी एक अभिन्ना को सम्बोधन करती चतुर्भुज की विमला कह रही है –

री माई ! अब हौं कहा करौं?
जबते दृष्टि परे नन्दनंदन, वल भरि रह्यौ न जाई,
भीतर मात-पिता मोहिं त्रासत, तै कुल गारि लगाई
बाहिर सब मुख जोरि कहत हैं- 'कन्ह सनेहिन आई'

घर मैं माँ–बाप की खरी–खोटी तो बाहर 'कान्ह सनेहिनी' की व्यंग्य भरी फबती– कैसी असहज दशा है यह जीवन की। भक्तवर ध्रुवदासजी ने शायद इसीलिए कहा था–

चढ़िकै मोम-तुरंग पै, चलिबो पावक माँहिं।
प्रेम प्रंथ ऐसौ कठिन, सबकोऊ निबहत नाहिं।।

एक तो मोम का तुरंग और उस पर भी दहकती पावक से गुज़रना– प्रेम का पंथ वास्तव में ऐसा कुछ ही है। हमारे चतुर्भुजदास का सखी स्वरूप ऐसे ही प्रेम पंथ का सफल धाविक है जिसे अपने आराध्य के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं चाहिए। इनके नेत्रों में अपने प्रियतम की मधुरता ही रसी–बसी है। इनके कानों में प्रियतम का मधुर स्वर ही सदैव गुंजायमान है। इनके हाथ भी इसी प्रियतम की कुंज सेवा के लिये सदा लालायित हैं। अपने प्रिय की यह मधुरता इनके लिए चिर नवीन है, नित्य नूतन है। विश्व–मन–हरन हेतु प्रतिक्षण वर्धमान यह एक विलक्षण शोभा–सिन्धु की दिव्य तरंग ही तो है –

माईरी ! आजु औरु काल्हि औरु,
प्रतिदिन औरहिं औरु।
चतुर्भुज प्रभु कौ रूप-सुधा नैन पुट,
पान कीजै जीजै, रहियै सदाई सरन।।

–४८, गोविन्दबाग,
वृन्दावन (उ.प्र.)

परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदास का प्राणोत्सर्ग

✍ विट्ठलपारीक

कृपा सिंधु श्री विट्ठलनाथ।
हस्त कमल छाया निस्तारी, हुते जु अधम अनाथ।
बाधा कछु न रही अब तन मन, भये सुदृष्टि सनाथ।
चतुर्भुज प्रभु तुम सदा विराजहु, श्री गिरिवरधर साथ।।

श्री चतुर्भुजदास , गो० विट्ठलनाथ जी के चार शिष्यों में एक थे, इनका जन्म मूलतः भगवान श्रीनाथजी के वरदान स्वरूप उनके अनन्य भक्त परम भगवदीय कुम्भनदास के घर सॉंतवीं सन्तान के रूप में हुआ था। जन्मकाल से ही चमत्कारपूर्ण घटनाओं का विवरण 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' में अनेक प्रसंगों से मिलता है। नाम निवेदन के समय शिशु चतुर्भुजदास का खिलखिलाकर हंसना, भगवान श्रीनाथजी के समक्ष पद गायन करना, उनके साथ सखा रूप में बालसुलभ क्रीडा करना आदि घटनाएं उनके जीवन की विलक्षणता और गुरु–आराध्य के साथ तादात्म्य एवं एकात्मकता का भाव प्रदर्शित करता है।

पिता की शिक्षा, भक्तिमय संगीत वातावरण, रात दिन भगवत प्रसंग, साधु समागम, भगवान श्रीनाथजी की नित नई विधि से सेवा अर्चना तथा श्री विट्ठलनाथ जी के अनेक प्रकार के मनोरथ सिद्ध उपदेशों ने चतुर्भुजदास का जीवन वीतरागी, भक्ति प्रवण तथा रससिद्ध तपस्वी जैसा बना दिया था। इन्हें प्रथम लीला अनुभव बचपन में ही हुआ, तभी से बैकुण्ठ लीला सर्वत्र दिखाई देने लगी। छोटी सी उम्र में जब बालक के मस्तिष्क का विकास आरम्भ होता है तभी इनके पिता ने श्री विट्ठलनाथ जी से नाम सुनवाकर दीक्षा दिलवाई तथा उसी समय चतुर्भुजदास द्वारा कीर्तन गायन इनके जीवन की एक अलौकिक और चमत्कृत घटना प्रदर्शित करता है। 'भाव प्रकाश' में इस चमत्कार को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि –''चतुर्भुजदास लीला में श्री ठाकुर जी के विशाल सखा हैं। श्री ललिता जी के तानरा भाव रूप विमला निशि लीला में हैं, सो निज स्वरूप का ज्ञान और लीला गान की प्रभु ने सामर्थ्य दी है।''

ऐसे चतुर्भुजदास का जीवन चमत्कार पूर्ण अलौकिक घटनाओं भरा होने के साथ–साथ लौकिक जगत् में समस्त चर्चाओं को विधिवत् धारण करता है। इनका अपने गुरु व आराध्य के प्रति सत्य सनेह था। उनके बिना यह जीवन तो बहुत बड़ी बात है वरन् पलभर का विछोह भी अकुलाहट पैदा कर देता था – स्याम सुन्दर प्रान प्यारे छिन जनि होऊ न्यारे,

नेंकु की ओट मीन ज्यों तलफत, इन नैननि के तारे।।...

पत्नी का देहावसान हो गया, सूतक के कारण मन्दिर जाने में अटकाव हुआ तब अत्यन्त विरहाकुल हुए। जंगल में बैठे–बैठे कीर्तन करते दिन व्यतीत हुए । गोवर्द्धननाथ का स्मरण करके, भाव विह्वल होकर कीर्तन गाते–

भोर भावतो श्री गिरधर देखों।

सुभग कपोल लोल लोचन छवि,

निरखि नैन सुफल करि लेखों।।.........

इस प्रकार कीर्तन के द्वारा अपने मनोभावों को प्रभु को समर्पित करते हुए सूतक का समय निकाला।

श्री चतुर्भुजदास को गुरु श्री विट्ठलनाथ जी के समान ही आराध्य श्री गोवर्द्धननाथ जी का सामीप्य अनुभव था। ये उनसे बातें करते, रूठते, प्रसन्न होते तथा गुरु में भी वही रूप देखते । सत्य भी है–जिस गुरु ने प्रभु से परिचय करा कर सामीप्य स्थापित किया, फिर उस गुरु और आराध्य में अन्तर कैसा ?

सेवक की सुखरासि सदा श्री वल्लभ राजकुमार।

दरसन ही तें होत प्रसन्न मन श्री पुरुषोत्तम लीला अवतार।।

सुदृष्टि चितें सिद्धान्त बतायो लीला एन अनुसार।

यह त्यजि आन ग्यान को धावति भूलें कुमति विचार।।

जाके कहे गही भुज दृढ़ करि श्री गिरधर नन्द दुलार।

चतुर्भुज प्रभु उद्धरे पतित, श्री विट्ठल कृपा उदार।।

यहाँ यह बात ध्यान के योग्य है कि ऐसे गुरु को छोड़ कर किसी अन्य का अनुगामी बनना कुमति पूर्ण विचार है, फिर क्यों न गुरु में ही उस भगवान को देखा जाय जिसके नाम निवेदन करने पर श्री गिरवरधारी नन्द कुमार ने दृढ़ता से जीव का हाथ पकड़ लिया है। ऐसे चतुर्भुजदास के स्वामी दया निधि श्री विट्ठल पतितों का उद्धार करते हैं। चतुर्भुजदास जी की गुरुभक्ति ईश्वर

भक्ति से कहीं बढ़ कर है तथा इस उक्ति को अक्षरशः चरितार्थ करती है–

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागों पाँय।
बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियौ बताय।।

चतुर्भुजदास जी इससे भी कहीं आगे निकल गये। गुरु–आराध्य में कोई छोटा बड़ा नहीं, दोनों एक रूप, 'जो गोवर्द्धननाथ सो विट्ठलनाथ। उन्हें कहीं कोई अन्तर दिखलाई नहीं देता।

एक बार जब गोस्वामी श्री विट्ठलनाथजी स्वयं तो परदेश पधारे तथा श्री गोविर्द्धननाथ जी को मथुरा भिजवा दिया। चतुर्भुजदास जमुनावते में थे, जब मन्दिर आये तो गिरिराज पर्वत पर श्रीनाथजी को नहीं देख कर विस्मय हुआ। गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथ जी भी नहीं, अब तो बड़े विरहाकुल होकर वहीं गिरिराज जी पर बैठकर पद गाने लगे–

बात हिलग की का सौं कहि।
सुन री सखी विवस्था मन की, समुझि-समुझि मन चुप कर रहि।
मरमी बिना मरम को जानै, यही जानि सबही जिय सहिऐ।
चतुर्भुज प्रभु मिलै गिरधारी, तबही सब सचु लहिऐ।।

संध्या आरती के समय एक प्रहर दिन शेष था, तब आर्तभाव से यह पद गाया– श्रीनाथजी के बिना मन्दिर को देखकर उनका मन भर आया।

श्री गोवर्द्धन बासी सांवरे लाल, तुम बिन रह्यौ न जाय।
श्री ब्रजराज लड़ैतो लाल, सुन्दर बदन दिखाय।
लोचन तलफै मीन ज्यों पल छिन, कलप विलाय।।.......

प्रभु चरन का वियोग इनके जीवन की ऐसी रिक्तता थी, ऐसे अभाव का साक्षात्कार था जिसकी पूर्ति असम्भव थी। अपना सर्वस्व श्री गोवर्द्धननाथ की त्रिविध सेवा में समर्पित कर उनके गुणगान में व्यस्त रहते हुए गुरुचरणों का ध्यान ही इन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बनाया । ये इसके बिना तिलमिला उठते थे –

सदा ब्रज ही में करत विहार।
तबकें गोप-भेष, अबकें प्रगटे द्विज वर अवतार।
तब गोकुल में नन्द सुवन अब वल्लभ राजकुमार।.........
श्री विट्ठलनाथ गोकुलनाथ. भूप।
नन्द नन्दन वल्लभ नन्दन एक मन द्वै रूप।।...

इस प्रकार गुरु और आराध्य में अन्तर न करते हुए पदों की रचना करते उनके गुणगान करने में ही अपने जीवन की सार्थकता को प्राप्त करने में जीवन व्यतीत करते रहे।

संवत् १६०२ फा. कृ. ६ के दिन गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी गिरिराज कन्दरा में होकर लीला में पधारे। उस समय चतुर्भुज दास अपने गाँव जमुनावता में थे। जब इन्हें मालूम हुआ तो दौड़ते आये, विषम विरह वेदना से अत्यन्त व्याकुल होकर कन्दरा के आगे गिर पड़े। भाव विह्वल होकर इस समय भी कीर्तन गा रहे थे–

फिर ब्रज वसहु श्री विट्ठलेश।

कृपा कर दरसन दिखावहु वह लीला वह वेस........

कभी चेतन, कभी अचेतन अवस्था में ही महाविरह संयुत होकर आर्तभाव से पद गायन करते हुए हृदय में श्री गुसाई जी का साक्षात् आभास हुआ, इनकी चेतना में गुरु चरण ने इन्हें उपदेश किया–'इतना खेद मत कर, अब तो मेरा दर्शन श्री गोवर्द्धननाथ जी ने निकट ही किया कर, मैं सदैव श्रीनाथजी के पास ही हूँ, वहाँ ही मैं रहता हूँ''। ऐसा आभास कर चतुर्भुजदास स्वरूपानन्द में मगन होकर कीर्तन गान करने लगे–

श्री विट्ठल सौ प्रभु भयौ न ह्वै है।

पाछै सुन्यौ न देखौ आगें, यह छवि फेर न बनि है।

मनुष देह धरि भक्ति हेत कलिकाल जनम कौ लै है।। ....

इस प्रकार विरह पद गाते हुए अपनी मानसिक वेदना को साकारता प्रदान कर तल्लीनता से पद का अन्तिम चरण–''श्री वल्लभ सुत दरसन कारण अब सब कोऊ तवै है'' के उच्चारण के साथ ही रुद्र कुण्ड पर इमली वृक्ष के नीचे प्रभु चरण में प्राणोत्सर्ग कर दिया। वह दिव्य यशः कलेवर पाकर भगवत् स्वरूप भाव का साक्षात् अनुभव करने में जागरूक हो गये।

शैशव काल से श्री चतुर्भुजदास ने अपने जीवन का जो लक्ष्य धारण किया था उसे प्राप्त कर सदा–सदा के लिए वे अपना नाम यश अमर कर गये। श्री चतुर्भुजदास मध्यकालीन कृष्ण भक्त कवियों तथा अष्टछाप में ऐसी पूर्णता को प्राप्त हुए जो हिन्दी साहित्य तथा भक्ति साहित्य की अमर कृति बन गये।

-'कदम्ब' कामवन

(भरतपुर)


कीर्तन
काव्य
खण्ड

मंगलाचरण

(१) **(राग-कल्याण)**

जयति जयति श्री गोवर्द्धन–उद्धरन–धीरे।
वृष्टि–टूटन करन ब्रज–कुल भै हरन–
देवपति–गर्व, साँवल सरीरे॥
जयति वारिज वदन, रूप लावनि–सदन
सिर सिखंड, कटि पट जु पीरे।
मुरली कल गान, ब्रज जुवति मन आंकरन
संग बहत सुभग जमुना–तीरे॥
जयति रस रास सो विलास वृन्दाविपिन
कलिय सुख–पुंज मय मलय समीरे॥
'चत्रुभुजदास' गोपाल नट–भेष सोई
राधिका कंठ सब गुन गँभीरे॥

स्तुति के पद

(२) **(राग बिभास)**

स्याम सुंदर प्रान–पियारे! छिनु जिनि होहु निन्यारे।
नेंकु की ओट मीन ज्यों तलफत इनि नैननि के तारे॥
मृदु मुसकानि, बंक अवलोकनि, डगमग चलनि सहज में सुढारे॥
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर–बानिक पर कोटिक मन्मथ वारे॥

(३) **(राग भैरव)**

भोर भांवतो गिरिधर देखौं।
बिमल कपोल, लोल लोचन छबि,
निरखिकें नैन सुफल करि लेखौं।
नख–सिख रूप अनूप विराजित अंग–अंग मन्मथ–कोंटि बिसेखौं।
'चत्रुभुज' प्रभु रस–रासि रसिक कों बडे भाग–बल इकटकु पेखौं॥

(४) **(राग भैरव)**

भावये मनसि गोकुल–नरेशम्।
यस्तु तत्पद–पद्म–मकरन्द लुब्ध
हृदि संचरीकर्तु संत–नरेशम्।

निज ब्रज–वल्लभी–मध्य वृंद मध्यस्थ–
मति चतुरता संस्पृष्ट निवहत उरोजम्।
तादृशीभिर्विविध रासादि–लीला–
सुकंठ धृत ललित करयुग–सरोजम्॥
'चतुर्भुज' मखिल जगदाधार–रूपया
निज कृपया निदर्शित सुरूपम्।
भक्तजन–दुःख–विध्वंस–कृति तत्परं
पालिताशेष यदु–वंश–भूपम्॥

(५) (राग टोडी)

समुझि न परति मोहिं या मन की !
एते मान विषय–रस राच्यौ निसि दिन चित्त रहति परधन की॥
कैसें जठर–अगनि में राख्यौ सोउ विसर्‌यौ कृतघन की।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन नहिं जानतु सवै करतु अनबन की॥

(६) (राग विभास)

रतन जटित कनक–थार मधि सोहै ।
दीपमाल अगर आदि चंदन सों अति सुगंध मिलाई।
घनन घनन घंटा घोर, झनन झनन झालर झकोर
तत थेई थेई बोलति ब्रज की नारि सुहाई॥
तनन तनन तान मान, लेति जुबती सुर–बंधान,
गोपी सब गावत हैं मंगल बधाई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लाल, आरती बनी रसाल
तन मन धन वारति हैं सब जसोमति नँदराई॥

(७) (राग केदारौ)

राग–रंग रैनि गई सैन समै बेर भई,
पुहुप–तलप पर प्रवेस करत आरती॥
सुभग कुसुम भूषन अति भूषन नव तन बनाइ
बीरी पूरी नव कपूर पूरि डारती॥
हाटक मनि रतन जरी, झारी कर जलनि भरी
रतिपति रसंरग सहित तन निहारती।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिवरधर, रसिक कुंवर सुंदरवर
केलि–कला कौतुक सखि! प्रान बारती॥

(८) (राग सारंग)

वृंदावन कुंज सघन बैठे ब्रज कंजबदन
ललितादिक प्रमुदित अति करति आरती॥
स्यामल अरु गौर अंग मन्मथ–मद करत भंग
अद्भुत छबि रंग चितै चँवर ढारती॥
मंजुल कल करत गान दुंदुभि सुर मधुर तान
मृगपद कर्पूर अगर बाति बारती।
मुरलीधर वर किशोर 'चत्रुभुज' मन हरत चोर
आनँद हिं घोष निरखि प्रान बारती॥

(६) (राग-धनाश्री)

नन्दलाल बजाई बँजाई बाँसुरी श्रीयमुनाजू के तीर री।
अधर कर मिल सप्त स्वरन सौं उपजत राग रसाल री॥
ब्रजयुवती ध्वनि सुनि उठि धाई, रही न अंग संभार री।
छूटी लट लपटात बदन पर टूटी मुक्ता माल री॥
बहत न नीर समीर न डोलत वृंदा विपिन संकेत री।
सुनि थावर अचेत चेत भये जंगम भये अचेत री॥
अफल फले फलफूल भये री जरे हरे भये पात री।
उमँग प्रेम जल चल्यों सिखरतैं गरै गिरिन के गात री॥
तृण न चरत मृगा मृगी दोऊ तान परी जब कान री।
सुनत कान गिर परे धरणि पर मानों लागे बान री॥
सुरभी लाग दियौ केहरि कौ रहत श्रवण हिं डार री।
भेक भुजंग फणचढ़ बैठे निरखत श्रीमुख चार री॥
खग रसना रस चाख बदन नयन मूँद मौन धार री
चाखत फलहिं न परै चोंचते बैठे पाँख पसार री॥
सुर नर असुर देव सब मोहे, छाये व्योम विमान री।
'चतुर्भुजदास' कहौ कौन बश भये या मुरली की तान री॥

(१०) (राग-भैरव)

भोर भये देखो श्री गिरिधर को कमल मुख।
मंगल आरती करो प्रात ही, नयन निरखत होत परम सुख॥

लोचन विशाल छबि संचि हृदय में धरी, पा अवलोकवे को चार, भृकुटी रुख।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर आनंदनिधि, दूर कर हो सबरेन को विरह दुख॥

श्री महाप्रभुजी उत्सव

(११) (राग सारंग)

श्रीलछमन भट देत बधाई।
प्रगट भए पूरन पुरुषोत्तम श्री वल्लभ भक्त सुखदाई।
विप्र सबै मिलि करत वेद धुनि देत असीस सुहाई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर हरखे हैं, निज सेवा प्रगटाई॥

(१२) (राग-सुहा)

मेरे तन की तपत बुझाई।
बिदा भई ग्रीषम ऋतु आली, अब बरखा ऋतु आई॥
जब मेरे गृह आवेंगे गिरिधर तब हौं नीके करुँगी बधाई।
नाना विध के साज सिंगारौं, बिरहिन पीर मिटाई॥
सुभ मंगल आज कुंज भवन में, पोहोप सुवास सुगंध छवाई।
'चत्रभुज' प्रभु मेरे भवन में पधारो, वासों तन बिसराई॥

श्री गुसांईजी उत्सव

(१३) (राग भैरव)

श्री वल्लभ–सुजसु संतत नित्य गाऊँ।
मन–क्रम–वचन छिनु एक न बिसराऊँ॥
पुरुषोत्तम–अवतार सुकृत फल फलित
जगत–बंदन श्रीविट्ठलेस दुलराऊँ।
परसि पद कमल–रज निरखि सौन्दर्य–निधि
प्रेम पुलकित कलह–कोटि नसाऊँ॥
श्री गिरिधरन, देवपति–मान–मर्दन करन
घोष–रच्छक सुखद लीला सुनाऊँ।
श्रीगोबिंद ग्वाल–संग गाँइ लै चलत बन
रसिक रचना निरखि नैननि सिराऊँ॥

श्री बालकृष्ण सदा सहज बालक दसा
कमल लोचन सु हरखित रुचि बढाऊँ।
भक्ति–मारग सृदृढ करन गुन–रासि ब्रज–
मंगल श्री गोकुलनाथ हिं लडाऊँ॥
श्रीरघुनाथ धर्म–घुर–धीर सोभा–सिंधु
रूप लहरिनि दुख दूरि बहाऊँ।
पतित उद्धरन महाराज श्रीजदुनाथ
बिसद अंबुज हाथ सिरसि परसाऊँ॥
श्री घनस्याम अभिराम रूप बरिखा स्वांति–
आस ज्यों रसना चातक रटाऊँ।
'चत्रुभुजदास' परयौ द्वारे प्रनमति करै
सकल कुल चरनामृत भोर उठि पाऊँ॥

(१४) (राग देवगंधार)

श्रीविट्ठलनाथ गोकुल–भूप।
भक्त–हित कलिजुग कृपा करि धरे प्रगट स्वरूप॥
सकल धर्म–धुरंधरन हरि–भक्ति निजु दृढ जूप।
चरन अंबुज सिरसि परसत सोष कर अंधकूप॥
आपु ही सेवा सिखावत, सकल रीति अनूप।
भोग, राग, सिंगार नाना चरचि दीप रु धूप॥
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन जुग बपु लीला सदा अछूप।
नंद–नंदन बल्लभ–नंदन एक मन द्वै रूप॥

(१५) (राग धनाश्री)

श्रीविट्ठलनाथ नयन भरि देखे।
पूरन भए मनोरथ सब कछु हुती जु जिय आपेखे॥
श्री वल्लभसुतसरन–बिना पिछले दिन गए अलेखे।
'दास चतुर्भज' प्रभु सब सुत–निधि रहिए कृपा बिसेखे॥

(१६) (राग सारंग)

सेवक की सुख–रासि सदा श्री बल्लभराज–कुमार।
दरसन ही प्रसन्न होत मन पुरुषोत्तम–अवतार॥
सुदृष्टि चितै सिद्धांत बतायो, लीला जग विस्तार।
इह तजि, आन ज्ञान कहँ धावत भूले कुमति विचार॥

'चत्रुभुज' प्रभु उद्धरे पतित श्री विट्ठल कृपा उदार।
जाके कहत गही भुज दृढ करि गिरधर नंद–दुलार॥

(१७) (राग सारंग)

सदा ब्रज ही में करत बिहार।
तबकें गोप–भेष अबकें प्रगटे द्विजवर–अवतार॥
तब गोकुल में नंद–सुबन, अब वल्लभराज–कुमार।
आपहि चरचि दिखावत औरनु दृढ़ मत सेवा सार॥
जुगल रूप गिरिधरन, श्री विट्ठल लीला ए अनुसार।
'चत्रुभुज' प्रभु सुख सैल–निवासी भक्तनु कृपा उदार॥

(१८) (राग सारंग)

श्रीवल्लभ सु प्रताप फलित, लीला–गुन–भाव ललित,
प्रगटे श्री विट्ठलेस गोकुल सुख–रासी।
नख–सिख सोभा अनूप, कलिजुग उद्धरन भूप,
रूप–सुधा पान करत नैननि ब्रजबासी॥
दीनबंधु कृपा करन, चितवनि त्रै ताप हरन
छिनु–छिनु आनंद कंद अंबुज मुख हासी।
'चत्रुभुज' प्रभु जुगल स्वरूप, नंदनंदन घोषनाथ
बिहरत एक साथ सदा गिरि गोबर्द्धन बासी॥

(१९) (राग मलार)

प्रभुता प्रगट श्री विट्ठलनाथ की।
आन ज्ञान सब घ्यान बाममत इहे बिधि जगत अकाथ की॥
भक्ति भाव प्रगट्यो इहि मारग कलिजुग सृष्टि सनाथ की।
सरन जात ही करत कृतारथ, कर गहि सहज अनाथ की॥
'चत्रुभुदास' आस परिपूरित छाया अंबुज हाथ की।
कृपा–विसेष विराजहु निसिदिन जोरी गिरिधर साथ की॥

(२०) (राग नटनारायन)

कृपा–सिंधु श्री विट्ठलनाथ।
हस्त कमल छाया निरतारी हुते जु अधम अनाथ॥
बाधा कछु न रही अब तन–मन भए सुदृष्टि सनाथ।
'चत्रुभुज' प्रभु सदा बिराजहु श्री गिरिवरधर साथ॥

(२१) (राग कल्यान)

भजे बिमल श्रीविट्ठलं सुखद वरनं।
ताप तन सोक भय मोह माया पटल
विपति सम रटन दुख दुरित हरनं॥
भक्त–हित प्रगट भये दुःख दूरी करन,
घोष–पति रसिक रस विसद करनं।
अमित माया जलद सोक सरवज्ञ नृप
निगम–पथ नर भुवन सुदृढ दृढनं॥
वचन पीयूष मधु सुरत करुना–उदधि
दरस परस स्मरन त्रिविधि तरनं।
अमर नर लोक सुर दुतिय समता नहीं
जन 'चतुर्भुज' अंध्रि कमल सरनं॥

(२२) (राग केदारो)

फिरि ब्रज बसहु श्री विट्ठलेस।
कृपा करि दरसन दिखावहु वह लीला वह बेस॥
संग ग्वाल ए गाँइ गोकुल गाँउ करहु प्रवेस।
नंदराइ ज्यों बिलसिवौ संपति बहु उदार नरेस॥
भक्ति–मारग प्रगट करि कलि जननि देहु उपदेस।
रचौ रास–विलास वे सब गिरि गोवर्द्धन–देस॥
बदन–इंदु तें बिमुख नैन चकोर तपत बिसेस।
सुधा–पान कराइ मेटहु बिरह कौ लवलेस॥
श्री वल्लभ–नंदन दुख निकंदन सुनहु सुचित संदेस।
'चत्रुर्भुज' प्रभु या घोषकुल कौ हरहु सकल कलेस॥

(२३) (राग सामेरी)

श्री विट्ठलनाथ–सौ प्रभु भयौ न व्है है।
पाछें सुन्यौ न देख्यो आगें इह सच फिरि न बनैहै।
मनुष–देह धरि भक्ति–हेत कलि–काल जनमु कौ लैहै ?
को फिरि नंदराइ कौ बभौ ब्रज–बासिनु बिलसैहै ?
को कृतज्ञ करुना सेवक–तन कृपा सुदृष्टि चितैहै ?
गॉइ ग्वाल संग लै के को फिरि गोकुल गाँउ बसैहै ?
धर्म–थंभ व्है ज्ञान कथन कों, जगत भगति प्रगटैहै ?

को कर कमल सीस धरिकें अधमनि बैंकुठ पठैहै ?
रास बिलास महोच्छव रचि को भोग राग सुख दैहै ?
को सादर गिरिराजधरन की सेवा सारु दृढैहै ?
भूषन बसन गोपाल लाल के कौन सिंगार सिखैहै ?
को आरती वारि श्रीमुख पर आनँद प्रेमु बढैहै ?
को बृंदावन चंद गोबिंदै प्रगट स्वरूप बतैहै ?
का कौ बहुरि प्रताप जु ऐसौ प्रगट पुहुमि सब छैहै ?
का के गुन कीरति लीला जसु सकल लोक चलि जैहै ?
श्री वल्लभसुत दरसन कारन अब सब कोउ तपैहै।
'चत्रुर्भुजदास' आज इतनी जो उहि सुमिरनु जनमु सिरै है।

(२४) (राग पूर्वी)

जयति आभीर–नागरी–प्राननाथे
जयति ब्रजराज–भूषण जसोमति,
ललित देति नवनीत मिश्री सुहाथे॥
जयति परभात दधि खात श्रीदामा सँग,
अखिल गो–धन–वृंद चरत साथे।
ठौर रमनीक वृंदाविपिन सोहै,
स्थल सुंदरी–केलि गुन गूढ गाथे॥
जयति तरनि तनया–तीर रास–मंडल रच्यौ,
तत्त थेई तत्त थेई तत्त था ताथे।
'चत्रुभुजदास' प्रभु गिरिधरन बहुरि,
अब प्रगट विट्ठलेस ब्रज कियो सनाथे॥

(२५) (राग पूर्वी)

प्रगटे रसिक श्री विट्ठलराइ।
भक्तहित अवतार लीनों बहुरि ब्रज में आई॥
सिव ब्रह्मादिक ध्यान धरत हैं, निगम जाकों गाई।
सेस सहस्र मुख रटत रसना जस न बरन्यौ जाई॥
पीत पट कटि काछिनी कर मुरली मधुर बजाई।
मोर चंद्रिका मुकुट मस्तक, भाल तिलकु बनाई॥
मकर कुंडल गंड मंडित देखि मदन लजाइ।
ग्वालिनी के संग विसलत रास–मंडल माँड़॥

अंग–अंग अनंग सुंदर कहा कहौं बनाई।
प्रानपति की निरखि सोभा 'चत्रुभुज' बलि जाइ॥

(२६) (राग देवगंधार)

ब्रज जन गावत गीत बधाए।
श्रीविट्ठलनाथ प्रगट पुरुषोत्तम गोकुल गृह जब आए॥
श्री गोवर्धन धर सुनि आनंदित अति आतुर उठि धाए।
मिलत करत औसेर पाछिली नैन नीर ढरि आए॥
वल्लभनंदन विरह निकंदन सैल सकल सुख छाए।
घर–घर आनँद भयो घोष में मौतिन चौक पुराए॥
धनि दिनु धनि यह पहरु घरी छिनु प्रानजीवन धन पाए।
धनि यह मंगल रूप नाथ कौ दरसत कलह नसाए॥
अति आनँद सों भवन–भवन प्रति मुदित निसान बजाए।
'दास चतुर्भुज' प्रभु यह मंगल प्रेम के पुंज छबाए॥

(२७) (राग गंधार)

विट्ठलनाथ अनाथ के तारन।
श्री वल्लभ–गृह प्रगट रूप यह धर्‍यौ भक्त हित कारन॥
दीनबंधु कृपासिंधु सहज ही भक्त–भक्ति विस्तारन।
'दास चतुर्भुज' प्रभु के नित मत चलत लाल गिरिधारन॥

(२८) (राग केदारो)

श्रीविट्ठल (प्रभु) प्रगटे आइ।
पौष वदी नौमी महा सुभ दिन घरी समुदाइ॥
ग्वाल गोपी सबै हरखे जहाँ–तहाँ तें उठि धाइ।
हाथन कंचन थार लिए हैं सरस मधुरे गाँइ॥
विविध बाजे बजत चहुँ दिसि आनंद उर न समाइ।
कुसुम बरसत नभ सुरन तें जै–जै सब्द सुहाइ॥
पूरे मनोरथ भक्त जन के आनँद निधि कों पाइ।
अन्य दोष जु मिटे जनम के भए मनोरथ भाइ॥
जात कर्म कराइ श्री वल्लभ दान विविध दिवाइ।
'चत्रुर्भज' प्रभु गिरिधरन कौ जसु बिविध विधि सों गाई॥

(२९) (राग-नट)

श्रीविट्ठलनाथ अनाथ के तारण।
श्री वल्लभगृह प्रगट रूप यह, धर्यो भक्त हित कारण॥
दीनबन्धु कृपासिन्धु, सहज ही भक्ति विस्तारण।
'दास चत्रभुज' प्रभु के निजमत, चलत लाल गिरिधारण॥

बाल लीला

(३०) (राग बिलावल)

महा महोछौ गोकुल गामु।
प्रेम मुदित गोपी जसु गावति, लै लै स्यामसुंदर कौ नामु॥
जहाँ–तहाँ लीला अवगाहति, खरिक खोरि दधि–मंथन–धामु।
परम कुतूहल निसि अरु वासर, आनंदहि बीतत सब जामु॥
नंद गोप सुत सब सुखदाइक मोहन मूरति पूरनकामु।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर आनँदनिधि नख सिख रूप सुभग अभिरामु॥

(३१) (राग जैश्री)

माई लैन देहु जो मेरे लालहि भावै।
दधि माँखन चौगुनों देउंगी या सुत के लेखें जाकी जितौ आवै॥
पलना झूलत कुलदेव अराध्यौ जतन जतन करि घुटुरनु धावै।
सर्वसु ताहि देऊँगी जो मेरे नान्हरे गोविंद पाँ पाँ चलन सिखावै॥
इहै अभिलाख होत दिन दिन प्रति कब मेरौ मोहन धेनु चरावै।
'चत्रुभुजदास' गिरिधर पिय इहि रस निरखि निरखि उर नैन सिरावै॥

(३२) (राग रामग्री)

अंगुरि छाँडि रेंगत अरग थरग।
नूपुर बाजत त्यों त्यों धरनी धरत पग॥
कबहूँ बसुधा माँहि भुज पसारि हँसि
डगमगाई कें उलटि भरत डग।
जननी मुदित मन चितै चितै सिसु तन,
कंठ लाइ सुंदर स्याम सुभग॥
मृदु बानी तुतरात माँगि नवनीत खात
भोजन भाव जैंसे जनावत बाल खग।

'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर के बाल विनोद
नंद आनंद मुख ठाढे टगटग॥

(३३) **(राग रामग्री)**

देखि सखी मनि खंभ निकट जहाँ गोरस की गोली।
संमुख प्रतिबिंब दिखाई ससि सिखवत प्रगट करो मति चोरी॥
अर्ध भाग आजु तें हम तुम दोऊ भली बनी है जोरी।
माँखन लै कित डारत हौ इहै बात मति भोरी॥
हिस्सा सबहि लियौ जु चाहत हो
बोलि मुसिकाइ आधी कहा थोरी॥
प्रेम विबिध सों धीरज न रही कुँवरि हँसी मुख मोरी।
'चत्रुभुजदास' गिरिधरन लाल पिय चलौ साँकरी खोरी॥

(३४) **(राग आसावरी)**

चुटिया तेरी बडी किधौं मेरी।
अहो सुबल तुम बैठि भैया हो हम दोउ मापें एक बेरी॥
लै तिनका मापत उनकी कछु अपनी करत बडेरी।
लै करकमल दिखावत ग्वालनि ऐसी न काहू केरी॥
मोकों मैया दूध पिबावति तातें होत घनेरी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर इहि आनंद नाचत दै दै फेरी॥

(३५) **(राग बिलावल)**

मैया मोहिं ऐसी बहुरिया भावै।
जैसी काहू की ढटूरिया रुनक झुनक करि आवै॥
करि करि पाक रसोई आछी माकों परोसि जिमावै।
दै घूँघट–पट ओट बवा की टेढी बाँह धरावै॥
लिये उठाइ गोद नँदरानी करि मनुहारि मनावै।
अहो मेरे कहों बाबा सों तेरौ ब्याह करावै॥
नंदराइ नंदरानी जसोदा सुधा समुद्र बढावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर बतियाँ सुनि उर आनँद न समावैं॥

(३६) **(राग देवगंधार)**

सुनहू धों अपने सुत की बात।
देखि जसोमति कानि न राखत लै माँखन दधि खात॥

भाजन भाँनि ढारि सब गोरस बाँटत है करि पात।
जो बरजों तो उलटि डरावत चपल नैन की घात॥
जो पावत सो गहत सहज हठि कहत हौं नहिं सकुचात।
हौं सकुचित अंचर कर धारिकें रही ढाँपि मुख गात॥
गिरिधरलाल हाल ऐसे करि चलै धाइ मुसिकात।
'दास चतुर्भुज' जानत है इह बूझि सौंह दै सात॥

(३७) (राग देवगंधार)

हा हा और सुनै जिनि कोऊ।
बहुरि ग्वारि मुख तें जिनि काढै ज्यों जानें हम दोऊ॥
बालक कान्ह निपट लरिका अब पाँ–पाँ चलन सिखायौ।
तासों कहति भवन अपने में चोरी माँखन खायौ॥
घर हू करत कलेऊ क्रमक्रम जो कोउ बहुत निहोरै।
सो क्यों अनत सकुच कौ लरिका कंचुकि के बंध तोरै॥
'दास चतुर्भुज' लाल गिरिधर कौ इनहीं के अनुहोरै॥

(३८) (राग बिलावल)

हौं बारी नवनीतप्रिया।
दिन उठि दैन उराहनौ आवति चोरी लावति घोष त्रिया॥
तुम बलराम–संग मिलिके इहिं आँगन खेलहु दोउ भइया।
निरखि–निरखि नैननि सुख पाऊँ प्रान जीवन सुत साँवलिया॥
जोइ भावै सोई लेहु मेरे प्यारे मधु मेवा दधि दूध घइया।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर का के घर तुम हूँ तें अति बहुत श्रिया॥

(३९) (राग देवगंधार)

दिन दिन देंन उराहनौ आवै।
इहै ग्वालि जोवन मदमाती झूठें हि दोस लगावै॥
कहो धौं भाजन धरे पराए कहाँ मेरो मोहनु पावै॥
लरिका अति सकुमार गहें कर हलधर संग खिलावै॥
कबहुँक कहत कंचुकी फारी, कबहुक औरु बतावै ।
कबहुँक रई मथनियाँ लै के आँगन हाथ नचावै॥
मनु लाग्यो कान्ह कमलदल लोचन ऊतरु बहुत बनावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर मुख इहिं मिस छिनु छिनु देख्यो भावै।

(४०) (राग धनाश्री)

भूल्यो उराहने कौ दैवौ।
सनमुख दृष्टि परे नँदनंदन चकितहि करति चितैवौ॥
चित्र लिखी सी काढी ग्वालिनि को समुझै समुझैवौ।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर मुख निरखत कठिन पर्‌यो घर जैवौ॥

(४१) (राग विभास)

नींद न परी रैनि सगरी मुँदरिया हो मेरी जु गई।
या ही तें झटपटाइ झुकि आई चटपटी जिय में बहुत भई॥
तुम्हारौ कान्ह पनघट खेलत ही बूझहू महरि हँसि होइ लई।
बिसरत नहीं नगीनाँ चोखौ हृदै तें न टरत वे झलक नई॥
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर चलो मेरे संग दैहों दूध दधि चाहो जितई।
मेरी व जीवनि धन मोही को दै हो तब चरन की चेरी व्हैहों जुग बितई॥

(४२) (राग बिलावल)

वैंसेंई धर्‌यो दधि बिना मथनु कियें
देहु जसोमति नेंकु अपनी रई।
हमारे ह्याँ ढूँढि रही उठि अँधियारे हूँ
पावत न भवन माँहि कहाँ धों गई॥
कछु न जिय सुहाइ याहि तें आतुर आइ
लौनी के लालच जिय चटपटी भई।
बाढौ नंद जू कौ राजु दिन चारि करों काजु
जालों ब हमारे आवै बहुरि नई॥
'चतुर्भुज' दास रानी मेरी अति चोंप जानी
है प्रसन्न मन महियाँ आनि दई।
भोर हीं देऊँ असीस बार मति खसो सीस
तुम्हारे गिरिधर की हों बलि बलि गई॥

(४३) (राग देवगंधार)

कहा ओछी है जैहै जाति।
सुनु जसोमति तुम बडीनु आगे हम छिनु एक कमाति॥
अति नीकौ सत भाव भलाई जो इह तनु कछु कीजै।
मात पिता कौ नाँउ लिवाबै लोक़ माँझ जसु लीजै॥

सासु ननद अरु पार परौसिनि हँसि बहु बार कह्यो।
तद्यपि मोहि तिहारे घर बिनु नाहिंन परत रह्यो॥
नित बोलहु संकोच करौ जिनि जब तुम सुतहिं न्हबाबहु।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लाल कहँ मोही पें उबटाबहु॥

(४४) **(राग सारंग)**

कंकन तब ही पें लैहै।
जेती बार मुरलिका मेरी आनि तहाँ ते देहै॥
मुद्रित नैन देखि जतननु कै तें जुक अंक तें हरी।
कीजै सुरति उलटि उतकी दिसि जहाँ ब दुराइ धरी॥
'चत्रुर्भुज' प्रभु वा सघन लता में ढूँढत कहूँ न पाऊँ।
गिरिधर लाल चलहू संग मेरे तुम कहँ ठौर बताऊँ॥

(४५) **(राग सारंग)**

सुनहु जसोमति भवन तुम्हारे चित्रे भले चितेरे।
ऐसे और नहीं काहू कें रही जाँचि बहुतेरे॥
बिनु देखे अब कल न परति मोहि करति याहि तें फेरे।
अति नीके भाँवते जिय के मानो विधि आप उकेरे॥
जिन के हइ संपति गोकुल गोपनि में न्याँइ बडेरे।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर जाके सुत प्रान जीवन धन मेरे॥

(४६) **(राग गौरी)**

ऐरी तू घरियघरी क्यों आवै।
नंद नंदन सों हेत कहा है सो क्यों न मोहिं बतावै॥
दीपक बार द्वार मंदिर करि फेरहिं बारन धावै।
हिये अँधारौ उजारौ चाहत है सो दीपक क्यों जावै॥
मनि–माला आँगन में लै लै तोर डार बगरावै ।
बीनत मिस मोहन अवलोकत यों ही पहरु बितावै॥
ब्रह्मदिक जाको ध्यान धरत हैं खोजत अंत न पावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर छबि निरखत इनहिं लखै सचु पावै॥

(४७) **(राग भैरव)**

उठो हो गोपाललाल दुहो धौरी गैया।
सद्द दूध मथि पीबहु धैया॥

भोर भयौ बन तमचुर बोले।
घर घर घोष द्वार सब खोले॥
तुम्हारे सखा बुलावन आए।
कृष्ण कृष्ण कहि मंगल गाए॥
गोपी रई मथनियाँ धोवै।
अपनो–अपनो दह्यौ बिलावै॥
भूषन बसन पलटि पहिराऊँ।
चंदन तिलक ललाट बनाऊँ॥
'चत्रुर्भुज' प्रभु लाल गिरिवरधारी।
मुख–छबि पर बलि जाइ महतारी॥

(४८) (राग रामग्री)

मैया तेरे लाल कौ मुख देखन आई।
कालि देखि मुख गई दधि बेचन जातहिं गयो बिकाई॥
दिन ते दूनौ दाम लाभ भयो गांइनि बछिया जाई।
आई राबै थँभाइ साथ की मोहन देहू जगाई॥
सुनि मृदु वचन बिहंसि उठि बैठे नागरि निकट बुलाई।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल कों चली संकेत बताई॥

(४६) (राग-बिलावल)

भूली री दधि मंथन करवो।
देखत रसिक नंदनंदन को डगमगात पग धरवो॥
रहि गई चितै चित्र जैसे एकटक नयन निमेषन परवौ।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन जनायो, काहे तें मो मन मणि कहरवो॥

(५०) (राग-नट)

जो तू अछन अछन पग धरणी धरे।
निश अंधियारी कोऊ नहीं जानत, नूपुर ध्वनि जिन प्रकट करें॥
किसलय दल कुसुमन की शैया, रची चल निहार नवकुंज धरें
'चतुर्भुजदास' स्वामिनी बेगचल, रसिकराय गिरिधरन वरें॥

(५१) (राग-सारंग)

मूंदरिया मेरी जो गई नींद पर परी रैन सगरी।
याही ते [illegible] नहिं आई, चटपटी जिय में बहुत भई री॥

तुम्हारो कान्ह पनघट खेलत हो, बूझो हौं महरी हंसी होय लई।
बिसरत नहीं नगीना चोखो, हृदय ते टरत न झलक नई॥
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर चलौ मेरे संग, देहों दही चाहौ जितई।
मेरी वह जीवन मोहि कोऊ देऊ, तुव चरनन की चेरी व्है जु बिपतई॥

(५२) (रांग-सारंग)

सोहत लाल परदनी झीनी।
ता पर एक अधिक छबि देखियत, जलसुत पॉत बनी कटि छीनी॥
उज्ज्वल पागबनी सिर राजत, अलकावली मधुप मधुपीनी।
'चतुर्भुजदास' लाल गिरिधर पिय, चपल नैन चितवन बस कीनी॥

(५३) (राग देवगंधार)

नैन भरि देखहु नंदकुमार।
जसोमति कूख चंद्रमा प्रगटयो या ब्रज कौ उजियार॥
बन जिनि जाइ आज कोउ गोसुत औरु गांइ ग्वारु।
अपनें अपनें भेष सवै धरि लाबहु विविध सिंगारु॥
हरद दूब अच्छित दधि कुंकुम मंडित करहु द्वार।
पूरहु चौक बिबिध मुगतामनि गाबहु मंगलचारु॥
करत वेद धुनि सबै महामुनि होत नच्छित्र बिचारु।
ऊग्यौ पुन्य को पुंज सांवरौ सकल सिद्धि दातारु॥
गोकुलवधू निरखि आनंदित सुंदरता की सारु।
'दास चत्रभुज' प्रभु चिरजीबहु गिरिधर प्रान आधार॥

(५४) (राग सारंग)

आजु बधाई माँगत ग्वाल।
बाजत तूर होत कौतूहल प्रगटे मदन गोपाल॥
गृह–गृह तें सब आवतिं गावतिं भरि–भरि मोतिनि थार॥
कंचन कलस चरचि केसरि के, बाँधतिं वंदनवार॥
'चत्रभुजदास' पाबे न्यौछावरि उर गज मोतिनि हार॥

(५५) (राग मलार)

नंद–घर होत बधाई आज।
जसोमति जनम–पत्रिका पाई भक्तनि कौ सुखराज॥
गोपीग्वाल करत कौतूहल निरखत नंद कुमार।

कनक-थार लियें ब्रज-सुंदरी गावति मंगलचार॥
नंद जु दान दियो बहुबिधि सों सर विप्रनि के काज।
'चत्रुर्भुज' प्रभु को मुख निरखत ही वृष्टि करत सुरराज॥

(५६) (राग धनाश्री)

प्रथम प्रनाम ब्रज सीस असीस लीजै जु।
किये परम उपकार बधैयाँ दीजै जु॥
पुत्र तिहारे कौ हौं गाहक भूत भविस वर्तमान।
जब जब औसर आइ रहूँ फुनि द्वार न जाँचों आन॥
सोते में सपनौ पायो मैं देख्यो अद्‌भुत रूप।
जदुकुल-तिलक प्रगट प्रभु गोकुल, नंद-महरि घर पूत॥
बदि भादौं आयो जुग द्वापर अर्धरात्रि बुधवार।
बालव करन अरु नछित्र रोहिनी जनमें जगदाधार॥
द्वादस लगुन सुभग नवग्रह उदित आपत मित देखि।
आगम सुगम प्रमान कर गर्ग लिखी जन मन जु लेखि॥
जिन जान्यो मानस बलि भैया देवन ही कौ देव।
कौन पुन्य अहीर अपरिमित पूरब कर्मनि खेव॥
गोप वधू घर-घर तें आवें लै लै मंगल साज।
कुसुम बँधावौ कूखि महरि की कनक पुरुष ब्रजराज॥
हय, गज, धेनु, अरथ, अंबर, धन दीन्हे धन भंडार।
मैं ढाडी न अधाऊँ कबहूँ नंद जदपि दातार॥
तब हँसि कह्यो नृपति गोकुल के कहा जाचक मन कीन्ह।
हारत हाथ ब नाहीं न करिहै संक न सरबसु दीन्ह॥
जग में या ढिंग जाइ रह्यो जो परदा की रहे ओट।
हिय नारी व हेरत जहाँ तहाँ करि आऊँ तन लोट॥
धनि जीयो सुखराज पुन्य तिहि जनमन-पूरन आस।
जनम-जनम गुन गावहीं हरि वारत 'चत्रुभुजदास' बधैंयाँ दीजेजु॥

(५७) (राग कानरा)

रावल के कहें गोप, आज ब्रज दूनी ओप।
काननि दै दै सुनौ बाजे गोकुल में मँदिलरा॥
जसोदा के सुत जायो, वृषभानु सचु पायो।
जहाँ तहाँ लै लै धाए दूध-दधि-गगरा॥

आगे गोप वृंद वर पाछें त्रीय मनोहर
चल निकसे कोउ पावत न डगरा॥
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिवरधारी कौ जनमु भयौ
फूल्यो फूल्यो फिरै जहाँ नारद–सो भँवरा॥

(५८) (राग काफी)

हौं ढाढिनि ब्रजराज की ब्रज तें आई हो।
सुनि जायो जसोमति पूत सू धाम तें धाई हो॥
सुदंर रूप अनूप सबै मन भाई हो।
मानों इंद्र अखारे तें आपु पठाई हो॥
मंदिर में लई जहाँ नंदरानी हो।
सीस नवाइ असीस दै बंस बखानी हो॥
बाजत ताल मृदंग उंपग जु बाँसुरी।
अंबुज नैन बिसाल सु गावत बाँसुरी॥
निर्तत ताथेई ताथेई लियें गति गोहनी।
नंद के आँगन में मानों निर्तत मोहिनी॥
रीझि जसोमति रानी सबै विधि सुंदरी।
दिये कुंडल हार दई कर मुंदरी॥
दीनी नई नकबेसरि बेंदी जराउ की।
दीनी है कंचन जेहरि पंकज पांउ की॥
दीन्ही है सारी सोंधे भींजी कंचुकी नेह की।
कीन्ही है मालिनि ढाल सुढाढिनि गेह की॥
ढाढी गयंद लदाइ चल्यो चित चाडिलौं।
चिरजीयो 'चत्रुर्भुज' कौ प्रभु गिरिधर लाडिलौ॥

(५६) (राग सारंग)

आजु छठी छबीले लाल की।
उबटि न्हबाइ भूषन वसन दिए सुंदर स्याम तमाल को॥
केसर चंदन आरिति वारति मोहन मदनगोपाल की।
'चत्रुर्भज' प्रभु सुखसिंधु बढ़ावत गिरि गोवर्धनलाल की॥

(६०) (राग–बिल विल)

देख सखी नव छैल छबीलो, चिते लियो मेरो चित चोर।
अरविलो आनत ऐंडानी, और आकृति नैनन की कोर॥

शोभा अंग प्रति रूप माधुरी, शीश दुमालो अति छबछोर।
कुंडल लोल कपोलन झांई, अरूनउदै मानो किरन चहुँ ओर॥
कहत न बने देखही बन आवे, सदा बसौ मन नंदकिशोर।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल पर रीझे डारत त्रन तोर॥

(६१) (राग-बिलावल)

आज देखियत नैना आलस भरे रगमगे।
रेलपेल कनपरी सूरत इन जेकरी भोर आये लाल परत पग डगमगे॥
तन ओरे भाँत कछुब कही न जात लसत अद्‌भुत क्रांत अंग अंग जगमगे।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरन आये भली करी पलट लाये बसन सोधे मील सगबगे॥

(६२) (राग-विभास)

माई री स्याम सुन्दर भोर भवन आगें व्है आवे।
कबहूं मुख मंदहास मेरे सखी सुख की, रासि कबहूँ बेन कबहुं नयन सयन ही जनावे॥
मेरी दधि मथन वार, उनकी उठनी सवार, रई नेत माट समेत सकल हो बिसरावें।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर अंग अंग कोटि मदन मूरति हसत चलत बनको सबहिन के चितहि चुरावे॥

(६३) (राग-सारंग)

अति छबि देत दुमालो सीस ।
मनमथ मान हरत एसि चितवत बने गोकुल के ईस।
ठाड़े सिंघ पौर मध्य राजत, संग सखा दसु बीस।
हियो सिराहत 'चतुर्भुज' प्रभु लख जीयो कोटि बरीस

(६४) (राग-मलार)

माखन की चोरी के कारन, सोवत जाग उठे चल भोर।
अँधियारे भुनसार बड़े खन, धसत भुवन चितवन चहुँओर॥
परम प्रवीन चतुर अति ढोटा, लीने भाजन सबही ढंढोर।
कछु खायौ, कछु अजिर गिरायौ, माट दही के डारे फोर॥
मैं जान्यो दियो डार मंजारी, जब देख्यो मैं दिवला जोर।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर पकरत, ही हा हा करन लगे कर जोर॥

(६५) (राग-सारंग)

नंदलाल बजाई बांसुरी श्री यमुना जू के तीर री।
अधर कर मिल सप्त स्वरन सौं उपजात राग रसाल री॥१॥
ब्रज युवती ध्वनि सुनि उठि धाई रही न अंग संभार री।
छूटी लर लपटात बदन पर टूटी मुक्ता मालरी॥२॥
बहत न नीर समीर न डोलत वृंदा विपिन संकेत री।
सुनि थावर अचेत चेत भये जंगम भये अचेत री॥३॥
अफल फले फल फूल भये री जरे हरे भये पात री।
उमँग प्रेम जल चल्यौ सिखर तैं गरे गिरिन के गातरी॥४॥
तृण न चरत मृगा मृगी दोऊ तान परी जब कानरी।
सुनत गान गिर परे धरणि पर मानों लागे बान री॥५॥
सुरभी लाग दियौ केहरि कौ रहल श्रवण हीं डार री।
भेक भुंजग फण चढि बैठे निरखत श्री मुख चार री॥६॥
खग रसना रस चाख वदन नयन मूँद मौंन धार री।
चाखत फलहिं न परै चौंचते बैठे पाँख पसार री ॥७॥
सुर नर असुर देव सब मोहे छाये व्योम विमान री।
चतुर्भुजदास कहौ को न वश भये या मुरली की तान री॥८॥

(६६)

मोहन चलत बाजत पैंजनि पग।
सब्द सुनत चकृत है चितवत, त्यों ठुमकि ठुमकि धरत है डग।
मुदित जसोदा चितवति सिसु तन लै उछंग लावै कंठ सु लग।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लालकों, ब्रजजन निरखत ठाडे ठग–ठग।

(६७)

कान्ह सों कहति जसोदा मैया।
मेरे मोहन अनत न जैये घरहि खेलौ दोऊ भैया॥
ए तरुनी जोबन मदमाती झूँठे हि दोस लगावै दैया।
तुम तो मेरे प्रान जीवन–धन मथिकै दूध पिवाऊं धैया॥
'चत्रुर्भजदास' गिरिधरन कह्यौ तब हौं बन जाउँ चरावन गैया।
सुनि जननी मन अति हरषानी, मुख चूमति अरु लेत बलैया॥

(६८)

मैया मोहिं माखन मिश्री भावै।
मीठौ दधि मधु घृत अपने कर क्यों नहिं मोहिं खवाबै॥
कनक दोहिनी दैकर मोकों गो–दोहन क्यों न सिखावै।
औट्यौ दूध धेनु धोरी कौ भरि कटोरा क्यों न पियावै॥
अजहूं ब्याह करति नहिं मेरौ होइ निसंक नींद क्यों आवै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर की बतियाँ लै उछंग पय पान करावै॥

(६९)

घर–घर डोलत माखन खात।
ग्वाल बाल सब सखा संग लियें सूने भवन घसि जात॥
जब ग्वालिनि जल भरि घर आई तबहिं भजे मुसिकात।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल सों, नाहिंन कछू बसात॥

(७०)

ग्वालिनि तोहिं कहत कों आयौ।
मेरौ कान्ह निपट बालक, क्यों चोरी माखन खायौ॥
बूझि विचारी देखि जिय अपुने कहा कहों हौं तोहिं।
कंचुकि–बंद तोरैं ये कैसें, सो समुझि परत नहिं मोहिं॥
'चत्रुभुजदास' लाल गिरिधर सों झूठी कहति बनाइ।
मेरौ स्याम सकुच कौ लरिका पर–घर कबहूं न जाइ॥

(७१)

सावन तीज हरियारी सुहाई माई, रिमझिम रिमझिम बरसत मेह भारी।
चुनरी की पाग बनी चुनरी पिछौरा कटि, चुनरी चोली बनी चुनरी की सारी॥
दादुर मोर पपैया बोलत, कोयल सब्द करत किलकारी।
गरजत गगन दामिनी दमकति, गावत मलार तान लेत न्यारी॥
कुंज महल में बैठे दोऊ, करत विलास भरत अँकबारी।
'चत्रुर्भुज' प्रभुगिरिधरछबि निरखत, तन–मन–धन न्यौछावरि बारी॥

(७२)	राग -सारंग

भादों सुदी पंचमी प्रगट भई सबहिन कौ सुखदाईजू।
श्री चन्द्रभान गोप गृह निधि रुखमा कूख सुहाई जू॥

गाम दिठौरा घरन घरन प्रति मोतित चौक पुराई जू।
गोप गोवर्धन भये जु परमसुख सबहिन देत बधाई जू॥
देत दान विप्र भाटन को माला मुंदरी चीरा जू।
'चत्रभुज' प्रभु भूतल पर गोपराज बलबीरा जू॥

पलना

(७३) (राग रामकली)

अपनें बाल गोपालै रानी पालनें झुलावै।
बारंबार निहारि कमलमुख प्रमुदित मंगल गावै॥
लटकन भाल भृकुटि मसि बिंदुका कठुला कंठ सुहावै।
देखि देखि मुरिकाइ साँवरौ, द्वै दँतियाँ दरसावै॥
कबहुँक सुरंग खिलौनां लै लै नाना भाँति खिलावै।
सद्य माखन मधु सानि अधिक रुचि अंगुरिनि कै कै चखावै॥
सादर कुमुद चकोर जु नैननि रूप सुधा रस प्यावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनचंद कों हँसि हँसि कंठ लगावै॥

(७४) (राग रामकली)

साँवरौ मुख पलना झूलै।
निरख़ि निरखि जसोमति मन फूलै॥
नैन विसाल भृकुटि मसि राजे।
निरखि बदन उडुपति अति लाजै॥
कठुला कंठ रुचिर पोंहोंची कर।
सुभग कपोल नाक बिंबाधर॥
भाल तिलक लट लटकनु सोहै।
मंद हँसनि सबकौ मनु मोहै॥
माँखन मिसरी मेलि चखावति।
बार बार प्रमुदित उर लावति॥
गिरिधर कुँवर जननि दुलरावै।
'चत्रुभुजदास' विमल जसु गावै॥

(७५) (राग रामकली)

झूलौ पालनें गोबिंद।
दधि मथों नवनीत काढों तुमकों आनँदकंद॥

कंठ कठुला ललित लटकन भ्रकुटि मन कौ फंद।
निरखि छबि छिनु छिनु झुलाऊँ गाऊँ लीला छंद॥
द्वै दूध की दँतियाँ सुख की निधि हँसत जबै कछु मंद।
'चत्रुभुज' प्रभु जननी बलि गिरिधरन गोकुलचंद॥

(७६)

पालना झूलत सुदंर स्याम।
रतन जटित कंचन को पलना झुलवत हैं ब्रजबाम॥
गजमोतिनि के झूमका बाँधे मोहे कोटिन काम।
'चत्रुभुजदास' प्रभु गिरिधरनलाल के चरन कमल बिसराम॥

(७७) **(राग धनाश्री)**

ललित ललाट लट लटकनु लटकनु
लाडिले ललन कों लडावै लोल ललना॥
प्रान प्यारे प्रीति प्रतिपालति परम रुचि
पल पल पेखति पौढ़ाइ प्रेम पलना॥
दरपनु देखि देखि दँतियाँ द्वै दूध की
दिखावति है दामिनी सी दामोदर दुख दलना॥
सरोज सो सलोनौ सिसु स्यामघन से जलधर
'चंत्रुभुजदास' बिनु देखे परै कल ना॥

जगावनो

(७८) **(राग-भैरव)**

जागो गोपाललाल दुहो धौरी गैयां।
सद्दूध मथ पीवो धैयां॥
भोर भयो वन तमचर बोले। घर–घर गोप वगर सब खोले॥
गोपी रई मथनिया धोवे। अपनौ अपनौ दह्यो बिलोवे॥
संग के सखा बुलावन आये। कृष्ण नाम ले–लै सब गाये॥
भूषण बसन पलट पहराऊँ। चंदन तिलक ललाट बनाऊँ॥
'चतुर्भुज' प्रभु श्रीगोवर्धनधारी। मुख छबि पर बलि गई महतारी॥

कलेऊ

(७९) (राग देवगंधार)

गोवर्धनधर मुरली अधर धरो
कहति जसोदा रानी जागौ मेरे प्यारे।
संग के ग्वाल खरिक मुख टेरत
उछट जात गैयॉ तुम जु आओ
अब नेंकु कान्हा रे॥
उठे प्रात गात कहन लागे मात तात
करौ ही कलेऊ आतुर जिन होउ प्यारे॥
'चतुर्भुज' प्रभु जानि भागि तेरौ
पूरन ब्रह्म सों कहति लला रे॥

(८०) (राग विभास)

प्रात हि कुंजमहल पलिका तें, ललिता स्यामहिं आन जगावै।
नैन उनींदे अति रस बींधे, चपल भौंह गति भेद बतावें॥
टहल करत ते चलीं सबै मिलि, कोमल कर सों चरन दबावै।
लै कर चरन धरत कुच ऊपर, रैनि मैन–तन–ताप बुझावै॥
अगनित गुन रस गान करति है, मधुरे सुर कर बीन बजावै।
जब मुख कर्‍यौ लली अंचर पट, तन मन अति हरखावै॥
रति–रन छाँडि भजे कंपति तें, काम कटक तब काम न आवै।
'चत्रुभुज' स्यामसुंदर की लीला, बेद पुरान भेद नहिं पावै॥

(८१) (राग बिलावल)

प्रात समै उठि मात रोहिनी बलदाऊ कों आनि जगावै।
उठो लाल तुम करो कलेऊ कान्ह कुँवर तोहि टेरि बुलावैं।
माखन मिश्री दही मलाई, मांट थार भरि संग चलावै।
जमुनोदक झारी भरि लावै, हस्त पखारत खात खवाबै॥
मुख धोवत पोंछत ऑचरं सों अरु सब तैल लगावै।
चंदन घिसि मृगमद मिलाइके केसरि सों उबटावैं॥
जमुना–जल तातौ लै सीरौ, झारी भरिके आनि न्हवावै।
अंग अँगोछि गूँथि बैनी कों, नये बसन रँग रँग पहिरावै॥
कंचन नग मनि जटित आभूषण विधि सों कर शृंगार बनावै।

फिरि पुचकारि निरखि श्रीमुखकों हरखै स्नेह पयोधि चुचावै॥
केलि कला से नित वन क्रीडत, तन मन अति आनँद समावै।
दोउ भ्राता मिलि झगरौ ठानत, करति न्याउ, उनकों समुझावै॥
गोद उठाइ लाइ घर भीतर बैठि पलंग, स्तन–छीर पिवावै।
मेवा बहुत गोद भरि दीनी ब्रज लरिकनि कों टेरि बुलावै॥
खरिक खोलिकें गॉइ बुलाई
एक एक पै हाथ फिरावै।
'चत्रभुज' लै कामरि लर लकुटी
ग्वालनि के संग गॉइ चरावै॥

(८२) (राग विभास)

भोर भयौ नंद जसुदा जू, बोलैं जागो मेरे गिरिधरलाल।
रतन जटित सिंघासन बैठो, टेरन कों आई ब्रज–बाल॥
नियरें जाइ सुपेदी खे चति, बहुरि बसन सों ढॉपि रसाल।
मधु मेवा पकवान मिठाई, भामिनि लाई भरि भरि थाल॥
तब हरि हरषि गादी पर बैठे, करत कलेऊ तिलकु दै भाल।
दै बीरा आरती उतारति, 'चत्रभुजदास' गावैं गीत रसाल॥

(८३) (राग भैरव)

नैन भरि देखों गिरिधरन कौ कमल मुख।
मंगल आरति करों प्रात हीं परम सुख॥
लोचन बिसाल छबि संचि हृदे में धरी
कृपा अवलोकनि चारु भृकुटीनु रुख।
'चत्रभुज' प्रभु आनंद निधि रूप निधि,
निरखि करों दूरि सब रैनि कौ दुख॥

(८४) (राग भैरव)

मंगल आरती गोपाल की।
प्रात कि मंगल होतु निरखि कें चितवनि नैन बिसाल की॥
मंगल रूप स्यामसुंदर मंगल छबि भृकुटी भाल की।
'चत्रभुजदास' सदा मंगल निधि बानक गिरिधरलाल की॥

(८५) (राग-मलार)

करत कलेऊ किलकत मोहन।
चहुँ दिस तें गरज घटा बरस रही मोहन लागे गोहन॥

बाँट बाँट ग्वाल बालन कूँ, झूंठे बिंजन सोहन।
निरख 'चतुर्भुजदास' प्रभु छबि वारत मुक्ता जोहन।

छाक

(८६) (राग सारंग)

सुंदर सिला खेल की ठौर।
मदन गोपाल जहाँ मध्य नाइक चहुँ दिसि सखा मंडली और॥
बाँटत छाक गोवर्द्धन ऊपर बैठत नाना बहु विधि चौर।
हँसि हँसि भोजन करत परस्पर चाखि लै माँगत कौर॥
कबहूँ बोलत गाँइ सिखर चढि लै–लै नाम धूमरी धौर।
'चत्रुभुज' प्रभु लीला रस रीझत गिरिधरलाल रसिक सिरमौर॥

(८७) (राग मलार)

आरोगत नागर नंदकिसोर।
चहुँ दिसि तें घन उमड घुमड आए गरजंत हैं घनघोर॥
नान्हीं नान्हीं बूँदनि बरसन लाग्यौ पवन झकझोर॥
'चत्रुभुज' प्रभु पातर लै भाजे सघन कुंज की ओर॥

(८८) (राग आसावरी)

आजु हमारें आओ नंद–नंदन अकेले करि बतराऊँगी।
जो तुम सास ननँद सों सकुचौ तो उनि पर–काज पठाउँगी॥
द्वार कपाट लगाइ जतन सों तन की साध पुराऊँगी।
करि करि पाक रसाल रसोई अपनें करहि जिमाऊँगी॥
निसि दिन खेलो मेरे आँगन निरखत नैन सिराऊँगी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन कों हँसि हँसि कंठ लगाऊँगी॥

(८९) (राग सारंग)

छाक खाइ बंसीबट फेरि चलत जमुना तट,
जहाँ जाइ धोवत मुख धीर समीरन।
फेंटि खोलि पोंछत हाथ सखा सब लिए साथ
चले जात बन ही बन खात मुख बीरन॥
गाँइ बच्छ तहाँ चरत कुसुम नव लता मन हरत
आप बैठे सघन तरु जहाँ बोलत पिक कीरन।

'चत्रुभुज' दास के प्रभु सखनि संग गावत सारंग तान
आए मृग वन के स्रवन सुनि सुधि न रही सरीरन॥

(६०) (राग सारंग)

टेरति जसोमति मैया ग्वालिनि छाक लेहु बन जाहु सबारी।
बडी बेर भई है आ कब के पैंडौ देखत कुँवर निहारी॥
बिंजन मीठे खाटे खारे धरे हैं सँवारि परम रूचिकारी।
भरि भरि डलनि अछूते राखे गनत न आवै धरे सुधारी॥
हँसति ग्वालिनी प्रमुदित चित अति चली छाक लिएँ सकुँवारी।
नंदनंदन बैठे हैं जहाँ ही आवत ही ठौर लै आनि उतारी॥
अहो अहो सुबल अहो श्रीदामा बोलहु ग्वालनि अब इक ठाँरी।
जेंवत रामकृष्ण दोउ भैया ग्वाल मंडली सबै सम्हारी॥
गिरि गोवर्धन पर बैठें हॅसत परस्पर सब रूचिकारी।
ग्वालिनि रीझि चली ब्रज महियॉ 'चत्रुभुज' दास जाइ बलिहारी॥

(६१) (राग सारंग)

तिन में बैठे छाकें खावत मदन रूप मंडली रची।
छप्पन भोग छत्तीसों व्यंजन आनि आगें थार सॅची॥
एक खात इक हॅसत परस्पर सबहिनि के मन में सैनाबैनी मची।
'चतुर्भज' प्रभु गिरिधर मुख निरखत ब्रह्मा सुरपति नारद रहे सब ठाठ ठची॥

(६२) (राग मलार)

बीरी सुबल स्याम कों देत।
स्याम सखा ग्वालिनि कों बाँटत उपजावत अति हेत॥
बरखा बरसत तें सब बिडरी गॉइनि की सुधि क्यों नहिं लेत।
'चत्रुर्भज' प्रभु गिरधरन बजाई मुरली करन सचेत॥

(६३) (राग-सारंग)

मंडल मधि छैयां कदम की, छाक अरोगत रूचि उपजाई।
बिंजन बाँट सबन को दीने, अद्भुत स्वाद मुख बरन्यो न जांई॥
जानत बार जेवन की मैया, ताही बेर दई छाक पठाई।
तेसयि भूख लागी तैसी ले, दीनी हाथ छाक ले आई॥
अधिक अघाने कहत सखा सब, ऐसो स्वाद हम कबहुँ न पायो।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर के जेंवत, आनंद मन हिये हरख बढ़ायो॥

(६४) (राग-मल्हार)

जहाँ गोपाल तहाँ जुरे सब सब ग्वाल।
पनवारे अपने ले उठ धाये तिहिं काल॥
भोजन सब नीकी विध कीनो पातर सजके लायो।
कछु अरोगा कुंजन में लीजोमोहन सबन सुनायो॥
कुके करकर डारत व्यंजन कौतीक अम्बर छायो।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर अचवावन मानो सुरपति झर लायो॥

भोजन के पद

(६५) (राग-धनाश्री)

रानी जू एक वचन मोहि दीजे।
पठवो सदन हमारे सुत कों, कह्यो मान मेरो लीजे॥
तब कछु नीकी सोंज बनावत, तब घर जिय अकुलात।
अटक रहत तुम्हारे सुत पर, इन बिन जियो न जात॥
निशदिन खेलो मेरे ऑगन, नयना निरख सिराऊँ।
'चतुर्भज' प्रभु गिरिधरन छैल को, हँस हँस कंठ लगाऊँ॥

(६६) (राग-टोडी)

अरी तू बारबार उझकि उझकि आवे, जानि भोजनकी बिरियां।
जेंवत डोलत नंद गोद ढोटा ले बरजी है सौ बिरियां॥
घर न सुहात रह्यौ नहीं जात फिरत निडरियाँ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल कौं, तकिहिं रहत दिनभरियाँ॥
ब्यारू

(६७) (राग कान्हेरो)

व्यारू स्याम अरोगन लागे।
बहु मेवा पकवान मिठाई व्यंजन करे मधुर रस पागे॥
दार भात घृत कढी संधानौ, रुचिकर मुख सों मांगे।
'दासचतुर्भुज' के प्रभु दै जूंठन सब जन बड भागे॥

(६८) (राग-कान्हरौ)

सखीरी जेंवत गिरिधरलाल।
कुंज महल में रची चित्रसारी, फूल रहे पंकज विसाल॥

खटरस बिंजन विविध भाँत के, रोहिनी भर ल्याई है रसाल।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरनलाल पर, तृन तोरत ब्रजबाल॥

(६६) (राग-कान्हरो)

अपने लाल को जिमावत मैया।
कर कर कौर मुखारविन्द में, मधु, मेवा, पकवान, मिठैया॥
व्यंजन खाटे, मीठे खारी अतिही, खारी स्वाद बन्यौ अधिकैया।
'चतुरभुज' प्रभु गिरिधरन लाल को, ब्यारू करावत लेत बलैया॥

मान

(१००) (राग विलावल)

आजु कौ सिंगार सुभग सांवरे गोपाल कौ
कहत न कहि आवे सखि! देखे बनि आवै।
भूषन बसन भांति–भांति अंग–अंग अद्‌भुत छवि
लटपटी सुदेस पाग चित्त कों चुरावै॥
मकर कुंडल, तिलक भाल, कस्तूरी अति रसाल,
चितबनि लोचन बिसाल कोटि–काम लजावैं।
कंठसरी बनी लाल पटुका कटि छोरनि छबि
त्रिभुवन–त्रिय को जु निरखि धीरज रहावै ?
मेरे संग चलि निहारि निकुंज–महल बैठे हरि
हौं तोसों निज बात कहों जो तेरे जिय भावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर अंग–अंग कोटि–मदन–मूरति
बडभागिनि जुबति क्यों न हिरदै लपटावै !

(१०१) (राग सारंग)

चितवनि तेरीये जिये बसी।
जब ब्रज–खोरि उलटि हरि मोहे ईषद हास हसी॥
मोहन मन आतुरता अति सखि! चलि दै नैन मसी।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर पथ चितवत रसिकनु मांझ रसी॥

(१०२) (राग सारंग)

बैठें क्यों बनै मोहि माई !
सुंदर स्याम इतहिं पथ चाहत अति चित आतुरताई॥

तुव मुख हास बसी हरि के जिय तो हौं बेगि पठाई।
तूं बिलंबति ठानति बहु ऊतर जानी है चतुराई॥
सोई बडभागि जुवति त्रिभुवन में जो मोहन मन भाई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन रसिकवर अंग–अंग सुखदाई॥

(१०३) (राग सारंग)

सुनहि सखि ? सुचित हित बात मेरी श्रवन धरि
चलहिं वृंदाविपिन बैठे जहां गिरिधरन।
सघन तरु–छांह धरें चारु नट–भेष सुंदर
सिरोमनि रसिक सुभग साँवल बरन॥
नव किसलय कुसुम रचि सेज चितवत पंथ
एकटक नैन नहिं देत पलकौ परन।
बेग पाउं धारि ब्रजनारि! पिय–भांवती
तजि गहरु पहिरि तनु विविध पट आभरन॥
निरखि नागर नवल नंद–नंदन रूप माधुरी
अंग–अंग जुवतिजन–मन–हरन।
'चत्रुभुजदास' प्रभु भेटि बडभागि तिय
चतुर–चूडामनी सुरत–सागर–तरन॥

(१०४) (राग सारंग)

समुझति हों नीकें तेरे मानहिं।
दै पट–ओट बधिक–सी विधि तानति है नैन बानहिं॥
प्रगट मौन हरि पिय सों मुख रुख भेद परत नहिं आनहिं।
अंतर ही मिलवति मन सों मन, तकति भृकुटि उनमानहिं॥
दुरत न चंद ओट झीने वादर कतहि रूसनो ठानहिं।
'चत्रुभुजदास' उमगि तन परसै गिरिधर रसिक सुजानहिं॥

(१०५) (राग सारंग)

नागरि! छांडि दै चतुराई।
अंतर गति की प्रीति परस्पर नाहिंन दुरति दुराई॥
ज्यों–ज्यों ठानति मान मौन धरि, मुख रुख राखि रुखाई।
त्यों–त्यों प्रगट होत उर अंतर काच कलस जस झांई॥
भृकुटि भाव भेद मिलवति सब नाइक सुधर सिखाई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर गुन–सागर सैननि भली पढ़ाई॥

(१०६) (राग सारंग)

सारंग सहेलरी नित प्यारी।
जाकौ गान करत निसि वासर लाल गोवर्द्धनधारी॥
सोई सारंग सुनि श्रवन बेगि उठि चली वृषभानु–दुलारी।
सोई सारंग मुरलिका मधुर सुर कूजत विपिन–बिहारी॥
सारंग नित सारंग मिलि गावत कुंज रहे रंगु भारी।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर गुन–सागर गुन–निधान ब्रजनारी॥

(१०७) (राग सारंग)

चलहु लाल! गिरिधर नागर चतुर सुजान!
सुनि तुम्हारो संदेस राधा–उर लागे हैं विषम मदन के बान॥
गुपत मते की बात जबहि मैं हरुवें कहि मेली लै कान।
मुरछि परी तन बिसरि गई सुधि, अंग–अंग दसा आन की आन।
घूमत सिथिल प्रस्वेद भींजि पट, मरमे हें तन बचन संधान।
औषधि जतन करत अकुलानी, सब सखियनु भूले औसान॥
विकल देखि तुम पै उठि दौरी, नहिं उपचार हमारे मान।
'चत्रभुज' प्रभु पिय स्याम सुधा–निधि! बेगि मिलहु राखहु प्रिया–प्रान॥

(१०८) (राग नट नारायण)

अछन अछन पगु धरनि धरै।
अंधियारी निसि कोउ न जाने, नूपुर–धुन जिनि प्रगट करै॥
किसलै कुसुम सुहथ रची है री रचना, चलि निहारि नव कुंज धरै।
'चत्रभुजदास' स्वामिनी बेगि मिलि, रसिक–राइ गिरिधरन बरै।

(१०६) (राग नट नारायण)

रस ही में बस कीन्हे कुंवर कन्हाई।
रसिक गोपाल रसिक रस रिझवति
रस ही में तासों रिस तजि री माई !
प्रिय कौ प्रेम रिस सों न होइ रसीली राधे!
रस ही में वचन श्रवन सुखदाई।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर रस बस भए तासों
कुरस कत मिलि रहै हिरदे लपटाई॥

(११०) (राग नट)

मोहन–बदन निहारि नागरि नारि!
छांडि दै री बातें सब अटपटी।
तु जु संभारैगी तब मोहिं सखी जब
नंद–नंदनु बिनु लागैगी जिय चटपटी॥
किततकु कहि सिखाई सीख न माने तू माई!
उतरु हो उतरु लेत झटपटी।
'चत्रुभुजदास' ऐसी को है जु धीरज धरै!
गिरिधरलाल हिं देख बांधे पाग लटपटी॥

(१११) (राग नट)

चलि अंग दुरायें संग मेरें।
मुखहिं मुनि–व्रत गहें, अधरनि ओट दिये,
दसन दामिनि चकमति तेरें॥
तजि नूपुर कटि छुद्र घंटिका श्रवन सुनत खग–मृग घेरें।
'चत्रुभुजदास' स्वामिनी! सिंगार सजि निपट इहें गिरिधर नेरें॥

(११२) (राग कानरो)

कौन टेव नागरी! दिन ही दिना तोहिं मान की।
कहा रही मौनु लै तूं नेंकु बचन कान दै
सुनि री! सुचित बात एक सांवरे सुजान की॥
छांडि गहरु पाउं धारि सुंदरी विचित्र नारि
सकुचिहै मराल निरखि सहज गति सुठान की।
'चत्रुभुज' प्रभु कुंज–भवन तुव हित रचि सेज सुमन
परम भांवती गिरिधर सकल गुन–निधान की॥

(११३) (राग कानरो)

चलि री चतुर कुरंगमनैनी !
भूषन बसन साजि तन सुंदरि, विविध कुसुम गूंथहि रचि बैनी॥
नवलकिसोर रसिक गिरिधर–संग कुंज कुटीर करहि निसि सैनी।
छांडि गहरु करि गवन बिपिनमें 'चत्रुभुज'प्रभु प्रियमनु हरिलैनी

(११४) (राग कानरो)

चतुर जुबति गबनति पिय पें बन।
गड़े उर रसद सहचरि के प्रेम मगन भूषन साजति तन॥

बनि सिंगार सब अंग अंग प्रति मोह्यो रति–पति नैननि के अंजन।
चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर भुज भरि लई सौदामिनि भेटी मानों नवघन॥

(११५) (राग कानरो)

पिय–सनमुख गवनति गजगामिनी।
साजि सिंगार पहिरि पट भूषन नख–सिख अंग–अंग अभिरामिनि॥
जमुना–पुलिन सुखद बृंदावन तैसिये सुभग सरद की जामिनि।
कुंज–कुंज प्रफुलित द्रुम बेली देखत प्रेम मगन भई भामिनि॥
अति उदार रस–रासि रसिक पिय भुज भरि–भरि भेटति बर कामिनि
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर ऐसें सोभित मानों नवघन (में) सौदामिनि॥

(११६) (राग केदारो)

सिखवत–सिखवत बीती, अब रतियां।
कोटि कही एकौ न कान करी हृदै गांटि तेरे भेदति न बतियां॥
बांह छिडाइ रहति ब्रजसुंदरि! देति ओट अंचर की गतियां।
तजि इह ज्ञानु सयानु आपुनौ समुझि सखी! मेरी बहु मतियां॥
'दास चतुर्भुज' प्रभु के बोलत बिलंबु करे ऐसी कौन जुवतियां॥
रसिक–राइ गिरिधरन छबीले भरि आंकौ सीतल करि छतियां॥

(११७) (राग केदारो)

नबल किसोर रसिक नँद–नंदन सुहृथ संवार्‍यौ कुंज–भवनु।
तरनि–तनया तट परम रम्य वन सबहि सुख बहै मलय पवनु॥
अंबुज–दलनि सेज रचत रुचि अति अधीर बहु रवनी–रबनु।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर प्यारे पें छांडि गहरु करि बेगि गबनु।

(११८) (राग केदारो)

मिलिहि नागरि! नवल गिरिधर सुजान कों।
सुंदरी कनक तन साजि भूपन बसन,
कुंज के महल चलि बेगि तजि मान कों॥
तरनि–तनया–तीर परम रमनीक बंन
बिहरि संग करहि बस सब गुन–निधान कों॥
रागु केदार सुनि श्रवन बडभागि तिय!
निरखि अंग–अंग रसिक मुरलि कलगान कों॥
'चत्रुर्भुज' प्रभु चतुर चूडा रत्न

करत अभिलाष तुब अधर मधु पान कों।
अरपि सरबसु कुसुम–सेज सुख बैठि सखि!
भेटि सुंदर सुघर सांवल सुठान कों॥

(११६) (राग केदारो)

सजनी! आजु गिरिधर लाल पगिया धरें पेच बनाइ।
मानु छांडि संभारि नारि! निहारि पिय–मुख आइ॥
निरखि आभा कोटि–मनमथ रहे हैं सिर नाइ।
'चत्रुर्भुज प्रभु रसिक मोहनु लीजिये उर लाइ॥
(इसी तुक से छीतस्वामी का एक पृथक भी पद मिलता है।)

(१२०) (राग केदारो)

प्यारी! तू देखि नवल निंकुज नाइक रसिक गिरिवरधरन।
सकल अंग सुख–रासि सुंदरि! सुभंग सांवल वरन॥
सहज नटवर–भेष दरसन नैन सीतल करन।
कर सरोज उरोज परसत जुवति जन–मन हरन॥
बेगि चलि मिलि गुन–निधाने साजि पट आभरन।
'चत्रुभुज' प्रभु नवल नागर सुरत–सागर–तरन॥

(१२१) (राग मलार)

आयौ री! पावस–दल साजि गाजि मदन नरेश प्रबल
जानि प्रीतम अकेले नव कुंज सदनु।
पवन बाजी, गज बदरा मतबारे कारे कारे
आवत डरपावत बग–पांति रदनु।
धुरद–धुंकारे मोर कोकिला पिक करत सोर
बूदनि बान मारे चपला असि–कदनु।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिवरधर की सहाइ करि राधे!
जोवत पथ, पलन त्यागि तेरौ ही बदनु॥

(१२२) (राग केदारो)

आजु मानिनी मनवत चतुराई करि
अति हठु कियौ सो तौ नेकु ही में छूटयौ।
सौहें खाइ आभूषन दै–दै छोरन पाइनि परत
ऐसी झकझोरनि में मेरौ हार टूट्यौ॥

अनेक जतन करि मनुहारि कीनी एती
एतौ हठु कियो पै ता भाँति न खूट्यौ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर मिस करि थाके
तुब मंगल वचन कहे उठि हँसि ग्रीवा लपटाइ सुख लूट्यौ॥

(१२३) (राग केदारो)

उठि चलि प्यारी! बोलत तोहिं हरी।
सूधेऊ न चितवति वादि ही बितवति
सरद सुभग निसि जाति टरी॥
नवल कुंवर इकटकु मग चितवत
पलक न लावत एकु घरी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन मंद हँसि
उमगि मिलै किन? आनँद भरी॥

(१२४) (राग टोडी)

कैसौ हियो माई! या अबला कौ, नेंकु न गांठि हिये की खोलै।
कोटिक भाँति कह्यो समुझाई, मानै ना सखियनि की कोलै॥
स्याम–हिये ताही कौ हित जू, प्रान–पियारे सों रूसे हू बोलै।
'चत्रुभुजदास' गिरिधर पिय सों सोई, आइ नहीं रस घोलै॥

(१२५) (राग संकराभरन)

चलहि वृंदाविपिन बैठे जहाँ गिरिधरन।
सघन तरु छाँह तरें चारु नटभेष धरें।
सुंदर सिरोमनि रसिक सुभग सॉवल बरन॥
नव किसलय कुसुम रचित सेज चितवत पंथ
एक टकु नैननि हीं देत न पलकन परन।
बेगि पगु धारि ब्रजनारि! पिय भॉवती करि
गहे रूप हेरि तन विविध पट आभरन॥
निरखि नागरि नवल नंदनंदन रूप माधुरी
अंग अंग जुवति–जन–मन–हरन।
'चत्रुभुज' दास प्रभु गिरिधर प्यारे पै
छाँडि गहरु प्रभु बेग गवन ।

(१२६) (राग नट)

जो तू मेरे कहें नव–कुंज चलै।
रसिक–सिरोमनि नंदलाल सों, प्रीति पुरातन प्रगट फलै॥
बहुविधि कुसुम–तल्प अति राजत, तुब मग जोवै बैठो ढील लै।
'चत्रुभुज'दास गिरिधर पिय, चलि नागरि! मनमथहिं दलै॥

(१२७) (राग मलार)

तेरौ मनु गिरिधर बिनु न रहैगौ।
बोलेगें मोर मुरलीकी धुनि सुनि, तब तनु मदन दहैंगो
जानेगी तब मानेंगी री!, आली प्रेम–प्रवाह बहैगो।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल बिनु, नित उठि कौन कहैगौ॥

(१२८) (राग नट)

पिय कौ मन बसै री! लाडिली तेरे तन माँही
बार बार यह रूप विचारत नैननि मूँदि धरि ध्यान,
आन कछु न सुहाइ ऐसी देखी मै दसा बन माँही॥
रसिक–राइ सिरमौर नंद–सुत बैठे,
करि संकेत सेज रचि कुंज–सदन–माँही।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन–अंग संग
मिलि जैसें ज्यों दामिनि घन–माँही॥

(१२६) (राग केदारो)

बैठे नव निकुंज कुटीर।
धरें नटवर–भेष गिरिधर तरनि–तनया तीर॥
मुदित वृंदा–विपिन गुंजत मधुप, कोकिल, कीर।
सरद निसि ससि उदै पूरन मंद मलय समीर॥
चलहि साजि सिंगारु सुंदरि! पहिरि आभरन चीर।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन कों मिलि मेटि मन्मथ–पीर।

(१३०) (राग केदारो)

मान मनावत मानत नाँई।
स्यामसुंदर तेरे हित कारन पाती विरह पठाई॥
आवत जात रैनि सब बीती दूखन लागे पाँई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लाल अब टेरत हैं चलि तहाँई॥

(१३१) (राग कानरौ)

मान तजि मानिनी कियौ पिय पै गवँन।
केस ग्रंथे सरस नैन अंजन दिये
पहिरि दच्छिन चीर सजे तन आभरन॥
हंस–गज–गामिनी आइ पिय के निकट।
निरखि छबि माधुरी अंग भेटी रवन ।
'चत्रुभुज' दास मिलि रैनि सुख अति कियो
परसि कें अंग सों लाल गिरिवरधरन॥

(१३२) (राग विहाग)

मान तजि मानिनी चली बन कों साजि।
पहिरि पट आभरन विविध अंग अंग प्रति
देखि अंजन नैन गयो मन्मथ लाजि॥
मंद गज–गामिनी आइ हरि के निकट
निरखि के रूप गई पीर तन तें भाजे।
'चत्रुभुज' दास गिरधरन संग रैनि सब
सुख कियौं भामिनी अंक पिय के राजि॥

पोढवो

(१३३) राग-विहाग एवं (राग-नायकी)

पोढ़े नवल लाल गिरधारी।
रंग महेल में रति सुखशय्या, संग शोभित वृषभान दुलारी॥
लाल झरी को बागो बन्यो अति, लाल कुल्हे शोभित अतिभारी।
सूथन चरन बनी अति गाढ़ी, झलमलात बीच झरतारी॥
अतलरू को लहेंगा प्यारी कटि, कंचुकी झुमक सारी।
मधुरे सुर गावत केदारो, मीठी तान लेत सुखकारी।
परदा परे मनोहर द्वारे, दीपक ज्योत सरस उजियारी।
'चत्रभुदास' निरख दंपत सुख, तनमनधन कीनो बलिहारी।
गैयन संग गोपाल

(१३४) (राग भैरव)

स्यामसुंदर भोर भवन आगें है आवै।
कबहूँ मुख चंद हारा मेरे सखि सुख की रास

कबहूँ बैन कबहूँ नैंन सैननि जनावै।
मेरी ओ मथनि बार उनकी उठनी सवार
रई नेत माँट समेत कल हूँ बिसरावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर अंग अंग कोटि मदन मूरति
चलत वन कों तन अरु मन कों चितै ही चुरावै॥

(१३५) (राग सारंग)

टेरत ऊँची टेर गोपाल।
दूरि गॉइ जिनि जान देहु तुम सब मिलि घेरहु ग्वाल।
लै लै नामु धूमरी धौरी मुरली मधुर रसाल।
चढि कदंब चहुँधा चितवन है अंबुज नैन बिसाल॥
सबद सुनत सुरभी समुहानी उलटि पिछौंडी चाल।
'चत्रुभुज' प्रभु पीतांबर फेरत गोवर्द्धनधर लाल॥

(१३६) (राग मलार)

सखि देखि री आजु सोभा वन की।
इत मोहन मुख मधुर मुरलि उत मधुर गरज नव घन की।
उतहि स्याम बादर सोभित इत राजनि साँवल तन की।
उत बग पॉति समूह इतहि हारावलि मुक्ता गन की॥
इतहि रुचिर बनमाल बनी उर उतहि रहनि इंद्र धनु की।
उत दामिनि चपला चमकति इत फहरनि पीत बसन की॥
उत घरवा इत धातु चित्र रुचि सुभग श्रीअंग लसन की।
उत बूँदनि द्रुम बेलि सींचति इत प्रेम नीर ब्रति मन की॥
अति आनंद निरखि दोऊ सुख गावनि विंहगम जन की॥
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन रसिक रस करि विनवति विलसन की।

(१३७) (राग केदारौ)

ललित ब्रजदेस गिरिराज राजें।
घोष–सीमंतिनी संग गिरिवरधरन
करत नित केलि तहँ काम लाजें॥
त्रिविध पवन संचरें सुखद झरना झरे
ललित सौरभ सरस मधुप गाजें॥
ललित तरु फूल फल फलित षट्रितु सदा
'चत्रुभुज' दास गिरिधर समाजें॥

(१३८) (राग मलार)

प्यारी के गावत कोकिला मुख मूँदि रही,
पिय के गावत खग नैनाँ रहे मूँदि सब।
नागरि के रस गिरिधन रसिक वर,
मुरली मलार रागु अलाप्यो मधुर जब॥
दंपति तान बंधान सुनहिं ललितादिक,
वारहिं तन मन फेरहिं अंचल तब।
'चत्रुभुज' प्रभु कौ निरखि मुख दंपति,
कहति कहा धौं कीजे जाई भवन अब॥

(१३६) (राग सारंग)

ऐसें हि मो हू क्यों न सिखावहु।
जैसें मधुर–मधुर कल मोहन तुम मुरलिका बजाबहु॥
सारंग राग सरस नंदनंदन सजि सप्तक सुर गाबहु।
तान बंधान सुजान सहज में बहुत अनागत लाबहु॥
श्रुति संगीत करी परिमिति ताहू में अतित बढाबहु।
खग मृग पसु कलबधू देव मुनि सब की गति बिसराबहु॥
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर गुन सागर जो इह तुम न बताबहु।
तौ बहुर्यों आपु ही अधर धरि सुधा श्रवन पुट प्यावहु॥
खग रसना रस चाखि बदन पर बैठे निमिषनि मारि।
चाखत ही फल परे चौंच तें रहे जु पंख पसारि री॥
सुर नर देव असुर नर मोहे छायो व्योम विमान।
'चत्रुभुज' दास कहे कौन बस या मुरली की तान री॥

(१४०) (राग बिलावल)

वे मोहन बंसी तेरी जानी।
ए बेपीर पीर नहिं जानति बात करत मनमानी॥
आपुन ही तन छेद कराए नेकु न जिय हैरानी।
ताही तें बस भयो साँवरो करत अधर रस पानी॥
लोक लाज कुल कान तजी राब बोलति अमृत बानी।
'चत्रुभुज' दास जदुपति प्रभु की यातें भई पटरानी॥

(१४१)

सहज स्याम–कर धरी दोहनी, दूध लोभ मिस बनती कीनी।
मृदु मुसक्याइ चितै कछु बोले ग्वालिनि निरखि प्रेम–रस भीनी।
नितप्रति खरिक सकारियेआवति, लोक–लाजमानों 'घृतसों पीनी'
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरमनमोहन, दरसन छलबल सुधिवुधि लींनी॥

(१४२) (राग नट)

चितवनि में चितु चोस्यो री माई ।
कर दोहनी लियें नंद–नंदन खरिक जाति जब पाई॥
ठाढे रहे दसन अंगुरी दे ज्यों–ज्यों गांइ दुहाई।
उलटे लकुट बिसारि भए संग याचन सुंदरताई॥
बारंबार 'चत्रुभुज' प्रभु सखि! श्रीमुख कहत बडाई।
जोवत पंथ रसिक गिरिवरधर सघन वेलि जहां छाई॥

(१४३) (राग गौरी)

लटकति फिरति दोहनी लै री।
अनोखी गांइ दुहावन हारी, कान्हे पौरी पैठन दे री॥
बन तें आवत भई न बिरियां वासर स्रम तन नेंकु चितै री ।
तोहिं न दोस नए हितकी गति, कठिन हिलगको ऐसीहै री॥
तुब दृढ चंचल अंबुजवदनी! दरसन–हानि न नेकु सहे री।
'चत्रुभुजदास' लालगिरिधरकौं तेंचितु चोस्यौ मृदु मुसिकै री।

(१४४) (राग गौरी)

ग्वालिनि! अजहूं बन में गांइ।
होन न देति बार दोहन की चलति सकास्यौ धाइ॥
लै दोहनी खरिक–मिस खोरति ऊतरु कहति बनाइ।
नंद–द्वार फिरि–फिरि झांकति इहि बात न जानी जाइ॥
समुझति हौं तूं लाल–मिलन कों करति है एते उपाइ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नागर मन मानिक लियौ चुराइ॥

(१४५) (राग सारंग)

तब तें और न कछु सुहाइ।
सुदंर स्याम जबहि तैं देखे खरिक दुहावत गांइ॥
आवति हुती चली मारग सखि! हौं अपने सतभाइ।

मदन गोपाल देखिके इकटक रही ठगी मुरझाइ॥
बिसरी लोक लाज गृह–कारज बंधु पिता अरु माइ।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिवरधर तनु–मनु लियौ चुराइ॥

(१४६) (राग गौरी)

कहा री! सखी तोहिं लागी ढौरी ?
संध्या समै खरिक वीथिनि में
इत उत झांकति डोलति दौरी॥
कबहुक हँसति कबहुँ कछु बोलति
चंचल बुधि नांहिन इक ठौरी।
कबहुँक कर–तल ताल बजावति
कबहुँक रागु अलापति गौरी॥
गिरिधर पिय तुब कियौ दुचितौ चितु
कही न सकति मीठी अरु कौरी॥
'चत्रुभुज' प्रभु गोदोहन–रस तजि
दैन कही तोहिं पीत पिछौरी॥

गोधूली में आवनी

(१४७) (राग पूरवी)

गोविंद गिरि चढि टेरत गांइ।
गांग बुलाई धूमरि धौरी टेरत बेनु बजाइ॥
श्रवन नाद, अरु मुख तृन धरि सब चितईं सीस उठाइ।
प्रेम सुभर व्है हूक मारि चहूं दिसि तें उलटीं धाइ॥
'चत्रुभुज' प्रभु पट पीत लियौ कर आनंद उर न समाइ।
पोंछत रेनु धेनु के मुख तें गिरिगोवर्द्धनराइ॥

(१४८) (राग गौरी)

देखि सखी! बन तें बने हरि आवत।
आगें धेनु रेनु तन मंडित मधुरें बेनु बजावत॥
सकल सिगार अनूप बिराजित चितवन चितहिं चुरावत।
डगमगि चाल ग्वाल–मंडल में मनमथ–कोटि लजावत॥
सुरभी नांउ पररपर लै–लै ऊंचे टेर सुनावत॥
हँसि–हँसि हरखि परसि कर सों कर गौरी रागहिं गावत॥

ललित किसोर ललित लीला–रस मुनि–मन गति बिसरावत।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नागर ब्रज–जुबतिनि प्रेमु बढ़ावत॥

(१४६) (राग गौरी)

बलि बलि लटकनि मराल चाल नंदलाल प्यारे।
सांझ समै आवत ब्रज गोधन–रखवारे॥
सीस सोभित मोरचंद्र रचि विचित्र संवारे,
गोरज मंडित सौभग–निधि अलक घुंघरारे॥
भाल, तिलक, मकर कुंडल, मनिमै झलकारे
भृकुटि चाप मनमथ–सर लोचन अनियारे॥
मुरली अधर धरें कूजित मंद–मंद सुढारे
सुनत स्रवन खग, मृग, त्रिय सहज मगु बिसारे॥
बनमाला, पीत वसन, भूषन सुख न्यारे
जुबति–बिरह–तिमिर–हरन अंग–अंग उजारे॥
ग्वाल–मंडल–मध्य सोभित गोपी– नैंन–तारे
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर पर कोटि मदन बारे॥

(१५०) (राग गौरी)

नंद नंदन नवल नागर किसोर बर
बन ते बनें ब्रज कों आवत लिये धेनु।
ग्वाल–मंडल–मध्य भेष नट वर सजें
अधर धरें मधुर–मधुर बजावत बेनु॥
सिरसि राचत रुचिर मयूर की चंद्रिका
पीट पट कटि कसें सकल सोभित ऐनु।
हारु राजित किये, मृगमद तिलकु कियें,
सुभग सांबल अंग सुरभि मंडित रेनु॥
बिमल बारिज बदन, जानि मनसिज सदन,
कुटिल कुंतल अलक आए मधुकर सेनु।
दसन दामिनि लसत, मंद बारिक हँसत,
बंक चितवनि चारु विस्व मनु हरिलेनु॥
ब्रज–जुबति प्रानपति, चलत गज मत्त गति,
रजनि–मुख आइ नैननि दियो सुख चेनु।

'चत्रुभुजदास' प्रभु गिरिधरन छबि निरखि
भृकुटि मानों चाप धरि भेट बिथक्यो मेनु॥

(१५१) (राग गौरी)

गोरज राजत साँवल अंग।
देखि सखी! वन तें ब्रज आवत गोविंद गोधन–संग॥
अंबुज वदन, नयन जुग खंजन क्रीडत अपने रंग।
कुंचित केस सुदेस मनहुँ अलि सोभित प्राग–प्रसंग॥
कबहुँक बेनुबजावत, गावत नाना तान तरंग।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नागर पर बारौं कोटि अनंग॥

(१५२) (राग गौरी)

भेटहु मेरे भावते गोपाल।
बासर कलपु होतु मोकों बिनु देखे रूप रसाल॥
अमृत बचन, मंद मुसकावनि, चितवनि नैन बिसाल।
तन मन वारि करौं न्योंछावरि निरखि डगमगी चाल॥
बगदी धेनु जानि लै आई गूंथि रुचिर बनमाल।
मुख तें गोरज झारि अंचर पट बहुरि तिलक देउ भाल॥
'चत्रुभुज' प्रभु कत रहत अवारे बन गोकुल के प्रतिपाल।
अंखियाँ मीन बिमुख दरसन–जल तलफत गिरिधरलाल॥

(१५३) (राग गौरी)

गांइ लियें बन में ब्रज आवनि।
मदनगोपाल ग्वाल–मंडल में मधुर मधुर कल बेनु बजावनि॥
गांग बुलाई धूमरि धौरी टेरि लै नांउ बुलावनि।
कबहुँक करत विनोद सखनि मिलि, गौरीरागु परस्पर गावनि॥
मोर मुकुट गुंजा पीरौ पट सोभित तन गौरज लपटावनि।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल छवि
जुवति–वृंद मनमोद बढ़ावनि॥

(१५४) (राग कानरो)

लटकत चलत जुवति–मुखदानी।
संध्या समै सखा–मंडल में सोभित तन गोरज लपटानी॥
मोर मुकुट, गुंजा, पीरौ पट, मुख मुरली कूजत मृदु बानी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधारी आए बन तैं लै आरती वारती नँदरानी॥

(१५५) (राग पूर्वी)

गोविंद की लटक मोहि भावै री माई ?
रीझि–रीझि गोपी रिझाई।
सु रहे न चढि–चढि गांइनि टेरत नीकी बेनु बजाई॥
गांग बुलाई दौरी आई काजर, पियरी, धोरी, लाई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लाल की बानिक सरस सुहाई॥

(१५६) (राग कानरौ)

टेरि हो टेरि कदम चढि दूरि जाति हैं गैयाँ।
तुम्हारी टेर सुनत बगदेंगी पाछें पीजो धैयाँ॥
आजु हमारी घिरत न घेरी वही जात है रैयाँ।
हम तें बहुत तिहारें गोरस हसत कहा हो ? भैयाँ।
'चत्रुभुज' प्रभु पट पीत लिऐं कर धावत नंद–दुहैयाँ।
पोंछत रेनु धेनु के मुख की गिरिगोवर्धन–रैयाँ॥

(१५७) (राग पूर्वी)

धौरी, धूमरी, पियरी, पीयर कारी काजर' कहि – कहि हेरें।
वाम भुजा मुरली कर लीन्हें दच्छिन कर पीताम्बर फेरें।
सुंदर नागर नट कलिंदी के तट लिये लकुट गैयनि हेरें।
हूंकि'–हूंकि इकबार गीधी सब धाई 'चत्रुभुज' प्रभुगिरिधारी–नियरें॥

(१५८) (राग गौरी)

धेनु लियें सूधे खरिक गये री!
गोरज–मंडित मुख अलकावलि
ब्रजजन–मन इहि छवि विधि ये री॥
बंसी कटिपर ऊपर बांधे वनज़ धातु अँग चित्र ढये री।
कौस्तुभमनि बनमाल बहुत उर वरन वरन बिच कुसुम रये री॥
पाग न होइ जसोमति करकी स्रमित सिथिल फिरि पेच दिये री।
करन फूल पर फूल झूमका दुति संमिलित समतूल भये री॥
लिये लकुटि पचंरग सुरंगी बोलत लै–लै नांउ नये री।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन देखि नंदराय उछंगनि धाइ लिये री॥

गोदोहन

(१५९) (राग बिलावल)

कर लै निकसी घन दोहनी।
भोर हि स्याम–बदन देखन कों आलस अंग, छबि सोहनी॥
मनु सोभा–निधि मथिके काढी मनसिज–मन कों मोहनी।
खरिक के डगर चली हित–पागी रसिक कुंवर के गोहनी॥
गांइ दुहावन के मिस नव तिय नंद–नंदन मुख–जोहनी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल की चितवनि मृदु मुसिकोहनी॥

(१६०) (राग सारंग)

मोहन पूरे हो सतभाइ।
कहत ल्याउ नीकें दुहि दैहों ग्वालि! तुम्हारी गांइ॥
आतुर व्है दोहनी कनक की कर तें लीनी आइ।
दै 'धौ बेगि पाट की नोई बछरा चौखें जाइ॥
हँसि–हँसि दुहत रु कहत रसीली बातें बहुत बनाइ।
'चत्रुभुज' प्रभु सहजहि रति जोरी गिरि गोवर्द्धनराइ॥

(१६१) (राग गौरी)

देहु री माई! खरिक जान, गो–दोहन की टरति बार।
पराइ अरप तुम जानति नाहिनें बातहि बात ओति अति अवार।
कछु न जिय सुहाइ, जो लौं न दुहाउं गाइ,
याही तें अगमनि आइ रहौं बछरानु द्वार।
गोरस छीजै हमारे, कान्ह जू कहू सिधारे,
चतुर–सिरोमनि दोहनहार॥
गही बेगि दोहनी, पढि मेली मोहनी,
'चत्रुभुज' प्रभु बातें कहि सुढार।
मनु न रहत चैन, छिनु बिनु देखें नैन,
गिरिवरधर सब सुख–उदार॥

(१६२) (राग गौरी)

कान्ह दुहि दीजै हमारी गैया।
तुम हि जानि सतभाइ लै नित माहिं पठावत मैया॥
सब कोउ कहत परम उपकारी संकरषन के लहुरे भैया।

गहहु कमलकर दोहनी नंदनंदन! लेउं बलैया॥
तुम्हारे दुहत हमारें पूजत बहुतें दधि बहुतें घृत–घैया।
'चत्रुभुज' प्रभु नित करहु कृपा इहि गिरिगोवर्द्धन रैया।

(१६३) (राग गौरी)

नेंक सुनावहु हो उहि रीति ।
जिहि विधि अमृत प्याहि श्रवन पुट सरबसु लीन्हो जीति ॥
जों बन सहज एक दिन मोहन टेरि कही मधु बानी ।
खग मृग मोहि जुबति जन मन वृति आकरखन करि आनी ॥
लाग्यो ध्यान 'चतुर्भज' प्रभु मोहिं तुम्हारे बेनु रसाल ।
राखहु सदा अधर धरें सन्मुख सुख निधि गिरधरलाल ॥

(१६४)

राधिका रवन की मुरलिका श्रवन सुनि,
भवन सब काज तजि गवन किया भामिनी।
नाद बस बिबस भई आन गति छूटि गई,
बिपिन आतुर मिली रूप अभिरामिनी॥
निकट पिय कें गई रसिक वर गहि लई,
गिरिधरन स्याम धन जुबति सौदामिनी।
करहि वासर केलि कंठ भुज वर मेलि,
चतुर संग 'चतुर्भुजदास' की स्वामिनी॥

(१६५)

मेरी आली बंसी बस हौं भई।
मधुर चारु धुनि श्रवण प्रवेसित कठिन ठगौरी परि गई॥
तरनि तनूजा तीर रवन बन रास रसाल जुगति ठई।
वैभव निरखि स्याम सुन्दर विधि नैन लगी इकटक ढई॥
इह वन काज देह निरधन व्रत 'चतुर्भज' प्रभु मोकों दई।
तन मन प्रान ध्यान सब संपति मोहन गिरिवरधर लई॥

(१६६)

जमुना के तीर बजाई बांसुरी नंदलाल री।
अधर करन मिलि सप्त सुरन सौं उपजत राग रसाल री॥
छूटी लट लपटात बदन पर टूटति मुक्ता माल।

ब्रजवनिता धुनि सुनि उठि धाई रहिय न अंग सम्हाल री॥
बहत न नीर समीर न डोलत वृन्दाविपिन संकेत।
सुनि थावर अचेत चेत भए जंगम भए अचेत री॥
अफल फले फल फूल भए री जरे हरे भए पात।
उमगि प्रेम जल चल्यो सिखिर तें मर्‌यो गिरिनि को गात री॥
तृन न चरत हैं मृगा मृगी री तान परी जब कान।
सुनत गान गिरि पर्‌यो धरनि पर मानों लागे बान री॥
सुरभी लाग दियो केहरि कों हरत स्रवन ही डारु।
एउ भवग फुनि चढ़ि बैठे हैं निरखत श्रीमुख चारु री॥

(१६७)

जब तू गाय दुहावन जाय।
तब तहाँ तू री कहा नंद द्वारे पें भूल रही उतचाय॥
मटुकी सीस फिरत ब्रज वीथन बार बार मुसकाय।
फिर–फिर वार करत है ठाड़ी, सूधे धरत न पाय॥
तजी लोक की लाज कार्य कर, कहिब काज धुकाहि।
'चतुर्भुज' प्रभु जानत हूँ तुव, मन हरि सौं अटक्यों आहि॥

(१६८) **(राग गोरी)**

लटकत चलत दोहनी लेरी।
अनोखी तू गाय दुहावन वारी, कौन पौरि में पैठन दे री॥
वन ते आवत भई न बिरिया, बासर श्रम तज नेक चितेरी।
तोहि न दोष नये हित की गति, कठिन हिलग की ऐसी है री॥
तुव दृग चंचल अंबुज वदनी, दरसन हानि निमिष न सहेरी।
'चतुर्भज' प्रभु गिरिधरन चंदने, तुव चित चोर्‌यो मृदु मुसकें री॥

(१६६) **(राग भैरव)**

देय सुमति नेंक अपनी रई योंही पर्‌योहै बिना मथन किये दई।
अपनी हौं ढूँढआई, उठ अँधियारे मॉझ पाई न भवनमें कहॉ धो गई
याहीते आतुरधाई जियन कछुसुहाई लोनी लालच मोहि टचपटी भई।
दिना चार करू काज बढौ नंदजूकेंराज जोलौं हमारे आबे नाई॥
'चर्तुर्भुज' प्रभु रानीमेरी अति चोंपजानी होयप्रसन्न मन आन दई।
भोरभये देहूँ आसीस बारजिन खरोसीस तेरेगिरधारीकी बलबल गई

(१७०) (राग सारंग)

बेनु धर्‌यो कर गोविंद गुन निधान।
जाति हुती बन काज सखिनि संग रही ठगी धुनि सुनत कान॥
मोहत सहज सकल मृग खग पसु बहु बिधि सप्तक सुर बंधान।
'चत्रुभुज' दास गिरिधर तनु मनु चोरि लियो करि मधुर गान॥

(१७१) (राग सारंग)

पिय पें माँगि पियारी मुरली आपु बजाइ दिखाबति।
सप्तक सुर–बंधान तुमहि ज्यों मोहू पें धौं आवति॥
गूढ भाव गति लेति ताल जति मंदहि मंद सुनावति।
ठानति हृदै अनागति हरि सम छिनु–छिनु हँसति हँसावति॥
अद्‌भुत भेद मनोहर बानी तान तंरग उपजावति।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर को रीझै कंठ लगावति॥

दान

(१७२) (राग देवगंधार)

मटुकी मेरी मोहनु दीजै।
जो कछु दधि चाखन चाहत हो तौ रंच पात करि लीजै॥
ऊने आइ घन अटके भोर ही तें बन तन नौतन सारी भीजै।
रंगु बहे संगजैहे, निपट अवारव्है़है कहा कहिए घरकौ कोऊ खीजै
'चत्रुभुज' प्रभु काल्हि आइहों सबारी बार,
कहौं निरधार साँची बात पतीजै।
गिरिधरलाल भयो प्रगट दान तुम्हारी नाहीं कोऊ ब्रज
आन आजु अति हठु न कीजे॥

(१७३) (राग देवगंधार)

कहो किनि कीनों दान दही कौ।
सदा सर्वदा बेचति इहिं ब्रज है मारग नित ही कौ॥
भाजन हीन समेट सिरनि तें लेत छीनि सब ही कौ।
बहुर्‌यों कबहूँ भयो न देख्यो नयो न्याउ अब ही कौ॥
कमल नैन मुसक्याइ मंद हँसि अंचर पकर्‌यो जब ही कौ।
दास 'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर मनु चोरि लियो तब ही कौ॥

(१७४) (राग सारंग)

सवारें ह्याँ ई आइहौं।
बाबा की सौं अवहि जाइ घर दधि भली विधि जमाइहौं॥
रुचि दाइक गोपाल हि लाइक नीकी जुगति बताइहौं।
भरि मटुकिया कनक की सिर धरि स्यामसुंदर को ल्याइहौं॥
होति अबार 'चत्रभुज' प्रभु मोहि बहुरि घोष कब जाइहौं।
गिरिधरलाल सकुच ते अंचर नाहिंन सकति छिडाइहौं॥

(१७५) (राग सारंग)

बलि गई नंद के लला।
दूरि जाति सब सखी संग की छाँडि देहु अंचला॥
जान देहु घर लाइहौं काल्हि भोर भरी मटुला।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरन अवारी बन क्यों रहै अकेली अबला॥

(१७६) (राग नटनारायण)

दान माँगत ही में आन कछु कियो।
आइ गहि मटुकिया धाइ लई सीस तें,
रसिक वर नंदसुत दधि पियो॥
भूलि गयो झगरौ हठु मंद मुसकानि में,
जबहि कर कमल सों परस्यो मेरौ हियो।
'चत्रभुजदास' नैननि सों नैना मिले,
तबहिं गिरिराजधर चोरि चितु लियो ।

(१७७) (राग गौरी)

आजु सखी तोहिं लागी इहै रट।
गोविंदलेहु लेहु कोउ गोविंद कहति फिरति बन में घट औघट।
दधि कौ नांउ बिसरि गयो देखत स्याम सुंदर ओढे सुभग पीतपट।
माँगतदान ठगौरी मेली 'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर नागर नट॥

(१७८) (राग विलावल)

काहू की तू न मानें नाहीं कौन कौ है छोरा ?
आइ झपटिके गागरि पटकी मेरी,
सुरख चुनरिया भिंजोई तेरौ भींज्यो पिछोरा॥
ऐसी विद्या कौन सिखाई

नित इठलात करो प्यारी सों निहोरा।
कपटी छली महारस भोगी
जानत बड सर वोरा॥
ले कर बसन धरत अपने कर
कदम चढी इक ठोरा।
'दास चत्रुभुज' प्रभु की लीला
माँगत पदरज मूर दोउ कर जोरा॥

(१७६) (राग धनाश्री)

छाँडि देहु यह बानि प्यारे कमल नयन मनमोहना।
आवत जात सदा रही कबहुँ न देखी रीति।
अनहोनी स्रवननि सुनी कैसे होई प्रतीति॥
गिरिघटिया उठि भोर ही मारग रोकत आइ।
बहुरि अचानक सीस तें मटुकी देत ढुराइ॥
ऐसी तुमहि न बूझिए अटकि रहत गहि बाँहि।
मात पिता भैया सुनें साँझ परत बन माँहि॥
हँसत ही में मन मुसत हो कहि कहि मीठे बोल।
सेंत मेंत क्यों पाइए यह गोरस निरमोल॥
'चत्रुभुज' प्रभु चित करषियो चितवन नैन बिसाल।
रति जोरी मिस दान के गिरि गोवध्रनलाल॥

(१८०) (राग आसावरी)

दूरि तें आवत देखे दानघाटि
घिरि रहे दुरि रहे दुहुँ ओर सिला की सहाई।
जब ही छव नीकौ आंई फूलन भरो दधि की वौरी नी ।
सो ऐसे में ओंचका आई सबै झुकाई॥
स्यामा रंग रंग नारी नैन हैं कुरंगिनी
री रही है ठठके आग्यो लयो लली तांई।
कीन्हो है बत कहाउ कहा हो कहत स्याम
हतमें काम, जान देहु ऐसी अब ही तें क्यों करत बरिआई॥
इतकों सुबल उत तोक पाछें श्रीदामाराखेहैं नाकेन परभारि आँखि बाँई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन रसिक बर
कर गहें कर लयो है छिडाइ वेनु वेत्र लपटाई॥

दान लीला

(१८१) (राग बिलावल)

अरी यह को हैरी जाहि दान जो देहे गोवर्धन के ग्वेड़े।
खेतन हार न गाम मढ़ैया कान्हर डोलत ऐंड़े॥
बाप देत कर कंस राजा कों पूत जगाती डोलत मेंड़े।
'चतुभुज' प्रभु गिरिधर नीके जानति चले जाहु किन पेंड़े॥

(१८२) (राग-सारंग)

दान दे हरि ग्वालन सों मानी।
भली भूख में छाक ले आई प्रिति जिय की तेरी न जानी॥
अब लेहो बोल ग्वाल बालन कौं बल भैया हू कों टेर बुलाऊँ।
आई है छाक भई गैया इक ठौरी मंडल जोरि बनाऊँ॥
तिहिं छिनु हलधर संग सब आए तत्क्षन भोजन कों बैठारे।
'दास चतुरभुज' प्रभुतरु कदंब के पनवारो लै गिरिधर डारै॥

(१८३) (राग-कान्हरो)

जो यह दान मॉगैगौ हो सखी सुन नंद कौ कुमार।
कर मुरली अधर धरें नदी यमुनाकेतीर पर बिसरी गरेकौ हार॥
मारग माँझ रोक रह्यो नंद सों करूँ पुकार।
तू जिन जान और गूजरी बाबरी गमार॥
कर बिनती 'चतुर्भुजदास' बूझत लागे बड़ी बार।
ए कान्हघर जान दै हो हमें होत अबार॥

(१८४) (राग-सारंग)

हौं बलिजाऊं नंद के लला।
दुरी जात सब सखिन संग की, छाँडि देहो अंचला॥
जानि दैहों घर और ल्याई हौं, काल्हि भोर दधि मटला।
'चतुर्भजदास' प्रभु गिरिधरन आखरी बन क्यों रहे अबेरी अबला॥

रास

(१८५) (राग-भैरव)

प्यारी ग्रीवाँ भुज भेलि निर्तन पीउ सुजान।
मुदित पररस्पर लेत गति में गति

गुनरासि राधे गिरिधरन गुननिधान॥
सरस मुरलि धुनि मिले मधुर सुर
राास रंग भीने गावें औधर तान बंधान।
'चत्रुभुज' प्रभु स्याम स्यामा की नटनि देखि
मोहे खग मृग बन थकित व्योम विमान॥

(१८६) (राग आसावरी)

ललित गावत रसिक नंदसुत भामिनी।
सुभग मरकत स्याम मकर कुंडल बाम
कनक रुचि सुचि बसन लजित घन दामिनी॥
रुचिर कुंज कुटीर तरनितनया तीर
रटत कोकिल कीर सरद ससि जामिनी।
मुखर मधुकर निकर मिले मृदु सप्त सुर
अधर पल्लव कुनित मुरलि अभिरामिनी॥
लाल गिरिवरधरन मानिनी मनहरन
तोहि बोलत प्रिया हंसकुलगामिनी।
चलहु सत्वर गतिं भजहु 'चत्रुभुज' पतिं
सुदंरी! कुरु रतिं राधिके नामिनी॥

(१८७) (राग मालवगौरा)

साजें नटवर–भेख गोपा।
मधुर बेनु सु सब्द उघटत तत्त थेई थेई ताल॥
तरनि–तनया–तीर मरकत मनि जु स्याम तमाल।
ब्रज की नारि समूह मंडल बनी कंचन–माल॥
रास–रस–गति निरखि उडपति तजी पच्छिम चाल।
'चत्रुभुज' प्रभु देव–गन–मन हर्‌यो गिरिधरलाल॥

(१८८) (राग मालवगौरा)

मदन गोपाल रास–मंडल मे मालव राग रस भर्‌यो गावै।
औधर तान बंधान सप्त सुर मधुर–मधुर मुरलिका बजावै॥
निर्तत सुलप लेत नूपुर सच बहु विधि हस्तक भेद दिखावै।
उघटत सब्द तत्त थेई जुवति वृंद मन मोद बढ़ावै॥
थक्यो चंद मोहे खगमृगगन प्रतिछिनु अमित आनगति लावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नटनागर सुरनरमुनि गतिमति बिसरावै।

(१८९) (राग केदारौ)

रिझये सखि! तें साँवरौ सुजान राइ।
तान बंधान अनूपम विधि सों मधुर ताल सुर सुघर गाइ॥
राखे प्रेम–प्रमोधि प्रानपति गूढ भेद नैननि जनाइ।
उघटति सब्द संगीत स्वामिनी निर्तति पग नूपुर बजाइ॥
रास–संग–हरि–संग रसु राख्यो अंग–अंग गुन बहुत भाइ।
'चत्रुभुज' दास प्रभु गोवर्द्धनधर लेत रहसि हँसि कंठ लाइ॥

(१९०) (राग-केदारौ)

अद्भुत नट–भेखु धरें जमुना तट स्याम सुंदर
गुन निधान गिरिवरधर रास–रंगु नाचें।
जुवति–जूथ संग मिलि गावत केदार रागु
अधर बेनु मधुर मधुर सप्त सुरनि साँचे॥
उरप–तिरप लाग–डाट तत–तत–तत थेई–तथेई–थेई
उघटत सब्दावलि गति भेद कोउ न बाँचें।
'चत्रुभुज' प्रभु बन बिलास, मोहे सब सुर अकास
निरखि थक्यो चंद रथ हि पच्छिम नहिं खाँचे॥

रास के पद

(१९१) (राग-केदारो)

आज सखी श्यामा संग श्रीराधा नवलकुंवरि करत हैं बिहार दोऊ यमुना जल केलि ।
हाव भाव ग्रीव लटक नयन सैन भौंह मटक हास रंग प्रेम उमग ग्रीवा भुज मेलि॥
अतंरंग सखी ठाड़ी देखत अति तृषा बाढ़ी बारबार कहत आज नीकौ बन्यौ खेल।
'चतुर्भुज' प्रभु बन बिलास उपजत है अति हुलास श्री गिरधर गजराज बाहु युवती दलपेल॥

वर्षा (मल्हार)

(१९२) (राग मलार)

ठाँ ही ठाँ नाचत मोर सुनि सुनि नव घन की घोर,
बोलत है चहूँ ओर अति ही सोहावने।
घुमँड़नु की घटा निहारि आगम सुख जिय बिचारि,
चातक पिक मुदित गावत द्रुमनु बैठि सोहावने॥

नवल बन में पहरि तन में कसूँभी चीर कनक बरनि
स्यामसुंदर सुभग ओढें बसन पीत सोहावने।

(१६३) (राग नटनारायण)

रंगु नीक फुही थोरी थोरी।
हरित भूमि तामें कसूँमी चीर सखी समूह ओढें बनि जोरी जोरी।
नवल पीतांबर ओढे गिरिधारीलाल नवल घटा अरु नौतन गोरी।
पावस रितु सुख 'चत्रभुजदास' स्वामिनी बिलसहिं नवल बन की खोरी खोरी।

(१६४) (राग मलार)

ब्रज पर नीकी आजु घटा।
नान्ही नान्ही बूँदे सुहावन लागीं चमकत बीजु छटा॥
गरजत गगन मृदंग बजावत नाँचत मोर नटा।
गावत स्रवन देत चातक पिक प्रगट्यो है मदन भटा॥
सब गुन भेंट धरत नंदलालै बैठे ऊच अटा।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरनलाल सिर कसुंभी पीत पटा॥

(१६५) (राग मलार)

स्याम सुनु नियरौ आयो मेहु।
भीजेगी मेरी सुंरग चूनरी ओट पीत पट देहु॥
दामिनि तें डरपति हौं मोहन निकट आपुने लेहु।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सों बाढ्यो है अधिक सनेहु।

(१६६) (राग मल्हार)

नव किसोरी नव किसोर बनी है विचित्र जोरि
सोभा सिंधु मदन मोहन रूप रासि भामिनी।
राजत तन गौर स्याम प्यारी पिय भाग बाम
नव घन गिरिधरन अंग संग मनहु दामिनी।
पहिरें पट पीत राते भृषन भूषित मनोहर
गज बर गोपाल नागर नागरी गज गामिनी।
'दास चतुर्भुज' दंपति उपमा कहँ नाहिंन औरु
काम मूरति कमल लोचन मृगनयनी कामिनी॥

(१६७) (राग-मल्हार)

वाह वाह नाचत मोर, सुन सुन नव धन की घोर,
 बोलत है चहुँ ओर अति ही सुहावने।
घन मंडल की घटा निहार, आगम सुख जिय बिचार,
 चातक पिक मुदित गावत द्रुमन बैठे सुहावने॥
नवल बन में पहरि तन में, कसूंभी चीर कनक बरन,
 स्याम सुन्दर सुभग ओढ़े बसन पीत सुहावनें।
पावन ऋतु को रंग विलसि 'दासचतुर्भुज' के संग,
 मोहन कोटि अनंग गिरिधर अंग अंग सुहावने॥

(१६८) (राग-मल्हार)

स्याम सुन नियरे आये मेह।
भीजेगी मेरी सुरंग चूनरी ओट पीतांबर देह॥
दामिनी देख डरपत हौ मोहन निकट आपुने नेह।
'चतुर्भुजदास' लाल गिरिधर सौं बाढ्यो अधिक सनेह॥

फूल मंडली

(१६६) (राग सारंग)

फूलनि की मंडनी मनोहर बैठे तहाँ रसिक पिय प्यारी।
सोभित सबैसाज नानाविधि फूलनिकौभवन परम रुचिकारी
फूल के थंम फूल की चौखटि,
 फूलनु बनी है सुदेस तिबारी।
फूलनि के झूमका झरोखा, फूलनि के छाजे छबि भारी॥
सघन फूल चहु ओर कँगूरनि, फूलनि बंदनबार सँवारी।
फूलनिके कलसा अतिसोभित, फूलनि सची विचित्र चित्रसारी।
फूलकी सेज गेंदुवा तकिया, फूलनु की माला मनुहारी।
'चत्रुभुज' दास प्रफुलित राधा, रस–फूले गोवर्द्धनधारी॥

(२००) (राग केदारौ)

अति विचित्र फूलन की चौखंडी बैठे तहाँ रसिक गिरिधारी।
राई बेलि, मालती, माधवी, चंपक, बकुल, गुलाब, निवारी॥
जुही, जई, केवरो, केतकी, सौरभ सरस परम रुचिकारी।

पाडल, झरी, सेवती, मल्ली, बोलसरी रचि रुचिर सॅवारी॥
नव रस रंग पररस्पर उपजत, बनी है संग राधा सकुमारी।
'चत्रुभुजदास' कुसुम सिज्या पर करत बिलास दोउ पियप्यारी॥

(२०१)		(राग सारंग)

फूलन की वर मंडनी मडित फूल हियें पिय अंग लसे हैं।
फूलकी सेज आभूषन फूलके फूलके कोटिक कमल लसे हैं॥
फूलि बढी अब दास 'चतुर्भुज' सखि सुख फूलि हियें बिलसे हैं।
फूली निसा ससि फूलि रहे गिरिधारी जू आपुन कुंज बसे हैं॥

(२०२)		(राग सारंग)

बैठे लाल फूलनि की चौखंडी।
चंपक बकुल गुलाल निवारौ राइवेलि सीखंडी॥
जूही जई केवरा कूजौ करनि कनेर सुरंगी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल की बानिक नव नव रंगी॥

(२०३)		(राग सारंग)

सौरभ रितु माधवी सुहाई फूलि रहे है सकल बनराई।
फूलनि के फोंदा रचि गूँथे फूलनि ही की माल बनाई॥
फूलनि के कंकन बिजांइठे फूलन की चौकी ढरकाई।
फूले रहत सखा–मंडल में फूली सखी राधा ढिंग आई॥
हँसि हँसि कहत लाल गिरिधर सों फूलन की मंडनी बनाई।
'चत्रुभुज' प्रभु मोहन फूलनि में अंग–अंग सोभा बरनी न जाई॥

(२०४)		(राग सारंग)

बैठे लाल फूलनि की तिबारी।
फूलनि के वागे अरु भूषन फूलनि ही की पाग सॅवारी॥
ढिंग फूली वृषभानु नंदिनी, तैसिय फूलि रही उजियारी।
फूल के छाजे झरोखा अरु, फूलनि की सजी अटारी॥
फूले सखा चहुँ ओर निहारत, विविध भाँति सों करनि सॅवारी।
'चत्रुभुज' प्रभु सहचरि सब फूलीं, फूले रहत लाल गिरिधारी॥

श्याम घटा

(२०५) (राग मल्हार)

देखो भाई बसन और ही चटक।
शोभा देत सरस सुन्दर तन, श्याम पाग सिर लटक॥
श्याम पिछोरा, श्याम उपरना, श्याम छरी हाथ मटक।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल देख, अखीयां रही अटक॥

(२०६) (राग-मल्हार)

फूलके महलमें फूल बैठे रसिक करतिहै केलि संगलिये प्यारी।
फूलको मुकुटसिर फूल कटिकाछनी फूलबनमाल उरगरे धारी॥
पीत लहेंगा फूल फूल सारीलाल फूल कंचूकी कुचन कसीकारी।
फूलके हार सिंगार सबफुलको फूलबेनी लटक पन्नग न्यारी॥
ताल बीना मृदंग लीए ब्रज सुन्दरी मलार सुर गान किये भारी।
'चतुभुजदास' प्रभु गिरिधरन छबिनिरखि कोटिमनमथ काम दीयेवारी

(२०७) (राग-मल्हार)

सीस टीपारो घरें मल्लकाछ, उर गजमोतिन माल।
ता पर तीन चंद्रिका राजत, सोभित है नंदलाल॥
नकबेसर झलकानि कुंडल की, मृगमद तिलक सुभाल।
कहा कहौ अंग–अंग की माधुरी, अंबुज नैन विसाल॥
भोरहि उठि जात दधि बेचन, मैं देखे नंद द्वार।
'चतुभुज' प्रभुगिरिधर चितचोर्‌यो एकटकी, लागी तनरहीन संभार॥

राधाष्टमी

(२०८) (राग सारंग)

आनँद भवन वृषभान कें।
जाई सुता माई कीरति घर ऐसी कुँवरि नहिं आन कें॥
नहिं कमला, नहिं सची, नहिं रति सुंदर रूप समान कें।
'चतुर्भुज' प्रभु हुलरसीं ब्रज बनिता राधा मोहन जानिकें॥

(२०६) (राग मालश्री)

सब मिलि मंगल गावौ।
श्री वृषभान उदार विदित जग ताके सदन बधावौ॥

बंदौं चरन महरि कीरति के संपति बहुत लुटावौ।
'चतुर्भुज' प्रभु हित रूप स्वामिनी निरखत नैन सिरावौ॥

(२१०) (राग मालश्री)

आजु महामंगल निधि माई।
मनमोहन आनँदनिधि प्रगटी श्रीराधा सुखदाई॥
सब स्रुतियन की संपति आई ब्रज जुवती मन भाई।
हरषि हरषि नाचत सब व्रजजनं बाँटत विबिध बधाई॥
पंच सबद बाजे बाजत धुनि दिसनि दिसनि हरि छाई।
नंद जसोमति सब सुख राच्यो फूले कुँवर कन्हाई॥
सुरविमान छायो नभ जै जै कुसुमावलि बरसाई।
'चत्रुभुजदास' लाल मन बांछित फल परिपूरनताई॥

(२११) (राग मारू)

हो! बृषभानु बधाई दीजै।
जाचक जन की बिदा भई, इक ढाडौ ढाढी छीजै॥
कुँवरी जनम तिहारें सुनिकें हौं उठि धारयो बेग।
कोटि कलप लौं कौ छल छूट्यौ, गयो आजु उद्वेग।
बैरी विरह बहुत दुख दीनों कीनों छाती छेग।
तातें मदमात्यों नहिं हार्‌यो पर्‌यो जु तेरी तेग॥
यह अब सिव विरंचि नहिं जानत मानत अमर अथाई।
चंद सूरज नटवा ज्यों नाचत पंचम दहे की माई॥
उपमा नाहिं करी कोउ करता का सों कहौं समताई।
कौन पुन्य गिरिधर ताके बस, तिहारें सुता कहाई॥
धेनु धान धन अंबर दाता गोपनि में बड भाग।
जो संबंध रच्यो मन ही मन अपनौ सो अनुराग॥
दै जु सकोगे टरी कछू नहीं बात बनाऊँ ताग।
राचों नहीं कनक मुक्ता नग लैहों कछु मो लाग॥
हरषि कहति महरि मुसिकानी जो चाहौ सो लीजै।
देत असीस धनि यह जीयो दे करि प्रान पतीजै॥
दुलही दूल्है नंद घर ढोटा ब्याह बडे करि लीजै।
मंडप चौंरी मंगल गावत दास 'चत्रुभुज' जीजै॥

(२१२) (राग देवगंधार)

रावलि राधा प्रगट भई।
श्री वृषभान गोप गरुवे कुल प्रगटी अति आनंद भई॥
रूपरासि रसरासि रसिकिनी नव अंकुर अनुराग नई।
चिरजीवहु चतुर चिंतामनि प्रगटी जोरी अति पुन्यमई॥
गुननिधान अति रूप नागरी करत ध्यान गिरिधरन सही।
'चत्रभुज' प्रभु अद्‌भुतयहजोरी सुंदर त्रिभुवन सोभा नहिं जात कही॥
श्रीराधा जी के पद

(२१३) (राग-मारू)

बधाई दीजे हो वृषभान दीजे दीजे दीजे।
जाचकजन की बिदा भई है एक ठाड़ौ ढाढ़ी छीजे॥
कुंवरि जनम तिहारे सुनके हौं उठि धायो बेगि।
कोटि कलप लौंको छल छूट्‌यो गयो आज उद्वेगि॥
बैरी विरह बहुत दुख दीनो कीनो छाती छेक।
ताते मदमात्यो न रहायो परे ते रीते तेग॥
यह अब शिव विरंचि नहीं जानत मानत अमर अघाई।
चंद सूर नटवायां नाचे पंचम दर की माई॥
उपमा नाहि करी करता कोऊ कहासों कहौं समताई।
कौन पुण्य गिरधरता के बस तिहारे सुता कहाई॥
धेनु धान धन अवतरी दाता गोपन में बड़भागी।
मासन बंध रच्यो मन हि मन अपनो सो अनुरागी॥
दे न सकोगे ढरि कछु नाही बात बनाऊं ताग।
रच्यो नहीं कनक मुक्ता लेहु कछु मोहि लाग॥
हरखि कहत महर मुसक्यानि जो चाहो सो लीजे।
असीस दई धन्य चिरजीवो देकर प्रान पतीजे॥
दुलहनि दुल्हे नंदघर ढोटा ब्याह बड़े कर लीजे।
मंगल चारी मंगल गावत दास 'चत्रभुज' जीजे॥
दशहरा

(२१४) (राग नट)

आजु दसहरा सुभ दिन आयो।
श्यामसुंदर सिर धरें जवारे कुंकुम तिलकु बनायो॥

कनकथार कर लिएँ आरती ब्रजभामिनि मिलि मंगल गायौ।
'चत्रुभुजदास' मुदित नँदरानी गिरिधरलाल लाड लडायो॥

(२१५) (राग सारंग)

विजया दसमी सुभ मंगल दिन, धरत जवारे श्री गिरिधारी।
कुंकुम अक्षत कौ करि टीकौ, हाथम लेत कंचन की थारी॥
आरति करति देति न्यौछावर, मंगल गावति सब व्रजनारी।
देति असीस स्यामसुंदर कों, 'चत्रुभुजदास' जाय बलिहारी॥

(२१६) (राग सारंग)

जवारे पहिरें श्री गोवधननाथ।
सुदंर मुखनि रखत सुख उपजत ब्रजजन किये सनाथ॥
स्वेत जरी सिर पाग लटकि रही कलँगी तामें लाल।
तनसुख कौ बागौ अति राजत कुंडल झलके रसाल॥
अंग अंग छबि कहाँ लौ बरनों नाहिन बरन्यो जात।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर छबि निरखत आनँद उर न समात॥

हटरी

(२१७) (राग कान्हरो)

गिरिधर बैठे हटरी सोहत।
ब्रज की बाल सबै ले आई भाँति–भाँति की मेवा तोलत॥
बहुत भाँति पकवान डला भरि लै–लै रोहिनी जसुमति डोलत।
भीर भई कहुँ ठौर न पावत लै–लै नाम सबन कौ बोलत॥
देत मिठाई स्याम अपनें कर पितर रीति कों जानि अमोलत।
'चत्रुभुजदास' प्रभु स्याम सुंदर वर बरस रह्यौ समय हटरी खोलत॥

दीपावली

(२१८) (राग सारंग)

खेलन कों धौरी अकुलानी।
डाढ मेलि आतुर सनमुख व्है स्यामसुंदर की सुनि मृदु बानी॥
बडडे गोप थकित भए ढाढे यह अबलों देखी न कहानी।
नाचत गॉइ़ भई ब्रज नौतन बरसों–बरस कुसल यह जानी॥

नंद-कुमार निवारि झारि मुख जै जै सब्द कहत कल बानी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लाल को सदा रहौ ऐसी रजधानी॥

(२१९) (राग सारंग)

खेली ब हो खेली गाँग बुलाई धूमरि धौरी।
बछरा पर उपरैना फेरत डाढ मेलि कें दौरी॥
आपु गोपाल कूक मारत हैं गोसुत कों भरि कौरी।
घे घे करत लकुटि कर लीनें मुख सों झारि पिछौरी॥
आनँद मुदित ग्वाल सब बोलत घेरि करत इकठौरी।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर जुग-जुग इह ब्रज राज करौरी॥

(२२०) (राग सारंग)

गॉइ खिलायो चाहत गिरिधर बरजत हैं नॅदराई।
धेनु बहुत बाढ़ी है मोहन! देखि हूक क्यों धाई॥
राखे हैं रखवार चहूँ दिसि व्रजराजा न पत्याई।
जसोदा रानी और रोहिनी यह सिख भवन सिखाई॥
बिना लाल खेलति नहीं घूमरि जब ऐसी सुधि पाई
हूँकि-हूँकि कें ऊपर धावति लै लकुटी औ हटाई॥
हॅसि मुसिकाई स्यामघन सुंदर मुरली मधुर बजाई।
तब ही 'दास चतुर्भुज' सब मिलि इक इक भलें खिलाई॥

(२२१) (राग सारंग)

कानं जगावन चले कन्हाई।
गिरिधर सिघद्वार ह्वै टेरत सखा-मंडली धाई॥
विबिध सिंगार पहरि पट भूषन, प्रफुलित उर आनँद न समाई।
रुचिर गैल श्री गोवर्द्धन की खेलत हॅसत सुखदाई॥
टेरत धूमरि गाँग बुलाई, डाढ मेलि आतु ह्वै धाई।
सावधान सब भोर खेलन कों 'चतुर्भुजदास' चली सिर नाई॥

(२२२) (राग सारंग)

दीप-दान दै स्याम मनोहर राब गाइनि के कान जगावत।
गाँग बुलाई धूमरि धौरी ऊँचे लै-लै नाउँ बुलाबत॥
होइ सचेत भोर खेलन को दौरी आवै नेंकु सुनावत।
सनमुख जाइ कूक मारत हैं मुख पट फेरि पछोंडे धावत॥

मुदित गोपाल ग्वाल सुबल लै ताकौ बछरा ताहि मिलावत।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन डाढ सुनि हँसि गावत कर ताल बजावत॥

(२२३) (राग सारंग)

बडडेन कों आगें लै गिरिधर श्री गोवर्द्धन–पूजन आवत।
मानसी गंगा न्हवाइ नखसिख तें पाछें दूध धौरी कौ नावत॥
बहुरि पखारि, अरगजा चर्चित, धूप, दीप, बहु भोग भरावत।
दै बीरा आरती करत हैं ब्रजभामिनि मिलि मंगल गावत॥
टेरि ग्वाल भाजन भरि दे कें पीठि थापि सिर–पेच बनावत।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर ब्रज इहिं विधि जुग–जुग राज करौ मन भावत॥

(२२४) (राग सारंग)

नंदादिकं जुरि चलि आए जहाँ श्री गोवर्द्धन पूजन आजु।
रामकृष्ण दोउ आगे दे कें सीस जु चरन छुवावन काजु॥
प्रथम आइ परनाम करत, अघ कोटि कंलपके तत छिनु भाजु।
अब निहचें ब्रज बसे सदा हम, सैल रूप प्रगटे सिर ताजु॥
धेनु खिलावत कुँवर तहाँ यह इततें मृदंग दुंदुभी गाजु।
होत कुलाहल महामहोच्छव भोग धस्यो गिरि सन्मुख साजु॥
परिकम्मा करि बार–बार सब, सुख निरखत है सब ही समाजु।
आरती करत देत न्यौछावरि, मुदित फिरत हैं गोप समाजु॥
ए प्रकार सब कीन्हे विधि सों मनोरथ मानि लियो गिरिराजु।
'चत्रुभुज' प्रभु आए फुनि गृहप्रति कृष्ण सुन्यो मेटी मेरी खाजु?॥

(२२५) (राग सारंग)

गोवर्द्धन पूज्यो गोकुलराइ।
बल समेत सब सखा चले मिलि खरिक खिलावन गाइ॥
लै–लै नाउँ टेरि सब सुरभी नियरी लई बुलाइ।
देत कीक बछरा गहि मोहन पीतांबर हि फिराइ॥
मेलि डाढ बुलाई धूमरि सन्मुख आई धाइ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधन निवारत हँसि करतार बजाइ॥

(२२६) (राग सारंग)

गोवर्द्धन पूजा करि गोविंद सब ग्वाल्नु पहिरावत।
अरु सुबाहु सुबल श्रीदामा, ऊँचे लै–लै नाउँ बुलावत॥

अपने हाथ तिलकु करि चंदन अरु अंगनि लपटावत।
बसन विचित्र सबनि के माथें विधि सों बाँधि बनावत॥
भाजन भरि जु भरी कुँडवारौ ताही ताहि पठावत।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर फिरि पाछें धौरी धेनु खिलावत॥

(२२७) (राग सारंग)

गोवर्द्धन पूजि सबैरस भीने।
सहस्र भुजा गिरिधरन दूसरौ जैंवत स्याम सगा सँग लीने॥
सुनि के उमगे बिरध बाल सब अगिनित साक पाक घृत कीने।
जो कोऊ रही सकुच गुरुजन की बाँह पसारि बोलि दै लीने॥
जै-जैकार होत चहुँ दिसि तें भामिनि मिलि गावति सुर झीने।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन सदा ब्रजराज करौ भक्तनि सुख दीने॥

(२२८) (राग सारंग)

वारी मेरे कान्ह प्यारे अबहि दिननु बारे
कैसें अति भारौ गिरि राख्यो धरि कर पर।
कोमल भुजा तुम्हारी, यातें हौ भै भीत भारी,
देखि-देखि करत है हिरदौ इह धर-धर॥
स्याम महा बल कीनो, छिनु में उठाइ लीनो,
आए गॉइ ग्वाल सब सरनि, मेघ के डर।
नीको हौं कहों उपाइ, मिलि करिहें सहाइ,
लेहौ बोलि बलि गई संग भैया हलधर॥
नेंक हूँ न बीच पार्‍यौ आठ जाम अँधियारौ
बरखत हे धन सात दिन एक झर।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधारी ब्रज राखि लियौ
इन्द्र खिसाइ आइ पर्‍यौ चरननि तर॥

(२२९) (राग सारंग)

खेली बहु खेली गांग बुलाई धूमर धौरी।
बछरा पर उपरेना फेरत, डाढ मेल कें दौरी॥
आप गोपाल कूक मारत है, गोसुत कों भरकोरी।
धों धों करत लकुट कर लीने, मुख पर फेर पिछोरी॥
आनंद मुदित गोपाल ग्वाल सब, घेर करत इकठोरी।

'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर ब्रज यह सुख, जुग जुग राज करोरी॥

गोपाष्टमी

(२३०) (राग सारंग)

गोविंद चले चरावन गैया।
दीनो हे रिषि आजु भलौ दिन कह्यौ है जसोदा मैया॥
उबटि न्हवाइ बसन भूषन सजि बिप्रनि देत बधेया।
करि सिर तिलकु आरती बारति, फुनि–फुनि लेति बलैया॥
'चत्रभुजदास' छाक छीके सजि, सखनि सहित बलभैया।
गिरिधर गवनत देखि अंक भरि मुख चूम्यो ब्रजरैया॥

(२३१) (राग बिलावल)

बैठे कुंज–मंडप में आइ।
रच्यो सवारि सखीललितादिक, यह सोभा कछुबरनीनजाइ॥
दीपमलिका रुचिर बनाई, घृत परिपूरनताइ।
धूप दीप करि, फूल माल धरि,नाना बिंजन सुभग कराइ॥
गावत मंगल गीत सकल मिलि, नंद–नँदन पिय देव मनाइ।
वारि आरती जुगल रूप पर, 'चत्रभुजदास' वारनें जाइ॥

(२३२) (राग देवगंधार)

वैठे सोभित सुंदर स्याम।
नवलनिकुंज मंडप प्यारी सँग, आनँद बीतत चार्यों जाम॥
सखी चतुर मिलि गान करत हैं, दीपमालिका करि अभिराम।
मान देव सिर मौर सॅवारौ, पहिरावत उर पुहुपन–दाम॥
बीतत जाम आरती बारत, जुगलरूप निरख सब बाम।
जगमगात नव बसन विभूषन, मोहन अॅग–अॅग पूरन काम॥
श्री वल्लभ निज सदा विराजत, श्री गिरिधर गोविंद घनस्याम।
बालकृष्ण श्रीरघुपति जदुपति, राज करौ श्रीगोकुल धाम॥
'चत्रभुज' प्रभु गिरधर सुखदाइक, पूरे सकल मनोरथ काम॥

(२३३) (राग बिलावल)

जागौ मंगल रूप निधान।
हरि–प्रबोध अति ही दिन नीकौ, मंगल रूप उदय भयो भान॥
मंगल नंद, जसोदा रानी, मंगल धरत देव मुनि ध्यान।

'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लाल कौ, मंगल करत वेद स्रुति गान॥

अक्षयतृतीया (चंदन-धारण)

(२३४) (सारंग)

देखि री देखि रसिक नंदनंदनु।
लटपटी पाग सुभग आधें सिर राखी है भुरकि कछु बंदनु॥
मृगमद तिलक रुचिर बनमाला तनु चरचित नव चंदनु।
चितवनि चारु कमल दल लोचन जुवती–जन–मन फंदनु॥
कबहुँक सहज बजावत सारंग कल मुरली सुर मंदनु।
'चत्रुभुज' प्रभु सुख–रासि सकल अंग गिरिधर बिरह निकंदनु॥

(२३५) (राग सारंग)

आजु बने नंदनंदन री नव चंदन कौ तनु लेपु कियें।
तामें चित्र धरे केसरि पुट सोभित हैं हरि सुभग हियें॥
तनसुख कौ कटि बाँधे पिछौरा ठाढे हैं कर कमल लियें।
रुचिर ब माल पीत उपरैना नैन मैन सर से देखियें॥
करन फूल प्रतिबिंब कपोलनि मृगमद तिलकु लिलाट दिये।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल सिर टेढिपाग रही भृकुटि छियें॥

(२३६) (राग सारंग)

देखि सखी गोविंद के चंदन सोभित साँवल अंग।
नाना भाँति चित्र किए ता मँहि केसरि विविध सुरंग॥
कंठ माल पीरौ उपरैना बनी इजार पचंरग।
कनक करनफूल भृकुटी गति मोहत कोटि अनंग॥
मृगमद तिलक कमलदल लोचन सीस पाग अरधंग।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर तनु छिनु छिनु छबि की उठत तंरग।

(२३७) (राग सारंग)

चंदन की खोर किएँ मोतिनि की माल हिएँ
अरगजा अंग अंग सोहत नँदलाल के।
एकटक रही रीझि निरखि सुर पुर रह्यौ
कुसुम बरखत टगटगी न परत द्रगनि माँझ छबि विसाल कें॥
पुतरी–सी लिखी चित्र नयो नेह मित्र
थकित भई बिबस बस वानिक उर बाल कें।

'चत्रुभुज' प्रभु सिंघद्वार ठाढे कर कमल लियें
कुलही रही भौंह परसि देखौ री गोपाल कें॥

यात्रा

(२३८) (राग मलार)

देखो री या रथ की सुंदरताई।
कनक विचित्र बनी परम मनोहर विद्रुम सोभा पाई॥
चक्र चहूँ दिसि ध्वजा पताका तोरनमाल बँधाई।
तहाँ बैठे सुंदर मनमोहन श्रीगोकुलपति राई॥
वाम भाग वृषभानुनंदिनी अति सोभा सुखदाई।
'चत्रुभुजदास' रसिक गिरिवरधर ब्रजजन देत बधाई॥

(२३९) (राग मलार)

देखौ भाई ! रथ बैठे गिरिधारी।
मोरमुकुट मकराकृत कुण्डल मुरली को छबि न्यारी॥
छत्र चँवर अरु ध्वजा पताका लागत अति सुखकारी।
ब्रजरानी मिलि करति आरती 'चत्रुभुजदास' बलिहारी॥

हिंडोरा

(२४०) (राग मालव)

हिडोरें झूलत लाल गोवर्द्धनधारी सोभा बरनी न जावै हो।
बाम भागि वृखंभानंदिनी नवसत अंग बनावै हो॥
अति सकुँवारि नारि डरपति है मोहन उरसि लगावै हो।
नीलपीत पट फरहरात है मन दामिनि दुरि जावै हो॥
मनहूँ तरुन तमाल मल्लिका अंग अंग अरुझावै हो।
गौर स्याम छबि मरकत मनि पर कनक बेलि लपटावै हो॥
सुरत सिंधु बिलसत दोऊ जन सब सहचरी सुख पावै हो।
'चत्रुभुजदास' लाल गिरिधर–जसु सुरमुनि सबमिलि गावै हो॥

(२४१) (राग मलार)

पावस रितु नीकौ रंगु लाग्यो हिंडोरें संग झूलें ब्रजनारी।
सांवन मास फुहीं थोरी–थोरी तैसिये भूमि हरियारी॥

नव घन नव बन नव पिक चातक नवल कसूंभी सारी।
नवल किसोर बाम अँग सोभित नव बृषभान–दुलारी॥
कंचन खंभ सुजटित मनि पटिली डॉडी सरल सँवारी।
'चत्रुभुजदास' प्रभु मधुर झोटिका देत लाल गिरिधारी॥

(२४२) (राग हिंडोरा)

हिंडोरना झूलन के दिन आए।
गरजत गगन दामिनी कोंघति राग मलार जमाए॥
कंचन खंभ सुढार बनाए बिच बिच हीरा लाए।
डॉडी चारि सुदेस सुहाई चौकी हेम जराए॥
नाना विधि के कुसुम मनोहर मोतिनि झूमक छाए।
मधुर मधुर धुनि बेनु बजावत दादुर मोर जिवाए॥
रमकनि झमकि बनी पिय प्यारी किंकिनी सबद सुहाए।
'चतुभुज' प्रभु गिरिधरन चंद सँग मानिनि मंगल गाए॥

(२४३) (राग नट)

सुरँग हिंडोरना हो माई झूलत रंग भरे।
तैसे पीउ पियारी पहिरे पियरौ पट कसूँभी सारी
तैसीये रितु पावस घन चहुँ दिसा घुमरे॥
तैसेई विस्वकर्मा सुघ अद्‌भुत मनि मानिक धरि
ठौर ठौर रचिकें रुचिर भाँति करे।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिवरधर हँसि हँसि लपटात ज्यों ज्यों
सहचरि चहूँ और देति झोटका खरे॥

(२४४) (राग नट)

मुदित झुलावति अपनें अपनें ओसराँ
नवल हिडोरौ साज्यो नवल किसोर।
नवल कसूँभी सारी पहिरें नव वधू प्यारी
तैसी भूमि हरियारी राजत चहूँ ओर॥
नवल गीत झुँडन गावति कंचन खंभ के ढिंग
नवल बन के नीके लागत पिक चातक मोर।
नवल घटा सुहाई परति थोरी थोरी बूँदें
बीच बीच नव घन की घोर॥

राधे तन नव चूनरी नव पट पीत स्याम कें अंग
नवल मनिमै जटित पटिला बैंठे हैं एक जोर।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर नव पावस रितु
नव रस बरखत देत मधुर रोर॥

(२४५) (राग मलार)

छबीले लाल के संग ललना झूलत नव सुरँग हिडोरें।
सोभित तन गौर स्याम पीरो पटु कसूँभी सारी
जटित मानिक मनि पटिला बैठे इक जोरें॥
तैसी हरित भूमि तैसिये थोरी थोरी बूँदें।
तैसिये गावति त्रिय तैसोई घन मधुर मधुर घोरें।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिवरधर तैसिये सुख रासि राधे
पीउ प्यारी अद्‌भुद छबि रति–पति चितु चोरें॥

(२४६) (राग कानरौ)

जमुना–तट नव सघन कुंज में हिंडोरना झूलन सब आई।
मधि राधा माधौ दोउ बैठे आसपास जुवती मन भाई॥
सावन मास हरित घन वन में रिमझिम रिमझिम बूँद सुहाई।
कछु भींजे पट अंग झलमले नव नव छबि बरनी नहिं जाई॥
विविध भाँति झूलत और फूलत रस प्रवाह उमँगे न समाई।
गावत सावन गीत मुदित मन संक न मानी निडर सुभाई॥
अतिरस मत्त भई त्रिय जब ही स्यामसुंदर तब लै उर लाई॥
चिर संचित अभिलाष भए सब अधर सुधा पीवत न अघाई।
बीच बीच मुरली धुनि सुनियत, केकी पिक चातक तिहिं ठॉई।
'चतुर्भुजदास' वारने लै लै गिरिधर पिय रति कीरति गाई॥

(२४७) (राग कानरौ)

नंदनंदन हिंडोरे झूलें माई री।
सँग वृषाभानु–सुता अति सोहै रिमझिम रिमझिम बूँद सुहाई री॥
गावती सावन गीत बानिक बनी ब्रज वनिता पिय जीय भाई री।
'चतुर्भुज' प्रभु तब छबीली छबि निरखें रीझिरीझि सब उरलाई री॥

(२४८) (राग बिहाग)

झूलत लाल गिरिवरधरन।

परम रसिक सिरोमनि प्यारी राधिका मन-हरन॥
स्यम सीस सीखंड सम कनक के आभरन।
नील पीत दुकूल दमकत गौर स्यामल बरन॥
जबहिं झोटा देति प्यारी लागत अति मन डरन।
'चतुर्भुज' प्रभु निपुन नागर चपल अँग भुज भरन॥

(२४९) (राग काफी)

झूलत जुगलकिसोर सुरंग हिंडोरना।
गरजत गगन चहुँ दिसि पवन झकझोरना॥
द्वै खंभ डाँडी चारु विस्वकर्मा गढी।
पटुली पिरोजा लाल चौकी हीरा जडी॥
कोयल कूजत कुंज में सब्द सुहावनी।
चहुँ दिसि चमकति बिज्जु पिय मन भावनी॥
जुवती करति कौतूहल जो घन गाजहीं।
ताल मृदंग उपंग बाजे बहु बाजहीं॥
पिय के सीस सेहरौ सब मिलि बाँधहीं
नवल ब्याह के गीत सबै मिलि गावहीं॥
उभय परस्पर भुवन दुंदुभी बाजहीं।
मिलि दंपति अनुराग भरे दोउ राजहीं॥
ब्रजजन मन आनंद ब्रहादिक हरखहीं।
नाना विधि के पुष्प वर्षा जो बरखहीं॥
'चर्तुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल सँग झूलहीं।
यह सुख देखत ब्रज जन सब मन फूलहीं॥

(२५०) (राग विहागरौ)

नवल हिंडोरे लै स्यामा प्यारी।
अति आनँद प्रफुलित मनमोहन नवल लाल श्री गोवर्धनधारी॥
नवल खेल आँगन में बने डाँडी चारि बनी अति भारी।
मरुवौ नवल झूमक नव लटकें नौतन छबि लागति अति भारीं॥
नबल घटा में नवल घन राजत नवल दामिनी चमकति न्यारी।
नव नव मोर झकोरत वन में दादुर नवल रटत झिंकारी॥
नवलनवल राखी निरखनआई मृगमद आड लिलाट सँवारी।
अंग अंग आभूषन नौतन नव सुगंध सोंधौ अधिकारी॥

करत विनोद आनंदित वन में नंदनँदन वृषभानुदुलारी।
'चतुर्भुज'दास निरखि दंपति सुख तनमनधन कीनो बलिहारी।

(२५१) (राग कान्हरौ)

फूलन कौ हिंडोरौ बन्यो फूलनि की डोरी
फूले नँदलाल फूली नवल किसोरी॥
फूले सघन बन फूले नवल कुंज
फूली फूली जमुना बहै हिलोरी॥
फूलनि के खंभ दोऊ डाँडी चारि
फूलनि पटुली बैठे इक जोरी।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर फूले झूलत
फूली फूली भामिनी देति झकझोरी॥

(२५२) (राग कान्हरौ)

ब्रज जुवतिनि के जूथ में झूले पिय प्यारी हिंडोरें।
तैसीय सुरंग सारी पहिरें सुभग अंग
खमकि कंचुकी पिय सरसत परसत बरसत रस द्रग कोरें॥
सुभग सहचरी मिलि ज्यों झुकि झोटा देति
त्यों त्यों तोरि मोरि तन डरी–सी
आँकौ भरत लेति चतुर चित चोरें।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर की बानिक देखि
रीझि भींजि सब ब्रजनन हुलसत बारत हैं तृन तोरें॥

(२५३) (राग मलार)

हिडोरें माई झूले श्रीगिरिवरधारी।
वाम भाग वृषभानुनंदिनी पहिरि कसूँभी सारी॥
ब्रज जुवती चहुँ दिसि सब ठाढीं निरखि नैननि हारी।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल सँग बाढयो रंग अपारी॥

(२५४) (राग मलार)

हिंडोरा माई कुसुमनि भाँति बनाई।
नव किसोर मुरलीधर सुंदर ढिंग राधा सुखदाई॥
छाइ रहे जित तित ते बादर दामिनि की अधिकाई।
दादुर मोर पपीहा बोलत नान्हीं नान्हीं बूँद सुहाई॥

झोटा देति सकल ब्रजसुंदरि त्रिविध पवन बहाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन हिंडोरे झूली यह छबि बरनी न जाई॥

हिंडोरा

(२५५) (राग-मल्हार)

श्यामा श्याम झूलत सुरंग हिंडोरे।
बरन बरन पट पहेरे रमकत बाह जोरे॥
कूलेह पीतपट पीयको पिछोरा, प्यारीके कसुंभी सारी सोभा चितचोरें।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरकी बानिकपर वारीवारीडारो रीझ त्रण तोरें।

(२५६) (राग मल्हार)

झूलत बालकृष्ण बिहारी।
ब्रजनारी सब देखन आई पहर केसर रंग सारी॥
केसर के दोऊ खंभ बनाये दांडी चार सँवारी।
केसर की पटुली राजत है मोतिन झूमक सारी॥
केसर मुकुट मकराकृत कुंडल छबि लागत अति प्यारी।
'चतुर्भुज' प्रभु की छबि निरखत ही तन मन डारौं वारी॥

(२५७) (राग मल्हार)

आजु वन कुंज हिंडोरो साज्यो।
उगम उगम झूलत पिय प्यारी उगम घटा घन गाज्यो॥
कालिंदी तट सुभग हिंडोरो, तहाँ ब्रजराज बिराज्यो।
ढिंग कंचन की बेलि राधिका, झुलवत सखी समाज्यो॥
पीतपट और पाग कसूंभी, मोर पिच्छ सिर साज्यो।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर छबि निरखत, कोटिक मनमथ लाज्यो॥

(२५८) (राग-रायसो)

फूलन रच्यो है हिंडोरो नंद महर के द्वार।
युवती जूथ मिल गावहीं, झूलत नंद कुमार॥
पावस ऋतु सुहावनी, आयो सांवन मास।
दादुर, मोर, चकोरना, कोकिल कूजत पास॥
फूलन के दोउ खंभ रचे, फूलन डांडी चार।
फूलन के मरूवे बने, पटुली परम रसाल॥

झूलन आई राधिका, सखी सब सोंहैं संग।
ऐसी छबिजु लागही, पुलकित भये सब अंग॥
झुलावत हैं ललिता सखी, आनंद अंग अपार।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन की, छबि निरखत बलिहार॥

(२५९) (राग-काफी एवं राग-सारंग)

झुले हिंडोरे साँवरो वाकी, शोभा बरनी न जाय॥ ललना॥
यमुना तीर सुभग कुंजन में, रच्यो हैं हिंडोरो आय। ललना॥
कंचन के द्वै खंभ बिराजत, डाँडी चार सुहाय। ललना॥
चौकी खचित है पाँच पिराजा, हीरा, रत्न जड़ाय॥ ललना॥
पटुली हेम जड़ाव की, जोरी लाल बनाय॥ललना॥
दादुर, मोर, पपैया बोले, थोरी–थोरी बुंद सुहाय ॥ ललना॥
गृह–गृहतें सब सुदंरी, चलि देखन नंदलाल ॥ ललना॥
निरख–निरखमुख देतझोटिका, पुष्पनवृष्टिकराय॥ ललना॥
आरती करत जसोदा मैया, मोतिन चौक पुराय ॥ ललना॥
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरनलालकों, श्रीराधा झुलावनआय॥ ललना॥

(२६०) (राग-मल्हार)

आई ऋतु सावन सुहाई अति सुखदमास
झूलत हैं श्याम–श्याम सुखद हिंडोरे।
तैसेही पीय प्यारी पहिरे पीयरो पट कुसुंभी सारी
तैसीय ऋतु पास घन चहूँ दिस तें धोरें॥
तैसेही विश्वकर्मा सुघर अद्‌भुत अति मानिक खचित
ठौर ठौर, रुचिर रुचिर भाँति भाँति जोरें।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिवरधर हँसि–हँसि लपटात
जात सहेचरी विचित्र देति झोटिका रोरें॥

(२६१) (राग-मालव)

झूलत लाल गोवर्धनधारी, शोभा वरणि न जाई।
वाम भाग वृषभाननंदनी, नवसत अंग बनाई॥
अति सुकुमार नारि डरपत हैं, मोहन उरहिं लगाई।
नील पीत पट फरहरात हें, घन दामिन दुरजाई॥
मानों तरुण तमाल मल्लिका, अंग–अंग अरुझाई।

गौर – श्याम छबि मरकत मणि पर, कनक बेलि लपटाई॥
सुरत सुधा विलसत दोऊ जन, सब सहचरीं सुख पावें।
'चतुर्भुज' प्रभु लाल गिरिधर यश, सुर, नर, मुनि मिल गावें॥

पवित्रा

(२६२) (राग सारंग)

पवित्रा पहिरं श्रीगिरधरलाल।
सुंदर स्याम छबीलौ नागर सकल घोष प्रतिपाल॥
हठि मन हरत हमारौ मोहन संग नागरी बाल।
'चत्रुभुज' प्रभु भामिनी पूरन चंद नवल नंदलाल॥

(२६३) (राग सारंग)

पवित्रा पहिरत गिरिवरधारी।
औरु गुंजा के हार मनोहर भामिनि हस्त सँवारी॥
सखा सबै चहुँ दिसि तें सेभित हँसत देत कर तारी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन रोम पर वारौं मुक्ति विचारी॥

(२६४) (राग-मलार)

पवित्रा पहेरावत नंदरानी।
कंचन थार भरे मुक्ताफल, कुम्कुम् अच्छत आनी॥
मंगल गान करत गोपीजन, मधुर–मधुर सुरबानी।
आरती करत रोहिनी मैया, जग जीवन मन ध्यानी॥
लाल पाट पर स्वेत चोलना, औरु सोभा अधिकानी।
'चतुर्भुज' प्रभु पर सकल देवता, पहोपन की बरखानी॥

प्रेमासक्ति

(२६५) (राग गौरी)

अधिक आरति सुनि–सुनि ए नैन।
समुझाये अति नीर भरतु है, कतहि कहत बहु बैन॥
हुती जु अबधि समोधि गहे कर अब कथि कियो कुचेन।
चाहत है देख्यौ बारक उह बंक भृकुटि की सैन॥
लै कर कमल 'चतुर्भुज' प्रभु तब मथि पीवत पै फेन।
जीवहि प्रगट निहारे मधुकर उह गिरिधर मुख एन॥

(२६६) (राग गौरी)

ग्वालिनि बाट खरिक की और।
उह सूधौ मगु छांडि कहा तू इत ही कों उठि दौरे ?
चली न जाति सहज अनबोली ठां–ठां बातनि झौरे।
दूरहि तें ब सुनाइ टेरिकें बोलति धूमरि धौरे॥
खेलत जहां 'चतुर्भुज' प्रभु फिरि झांकति है ता ठौरे।
जानति हों अटक्यौ मनु गिरिधर रसिक राइ सिरमोरै॥

(२६७) (राग गौरी)

जब तें री ! गांइ चरावन जाइ।
तब धौं कहा नंद–द्वारे पें भूलि रहति उत चाहि॥
नित इत चलति छांडि सूधौ मगु कहि ब काज धौं काहि।
फिरि–फिरि बात कहति ठां ही ठां सूधे धरति न पाइ॥
तजी लोक की लाज खरिकारी बार–बार मुसिकाहि।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सों जानति तनु मनु अटक्यो आहि॥

(२६८) (राग गौरी)

कब की तूं बार–बार नंद–द्वार उझकति आवति जाति।
संध्या लों फिरि–फिर उस धारति जानी न जाइ इह भेद बात॥
चैन न होतु भवन अदने में छिनु–छिनु तेरे भायें कलप जात।
गृहपति की कछुकान न मानत निसादित इकटक ही विहात ।
कहियतु और कहति कछु औरे लागि रह्यौ मनु एहि घात।
'चत्रुर्भुजदास' प्रभु गिरिधर नागर मन अटक्यो सखि स्यामल गात॥

(२६६) (राग गौरी)

नैना अधिक चलबले रहत नहिं चैन।
धावत तकत स्याम–अंबुज–मुख मनहुं मधुप मधु चाहत लैन॥
मानत न घेरे करत चहुंदिसि फेरे नांचत अनेरे लजावत मैन।
'चतुर्भुजदास' प्रभु गिरिधर बस कीने सखि तें गूढ भाव की सैन॥

(२७०) (राग गौरी)

देखी मैं तन की गति वन ही में मनु तेरौ।
भीतर भवन हिं क्यों हू न परत पगु,
फिरि–फिरि उलटि करति उतहिं फेरौ॥

'चत्रुभुजदास' प्रभु गिरिवरधर चित चौर्‌यो
मोहन नव रस परसि बांध्यौ कठिन प्रीति जेरौ।
तबहिं तें उहां बसै प्रान, तिनु तोरि तज्यौ आन,
जब तें सघन कुंज कियो व सुरत झेरौ॥

(२७१) (राग गौरी)

ठाढी एक बात सुनि धीरी।
भोर हि तें कहा मटुकी लियें डोलति ब्रज–बासिनी अहीरी !॥
'माधौ–माधौ' कहि–कहि टेरिति बिसरिगयो तोहि नांउ दही री।
ना जानौं कहुं मिले स्याम घन, इह रट लागि रही री !
मोहन–मूरति मनु हरिलीनों नहिं समुझति कछुकाहूकी कही री !
'चत्रुभुजदास' बिरह गिरिधर के सब बन फिरति बही री !

(२७२) (राग सारंग)

खरे सत भाइले गोपाल।
कहत लाउ नीकें गुहि देहों इह मुकता–मनिमाल।
लै कर तें हठि पोवन बैठे करिके कंचन थाल।
कहहु धौं ह्यां कौन निहोरत कतहि पचत नंद–लाल।
'चत्रुभुज' प्रभु अपने पति ज्यों जाचत गृह कौ प्रतिपाल।
गिरिधर रसिक सहज बस कीने चितवनि नैन बिसाल॥

(२७३) (राग जैतश्री)

एक हि आंक जपै गोपाल।
अब इहे तन जानें नहीं सखी! और दूसरी चाल॥
मात–पिता पति–बंधु बेद–बिधि तजे सबै जंजाल।
स्याम–सुरुप चित में चुभ्यो परि जो बीते बहु काल॥
गह्यौ नेंमु तिनु तोरि जवै हँसि चितए नैन बिसाल।
'चत्रुभुजदास' अटल भए उर–घट परसे गिरिधरलाल॥

(२७४) (राग रामग्री)

मन मृग बेध्यो मोहन नैन बान सों।
गूढ भाव की रौन अचानक तकि तान्यौ भृकुटी कमान सों॥
प्रथम नाद–बल घेरि निकट लै, मुरली सप्तक सुर–बंधान सों।
पाछं बंक चित्तै मधुरें हँसि घात करी उलटि सुठान सों॥

'चत्रुभुजदास' पीर या तन की मिटत न औषधि आन सों।
व्है है सुख तब ही उर–अंतर आलिंगतों गिरिधर सुजान सों॥

(२७५) (राग रामकली)

बदूं जो तब हि मान धरि आवै।
सुंदर स्याम नेकु सन्मुख व्है अंबुज वदन दिखावै॥
तबलागि मान करहु कोउ कैसें जबलगि बह दरसन नहिं पावै।
दृष्टि परे मानों मधुकर तिहिं छिनु सहज सरोज हिं धावै॥
त्रिभुवन मांझ होड वदें जुवती आरज–पथ हि दृढावै।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन रसिक सब कुल–मरजाद ढहावै॥

(२७६) (राग रामग्री)

कहत हो ! सबै सयानी बात।
जौ लों नहिंन देखे सुंदरि ! कमल नयन मुसिकात॥
सब चतुराई बिसरि जाति है, खान–पान की तात।
बिनु देखें छिनु कल न परति है पल भरि कल्प बिहात॥
सुनि भामिनि के बचन मनोहर सखि मन अति सकुचात।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल–संग सदा बसों दिन–रात॥

(२७७) (राग आसावरी)

नवल किसोर मैं जु बन पाए।
नव घन स्याम–कलेवर–वैभो देखत नैन चटपटी लाए॥
धातु विचित्र काछनी कटि–तट ता महँ पीत बसन लपटाए।
माथें मोर मुकुट रचिं बहु बिधि, उर गुंजा–मनि हार बनाए॥
तिलक ललाट, नासिका बेसरि, मुख मुरली गुन कहत सुहाए।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर–तनु मन लियो चोरि मंद मुसिक्याए॥

(२७८) (राग आसावरी)

मथनियां दधि समेत छिटकाई।
भूली सी रहि गई चितै उत किनु न बिलोबन पाई॥
आंगन व्है निकरे नँद–नंदन नैन की सैन जनाई।
छांडि नेत कर तें घर तें उठि पाछें ही बन धाई॥
लोक–लाज अरु बेद–मरजादा सब तन तें बिसराई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन मंद हँसि कछुक ठगौरी लाई॥

(२७९) (राग सारंग)

याहि तें फिरति सदा बन खोरी।
मारगु जात आन जुबती बस करत चितचित चोरी॥
कबहुंक मधुर सुनाइ बेनु–सुर राखत इक टक मोरी।
कबहुंक अंचर गहत मंद हँसि सहज लेत रति जोरी॥
उलटत नांहि 'चत्रुर्भुज' प्रभु तजि हारी मनहिं निहोरी।
बाढी प्रीति लाल गिरिधर सों लोक–वेद–तिनु तोरी॥

(२८०) (राग सारंग)

तब तें जुगसमान पलु जात।
जा दिन तें देखे सखि! मोहन मो तन मुरि मुसिकात॥
दरसन देत ठगौरी मेली कहि न सकी कछु बात।
बीतत धरी पहर क्रम–क्रम अब कर मींडत पछितात॥
ह्रदै में गडी मदन मूरति मन अटक्यौं सांवल गात।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन मिलन कों नैन बहुत अकुलात॥

(२८१) (राग सारंग)

सिर परी ठगौरी सैन की।
नंदकिसोर जनाई जब तें चारु चितवनी नैन की॥
मनु बिचक्यो कछु कहत न आवै, मो सुधि बिसरी बैन की।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर–छबि निरखत सांट लगी तन मैन की॥

(२८२) (राग गौरी)

बात हिलग की कासों कहिये।
सुनुरी सखी! बिवस्थातनकी समुझि मनहिंमन चुप करि रहिये॥
मरमी बिना मरमु को जानें! इहि बातें सब जिय ही सहिये।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनमिलें जब सबसुख–संपति तबही लहिये॥

(२८३) (राग गौरी)

मोहन मोहनी पढि मेली।
मुख देखत तन दिसा हिरानी, को घर जाइ सहेली!॥
काके तात–मात अरु भ्राता को पति, नेह नवेली।
काको लोक–लाज अरु कुल–ब्रत को बन भंवति अकेली॥
याहि तें कहति मूल मत तो सों एक संग नित खेली।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर रस अटकी श्रुति–मरजादा पेली॥

(२८४) (राग गौरी)

गोवर्द्धन बासी सांवरे लाल! तुम–बिनु रह्यौ न जाइ हो।
ब्रजराज लडैते लाडिले । ध्रु.॥
लाल! बंक चिते मुसिकाइ के नेंकु सुंदर बदन दिखाइ हो।
लोचन तलफें मीन ज्यों जुग भरि धरिंय बिहाइ हो॥
लाल! सप्तक सुर–बंधान सों मोहन बेनु बजाइ हो।
सुरति सुहाई बांधिकें मधुरें–मधुरें गाइ हो॥
लाल! रसिक रसीली बोलनी नेंकु गिरिचढि गैयां बुलाइ हो।
गांग बुलाई धूमरी नेंकु ऊंचे टेरि सुनाइ हो॥
लाल! दृष्टि परे जा द्यौस तें तब तें रुचे न आन हो।
रयनी नींद न आबही बिसरे भोजन पान हो॥
लाल ! दरसन कों नैना तपें वचन सुनन कों कान हो।
मिलिबे कों हियरो तपै मेरे जिय के जीवन–प्रान ! हो॥
लाल ! मन अभिलाषा यों रहे लागै न नैन–निमेप हो।
इक टक देखों भावतौ नागर नटवर भेष हो॥
लाल ! लोक–लाज कुल बेद की, छांडे सकल बिबेक हो।
कमल कली रबि सों बढी किनु–छिनु प्रीति बिसेख हो॥
लाल! इह रट लागी लाडिले जैसें चातक मोर हो।
प्रेम–नीर बरखाइये नव घन नंद–किसोर हो॥
लाल! पूरन ससि मुख देखिकिं चितु चिंहुट्यो इहि ओर हो।
रूप सुधा रस पान कों सादर कुमुद चकोर हो॥
लाल ! मनमथ कोटिक बारनें निरखि डगमगी चाल हो।
जुवती जन–मन–फंदना अंबुज नैन विसाल हो॥
लाल ! कुंज–महल क्रीडा करी सुख–निधि मदन गोपाल हो।
हम वृंदावन मालती तुम भोगी भौंर भुवाल हो॥
लाल ! जुग जुग अविचल जियो इहिसुख सैल–निबास हो।
श्री गिरिवरधर के रूप पर बलि जाइ 'चत्रुभुजदास' हो॥

(२८५) (राग कल्याण)

ठगोरी मेलि गए सैन की।
बन गवनत ब्रजनाथ जनाई चितवनि चपल नैन की॥
अकबक रहि कछु कहत न आयौ मो सुधि भूलि बैन की।

'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिवरधर मूरति कोटिक मैन की॥

(२८६) (राग कल्याण)

छूटि गई मोतिनि–लर कर तें देखत स्यामसुंदर नवल किसोरैं।
रहि गई चितै चितैरो जैसें, चितवनि इत मोहन चित चोरै॥
डगमगी चाल मृगमदको तिलकु भाल, टेढी पाग बागौ बन्यो फेंटा छबि छोरैं।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर कोटि मैन मोहै, सैन दै जनावै जब नैन की कोरैं॥

(२८७) (राग कानरौ)

सब ब्रत भंग भए तब तें सखि! एकै ब्रत निश्चै करि लीयो।
आवत खरिक खोरि नँद–नँदन आइ अचानक दरसनु दीयो॥
डर कुल–कानि लोक–अपकीरति मानहुं निरखि संकल्पु कीयो।
मदन गोपाल मनोहर मूरति नव रस सींचि सिरायो हीयो॥
बिसन पर्‍यो संतत नित चाहत रूप–सुधा लोचन–पुट पीयो।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरकी बानक देखे–बिनु न परत मोपे जीयो॥

(२८८) (राग बिलावल)

भूल्यो री ? दधि कौ मंथन करिवौ।
देखत रसिक नंद–नंदन कौ डगमगे पगु धरिबौ॥
रहि गई चितै चित्र जैसें इकटक नैन निमेष न परिबौ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन जनायो नांही, मो मन मानिकु हरिबौ॥

(२८९) (राग धनाश्री)

मोती तेही ठां सब रारे।
तब ही तें रहि गई एकटक जब ब्रजनाथ निहारे॥
अध पोवत में स्याम मनोहर निकसे आइ सकारे।
आधी लर कर लै ब चली उठि जित गोपाल सिधारे॥
'दास चतुर्भुज' प्रभु चित चोर्‍यौ सु घर के काज बिसारे।
गिरिधरलाल भेटि वन में तृन तोरि सबै ब्रत टारे॥

(२९०) (राग धनाश्री)

महा चित–चोर नयन की कोर।
लाज गई, घूंघट पट भूल्यो, जब चितए इहिं ओर॥
वे राखि ? सिंहद्वार हुते ठाढ़े, हौं खरिक चली उठि भोर।

दै कर सेन मैन सर मारी नागर नंद–किसोर॥
कमल, मीन, मृग, खंजन दै न सकी उपमा कहं जोर।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर–मुखबिधु ए अंखियां भई चकोर॥

(२६१) (राग धनाश्री)

ननिन ऐसीये बानि परी।
बिनु देखें गिरिधरलाल–मुख जुग–भर गनत घरी॥
मारग जात उलटि चपलनु मोहन तन दृष्टि परी।
तब ही तें लागी जक इकटक निमि–मरजाद टरी॥
'चत्रुभुजदास' छुडावन कों हठु मैं विधि बहुत करी।
स्वों सरबसु हरि कों हरि दीनो देह–दसा बिसरी॥

(२६२) (राग धनाश्री)

कहावत जो गोकुल गोपाल !
ते मैं आजु दृष्टि देखे सखि ! चलत डगमगी चाल॥
पहुनाचार करन गई ही सजन हेत प्रतिपाल।
ओचक हीं मिलि गए नंद–सुत अंग अंग रूप रसाल॥
तन घनश्याम पीत ओढें, उर राजति बनमाल।
मोर मुकुट, मुरली कर लीनें, चितवनि नैन बिसाल॥
'चत्रुभुजदास' रासि सब सुख की, सोभा भृकुटी भाल।
तन बिसस्यौ पन हस्यौ मनोहर गोवर्द्धनधर लाल॥

(२६३) (राग धनाश्री)

वदन चंद के रूप रस में मम लोचन चकोर कियो चाहत पान।
तृषावंत अति सहत न अंतर गहत नांहि छिनु समाधान॥
निसि–दिन इकटकरहें निहारत आगें तेंन टरहु कीजे इह बंधान।
'चत्रुभुजदास' प्रभु पूरहु मनोरथ रसिक–राइ गिरिधरन सुजान॥

(२६४) (राग धनाश्री)

चितवन आपु हि भयो चितेरौ।
मंदिर लिखत छांडी हरि अकवग देखत हैं मुख तेरौ॥
मानहुं ठगी परी जक इकटक इत–उत करति न फेरौ।
और न कछू सुनति समुझति कोउ स्रवन निकट व्है टेरौ॥
'चत्रुभुज' प्रभु मग काहू न पास्यौ कठिन काम कौ घेरौ।
गोवर्द्धनधर स्याम सिंधु–मॅह पस्यौ प्रान कौ बेरो॥

(२६५) (राग धनाश्री)

अब हौं कहा करों री माई !
जब तें दृष्टि परे नँद-नंदन पल भरि रह्यौ न जाई॥
भीतर मात-पिता मोहि त्रासत-'तें कुल गारि लगाई'।
बाहिर सब मुख जोरि कहत हें 'कान्ह-सनेहिनि आई'॥
निसि बासर मोहि कल न परति है घर आंगन न सुहाई।
'चत्रुभुजदास' प्रभु गिरिधरन छबीले हँसि चितु लियो चुराई॥

(२६६) (राग धनाश्री)

गोरस बेचत आपु बिकानी।
भवन गोपाल मनोहर मूरति मोही तुम्हारी बानी॥
अंग-अंग प्रति भूलि सहेली! मैं चातुरि कछुवेन (हिं) जानी।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर मन अटक्यौ तन मन हेत हिरानी॥

(२६७) (राग बिहागरो)

हौं तो भवन आपनें जाति।
मारग में मिलि गए श्यामघन व्है गई आधी राति॥
का के मात-तात अरु कुल-ब्रतु कासों कहिए बाति।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन मिले तें सबै भूलि गई साति॥

(२६८) (राग जैतश्री)

तेरी माई ! लागति हों री पैयां।
इकटक बात कहों मोहन की आलीरी ! लेहुं बलैयां॥
या गोकुल विधि सेंदिन कीने आपु चरावत गैयां।
निघटाए निघटत नहीं सजनी! घरी-घरी जुग भैयां॥
छिनु-छिनु-छिनु ब्रज तें बाहिर व्है बूझति जाय लुगैयां।
गोरज-छुरित-अलक कहुं देख्यो आवत कुवंर कन्हैयां॥
कछु न सुहाइ ताहि बिनु देखें सुत-पति-पिता न मैयां।
'चत्रुभुज' प्रभु देखे ही जीजै गोवर्धनधर रैयां॥

(२६९) (राग जैतश्री)

जसोमति ढूंढति है गोपालै।
कहुं देख्यो मेरौ अलक लडैतो खेलत हो संग बालै।
इत-उत हेरि रही नहीं पावति सुंदर स्याम तमालै।

चकित नैन अतिसै अकुलानी भई–भई बेहालै॥
सांबरे वरन, पीत सी झगुली, कच लर लटकत भालै।
पगु पेंजनी कुनित कहुं देख्यो चाल सु राजमरालै॥
घर–घर टेरि कहति कहुं देख्यौ बूझति गोपी–ग्वालै।
जो मेरा छगन मगन हि दिखावै ताहि देहुं उर–मालै॥
काहू ब्रज–सुंदरि लै राख्यौ निज–गृह नैनबिसालै।
नंदराइ जू कों आनि दिखावौ सुंदर रूप रसालै॥
गए प्रान मानों फिर आए लियो उछंग उतालै।
चूमति नैन, सीस, मुख, ठोडी अरु चूमति दोउ गालै॥
निज–गृह आनि करी न्योछावरि तन, मन, धन, इहि कालै।
'चत्रुभुज' प्रभु कों खेलत जानें ज्यों आवत गिरिधर लालै॥

(३००) (राग सूहा)

अब मेरे मन की तपति बुझाई।
बिदा भई ग्रीषम–रितु आली ! अब बरषा–रितु आई॥
अब मेरे गृह आवेंगे प्रीतम तव हों करौंगी बधाई।
नाना विध के सजिके भूषन विरहे पीर मिटाई॥
आज कौ दिन धनि–धनि री सजनी! पुहुप–सुबास छवाई।
'चत्रुभुज' प्रभु ललना पॉव धारे अंगना चौक पुराई॥

(३०१) (राग टोडी)

अरी ! चितचोर चितै चित चोरत नैन की सैन चपल दै थोरी।
खेलत, हॅसत, पीत पट झटकत, संग सखा लीन्हें ब्रज–खोरी॥
गिरिधर–रूप अनूप निहारी अब भई ज्यों गुडिया बस डोरी।
'चत्रुभुजदास' कमलमुख निरखति अधरटगी लगीज्यों चंद्र चकोरी॥

(३०२) (राग टोडी)

इंडुरिया तू डारि दै हौ लंगर ढीठ कन्हाई॥
तेरौ कोऊ कहौ करेगो ! हमें घर खीजेगी माई॥
कौन हवाल किये हरि ? मेरे भली भांति मेरी दधि खाई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन चाहि चित मेरो मन लियो चुराई॥

(३०३) (राग टोडी)

उलटि फिरि–फिरि आवत निज द्वार।

गृह–आगम न सुहाइ तब तें देखे नंदकुमार॥
सुदर स्याम कमल–दललोचन सोभा–सिधु अपार।
ता दिन तें आतुर भए मग–तन चितवन बार–बार॥
भोर भवन तें निकरो मोहन चलनि गंयद–कुमार।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन मिलन कों करत अनेक विचार॥

(३०४) **(राग ललित)**

कहां तें लाए हो ? इनि साथ।
जे अलि निपुन बसत तुम्हरे सँग
मधुर गंध लै और नु भाखत गावत गनु–गर–गाथ॥
हम तुम सों सूधी व्है बूझति तुम उलटे ही तरजत हम सों
हमनु कहा भरि लीन्हे बाथ।
ब्रजपति रसिक रसिक तुम दोऊ वे हू रसिक जिनि कीन्हें
'चत्रुभुज' सुनि पिया गोकुलनाथ॥

(३०५) **(राग टोडी)**

जबतें सखी ! होआई अचानक गिरिधरलाल जोबदन दिखायौ।
मोहन–रुप अनूप हस्यौ मन मांझ कुटुम्ब सबै बिसरायौ॥
सो मुख देखि–देखि हौं नाची जिनि नैननि भी सैन नचायौ।
'चतुर्भुजदास' जो सर्बसु लैके लोक कुटुम्ब पछोरि बहायौ॥

(३०६) **(राग विलावल)**

देखो री ? नंदलाल की बातें।
दधिमाखन खायौ मेरीसजनी ! सांकरिखोरि निकसि गयौ प्रातें॥
कालि गई हौं खरिक दुहावनभाजन फोरि चल्यौ भरि हाथें।
'चत्रुभुजदास' लज्जित भई ग्वालिनि कहत हैं भरि बाथें॥

(३०७) **(राग गौरी)**

या मोहन पे मोहिनी जिनि मोह्यौ सब संसार।
जो नीकें के जानि है जाहि विसस्यौ गृह–व्यौपार॥
वारे तें इतनी भई देख्यौ सब व्यापार।
उलटी रीति ब्रज में भई ए चली अनोखी चाल॥
जमुना–जल भरिबे गई मेरे ढिंग ठाढौ भयौ आइ।
डगमग पग घर कों धरों मेरे परे हैं पिछोरे पॉइ॥

बंसीवट जमुना तटें किये सप्तसुर राग।
पाहन पिगरे, तरु नए, मोहे खग मृग नाग॥
मोहे जीव जेते ते ते सब ब्रज भयौ लौलीन।
एक लली वृषभानु की जिनि उलटि किये आधीन॥
चितवति अटक्यौ रूप में लज्जा धरी उतारि।
'चत्रुभुज' प्रभु चित चोरिके जाइ अटके कुंज मंझारि॥

(३०८) (राग धनाश्री)

मनमोहन मूरति नैननि में गडी।
लोचन पिय के पारधी हो तीछन होय कमान।
बंक विलोकनि चित बसी घट घूमत धाए प्रान॥
लोग कहन लाग्यो कछू हो मैं न तज्यौ मुख मौन।
हियो चाहत हिय सों मिल्यौ, भुज चाहै चतुर्भुज हौन॥

(३०९) (राग धनाश्री)

माई ? मेरो माधौ सों मन मान्यौ।
अपनो तन औ कमल नैन को एक ठौर लै सान्यौ॥
एक गोविंदचंद के कारन बैरु सबनि सों ठान्यौ॥
लोक–लाज कुल–कानि सवैतजि मैं अप न्योत घर आन्यौ॥
अब कैसे विलगु होई मेरी सजनी ! दूध मिल्यौ जैसे पान्यौ।
'चत्रुभुज' प्रभु मिलि हों गिरिधर सों पहिले की पहिचान्यौं॥

(३१०) (राग ईमन)

सखी ! नंदकौ नंदन सॉवरो मेरौ चित चोरै जाइ री !
रूप अनूप दिखाइके सखि ! गयो है अचानक आइ री ! ॥
टेढी चलनि मधुर चंचल गति, टेढे नैननि चाइ री।
टेढोई कछु व्है रहै सखी ! मधुरे बेनु बजाइ री॥
कानन कुंडल मोर मुकुट सिंख ! सोभा वरनि न जाइ री।
'चत्रुभुज' प्रभु प्रान कौ प्यारौ, सब रसिकनि कौ राइ री॥

(३११) राग-बिलावल

धीरज हे री माई बड़ो धन।
चिन्ता तज हरि चितवन कीजे, प्रभु करे सो सही रे॥
काम क्रोध लोभ मोह, मद रैंन, दिना दुःखदाई।

जो कछु ले देख नंदनंदन, मिटे न को चतुराई॥
सेवा स्मरण में चित लावो, चरण कमल पद पाई।
'चतुर्भुजदास' श्री गोकुल के वासी, श्री वल्लभ लीला गाई।

(३१२)

तरन की कहाँ चली तरुनि (सूर्य) अतापे से ।
दरन में दुके सिंह चरनन में चेंटे से॥
ऐसो मो तन मन आनन्दनाँ।
दास 'चतुर्भुज' प्रभु सब सुखनिधि, गिरिधर विरह निकंदनाँ॥
रूपासक्ति

(३१३) (राग विलावल)

माई री आजु औरु काल्हि औरु प्रति छिनु औंर हिं औरु
देखिये रसिक गिरिराजधरन।
नित प्रति नव छबि बरनें सो कौन कवि
नित हीं सिंगारु बागे बरन बरन॥
स्याम तन अंग अंग मोहत कोटि अनंग
उपजी सोभा तंरग विश्व के मनु हरन।
'चत्रुभुज' प्रभु कौ रूप सुधा नैनपुट
पान कीजै जीजै रहिये सदाई सरन॥

(३१४) (राग धनाश्री)

वैभव मूरति मैं जब निहारी।
खंजन कमल कुंरग कोटि सत ताही छिनु रारे जू वारी॥
बिद्रुम अरु बंधूक बिंब सत कोटि त्याग करि जिय में बिचारी।
दास्यो दामिनि कुंद कोटि सत दूरि किये रुचि गर्ब टारी॥
तिल प्रसून सत कोटि मधुप सत कोटि हीन पारे मानु म़ारी।
धनुषकोटि सत मदनकोटि सतकोटि चंद्र न्यौछावरि उतारी॥
को गावै को परमिति पावै कहाँक लगु कहिए बिस्तारी।
दास 'चतुर्भुज' प्रभुगिरिधरके अंगअंग सोभा अमी सिंधु बारी॥

(३१५) (राग धनाश्री)

गोपाल कौ मुखारबिंद जिय में बिचारों।
कोटि भानु कोटि चंद्र मदन कोटि वारों॥

कमल नैन चारु बैन मधुर हास सोहै।
बंकट अवलोकनि पर जुबती सब मोहै॥
धर्म, अर्थ काम मोक्ष सब सुख के दाता।
'चत्रुभुज' प्रभु गोवर्द्धनधर गोकुल के त्राता॥

(३१६) (राग धनाश्री)

गोपाल कौ मुखारबिंद देखि न अघाई।
तन मन त्रै ताप तिमिर निरखतहि नसाई।
सरस सर सरोज सुधा नैननि भरि पाई।
सुख समुद्र सोभा मो पें कही न जाई॥
धरम करम लोक–लाज सुत पति तंजि आई।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर मैं जाच्यों मेरी माई॥

(३१७) (राग सारंग)

बलिहारी हौं चारु कपोलनु की।
छिनुछिनुमें प्रतिबिंब अधिक छबि झलकनि कुंडल लोलनु की॥
बदन सरोज निकट कुंचित कच भाँति मधुप के टोलनु की।
दास्यौ दसन कहनि हसि के कछु अति मृदु मीठे बोलनु की॥
मृगमद तिलक भृकुटि बिच राजनि सिर चंद्रिका अमोलनु की।
'चत्रुर्भुज' प्रभु गिरिधर सुख बरसत चितवनि नैन सलोलनु की॥

(३१८) (राग सारंग)

नीकी बनिक गिरिधरलाल की।
सहज सु माँझ हरत हँसि सरबसु चितवनि नैन बिसाल की॥
लटपटि पाग तिलक मृगमद रुचि अनुपम भृकुटी भाल की।
कुंडल कल प्रतिबिंब कपोलनि उर राजनि बनमाल की।
कोटि काम बिथकित छबि निरखत सुंदर स्याम तमाल की।
'चत्रुर्भुज' दास गडी उर में छबि मोहन मदन गोपाल की॥

(३१९) (राग सारंग)

सुभगसिंगार निरखि मोहनको दर्पनलैकर पियहिं दिखावत।
आपुन नेंकु निहारहु बलिगई आजुकी छबि कछु कहत न आवत॥
भूषन बसन रहेठनि ठाउँठाउँ अंग–अंग सोभा चितहिं चुरावत।
बार–बार पुलकित तन सुंदरि फूलनि रचिरचि पाग बनावत॥

अंचर फेरि करति न्योंछावरि तन मन अति अभिलाखु बढावत।
चत्रुभुज प्रभु गिरिधरकौ रूपरसपिबत ननयन पुट तृपतिन पावत॥

(३२०) (राग नट)

लाडिले ललित लाल वारी हो वारी हौं आजु की या बानक पर।
तिपेची पाग टेढी सोहति स्याम धारीकुलह सूल फूलनु भरी सुमर॥
भूषन बसन और कहों ठौर ठौर बंक बिलोकनि बेनु लेनि कर।
'चत्रुभुज' प्रभु उर नैननु सींचि सिरावत रूप सुधा रस लालनु गोवर्द्धनधर॥

(३२१) (राग कानरौ)

आजु सखी गिरिधरन लाल सिर पाग लपेटा भली रही फबि।
टेढी भाँति रुचिर भृकुटी पर देखत कोटिक काम गए दबि।
बंदन भुरकि छिरकि केसरि-पुट एकचंद्रिकालगि अद्भुत छबि।
कुंचित केस सुदेस कमल पर मनि मै कुंडल तेज छिप्यो रबि।
बर अवतंस कपोल नासिका चारु चिबुक कहा कहों और छबि।
'चत्रुभुज' प्रभु रसरासि रसिककी बानक बरनैको ऐसौ कवि॥

(३२२) (राग कानरौ)

पाग सोहै लटपटी गुलाब के फूल कुलह भरे।
भृकुटी बिलास हास कुंडल कपोलझाँई कोटिकमनमथ मन हरे॥
कुंचित केस सुदेस तिलक रुचिर माल उर माल मोतिनु की बीच अपेष करे।
'चतुभुजदास' प्रभुगिरिधर ऐसीबिधि देखिठाढे मुरली अधर धरे॥

(३२३) (राग बिलावल)

आजु गोपाल-छबि अधिक बनी।
जरकसी पाग केसरिया बागौ उर राजत गिरिधर कें मनी।
सूथन लाल छपैरी सोहै अरु सौधें सों भींजी तनी॥
'चत्रुभुज' लाल गिरिधर की कबि पै छबि जात गनी॥

(३२४) (राग आसावरी)

देखौ माई सुंदरता कौ पुंज।
अंग अंग प्रति अमृत माधुरी देखि मदन भयो लुंज॥
नख सिख सुभग सिंगार बन्यौ है सोभा मनि गन रुंज।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल सिर लाल टिपारौ गुंज॥

(३२५) **(राग सारंग)**

मदन मोहन आजु नट भेष किएँ।
काछी कॉछ पीतपट बाँधे उर गज मोतिनि हार हिएँ॥
कुंडल लोल कपोल झलसले मृगमद तिलक सुभाल दिएँ।
मोरपच्छ वन घातु विचित्रित ब्रज लरिकनि कों संग लिएँ॥
सप्तरंध सुर वेनु बजावत अधरामृत रस आप पिएँ।
'चतुर्भुज' के प्रभुस्यामसुंदरकों देखि मधुरमुख ब्रज सबहि जिएँ॥

(३२६) **(राग सारंग)**

मनमोहन पगिया आज की।
बाँधे पेंच सॅवारे सॉवरे अति सुंदर बड साज की॥
कहि न सकल शृंगार हार के अरु गुंजा बनमाल की।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरनलाल छबि नीकी नैन बिसाल की॥

(३२७) **(राग मलार)**

सखी री ठाढे हैं नॅद-नंदन।
कदम डोर कौ छतना बनायौ करत केलि गिरिधरन॥
पियरे बसन पहिरें अति सुंदर मोतिनि माल गरे ढरन।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर जू की बानिक देखत हें द्रग भरन॥

(३२८) **(राग आसावरी)**

तूँ देखि सुता वृषभान की।
मृगनैनी सुंदरि सोभा निधि अंग अंग अद्भुत ठान की।
गौर बरन में कांति बदन की सरद चंद उनमान की।
विश्व मोहिनी बाल दसा में कटि केहरि सु बंधान की॥
बिधि की सृष्टि न होइ मानहुँ इह बानक औरे बान की।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर लाइक इह प्रगट जोटि समान की॥

(३२९) **(राग धनाश्री)**

आजु तन बसन औररसी चटक।
सोभा देत सरस सुंदरि इह चलनि हंस गज लटक॥
स्याम सरोज नैन तेरे षट्पद पियो प रस गटक।
तृषित भए अंग अंग फूलनि मन गई बिरह की खटक॥
कुंज भवन तें चली निडर तजि लोक-लाज की अटक।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर नागर सों लै बन रति रन झटक॥

(३३०) (राग जैतश्री)

नैन कुरंगी रति रस माते फिरत तरल अनियारे।
नवल किसोर श्याम घन तन बन, पाए हैं नव निधि बारे॥
नाना बरन भए सुख पोखे स्याम सेत रतनारे।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन कृपा रंग रँगि रचि रुचिर सँबारे॥

(३३१) (राग सारंग)

तो कों री स्याम कंचुकी सोहै।
लहँगा पीत रँगमगी सारी उपमा कों ह्याँ को है॥
चिबुक बिंदु बर खुँभी नैन अंजन धरि कें अब जोहै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नागर की चितै चतुरि मन मोहै॥

(३३२) (राग कल्याण)

सहज उरज पर छूटि रही लट।
कनकलतातेंउतरि भुबंगिनि अमृतपान मानोंकरति कनकघट॥
चितवनिचारुसोहे देखेत्रैलोकमोहे चिबुकबिदु वर अधर निकट।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन रँगीरंग अतिविचित्र गृहकुंज जमुन तट॥

(३३३) (राग सारंग)

कहि धों कुँवरि कहाँ ते आई।
को है ऐसी हितू हमारी जिन तूँ साजि सिंगार पठाई॥
खेलति हुती नंद द्वारे पें तब जसोमति दै सैन बुलाई।
निकसी भवन ते लै गडुआ कर अरघ दैन आतुर उठि धाई॥
अपने सुत के अंग परस करि मो कों नव सारी पहिराई।
राई लोंन उतारि दहों दिसि अति सनेह लै कंठ लगाई॥
जनन सीधु सुता पें लै करि तब इह बात वृषभान सुनाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन जानि करु इहजोरी सबहिन मनमाई॥

(३३४) (राग सारंग)

सारंग नैनी सारंग गावै।
तनसुख सारी पहरि झीनी अति मधुर मधुर सुर बीन बजावै॥
अंजन नैन आँजि बिंदुली दै सैन बेन दृढ़ बान चलावै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलालकें चितअतिरति अंतर उपजावैं॥

(३३५) (राग केदारो)

वेनी सुंदर स्याम बुही री।
राजतिरुचिर सीस प्यारी कें चंपक और जुही री॥
नखसिख लों पहरावत मूषन दै वीरी मुख ही है (री)।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल कें सुख की रासि गही है (री) ॥

(३३६) (राग बिलावल)

आजु सिगारु निरखि स्यामाकौ नीकौबनौ स्याम मन भावत॥
यहछबि तनही लिखायौ चाहत करगहिके नखचंद दिखावत॥
मुख जोरें प्रतिबिंब विराजत निरखि निरखि मन में मुसिकावत।
'चतुर्भुज' प्रभुगिरिधर श्रीराधा अरसपरस दोउ रीझि रिझावत॥

(३३७) (राग मलार)

आजु माई पीतांबर फहरावत।
स्यामा स्याम अधिक छबि लागत साँवरे गोरे गात॥
कुंडल लोल कपोल विराजत लाल पाग सरसात।
'चत्रभुज' प्रभु की बानिक निरखत सोभा बरनी न जात॥

(३३८) (राग विलावल)

कुसुम–सेज मथि करत सिंगार।
प्यारी पियहिं फुलेल लगावत कोमल कर सुरझावत बार॥
चंदनघिसि अँग मज्जनकीनों जमुना–जल–झारी भरतडारत धार॥
न्हाइ बहोरि अँगोछि अंग कों सरस बसन पहिरावत टार॥
पीत पिछोरी बाँधि फेंट कसि तापर कटि किंकिनि झनकार।
फेंटापीत सीसपर बाँध्यों कसि दुहुँदिसि लटकतअलक परे घुँघरार
दोऊ पग नूपुर धुनि बाजति कंठ गोप, मनि मुक्ता हार।
बाजूबंद जटित कर पहुँची पुष्पनि माल बनी सुभ सार॥
कुसुमकलीनि कौ मौर बनायौ आई मालिन लै कर थार
'चत्रभुज' स्यामसुंदर–मुख निरखत पदरज पाइ रह्यो ढँढियार॥

(३३९) (राग सारंग)

नवलनिकुंज प्रानप्यारी सँग बिहरत सुरत–केलि रस उठत झकोरें।
सीतलपवन सुगंध संचरित बैठे दोउ दिऐं भाल चंदन की खोरे॥

कालिंदी बहत निकट ताकौ अति निर्मल जल छिरकत कुंजन में चहुँ ओरें।
'चत्रुभुज' स्याम तमाल पर लपटी कनकवेलि मानों रतिरन चढह्यो प्रेम रंग रस बोरें॥

(३४०) (राग केदारो)

बैठे लाल कुंज–महल में पिया–सँग करत बिहार।
रुचिर पल्लव कुसुमनि सैया रची, तापर बैठे दोऊ जन विलसत. निरखि मोहे रति मार॥
हँसत परस्पर करल कलोले गावत मधुर मुरली सुर तारि।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर रसलंपट तैसीये सोहै राधा सकुमारि॥

(३४१) (राग सारंग)

बिहरत कुंज–भवन में माधौ राधा नदी जमुना के तीर।
त्रिविध समीर सुबन धन वरसत चंदन चरचत नीर॥
हंस चकोर कोकिला बोलत तहाँ भँवरनि की भीर।
पीत बसन बनमाला राजति स्रवननि झलकत हीर॥
ज्यों गजराज फिरत गजगवनी मत्त भए रनधीर।
'चतुर्भुजदास' विलास वृंदावन मदनमोहन बल–वीर॥

(३४२) (राग भूपाली)

विरहत लाल बिहारी दोऊ श्री जमुना के तीरें–तीरें
त्रिविध समीर सुबन धन बरसन अंसनि पर भुज भीरें–भीरें॥
केकी कच पीताबंर ओढें कुंडल छवि नग हीरें–हीरें।
मुरली–धुनि सुनि धाई ब्रज–जुवती आपुनहें हरि नीरें–नीरें॥
मानों मत्त गजराज विराजत धरनि धरत पग धीरें–धीरें।
'चत्रुभुजदास' आनँद सब निरखत लोचन है अति सीरें–सीरें॥

(३४३) (राग केदारौ)

स्यामाजू देह–दसा तन भूली।
सेज न सोवति आजु स्याम संग प्रेम–हिंडोले झूली॥
मदनमोहन–मुख कमल देखिके अंग अंनगन फूली।
'चत्रुभुजदास' प्रभु नींवी–बंद खोल्यो द्वै फोंदा मखतूली॥

(३४४) **(राग केदारौ)**

सुभग सुहाग भरी मानों प्यारी चंपे की--सी माल।
उरधरें कुंवररसिकगिरिधर पिय नव बर सुंदरी रगमगी बाल॥
त्रिबिधतापहरन अजानुबाहुपर तिनमें लटकिरही रस बिसाल।
'चत्रुभुज' अलिगावे सुजस रसमातीश्रीराधिका सुखकेलि सुखरसाल॥

(३४५) **(राग भैरव)**

संगम–रस–रंग भरी रसिकं नवल नायिका।
अँग–अँग प्रति सुभग चिन्ह प्रीतम सों मान्यों मैन
घूमत जुगनैन चपल रूप गुननि लायिका॥
कुम्हिलानों मुख सुदेस, ग्रथित भए सिथिल केस,
नवजीवन नवल वेस, चितवनि सुख–दायिका॥
'चत्रुभुज' प्रभु रीझे देखि, हरषि–हरषि उर लावत
गिरिवरधर मन भावत, गजगत पिक वायिका॥

(३४६) **(राग सारंग)**

बैठे हरि नवनिकुंज में जाइ।
चंपौ फूल्यौ, फूल्यौ निवारो, नव गुलाब अरु जाइ॥
फूल्यौ नव रस फूल्यौ कुंज सब फूले राधा–राइ।
'चत्रुभुज' प्रभु कहें यह सुख नाहीं तीनि भवन ही माँइ॥

(३४७) **(राग केदार)**

पौढिये परे गिरिधरन राइ।
नवल नागरि कुँवरि राधिका सुहथ सेज राखी बनाइ॥
नाना विधि के कुसुम मनोहर सोंधे वर वीरी बनाइ।
साजि सिंगार सबै ब्रज–सुंदरि अंग–अंग लावन्य बहुत भाइ॥
अद्‌भुत रीति देखि मनमोहन आतुर व्है पगु धर्‌यौ धाइ।
'चत्रुभुजदास' प्रभु गोवर्द्धनधर लै रसिकिनि भेंटी उर लाइ॥

(३४८) **(राग केदार)**

पौढे हरि राधिका के संग।
नव किसोर रु नव किसोरी गौर साँवल अंग॥
कुसुम–सेज सुगंध सीतल रतन जटित प्रजंग।
दसन खंडित बदलि बीरी भरे रति रस–रंग॥

उपजि 'चत्रुभुजदास' दुहुँ दिसि प्रेम–सिंधु–तरंग।
रसिकिनी वर रसिक गिरिधर जीति मुदित अनंग॥

(३४६) (राग बिलावल)

आवति भोर भयें कुंजभवन तें कहुँ–कहुँ अरुझे कुसुम केस में।
रति–रस–रंग भीनी सोहै सारी तन झीनी,
भूषन अटपटे अंग–अंग छबि देखियत सुदेस में॥
चोप तें चोप भई, विरहज ताप गई,
सरद–चंद नहिं गनति लेस में।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर–संग निसि जागी
जुबति सिरोमनि घोष देस में॥

(३५०) (राग टोडी)

बहुत प्रसंन भए पिय, प्यारी नें टोडी रागु बैनु धरि गायो।
सुर–संगीत–बंधान मधुर मुख ऐसौ कछु अद्‌भुत भेद जनायो॥
नाना तरंग उपजि नाना बिधि प्रति छिनु और में और बजायो।
'चत्रुभुजदास' स्वामिनी गुन–निधि रसिक–राइ गिरिधरन रिझायो॥

(३५१) (राग केदारौं)

आजु अधिक तन ओप अलक छूटें फूली सी आई।
जानति हौं बरयनि सुख बितई कुंज भवन देखियत नैन निकाई॥
कंचुकी के बंद छूटे मोतिनि की माल टूटी अरु कपोलनि पीक कहाँ तें धौं लाई।
'चत्रुभुज' गिरिधर प्यारे भेटी जानी मैं तेरी बात पाई॥

(३५२) (राग विभास)

प्रात समै नव कुंज द्वार है ललिता ललित बजायो बीना।
पौढें सुने श्याम स्यामा दोउ दंपति छबि अति प्रवीन प्रवीना॥
रस–भरी रसिक रसिकंनी प्यारी कोक–कला नवीन प्रवीना।
'चत्रुभुजदास' निरखि दंपति–छबि तनमनधन न्यौछावर कीना॥

(३५३) (राग बिलावल)

पिय कें महल तें उठि चली प्यारी।
अति स्रम सिथिल अंग जब देखे बसन केस कारे लट भारी॥
ललितादिक सखी देखि हियहरषित सेजसुखदकर फेर सम्हारी।
'दास चतुर्भुज' प्रभु निरखें श्याम स्यामा मुख तन मन धन कीन्हों तन वारी॥

(३५४) (राग भैरव)

भोर भंए लाल ! धरत पग डगमगात।
पाग लटपटी सीस विराजत नैंन उनींदे झपि–झपि जात॥
अधरनि अंजन पीक कपोलनि नख के चिन्ह देखियतु गात।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन! भलेजू तुमआए मोहिं दिखावन प्रात॥

(३५५) (राग ललित)

सब निसि जागर नागर लाल ललोंहे नैंन।
आए उठि प्रात अरसात डगमगात दरस परस सुख दैंन॥
हौं जो कहति बात स्यामगात है दै अंग–अंग खौररसबभए सैंन।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर अटपटे बैन
लटपटी पाग सीस घूमत धूमरि रंग रबन ! भवन नेंकु कीजिए सैंन॥

(३५६) (राग बिलावल)

लटपटी पाग तें पहिचाने।
खुले बंद और अरुन विराजत आभूषन अरु उर विरुझाने॥
जटित क्रीट पर मोर–चंद्र रवि रहे सिथिल अलक कुँभलाने।
द्रग विलास, रस रास–रंगजुत विवस भए पलटाने॥
करनफूल झूमक गजमोती विथुरि रहे लपटाने।
अधर–माधुरी मत्त दुहूं दिसि कुंवरि कुवर लिपटाने॥
बेनी बाल बानिक नखसित पहिं उदित जलज अरुझाने।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नीकें हँसि देखि मुसकि मुसकाने॥

(३५७) (राग भैरव)

गिरिधर लाल के रंग भरी।
सौंधे सने वसन भूषन तन कुंज के द्वार खरी॥
छूटे केस सुदेस सगवगे केसरी आड ढरी।
अधर कपोल चितेरी चतुर पिय रचना रुचिर करी॥
अरुन नैन घूमत आलस जुत पलु–पलु घरी–घरी।
'चत्रुभुज' प्रभु–सँग सब निसि जागी पलहु न पलक परी॥

(३५८) (राग विभास)

आलस उनींदे नैना घूमत आवत मूंदे
अधिक नीके लागत अरुन बरन।

जागे हो सुंदर स्याम ! रजनी के चार्‍यौं जाम
नेंकु हु न पाए मानों पलक परन॥
अधरनि रंग–रेख उरहिं चित्र–बिसेख
सिथिल अंग डगमगत चरन।
'चत्रुभुज' प्रभु कहां बसन पलटि आए ?
सांचीये कहो गिरिराजधरन !

(३५६) (राग भैरव)

भोर तमचुर बोले दीनों जु दरसना।
आतुर व्है उठि धाए डगत चरन आए
आलस में नैन बैन अटपटी रसना॥
संध्या जु कहि सिधारे वचन जिय में संभारे
सकुचिकें मंद–मंद प्रगटित दसना।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन ! सिधारो तहां
जहां रति–रंग–रस पलटाए बसना॥

(३६०) (राग भैरव)

घूमत मत्त गज ज्यों चलत डगमगे।
बतियां कहत सैन, न मुख आवत बैन,
आलस उनींदे नैन सोभित रगमगे॥
नागर नंदकिसोर नीकी छबि आए भोर
अंग–अंग रति–रंग चिन्ह जगमगे।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नहिं लागे पल चारि जाम
जीति काम रहे जु टगमगे॥

(३६१) (राग भैरव)

सोभित सुभग लटपटी पाग।
भीने रसिक प्रिया–अनुराग॥
कुमकुम अलक तिलक सेंदुर छबि, अरुन नयन घूमत निसि–जाग।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर नीके लागत आलस–बस सब अंग–बिभाग॥

(३६२) (राग भैरव)

आजु छबि देत नैना आलस भरे रगमगे।
रयनि पलक न परी, सुरत–रन जय करी

भोर आए लाल धरत पग डगमगे॥
तन और गति भाँति, कहत न कही जॉति
कांति अद्भुत सकल अंग–अंग जगमगे।
'चतुर्भुजदास' प्रभु गिरिधरन भली करी
पलटि आए बसन सोंधे मिले सगबगे॥

(३६३) (राग विभास)

भलें आए भोर गिरिवरधरन !
अरुन नैन जंभात आलस धरत डगमग चरन॥
पाग लटपटी पलटि परे पट अटपटे आभरन।
सिथिल–अंग–अंग देखियतु हें निसा के जागरन॥
नव त्रिया–संग पहर चास्यौं पल न पाए परन।
'चत्रुभुज' प्रभु जीति रति रन कियौ रतिपति सरन॥

(३६४) (राग बिलावल)

आजु अरुन नैन (नि) छबि नीकी।
रति रस–रंग निरखि उपमा कों कोटि मदन–द्युति फीकी॥
रंजित तिलक भृकुटि कपोल तामें सोभा अधर मसी की।
डगमगात अलसात भोर उठि दरसु दियौ सु भली की॥
'चत्रुभुज' प्रभु सुजान सुधर ! किन उर–रचना रची नीकी।
गिरिधर लाल ! कहां पलटे पट ? सोई ब कहो धों जी की॥

(३६५) (बिलावल)

मोहनं घूमत रतनारे नैंन, सकुचत कछु कहत बैन,
सैननि ही सैंन उतरु देत नंद–दुलारे।
भूषन सब अटपटे अरु सीस पाग लटपटी,
रति–रन लई झटपटी, अति सुभट स्याम प्यारे !॥
भौंन कियो कुंज सदन, भोर आए जीति मदन,
पलटि परे बसन, नहिंनें अजहूं सँभारे।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर ! अब दर्पनु लै देखिये
सेंदुर कौ तिलकु, सुभग अधर मसि सों कारे॥

(३६६) (राग रामकली)

लाल ! रसमसे नैन आजु निसि जागे।

अति बिसाल अररांत अरुन भए रति- न के रंग पागे॥
सुंदर स्याम सुभगता प्रगटी अंग अंग नख–छत दागे।
मानहुं कोपि निदरि सनमुख सर साथ भए अरि भागे॥
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन अधिक छबि बंदन भृकुटी लागे।
मानहुं मन्मथ–चाप भेट धरि रह्यो जोरि कर आगे॥

(३६७) (राग-सारंग)

चन्दन पहेरें गोवर्धनराय।
संग बनी वृषभाननन्दिनी, शोभा बरनी न जाय॥
विविध भाँत के हार मनोहर, चन्दन तिलक बनाय ।
ब्रज नारीं मिल मंगल गावें, जो जाके मनभाय॥
सब सामग्री भोग धरावें, मेवा बहोत मंगाये।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर मुख निरखत, कोटि अनंग लजाये।

(३६८) (राग-टोड़ी)

नवल निकुंज महल रस पुंजही, रसिकाय टोड़ी स्वर गायो।
मिट गयो मान नवल नागरि को, अंगहि अंग अनंग जगायो॥
दौरी आय कंठ लपटानी, ऐही तान मेरे मन भायो।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनागर नट, यह बिधि गाढ़ो मान मनायो॥

(३६९) (राग-बिलावल)

आज मोहन छबि अधिक बनी।
जरकसी पाग, केसरियो वागो और राजत गिरधर कें मनी॥
सूथन लाल सुनहरी सोभित और सोंधेसों भी जीतनी॥
'चत्रुभुज' गिरिधरनलाल, छबि का पैजात गनी।

(३७०) (राग-ललित)

अति विचित्र फूलन की चौखंडी, बैठे जहाँ रसिक गिरिधारी।
रायबेली, मालती, माधवी, चंपक, बकुल, गुलाब, निवारी॥
जाई, जुई, केवरो, केतकी, सौरभ सरस परम रुचिकारी।
पाटल जुई रोवती महली, बोरसरी रुचि रूचिर सँवारी॥
नव ररुरंग परस्पर उपजत, बनी संग राधा सुकुमारी।
'चतुर्भुजदास' कुसुम शैया पर, करत विलास दोऊ पिय-प्यारी॥

(३७१) (राग-कान्हरो)

रंगमहल पोढ़े पिय प्यारी।
कसंना कसे कनक पर्यंक को, संग सोभित वृषभान दुलारी॥
सोर सम्हार उठाय सहेली, सुभग सेज सुंदर सुखकारी।
'चतुर्भुज' प्रभु दंपति सुख विलसत, तन मन प्राण कीनो बलिहारी॥

(३७२) (राग-पंचम)

जागत जागत रैंनि बिहानी।
कहि गये सांझ आवन मेरे गृह, बसे अनत अनतैं रति मानी।
उर बिच नखछत प्रकट देखियत, यह सोभा अतिबानी।
भाल महावर अधरन अंजन, पीक कपोल निशानी॥
निशिमग जोगवत बीती मोको, आये प्रात यह जानी।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सिधारो, तहाँ जो तुम्हरें मन सानी॥

(३७३) (राग-आसावरी)

श्याम सों नेह कबहूं न कीजे।
मनश्याम तनश्याम श्यामही सलोने टेड़ी प्रीतिकरे तन छीजे॥
श्याम पाग सिर छबिसों सांवरे की, आली सर्वस अपनो दीजे।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सों हिलमिल, अधर सुधा रस पीजे॥

(३७४)

आजु बने मनमोहन री नव चंदन को तन लेप कीये।
अंग सोभित अति सुंदर, केसर खोर विचित्र दीये॥
लाल टिपारो सीस रह्यौ फबि, राजत है बनमाल हीए।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सुखसागर, निरखिनिरखि ब्रजभानु जीए॥

(३७५) (राग-सारंग)

जमुना जल भर आवहीं मागर मांझ
सहज ही मोहे मिले हैं बाकी जोवती।
नंदकुंवर रसिक गिरिधरन खूब
अधरन में बानक अति सोभती॥
बहोत ही दिनन की प्रीत आवतजात
मांखन खात जबही बिलोवती।
'चतुर्भुजदास' प्रभु खुले केसन खड़े
उपरना पीत रंग कोरकी धोवती॥

(३७६) (राग वसंत)

केसरि छीट रुचिर बंदन–रज स्याम सुभग तन सोहै।
बीच–बीच चोबा लपटानो उपमा कों ह्याँ को है॥
इह सुख नव बसंत के औसर राधा नागरि जोहै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन लाल छबि कोटिक मनमथ मोहै॥

(३७७) (राग वसंत)

नव वंसत आगम नव नागरि
नव नागर गिरिधर सँग खेलति।
चोवा, चंदन, अगर, कुमकुमा,
ताकि–ताकि पिय सनमुख मेलति॥
पुहुप अंजुरि जब भरत मनोहर
बदन ढाँपि अंचर घत पेलति॥
'चत्रुभुज' प्रभु रस–रास रसिक कों
रिझै–रिझै सुख–सागर झेलति॥

(३७८) (राग वंसत)

मदन गोपाल लाल सब गुन–निधि खेलत बंसत निकुंज देस।
जुवतीजन समूह सोभित तहाँ पहिरे भूषन नाना भेस॥
मुकुलित नव द्रुम पल्लव मंडल, कोकिल कल कूजत बिसेस।
फूली नव मालती मनोहर मधुप गुंजार करत मझेस॥
बाजत ताल, मृदंग, झाँझि, डफ, आवज, बीना किन्नरेस।
नृत्तत गुनी अनेक गुन भरे गावत जिय व्है–व्है आवेस॥
कुमकुम रँग भरि–भरि पिचकाँई ताकत नैन रु सीस केस।
रंग–रंग सोभा अँग–अँग प्रति, निरखि बिरह भाज्यौ बिदेस॥
जानत नहीं जाम घरी बीतत अति आनंद ह्रदै प्रबेस।
'दासचतुर्भुज' प्रभु सब सुखनिधि गिरिवरधर ब्रज–जुवनरेस॥

(३७९) (राग सारंग)

देखि सखी नव बंसत आगम नीके लागत नव फूल पल्लव नए।
नाना बरन सकल वृंदावन जहाँ तहाँ द्रुम बेलनि मए॥
प्रगट्यो रति–पति आई सुखद रितु, हेम–काल कलह जु गए।
गुंजत मधुप, कीर, पिक कूजत, ठौर–ठौर आनंद ठए॥

जमुना–तट रमनीक परम रुचि कुंज बितान ललित छए।
तहाँ साजि नटवर नँद नंदन बैठि रहे तेरे जु लए॥
जानि सु समय 'चतुर्भुज' प्रभु आतुर संदेस तोकों है दए।
बेगिचलहि मिलि गिरधर पियसँग, सबसुखकरहि बिलास जए॥

(३८०) (राग ललित)

आगम भयौ नई ऋतु को सखि जब तें बिदा भयौ हेमंत।
विरहिनि के भागन तें सजनी ! आवत है चल्यौ री ! बंसत॥
मन सिहाय पर तीय भलें भरि भाँवरि लिया ताहि कौ कंत।
'चतुर्भुज' प्रभु पिय तारी बजात या जाडे कौ आयो अंत।

(३८१) (राग देवगंधार)

आजु हरि होरी खेलन आए।
मागध लोक सकल सदननि के घर–घर आनँद गाए॥
सरस बसंत हँसत वृन्दावन ऋतु–प्रभाव जनाए।
छुटि गई लोक–लाज मरजादा फिरत सबै ही धाए।
ज्ञान, ध्यान, जप, तप सब बिसरे, आसन मुनिगन छाँडे ।
आगम निगमनि के पंडित सब सिव विरंचि बौराए॥
शृंग, बेत्र, मुरली, महुवरि धुनि नीके सब्द सुनाए।
सुनि–सुनि चोंकि परीं नवनागरी सो भेद नहीं जगाए॥
राधा जू सुंदर वर प्यारौ नीकौ मतौ उपायो।
कुंज महल तें निकसि द्वार व्है मोतिनि चौक पुरायो।
सकल सुंगधि घोरि कर लीनें सखियनि पास मँगाए
चहुँ दिसि तें छूटो पिचकाई अद्भुत खेल मचाए॥
चोवा चंदन बुका बंदन अबीर गुलाल उडाए।
मगन भए डोलन जित–तित हो गिनत न राजा राए॥
दीनी सैन सखी ललिता कों लालन गहि पकराए।
हँसी ओट सारी दै सब मिलि तांडव नाच नचाएँ॥
पाई बात बात मनमोहन राधा उर लपटाए।
तिहि औसर वृषभानु–नन्दिनी अधर सुधारस प्याए॥
बरसत कुसुम करत सुर जै जै मेघ निसान बजाए।
नीकौ बिहार नंद–नंदन कौ 'दास चतुर्भुज' गाए॥

(३८२) (राग बसंत)

खेलत बसंत गिरिधरन लाल।
जूथनि जुरि आई ब्रज की बाल॥
कुंकुम भरि भरि भुरकत गुलाल। लै लपटावत चोवा रसाल॥
चंदन चरचत दुहूँ गाल। रही पाग ढरकि अरध भाल॥
मुरली धुनि रिझवत गोपाल। भयो मनमथ लखि आलपाल॥
गोवर्धनधर रसिकराइ। 'चत्रभुजदास' बलिहारी जाइ॥

(३८३) (राग जैतश्री)

खेलत फागु संग मिलि दोऊ आनँद भरि पिय प्यारी हो।
नवल किसोर रसिक नँदनंदन इत वृषभानु–दुलारी हो॥
नव रितुराज लता द्रुम फूले वरन वरन छबि न्यारी हो।
गुंजत मधुप कीर पिक कुंजतस्रवन सुनत सुखकारी हो॥
तैसेइ सुभग गौर साँबल तन बनी जोट इक सारी हो।
कमल नैन पर बूका भेलत हँसि सकुचति सुकुमारी हो॥
भरि अरगजा कनक पिचकाई धाई सब व्रजनारी हो।
भरत भाँवते मदन गोपालै बढ्यौ रंग अति भारी हो॥
बहुर्यो मिलि दस पाँच सखी गोविंद भरे अँकबारी हो।
चोवा चंदन अगर कुंकुमा दियो सीस तें ढारी हो॥
प्रेम मगन मोहन मुख निरखत तन सब दसा बिसारी हो।
'चत्रभुज' प्रभु सुर नर मुनि मोहे गुन–निधान गिरधारी हो॥

(३८४) (राग नट)

खेलत गिरिधरन लाल, परम मुदित ग्वाल बाल,
इत बनी ब्रज नारी नवल, होरी बोलना॥
गावत नट नारायण रागु, जुवती जन खेलत फागु
गारी देति गोप कुँवरि करि कलोलना॥
बीना वेनु तान तरंग, बाजत मधुर मृदंग,
भेरी महुवरि डफ झाँखि ढोलना।
केसरि कुमकुमा सुरंग, पिचकाई भरि भरि तरंग,
ब्रज जुवतीनि छिरकि, मिलि ब्रज टोलना॥
मोहन कों पकरि लेहु, फगुवा मिस फेंट गेहु,
माँडत मुख रोरी घोरि करि कपोलना॥

'चत्रुभुज' प्रभु फगुवा दियो, राधाजू को भायो कियो,
पीताबंर खेंचि लियो करि झँझोरना॥

(३८५) (राग बसंत)

गावत चली बसंत बँधावन नंदराइ–दरबार।
वानिक बनि चली चोख मोख सों ब्रजजन सब इकसार॥
अँगिया लाल लसत तन सारी झूमक उर नव हार।
बेनी ग्रथति डुलति नितंबिनी कहा कहुँ बडडे बार॥
मृगमद आडी बडेडी अँखियाँ आँजन अंजन पूरि।
प्रफुलित बदन हँसत दुलरावत मोहन जीवन मूरि॥
पद जेहरि, केहरि कटि किंकिनी रह्यौ विथकि सुनि मार।
घोष घोष प्रति गलिन गलिन प्रति बिछुवन के झंकार॥
कंचन कुंभ सीस पर लीनें मदन सिंधु तें भरिकें।
ढाँपें हैं पीत बसननि जतन करि मौर मंजरी धरिकें॥
अबीर गुलाल अरगजा सौंधौ विधि न जाति विस्तारी।
मैन–सैन ज्यों नारि देन कों कमलनि कमलनि थारी॥
पहुँची जाइ सिंघ पौरी जब विपुल जुवति–समुदाई।
निज मंदिर तें निकसि जसोमति सन्मुख आगें आई॥
भई भीर भीतरे भवन में जहाँ ब्रजराज–किसोर।
भरति भाँवते प्रानपिया कों घेरि फेरि चहुँ ओर॥
ब्रजरानी मुसिकानी मुरिकें पकरन भई जब कर की।
लै सब सखी लखी कछु बतियनि मिसही मिस उत सरकी॥
कुकुम रँग सों भरि पिचकॉई छिरकत जे सुकुमारी।
बरजत छींटे जात द्रगनि में धनि वे पोंछनवारी॥
बदन चंद सो चोबा मथिके नील–कंज लपटावै।
अलकें सिथिलित पास सिथिलानी वेई फुनि बाँधि बनावै॥
भरत निसंक भरी अंकवारी भुजनि बीचु भुज मेलें।
उन्मद ग्वारि बदत नहिं काहू झेल खेल रस खेलें॥
कियौ रँगमग्यौ ललित त्रिभंगी भयो ग्वालिनि मन भायौ।
टक झक में चुकि एक ही विरियाँ लालन कंठ लगायौ॥
ताल सुइंग लिए श्रीदामा पहुँचे आइ सहाई।
हलधर सुभल तोक मधुमंगल अपने भीर बुलाई॥

खेल मच्यौ मने खचित चौक में कहत कहा कहि आवै।
'चतुर्भुज' प्रभु श्रीगिरिधरनागर कों देखत ही बनि आवै॥

(३८६) (राग गौरी)

गोरी गौरी गुजरिया भोरी–सी तें मोहे नँदलाल।
खेलन मेंहोहो जु मंत्र पढि डार्‍यौ तें जु गुलाल॥
तेरी सौधे सनी अँगिया उरजनि पर अरु कटि लँहगा लाल।
उघरि जात कबहूँक चलत जेहरि ढिंग एडी लाल॥
सकल तियनि में राजत है ज्यों मोतियनि में लाल।
'दास चतुर्भुज' को प्रभु मोह्यौ अधर–सुधा रँग लाल॥

(३८७) (राग धमार गौरी)

गोकुल–राइ–कुमार कमल दल लोचना।
ठाढे सिंघ द्वार कमल दल लोचना॥
नख सिख भेषु बनाइ कमल
सुंदरता अति चारु कमल ॥
रसमसे नँदकिसोर निकसे खेलन फागु।
मधुर वेनु कर में घरें गावत गौरी रागु॥
आए ब्रज के चौहटे लियें सख सब संग।
नव भूषन नव बसन सोहत साँवल अंग॥
उपमा कही न जाइ सुदर मुख आनंद।
बालक वृंद नच्छत्र प्रगटे पूरन चंद॥
बाजत ताल मृदंग आवज डफ मुख चंग।
मदन भेरि सुर बीन गिडि गिडी झाँझि उपंग॥
स्रवन सुनत चली दौरि गृह–गृह तें ब्रजनारि।
तिनमें परम सुदेस श्रीराधा अति सुकुमारि॥
बने चीर आभरन सब तन बिबिध सिंगार।
कंकन अरु किंकिनी उर गज–मोतिन हार॥
नक वेसरि ताटंक कंठसिरी अनुभाँति।
चौकी बनी जराइ दूरि करत रवि–कांति॥
सेंदुर तिलक तँबोल खुटिला बने विरेख।
सोहति केसरि–आड कुमकुम काजर रेख॥
प्रफुलित आनँद भयो चितवत हरिमुख ओर।

मनु बिधु प्रीतम मिल्यौ सादर चारु चकोर।
नैन रूप रस भरे बारंबार निहारि।
गावहिं झूमकि चेत बीच सुहाई गारि॥
चोबा चंदन अगर सौंधे सजे अनेक।
पिचकॉई कर लिये धाई एक तें एक॥
अति भरि बाँधी फेंटि सुरंग अबीर गुलाल।
दुहुँ दिसि माच्यौ खेल इत गोपी उत ग्वाल॥
नर नारिन परी चोख छिरकत तकि तकि छेह।
भरत भई अति भीर मानहुँ बरसत मेह॥
वरन वरन भए बसन अंगनि रहे लपटाइ।
क्रीडा रस बस मगन आनँद उर न समाइ॥
ब्रज–जुवतिनु मतौ मत्यौ मुख न जनावति बैन।
पकरि नेंकु घनस्याम मिलवति इत उत सैन॥
जुवति–जूथ दल पेलि दीने सखा भजाइ।
कहति कहा मतु करहि, अब तो कछु न सुहाइ॥
कहत न बाँचे कछु बचन गारि अरु गीत।
झुंडनि जुरि चहुँ ओर जाइ गह्यौ पट पीत॥
नवल कुँवरि जानियें अब जो मुरली लेहु।
राधाहि करहु जुहार हमारौ फगुवा देहु॥
फगुवा देहु न देहु छाँडहु ओर पाइ।
हमारौ भायो करहु छूटौ माथौ नाइ॥
प्यारी पिय सों कह्यौ अति मीठे मृदु बोल।
काजर आँजे नैन रोरी हरद कपोल॥
मुख माँडे छबि भई कोटि मदन सिरताज।
त्रिभुवन सोभग लिए मनों ब्याह आयो आजु॥
कीरति अविचल रही जुग जुग इहि ब्रजबास।
श्रीगिरिधर कौ जसु गान नित करहु 'चतुर्भुजदास'॥

(३८८) (राग बिलावल)

नंदसुवन ब्रज भॉवते फागु संग मिलि खेलौ जु।
आजु हमें तुम्हें जानवी जो जुवती दल पेलौ जू॥
रसिक सिरोमनि सॉवरे स्रवन सुनत उठि धाए जू।

बलि समेत सब टेरिके घर घर तें सखा बुलाए जू॥
विविध भाँति बाजे बजे ताल मृदंग उपंग।
दुंदुभि डिमडिम झालरी आवज कर मुख चंग॥
उतते नवसत साजिके निकसीं सकल ब्रजनारी।
झुंडनि आईं झूमिकें गावति मीठी गारी॥
केसरि कुमकुम घोरिकें भाजन भरि–भरि लाई।
छूटी सनमुख स्याम के करनि कनक पिचकाँई॥
उतहिं समाज गोपाल सों भरे महारस खेलें।
चोवा मृगमद सानिके जुवति–जूथ पर मेलें॥
सोभित बालक वृंद में हरि हलधर की जोरी।
उतहिं चतुर चंद्रावली श्रीराधा गुननिधि गोरी॥
'सोइबदों' ललिता कहै, पग न पिछोंडे डारै।
इत नायक उत नायिका को जीतै को हारै॥
टिके परस्पर देखिये खेल मच्यौ अति भारी।
इत उत अटक न मानहीं चौंक परी नर नारी॥
जुवति जूथ दल पेलिकें छेंकिं सुबल गहि लीनों।
कंठ उपरना मेलिकें खेंचि आप बस कीनों॥
सुनहु सुबल साँची कहो तो भले पावौ।
छलबल बानिक बानिके नेंकु हलधर कों पकरावौ॥
बहुरि सिमटि सब सुंदरी संकरषन मिलि घेरे।
फेंट गही चंद्रावली उलटि सखनि तन हेरे॥
सौंधे नावें सीस तें एक काजर लै कर आई।
मोहन मुरि हँसि यो कह्यौ देखो दाऊ आँखि अँजाई॥
फिरि प्यारी नागरि राधिका तके स्याम जहाँ ठाढे।
और सखीनि की ओट है गहे औचकाँ गाढे॥
देखि सखी चहुँ ओर तें दौरि आइ लपटानी।
अंग–अंग बहु रंग सों करति बात मनमानी॥
केसरि सों पट बोरिके श्रीमुख माँडयौ रोरी।
तारी हाथ बजाइ कै बोलत हो हो होरी॥
परसि परम सुख ऊपज्यौ भयौ तियन मन भायौ।
सादर चारु चकोर ज्यों मनु विधु पीतम पायौ॥
नागरि अति अनुराग सों मुदित बरन तन हेरे।

सर्वसु वारै वारनें इक अंचल हरि पर फेरै॥
मगन भई ब्रज–सुंदरी नव रस भीज्यों हियौ।
उत अग्रज इत स्याम पै दुहुँ दिसि फगुवा लियौ॥
'चतुर्भुज' प्रभु संग खेलहीं इहि विधि गोपकुमारी।
सब व्रज छायो प्रेम सों सुखसागर गिरिधारी॥

(३८६) **(राग बसंत)**

प्रथम बसंत पंचमी पूजत कनक कलस कामिनी उर फूले।
आयो मदन महीप सैन लै अंब डार पर कोकिल झूले॥
ठौर ठौर द्रुम बेली फूली कालिंदी के कूले।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर सँग विहरत स्यामा स्याम सम तूले॥

(३६०) **(राग बसंत)**

फूली द्रुम–बेली भाँति भाँति।
नव बसंत सोभा कहि न जाति॥
देखें रंग रंग हरखें नैन।
स्रवननि पोषत पिक मधुप बैन॥
सुखदाइक नासा नव आमोद।
रसना मधु स्वादनि बहु विनोद॥
कुसुमनि कुसुमाकर सहाइ।
त्रिविधि समीर हिरदौ सिगइ॥
'दास चतुर्भुज' प्रभु गोपाल।
बन बिलसत गिरिधरन लाल॥

(३६१) **(राग बिहागरौ)**

बरसाने की ग्वालिनी खेलति फागु बसन्ता हो।
सकन मानें काहु की मात पिता सुत कंता हो॥
चंद्रभगा चंद्रावली मधि नायक राजति राधा हो।
सहज सुरूप सुहावनो सो सिंधु अगाधा हो॥
सकल साज सँग लै चली आई बट संकेत हो।
पठई सखी एक आपुनी नंद–कुँवर के हेत हो॥
चली सुचतुर–सिरोमनि और खेलन कों रस फागा हो।
ररिक कुँवरि वृषभान की तुम सों अति अनुरागा हो॥

रामकृष्ण हँसि यो कह्यौ सुनो हो सखा श्रीदामा हो।
हम पे आई सबे जुरी और तिन में अति भामा हो॥
बेगि चलौ सब साज लै दिखावौ अपने हाथा हो।
जैसें बहोरि न आवहीं छाँडि आपुने साथा हो॥
अनत अवीर गुलाल लै देह निसान पुराई हो।
वोहोत कलस सौंधे भरे कुंकुमा भरि पिचकाई हो॥
दल बादल ज्यों देखि कें सन्मुख आई धाई हो।
मेघ घटा ज्यों बरखे ही हो अद्भुत खेल मचाई हो॥
कमलनि लै लै नवला सी कुसुम गेंद करि मारी हो।
मुरि भाजे बलि मोहना हो हो कहें ब्रजनारी हो॥
चंद्रावली जु बल बहे स्याम गहे श्री स्यामा हो।
सखा गए सब भाजिके लियो है छिडाइ दमामा हो॥
संकरषन सौंधे भरे स्याम भरे सुकुमारी हो।
आनन सीस सँवारि के भेष बनायो नारी हो॥
रस बस भई ब्रज सुंदरी लीला कहिय न जाई हो।
'चतुर्भुज' प्रभु इन बस कियो गिरि गोवर्धनराई हो॥

(३६२) (राग धमार गौरी)

ब्रज में अति रस बढ्यौ हो हो, होरी खेलत नंदकिसोर।
गौरी राग अलापत गावत, मधुर मधुर मुरली कल घोर॥
कटि पियरो पट फेंट बनी छबि, सीस चन्द्रिका मोर।
मन्मथ मान हरत हँसि चितवनि, चपल नैन की कोर॥
बालक वृंद स्याम-सँग सोभित, उत सँग हैं ब्रज नारि।
विविध सिंगार सजी मिलि झुंडनि, देति भाँवती गारि॥
देखि समाज सखा मोहन कौ, धाईं मनहिं हुलासि।
तिनमें मुख्य राधिका नागरि, सकल सुखनि की रासि॥
दुंदुभि झाँझ मुरज डफ बाजें, मृदंग उपंग अरु तार।
दुहुँ दिसि माच्यौ खेल परस्पर, घोष-राय दरबार॥
चोबा साखि अरगजा चंदन, केसर सुरंग मिलाइ।
तकि-तकि तरुनि गोपालहि छिरकति, करनि कनक-पिचकाँइ॥
उत मन मुदित लिए कर सौंधो, सखनि सहित बलबीर।
जुवति-कंदबनि ऊपर बरखत, सुरंग गुलाल अबीर॥

जुबति जूथ पेलि सन्मुख है, मोहन पकरे जाइ।
काजर नैन ऑजि प्रीतम कें, मुरली लई छिडाइ॥
पिय प्यारी की जोटी बनाई, अँचल सों पट जोरि।
सैंनहि सैंन परसि कर सों कर, हँसति सबै मुख मोरि॥
मगन भई तन की सुधि बिसरी, हृदै गह्यौ अनुराग।
यह सुख तीन लोक में नाहीं, गोपिनि कौ बड भाग॥
चीर हार अँग अंगनि भीजे, कीच सँची ब्रज–खोरि।
मानहुँ प्रेम–समुद्र अधिक, चल उमगि चल्यौ मिति फोरि॥
'चत्रुभुजदास' विलास फाग कौ, कहत न बरन्यौ जाइ।
लीला ललित देव–गन माहे, गिरि गोवर्धन–राइ॥

(३६३) (राग कानरौ)

वृन्दावन में खेलत होरी।
बालक बृंद स्याम सँग सोभित जुवति–जूथ मधि राधा गोरी॥
नवसत साजि सकल ब्रजसुंदरी गावति आवति गारि सुहाई।
नैन कटाच्छ हरत हरिनी मन गिरिधर पिय कौ चित्त चुराई॥
ताल, पखावज, बंस–धुनि बाजत बिच मुरली–धुनि सहज सुहाई।
ढोल, निसान, दुंदुभी बाजत मदन भेरि, आनक सहनाई॥
रुंज मुरज अरु झाँझ झालरी बाजत कर कठताल उपंगा।
अरु पिनाक किन्नरी श्रीमंडल मधुर जंत्र बाजत मुख चंगा॥
कबहुँक दोऊ मिलि गावत। मानहुँ कोकिल स्वर मोर।
सप्त सुरनि मोहे स्थिर चर वरु अरु माहे रतिपति जोर॥
चोबा चंदन और अरगजा अरु छिरकति कुंकुम कौ नीर
बरखत मेघ मानों चहुँ दिसि तें सोभित है तन स्याम सरीर॥
जुवति–जूथ वृषभानु–नन्दिनी गिरिधर पिय लीन्हे हैं घेरि।
हाथनि सोहति कनक पिचकोंई छिरकति कमल बदन पर हेरि।।
श्रीराधा सैननि दै आई चंद्रावलि पकरे भरि कोरि।
नैंन आँजि मुख मर्दन कीनों तारी देति हँसति मुख मोरि।।
तब प्यारी मोहन गहि लीनें श्रीराधा कर सर्वस कीनें।
ब्रजबनिता मन पूरन कीनों प्रेम सलिल उर अंतर भीनें।।
इहि विधि प्रिय–सँग खलत होरी नाचति गावति हँसति किसोरी।
गिरिधरलाल की लीला गावै 'चत्रुभुजदास' चरन–रज पावै।।

(३६४) (राग अडानौ)

मैया मोहन खयल पस्यौ । (री)
सुरँग गुलाल अबीर कुमकुमा लै करि मानों मेरौ बदन भस्यौ।। (री)
ज्यों ज्यों सतराति त्यों त्यों नियरें आवत झटकि अंचलु, मोहन अंक भस्यौ। (री)
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर की ढिंग यों चूँमि कपोलनि लै जु उगार धस्यौ ।। (री)

(३६५) (राग गौरी)

ललना खेलै फागु बन्यौ ब्रज–सखा लिये नँद–नंदना।
बंसी धरें कहत हो हो होरी जुवती–जन मन–फंदना।।
घर–घर तें सुंदरि चलीं देखन आनँद फंदना।
साजें ताल मृदंग झाँझ डफ गावत गीत सुछंदना।।
ठाई ठाई अगरु अबीर लिये कर ठाई ठाई बूका बंदना।
हाथनि धरें कनक पिचकाँई छिरकत चोबा चंदना।।
क्रीडारस–बस भये मगन सब मान न मन आनंदना।
'दास चतुर्भुज' प्रभ सब सुख–निधि गिरिधर–बिरह–निकंदना।।

(३६६) (राग वंसत)

मदन मोहन प्यारी राधा–सँग खेलत सरस वंसत।
अबीर गुलाल कुंकुमा केसरि तकि तकि के छिरकति हसंत।।
ताल मृदंग मुरज डफ बाजत गावत राग हिंडोल सुहंत।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरनलाल छबि देखि थकित मनमथ लजंत।।

(३६७) (राग गौरी)

मदनमोहन गव्हर वन खेलत सरस धमारि।
सेंदुर भरि बहु माँगें आई सब ब्रज नारि।।
फूले लता चहूँदिसि वरन वरन बहु भाँति।
भयो हुलास जंतुनि कोकिल कल काँति।।
गूँजत मधुप सुहाए स्रवन सुनत सुख होइ।
वैभव निरखि नयो रँग उठि धाए सब कोइ।।
बाजत ताल परवावज आवज डफ मुख चंग।
वेनु मधुर धुनि कूजत स्यामसुंदर ता संग।।
निर्तत नाना नानी सुघर सुदेस।
बोलत हो हो होरी भयो अधिक आवेस।।
चोबा अगर अरगजा केसरि मिली सुरंग।
छिरकति भर पिचकाई सोभित छींटे अंग।।

तब सखी सात पाँच मिलि मोहन पकरे जाइ।
सोंधौ छाँटि नैननि में मुरली लई छिड़ाइ।।
एक सखी कर में लै फिरति मंडली जोरि।
तिनहिं मध्य ब्रजपति गति लेत चतुर चित चोरि।।
परसत कर उर चोली बोली ठोली डारि।
मंद मंद मुसिकाइ के देति परस्पर गारि।।
पट खेंचति मुख मांडति अति प्रमुदित ब्रजबाल।
आलिंगन में बोलत फगुवा देहो गोपाल।।
रहत चीर द्रुम द्रुम प्रति टूटत मोतिनि हार।
भयौ मगन मन सब कौ तन की तजी सँभार।।
अंचलु हरि पर फेरति सर्वसु डारति वारि।
प्रेम मगन रस बस भई स्याम मनोहर नारि।।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन संग बाढयौ प्रेम अपार।
देववधू अति लालच चाहति घोष–विहार।।

(३६८) (राग गौरी)

मन कौ मोहना बोलै हो होरी।
हलधर मिले मनोहर जोरी।।
नवल फागु नव खेल नयो रँग। नव समाज नव साज नयो री।।
बाजत ताल मृदंग झाँझि डफ गौरी राग मुरली धुनि थोरी।
गावत चेत गोप बालक–संग किलकत फिरत घोष की खोरी।।
स्त्रवन सुनत सब गोकुल नारी सजि सिंगारु भई इक ठोरी।।
निकसीं धाइ मुदित मंदिर तें जुवती–जूथ–सँग राधा गोरी।।
एक अगरजा अगर लिएँ कर एक जु लई बहुत घसि रोरी।।
एक ताकि पिचकॉइनि छिरकति एक भरति कर कनक कटोरी।।
इत बंदन अबीर बलि मोहन लै कुकुंम करतूरी घोरी।
खेलत अति रस भए मगन मन नवल किसोर रू नवल किसोरी।
उत रंग रँगी कंचुकी सारी इत हि नील अरू पीत पिछोरी।
इत सब रँगी पाग सिर सोभित उत कुसुमावलि अरू कच–डोरी।।
फगुवा–मिस परसत सुंदर अँग गहि पट झकझोरा झकझोरी।
कहत न बनै दुहूँधा की छबि जानों त्रिभुवन–सौभगता चोरी।।
मगन भई तन की सुधि भूली समुझि न परै कौन की कोरी।
अंतर तें अनुराग प्रगट भयौ प्रेम सिंधु मरजादा तोरी।

सुर विमान सब कौतुक भूले
लीला ललित देखि सुख सोरी।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरन चंद–छबि चितवति वधू–समूह चकोरी।।

(३६६) (राग सारंग)

मुरली अधर धरें नँद–नंदन हो हो होरी बोलत जू।
लिएँ सखा सँग देत फूल सब ब्रज की पौरिनि डोलत जू।।
पहिरें बसन अनेक तन नील पीत सेत राते जू।
सुरंग गुलाल अबीर फेंट भरि फिरत महा रस माते जू।।
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ अरु बाँसुरी सुर थोरे जू।
गावत सरस धमारिनि यों रँगु रसिक–मंडली जोरें जू।।
स्रावन सुनत सब गोकुल नारी घर–घर तें उठि दौरी जू।
सजे समाज सबै जुरि आई नंदराइ की पौरी जू।।
पहिरें दिव्य कटाव की चोली नौतन झूमक सारी जू।
गुनियन कसे झूमकें गावति परम भाँवती गारी जू।।
विविध–सिंगार बने सब ही अँग भूषन नावें सीस जू।
मुखहिं तँबोल नैन भरि काजर सैंदुर माँग सुदेस जू।।
कंठसिरी मखतूल मोति अरु उर गज मोतिनि हार जू।
कर कंकन, कटि किंकिनी की छबि पग नूपुर झनकार जू।।
अलकावली आड मृगमद की बरनि सकै मुख भाँति जू।
खुटिला खुंभी रुचिर नक बेसरि दूरि करत रवि कांति जू।।
तिनमें मुख्य राधिका नागरि सबहिनि ऊपर सोहै जू।
कुटि कटाच्छ फागु कै औसरू मोहन कौ मन मोहै जू।।
कनक बरन वृषभान–किसोरी नवघन नंद किसोर जू।।
बालवृंद नच्छित्र माँहि यह छबि लागत गोविंद जू।
ग्वालिनि मानों चकोर की सेना हेरत पूरन चंद जू।।
छूटीं तरूनी महामद माती कुल अकुस नहिं माने जू।
सोंधौ बहुत गोपाललाल कें नैननि तकि तकि जाने जू।
उत बूका बंदन अंजुलि भरि सन्मुख ग्वाल उडावत जू।
दुहूँ दिसि मॉच्यौ खेल परस्पर दुहूँ दिसि भरत भरावत जू।।
नरनारिनि कें चोंख परी जिय कमलनि मार मचाई जू।

रूप सुमट रनधीर मनों कोउ इत उत ओट न जाई जू।।
　　जुवति–जूथ दल पेलि संमुख व्है जित तित सखा भजाए जू।
　　जाई गह्यौ पट स्यामसुंदर कौ जीत के बाजे बजाए जू।।
कोउ करतें मुरली लै भाजी कोउ मनि मोतिनि माला जू।।
　　चंद्रावली चोवा चंदन लै सीस स्याम के भावति जू।
　　ललिता विसाखा नैन आँजि मुख रोरी हरद लगावति जू।।
कोउ प्यारी कौ अँचरू लै के पिय के पट सों जोरै जू।
कोउ कहैं करौ जुहार लडैती कों कोउ कहै मुख मोरै जू।।
　　मगन भई तन की सुधि बिसरी उर आनँद न समाई जू।
　　आलिंगन दै श्रीमुख चितवनि मनहुँ रंक निधि पाई जू।।
बरन बरन भए बमन भाजि रँग कीच धरनि पर बाढी जू।
टूटे हार टूटी अलकावलि फटी कंचुकी गाढी जू।।
　　सब सुख जीति चली ब्रजजुवती गई जमुना के कूलनि जू।
　　लीला ललित निहारि देवगन बरखन लागे फूलनि जू।।
इहि विधि खेलै फागु संग मिलि इत गोविंद उत गोरी जू।
'चत्रभुजदास' रहौ ब्रज अविचल राधा माधौ–जोरी जू।।

(४००)　　　　　　(राग बसंत)

रतन जटित पिचकाँइनि कर लियें भरत लाल कों भावै।
चोवा चंदन अगर कुंकुमा विविध बूँद बरखावै।।
कबहुँकु कटि पट बाँधि निसंक व्है लै नवलासी धावें।
मानों सरद चंद्रमा प्रगटयौ ब्रज मंडल तिमिर नसावै।।
उडत गुलाल परस्पर आँधी रहयौ गगन लों छाई।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरनलाल छबि मो पै बरनी न जाई।।

(४०१)　　　　　　(राग विभास)

होरी खेलत ब्रज नंद–लडैतौ लाल।
चोवा चंदन और अरगजा कंठ सोहत मोतिन माल।।
कोउ गुलाल केसरि भरि लीयें कोऊ कंचन–थाल।
इक नाचत, इक मृदंग बजावत, गावत गीत रसाल।।
छिपत फिरत कुंजन महियाँ हा हा करति भई बेहाल।
'चतुर्भुज' प्रभु गरें लगाइ कई रीझि दई उर–माल।।

(४०२) (राग बिलावल)

होरी खेलत साँवरो ग्वाल बाल संग कीन्हे जू।
मृगमद चोवा केसरि सों पिचकाई भरि लीन्हे जू।।
छिरकत भरत आनँद सों प्यारी अति रस भीने जू।
तन मन धन सब वारहीं 'चत्रुभुज' प्रभु बस कीन्हे जू।।

(४०३) (राग गौरी)

हो हो होरी वेनु–मधि गावै स्याम।
निर्तत जुवती समूह संग मिलि मधुर ताल विस्राम।।
फूले लता नवल गहवर बन बरन बरन बहु भाँति।
कुलकन सुक पिक आनँद भरे मनोहर मधुपनि–पाँति।।
बाजत चंग उपंग मुरज डफ झालरि झाँझ मृदंग।
मदन गोपाल लेत गति सहज लजावत कोटि अनंग।।
कुंकुम बदन चंदन अरगजा सुग़ंधताई ।
बीच बीच तकि तकि तानत नैननि पचिकाई।।
फाटत चीर रहत द्रुम द्रुम प्रति टूटन मोतिनि हार।
क्रीडा रस बस भए मगन मन तनकी तजी सँभार।।
'दास चतुर्भुज' प्रभु चहुँ दिसि जुरि बोलत व रागु।
सुख समूह गोवर्धन–धर रच्यौ रँगीलौ फागु।।

(४०४) (राग गौरी)

हो हो हो हो हो हो होरी। सुंरदस्याम राधिका गोरी।।
राजत परम मनोहर जोरी।नंदनँदन वृषभान किसोरी।।
डफ औ ताल मृदंग बजावत । गौरी राग सरस सुर गावत।।
नवसत सजि सकल ब्रजनारी। प्रभुदित देति भाँवती गारी।।
झुंडनि जुरि चहुँ दिसि तें दौरी। मदनगोपाल गहे भरि कौरी।।
सौधों बहोत सीस तें नायौ। रंग बसन कीन्हौ मन भायौ।।
नवल अबीर सखा सँग लीनैं। फिरत उडावत फैटन दीनैं।।
नैन आँजि रोरी मुख माँडत। प्रेम, आलिंगन दै दै छाँडत।।
हरि मृदु भुजा कंठ लै लावति। अंतर कौ अनुराग जनावति।।
मगन भई तन सुधि न सँवारति। प्राननाथ पर सर्वसु वारति।।
'चत्रुभुज' प्रभु पिय सब सुखसागर। सुर नर मोहे गिरधर नागर।।

बसंत

(४०५) (राग-मालकौंस)

नई री ऋतु को आगम भयो सजनी जबतें बिदा भयो हेमंत।
विरनि के भागन तें सजनी, आवत चल्यो है बसन्त।।
तन साहोय त्रयि चले भाव भर, चल्यो ताहि को कंत।
'चतुर्भुजदास' प्रभु पियतारी बजावत, या जाड़े कौ आयो अंत।।

(४०६) (राग-मालकौंस)

लहेंगा हर्‌यो छबि देत।
चूरी हरी तेरे बाँह बिराजति, सोहत बंगरी सेत।।
हरी अंगीयां उर राज रही हैं, तातें भयो स्याम संग हेत।
'चतुर्भुज प्रभु तें मन हर्‌यो प्यारी तातें बट संकेत।।

(४०७) (राग-मालकौंस)

प्रीतम को कछु दोष नहीं री, यह तो शीत बैरी हमारो।
प्रीतम को मग जोवन कारन, राखन नहिं देत बदन उघारो।।
शीतल पवन अकेली जान कै, पठवत आलस करन संघारो।
व्रत को तजी आक्रत निंद्रासों, मिलि हगत रै ठगारो।।
कहूँगी जनाय जाय आज मिले मोहे प्रीतम प्यारो।
'चतुर्भुज' प्रभु नेह होली जाड़े की कीजे मुँह कारो।।

(४०८) (राग-बसंत)

दोऊ नवललाल खेलति बसंत।
आनन्दकन्द गिरिधरन चंद ।।
नवल कुंज द्रुम नवल मोर। नवल कुसुम सम मधुप सोर।।
नव नीलाम्बर नवल पीत पट। नवल अधर मुख बीरी दंत।
नवरस केसरि नवल अरगजा नवल गुलाल अबरि उड़ंत ।।
नवल गुपाल नवल ब्रज जुवती, नवल परसपर सुख अनंत।
'चतुर्भुजदास' दास दृग लोभी, नवल रूप गिरिधन चंद।।

(४०९) (राग-सारंग)

हो हो होरी, हो हो होरी, हो हो होरी खेले गिरिधरलाल।
नंद महरि कौ कुंवर लाड़िलो, संग सोभित ब्रज की बाल।। होरी।।

केसरि भरें कनक पिचकारी, छूटत बूँद रसाल।
किलकि किलकि कें सन्मुख धावत, डारत मुठी गुलाल।।होरी।।
नैन नचावत, मधुरे गावत, चटक-मटक गति खयाल।
चोवा चन्दन मुख लपटावत, हँसत दै दै कर ताल ।।होरी।।
एक ब्रज नागरि, गुन की आगरि, लपटी स्याम तमाल।
नैना आँजि और मुख मांडे, बेंदी दीनी भाल।।होरी।।
रस में मगन भये मिलि खेलत, तन की कछु न संभार।
'चतुर्भुज' प्रभु सिर मुकुट बिराजत, गल वैजयन्ती माल ।।होरी।।

(४१०) (राग-गोरी)

खेलत फागु बन्यो ललना, ब्रज सखा लिए नंद-नंदना।
बंसी धरे कहेत हो होरी, युवती जन मन फंदना।।
घर-घर तें सुंदर नारि चलि देखन, बन आनन्द कंदना
बाजे ताल मृदंग, झाँझ, डफ, गावे गीत सुछंदना।।
हाँ हाँ अगर अबीर लिये कर, हाँ हाँ बूका वंदना।
हाथन धरे कनक पिचकारी, छिरकत चोवा चंदना।।
क्रीड़ा रस सब भये मगन मन, मानत हृदय आनंदना।।
दास 'चतुर्भुज' प्रभु सुखनिधि, गिरिधर विहरनिकंदना।।

(४११) (राग देवगंधार)

मनमोहन अद्‌भुत ढोल बनी।
तुम झूलौ हौं हरषि झुलाऊँ वृंदावन-चंद धनी।।
परम विचित्र रच्यौ विश्वकर्मा हीरालाल मनी।
'चतुर्भुजदास' लाल गिरिधर-छबि का पै जात गनी।।

(४१२) (राग रामकली)

चित्त में जमुना निसि दिन जो राखौ।
भक्ति कौवस कृपा करत हैं सर्वदा
एसौ जमुना जी कौ है जु साखौ।।
जाहि मुख सें 'जमुना !' नाम उच्चरे
संग कीजे अब जाइ ताकौ।
'चतुर्भुदास' अब कहत हैं सबनि सों
तातें 'जमुने!' यह नाम भाखौ ।।

(४१३) (राग रामकली)

प्रानपति हिरत जमुना–फूले।
लुब्ध मकरंद के बस भए भ्रमर जे रवि–उदै देखि मानों कमल फूले।।
करत गुंजार मुरली के, साँवरो– ब्रजवधू सुनत तन–सुधि जो भूले।
'चतुर्भुजदास' जमुना–प्रेम–सिंधु में लाल गिरिधरन अब निरखि झूले।।

(४१४) (राग रामकली)

बार बार जमुने ! गुन–गान कीजै।
यही रसना भजौ नाम रस अमृत भागि जाकौ जोई सोइ लीजै।।
भानु–तनया–दया अति ही करूनामया इनकी करि आस अब सदा जीजै।
'चतुर्भुजदास' कहै सोई पिय–पास रहै
जोई जमुना जी के (सु) रस–भींजै।।

(४१५) (राग रामकली)

हेत करि देत जमुने बास कुंजे।
जहाँ निसि वासर रास में रसिक वर
कहाँ लों बरनिये प्रेम–पुंजे।।
थकित सरिता–नीर थकित व्रजवधू–भीर
कोउ ब न धरत धीर मुरली सुनि रुंजे।
'चत्रुभुजदास' जमुने पद–पंकज जानि
मधुप की नाँइ चित लाइ–लाइ गुंजे।।

(४१६) (राग सारंग)

यह कलि परम सुभ, जन धनि, श्री विट्ठलनाथ–उपासी।
जो प्रगटे ब्रजपति श्री विट्ठल तो सेवक ब्रजवासी।।
व्रज–लीला भूल्यौ चतुरानन बल टोरयौ ब्रजवासी।
अब लों सठ अवगनत अभागे गनत परस्पर हाँसी।।
आत्मा हेत आप भए हैं हित दीपो नर–प्रकासी।
देखियतु लोक–भानु अवलौकिक ज्यों गंगा सरिता–सी।।
घर हरि–दरसन हरि–जसु गावत भक्ति मुक्ति–सी दासी।
वदत न कछू 'चत्रुभुज' वैभव भजनानंद–उपासी।।

श्रीयमुनाजी

(४१७) (राग-भैरव)

जो कोई श्री यमुना नाम संभारे।
ताको दरस परस कोऊ करहीं, वाही को वें तारे।।
या की महिमा बरनि न साके, यम हाहा करि हारे।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन लाल को, नितप्रति बदन निहारे।।

उद्धव-संदेश-पद

(४१८) (राग सारंग)

तुम सों क्यों कहौं ब्रजनाथ।।
मोह को अति गिरा गद्गद् देखि बिरह अनाथ।।
बांधि साहस लिखी पाती धरी मेरे हाथ।
सिथिल भई फिरि फुरी नांही और मुख तें गाथ।।
सुभट वर तुम बिना पिया। तनु दहत मैंन अकाथ।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन रति–पति जीति करहु सनाथ।।

(४१६) (राग सोरठ)

ऊधौजू। कहत न कछू बनै।
हरि–बिछुरें हू कठिन विरह के सहिति वान जितनै।।
उह ब्रज –रीति प्रीति पहिली वन कुंज कुटीर ठनै।
रजधानी में कत भावत हैं ए द्रुम ताल घनै।
पावस रितु के संग–संग मिलि खेलत प्रेम सनै।
भींजत मोहिं जानि बूंदनि पट–ओट किए अपनै।।
घोप–वास रस–रासि औरू सुख नहिं मुख परत गनै।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधरन विना वैभव सब सपनै।।

(४२०) (राग सारंग)

नैननि निर्झर झरत सुमिरि माधौ ! वे पहिली बतियाँ।
नहिं बिसरात निरंतर सींचत विरहानल प्रबल भयौ घतियाँ।।

नवल किसोर स्यामघन सुंदर बेनु–ब्याज बोलीं अधरतियाँ।
रास–विलास विनोद महासुख गान बंधान नृत्य बहु भतियाँ।
संग विहार भवन बन निसिदिन अब संदेश पठवत लिखि पतियाँ ।
'चत्रुभुज' प्रभु गिरिधर–दरसनु बिनु नीर–विमुख जैसे मीन की गतियाँ।।

(४२१) (राग सारंग)

ब्रजजन अति आधीन दुखारे।
कहियो पथिक ! संदेस सुरति करि जहँ हैं नंद–दुलारे।।
गोप गाँइ गोसुत गुवाल सब मलिन देखियतु कारे।
निरभै जानि गोपाल तुमहिं–बिनु विरह दवानल जारे।।
तव इह कृपा नंद–नंदन की गिरि कर धरि जु उबारे।
ते आकुल व्याकुल जु रैनि दिन क्यों बूझिए तिहारे।।
जे गुन सैल–धरन प्यारे के कहाँ लगि परत सँभारे।
'चत्रुभुजदास' प्रभुवे सुमिरत (हीं) नैननि बहत पनारे।।

रक्षाबन्धन

(४२२) (राग सारंग)

राखी बाँधति मात जसोदा, बल और श्री गोपाल कें।
सावन सुदि पून्यौ कौ सुभ दिन, तिलकु करति बिच भाल कें।।
विप्र बुलाइ दई बहु दच्छिना, अरु वारति मुक्तामाल कें।
'चत्रुभुजदास' निरखि मन फूले, गुन गावत गिरिधरलाल कें।।

(४२३) (राग सारंग)

राखी बाँधत गिरिधरलाल।
कनक थार अच्छित भरि कुंकुम, तिलक करत मधि भाल।।
विप्रनि कों दच्छिना बहु दीनी, प्रेम मगन ब्रजबाल।
'चत्रुभुज' प्रभु पर करि न्यौंछावरि, वारि देति मुक्तामाल।।


समीक्षा
एवं
सन्दर्भ
खण्ड

श्रीगुसाईंजी के सेवक चतुर्भुजदास कुंभनदास के बेटा तिनकी वार्ता।।

सो वे कुंभनदासजी श्रीनाथजी के संग खेलते हते सो एक दिन कुंभनदासकुं श्रीगोवर्धननाथजी नें चारभुजा धारिके दर्शन दिये वाही दिन बेटा को जन्म भयो जासूं वा बेटा को नाम चतुर्भुजदास धर्‌यो। ये बात कुंभनदासजी की वार्ता में लिखी है सो वे चतुर्भुजदासजी ११ दिनके भये ताही समय कुंभनदासजी नें श्री गुसाईंजी के पास ले जाय के नाम सुनवाये और चतुर्भुजदास जब ४१ दिन के भये, तब कुंभनदासजी नें श्री गुंसाई जी के पास ले जाय निवेदन करवाये। वा दिनतें चतुर्भुजदास में श्रीनाथजी ने इतनी सामर्थ्य धरी जब इच्छा आवे तब मुग्धबालक होय जाय और इच्छा आवेतो बोलवें चालवे सब अलौकिक बातें करवे लग जाय। जब कुंभनदासजी एकांत में बैठे तब चतुर्भुजदास कुंभनदाससों भगवद्वार्ता क रें और पूछें और पद गावें और जब लौकिक मनुष्य आय जाय तब चतुर्भुजदास मुग्धबालक बन जाय ऐसी सामर्थ्य श्रीनाथजी ने चतुर्भुजदास में धरदीनी सो जब श्रीनाथजी इच्छा करते तब चतुर्भुजदासकुं साथ खेलवेकुं लेजाते और जैसी लीला के दर्शनकरते तैसे पद गावते सो वे चतुर्भुजदास ऐंसे भगवत्कृपापात्र हते।। प्रसंग।।१।।

सो एक दिन श्रीनाथजी एक ब्रजबासी के घर माखनचोरी करवेकुं पधारे और चतुर्भुजदासजी कुं संग ले पधारे और उहां एक ब्रजबासी की बेटी के चतुर्भुजदास नजर आये और श्रीनाथजी तौ नजर नाहीं पड़े और चतुर्भुज्दास पकडाय गये सो बिनने मार खाई। पाछें चतुर्भुजदास श्रीनाथजी के पास गए जब चतुर्भुजदासजी ने कही जो महाराज मोकुंतो आछी मार खवाई, श्रीनाथजीने कही जो तेरे में सामर्थ्य ओछी नहीं हती जब तू क्यों न भाग आयो। सो वे चतुर्भुजदास श्रीनाथजी के अन्तरंग लीलामध्यपाती हते तातें इनकी वार्ता कहा कहिये।। प्रसग।।२।।

और जा दिन चतुर्भुजदासजी कु प्रथम लीला को अनुभव भयो वा दिन ते सर्वव्यापी बैकुण्ठ सम्बन्धी लीला सर्वत्र दर्शवे लगी, सो ये सामर्थ्य इनके भीतर श्रीगोवर्धननाथजी ने कृपा करिके धरी जब कुम्भनदासजीकूं पोढवे के दर्शन होते हते तब कुंभनदासजी कीर्तन गायवे लगे सो पद--

"वे देखो बरत झरोखन दीपक हरि पोढे ऊंची चित्रसारी"

सो इतनी तुक जब कुंभनदास ने गाई तब चतुर्भुजदासजी – गाय उठे–

सुंदर बदन निहारन कारन बहुत यतन राखे कर प्यारी।"

ये सुनिके कुंभनदासजी ने निश्चय कर्यो जो इनकुं श्रीगुसाईंजी की कृपासों सम्पूर्ण अनुभव भयो सो बड़ी कृपा मानके बहोत प्रसन्न भये। जादिनते चतुर्भुजदास कहुं जाते अथवा नहीं जाते अथवा अवार सवार आवते सों कुंभनदासजी कछू कहते नहीं। ऐसो जानते जो श्रीनाथजी के सगं खेलत होयेंगे। सो चतुर्भुजदास ऐसे भगवत्कृपापात्र भगवदीय हुते।। प्रसंग।।३।।

और एक दिन श्रीगोवर्धननाथजीके श्रृंगार के दर्शन चतुर्भुजदासजी ने कीने और श्रीगुंसाईजी आरसी दिखावते हते ता समें चतुर्भुजदासजी ने ये पद गायो –

'सुभग श्रृंगार निरख मोहन को ले दर्पण कर पियहि दिखावें।

आपु न नेक निहारिये बलजाऊं आज की छबि कछू कहत न आवें।। १।।

ता पीछे गोविन्दकुण्ड ऊपर श्रीगुसाईंजी पधारे तब एक वैष्णव नें पूछ्यो जो महाराज चतुर्भुजदासजी आज की छबि कछु बरनिन जावै, ऐसे गायो और आपतो नित्य श्रृंगार करे है और आरसी दिखावें है सो आजके पद को अभिप्राय कछु समझ में नहीं आयो जब श्रीगुसाईंजीने कही सो चतुर्भुजदास सों पूंछियो तब वा वैष्णव ने चतुर्भुजदाससों पूछो जब चतुर्भुजदास जीने और भी पद गायो "सो पद–

"माई री आज और काल और छिनछिन प्रति और और"

ये पद सुनिके वा वैष्णवनें श्रीगुसाँईजी सो पूछ्यो जो भगवतलीला तो नित्य है और सर्वत्र है, जब चतुर्भुजदास जी नें और और क्यों कही तब श्रीगुसाईंजीनें आज्ञाकरी, भगवतलीला में विलक्षणपणो येई है, जो नित्य है क्षण क्षण में नूतन लगत है और लीलास्थ जीवन कूं और लीला के दर्शन करबेवारेन कूं क्षण क्षण नूतन लगत है और नूतन रुचि उपजे है सो गोपालदासजी नें गायो है। चौथे आख्यान में पांचमी तुक –

एक रसना किम कहूं गुण प्रकट विविध विहार।

नित्यलीला नित्य नूतन श्रुति न पामे पार।।

ऐसी भगवतलीला है, ये सुन के वो वैष्णव बहोत प्रसन्न भयो और वे

चतुर्भुजदास ऐंसे कृपापात्र हुते जिनको नित्यलीला अनुभव सर्वत्र होय गयो।। प्रसंग।।४।।

एकदिन श्रीगुंसाईजी श्री गोकुल बिराजते और श्रीगिरिधरजी सों लेके सब बालक श्रीजीद्वार बिराजते हते तब उहां रासधारी आये तब श्रीगोकुलनाथजी नें श्री गिरिधरजी सों पूछंकें परासोली में रास करायो और रास में खूब गान भयों। जब चतुर्भुजदासजीसुं श्रीगोकुलनाथजी नें आज्ञा करी, जो तुम कछु गावो। तब चतुर्भुजदासजी नें कही जो मेरे सुनवेवारे श्रीनाथजी नहीं पधारे हैं जासूं मैं कैसे गाऊं। जब श्रीगोकुलनाथजी ने कही जो श्रीनाथजी अबी पधारेंगे। ये बात श्रीगोकुलनाथजी की सत्य करवे के लियें श्रीनाथजी जागके और श्रीगिरिधरजी कूं जगाय के श्रीनाथजी परासोली पधारे और श्रीगिरिधरजी पधारे और चतुर्भुजदास कूं और श्रीगोकुलनाथजी कूं दर्शन भये और कोईकुं दर्शनभये नहीं, तब श्रीनाथजी के दर्शनकर के चतुर्भुजदासजी गावे लगे। जब अधिक सुख भयो, रातहुं बढ गई और चतुर्भुजदासजी नें गायो सो पद – अद्भुत नट भेख धरे यमुनातट श्यामसुंदर गुण निधान गिरिवर धर रासरंग राचें।। पद दूसरी – "प्यारी ग्रीवाभुज मेल नृत्यत प्रियासुजान"। ऐंसे ऐंसे चतुर्भुजदासजीनें बहुत पद गाये। जब रास भयो तब परम आनंद भयो। फेर श्रीगिरिधरजीनें श्रीनाथजीकु रात के जगे जानके सवारे जगाए नहीं। इतने में श्रीगुसाई जी गोकुल तें पधारे और पूंछी जो कहा समय है, जब श्रीगिरिधरजी नें कही जो श्रीनाथजी जागे नही है। रातकुं रास में जगे हते। जब श्रीगुसाईजी नें कही जो श्रीनाथजी तो सदैव रास करें है और सदैव जगें है। जासू शंखनाद करावो। जब शंखनाद कराय के श्रीनाथजीकुं जगाए, फेर श्रीगोकुलनाथ कुं श्रीगुसाईंजी ने आज्ञा करी, जो ऐसो आग्रह करिके श्रीनाथजीकुं पधरावने नहीं एतो सदैव अपनी इच्छातें रास करत है, जासूं बीनती करिके पधरावने नहीं, वे। चतुर्भुज दासजी ऐंसे कृपापात्र हते के श्रीनाथजी के बिना दूसरे ठिकाने गान नहीं करत हते।। प्रसंग।।५।।

एकदिन श्रीगुसाईंजी ने चतुर्भुजदाससों आज्ञाकरी जो अपछराकुंड ऊपर जायके रामदास भीतरीयाकुं बुलाय लावो और तुम फूल ले आवो तब चतुर्भुजदास जायके रामदासजीकुं बुलायके आप फूल बीनके आवते हते, जब श्रीगोवर्धनपर्वतकी कंदरासूं बाहेर श्रीनाथजी श्रीस्वामिनीजी सहित पधारे और श्रीस्वामिनीजी नें मनमें ये विचार कर्‌यो जो यह लीला कोई जाने नही है इतने में चतुर्भुजदासजी नें दर्शन करिके ये पद गायौ –

''गोवर्धन गिरि सघनकन्दरा रैन निवास कियो पियप्यारी।।''

और दूसरो पद गायो - ''रजनीराज कियो निकुंज नगर की रानी।।''

ये पद सुनके श्रीस्वामिनीजी प्रसन्न भई फेर चतुर्भुजदासजी फूल लेके श्री गुसाईं जी के पास गए। सो वे चतुर्भुजदासजी ऐंसे कृपापात्र हते जो श्रीनाथजी के तथा श्रीस्वामिनीजी के मनकी जानवेवारे भये।।प्रसंग।।६।।

सो चतुर्भुजदासजी की बहू एक दिन श्रीनाथजी के चरणारविन्द में पहुँच गई जब चतुर्भुजदासजी कुं सूतक आयो। सुतक में चतुर्भुजदासजी बनमें बैठके नित्य कीर्तन करते, तब श्रीगोवर्धननाथजी विनके चारों ओर दूर दूर खेलै करते जब श्री गोवर्धननाथजी ने आज्ञा करी, जो चतुर्भुजदास तुम दूसरो विवाह करौ। जब चतुर्भुजदास ने कही जो जात में कन्या नहीं मिले है, जब श्रीनाथजी ने कही जो तुम धरेजा करौ, जब चतुर्भुजदास जी ने धरेजा करयौ। तब श्री गोवर्धननाथजी नित्य चतुर्भुजदासजी सों हाँसी मसकारी करते सो चतुर्भुजदास जी ऐंसे अन्तरंग भगवदीय हते।। प्रसंग।।७।।

एक समय श्री गुसाईं जी परदेस पधारे हते, तब श्रीगिरिधर जी की ऐसी इच्छा भई जो श्रीनाथजीकुं मथुरा में अपने घर पधरावें तौ ठीक, जब श्रीनाथजी की आज्ञा लैके फागन बदी षष्टी के दिन सैन पीछे श्रीनाथजीकुं मथुरा पधराए और फागनवदी ७ के दिन बडो उत्सव मान्यो और जो कछु धरमें हतो सो सर्वस्व अर्पण कर्‍यो और बेटीजी ने एक वीटी घर रखी हती, बेटी जी बालक हते जासूं समझते नहीं हते, सो वीटीहूं श्रीनाथजी नें मांग लीनी कारण, जो श्रीगिरिधरजीनें सर्वस्व अर्पण करवेकी प्रतिज्ञा करहीती, सो प्रतिज्ञा सत्य करिवेके लियें श्रीनाथजी ने वीटी मांगलीनी और नित्य चतुर्भुजदास गिरिराजजी ऊपर बैठके विरह के पद और हिलग के पद गायो करते और श्रीनाथजी नित्य बिनकुं संध्या समें गायन के संग पधारते, दर्शन देते। सो वैशाख सुदि त्रयोदशी के दिन चतुर्भुजदासजी नें ये पद संध्यासमें गायन के संग पधारते दर्शन देते सो वैशाख सुदि त्रयोदशी के दिन चतुर्भुजदास जी नें ये पद संध्यास में गायो ''श्रीगोवर्धनवासी सांवरेलाल तुम बिनरह्यौ न जाय हो'' या पद की छेलीतुक श्रीनाथजी नें पधारतें ही सुनी, तब करुणा व्याकुल भये और मनमें ये विचार कर्‍यौ जो सर्वथा काल इहां पधारूंगा, जासूं भक्तको दुःसह दुःख देख के श्रीनाथजी से रह्यौ न गयो। जब रात्र एक प्रहर रही तब

श्रीनाथजी ने वैशाखसुदि चौदसके दिन श्रीगिरिधरजीकुं आज्ञा करी जो आज गोवर्धनपर्वत ऊपर राजभोग अरोगूगो, जब श्रीगिरिधर जीनें मगंला करायके श्रीनाथजीकुं पधराए और पहेले मनुष्य पठाय कें मन्दिर खासा करायो और श्रीनाथजीकुं पधारते अवार होय गई जासूं राजभोग तथा शयनभोग एकसमय में अरोगे। वा दिनसूं आज दिन पर्यंत नृसिंघचतुर्दशी के दिन श्रीनाथजी दोय समें राजभोग अरोगेंहें।। एकतो नित्य के समें और एक शयन भोगके संग। वे चतुर्भुजदास श्रीनाथजी के ऐसे कृपा पात्र हते जो तिन बिना श्रीनाथजी सों रह्यो न गयो।।प्रसंग।।८।।

एक समय चतुर्भुजदास श्रीगुसाईंजीके संग श्रीगोकुल गए और श्रीनवनीतप्रियाजी के दर्शन करे और बाललीला के तथा पालने के कीर्तन करे और दर्शन करके फेर गोपालपुर आए। जब कुंभनदास नें पूंछ्यौ, जो कहां गयो हतो तब विननें कही श्रीगोकुलगयो हतो। जब कुंभनदासजीनें कही प्रमाण में क्यों जाय पड्यो हतो, तब चतुर्भुजदास नें श्रीगुंसाईजी को पूछी जो प्रमाण प्रकरणकी लीला और प्रमेय प्रकरण की लीला में कितनौ भेद है ? जब श्रीगुंसाईजी नें कही जो भगवदलीला सब एक समान है। कुंभनदासजी कुं किशोर लीला में बहोत आसक्ती है, जासूं ऐंसे बोले। भगवतलीला में भेद समझनो नहीं और श्रीठाकुर जी विशुद्धधर्म आश्रय हैं। एककालावच्छिन्न श्रीप्रभु सर्वत्र सब लीला करते हैं। ये सुनके चतुर्भुजदासजी बहोत प्रसन्न भए। वे चतुर्भुजदास श्रीगुसाईंजी के ऐंसे कृपापात्र हते जिनसूं श्रीगुसाईंजी कछु गुप्त नहीं राखते हते।। प्रसंग।।६।।

और चतुर्भुजदास जी के पाछें चतुर्भुजदास जी के बेटा राघोदास हते सो विनकूं भगवतलीला को अनुभव भयो। जब राघोदासजी ने धमार गाई सो धमार "ए चल जांए जहां हरिक्रीडत गोपिन संगा" ये धमारकी जब दस तुक भई, तब राघोदासकी देह छूटी सो भगवतलीला में प्रवेश भयो। तब राघोदासजीकी बेटीनें डेढतुक धरके धमार पूरी करी। वे चतुर्भुजदास तथा विनके बेटा, विनकी बेटी, वे सब ऐसे कृपा पात्र हते तातें इनकी वार्ता कहां तांई लिखिये प्रसंग।।१०।। वार्ता संपूर्ण।।

- दौ सौ बावन वैष्णव की वार्ता

***

चतुर्भुजदास

श्रीनाथजी की भक्ति, अनन्य सेवा–भावना और कीर्तन के उत्तम पदों की रचना के कारण चतुर्भुजदास गो. विट्ठलनाथजी के अत्यंत कृपापात्र थे। गो. विट्ठलनाथजी ने जब अष्टछाप की स्थापना की तब इन्हें बड़े आदर के साथ उसमें स्थान दिया गया।

चतुर्भुजदास का समस्त जीवन श्रीनाथजी की एकनिष्ठ कीर्तन–सेवा में ही व्यतीत हुआ। सं. १६४२ में जब गो. विट्ठलनाथजी का देहावसान हुआ तो यह हृदय विदारक आघात उनके लिए असह्य हो गया और उन्होंने भी अपने गुरू गो. विट्ठलनाथजी की स्तुति करते हुए लीला में प्रवेश किया।

काव्य : चतुर्भुजदास ने कीर्तन के स्फुटपदों की रचना की थी। संभवतः उन्होंने किसी स्वतंत्र ग्रन्थ की रचना नहीं की। उनके पदों के तीन संग्रह –(१) चतुर्भुज कीर्तन संग्रह, (२) कीर्तनावली और (३) दानलीला कांकरोली (मेवाड़) के विद्या–विभाग में सुरक्षित हैं। खोज रिपोर्ट में इनके नाम से 'मधुमालती', 'भक्तिप्रताप', 'द्वादशयज्ञ' और 'हित जू को मंगल' नामक ग्रंथों का भी पता चला है, पर इनकी प्रामाणिकता विचारणीय है।

चतुर्भुजदास की भाषा श्रुतिमधुर ब्रज भाषा है और इनका काव्य काव्यगुण संपन्न है। रचना में माधुर्य गुण की प्रधानता है। इनके भक्तिभाव की महत्ता का संस्तुवन करते हुए ध्रुवदास लिखते हैं–

परम भागवत अति भए, भजन मांहि दृढ़ धीर।
'चतुर्भुज' वैष्णवदास की, बानी अति गंभीर।।
सकल देस पावन कियो, भगवत जस बढ़ाई।
जहाँ-तहां निज एक रस, गाई भक्ति बड़ाई।। भक्त नामावली, पद-४८,४६

वेदान्त : चतुर्भुजदास भी शुद्धाद्वैत वेदान्त में सम्मान्य रस–स्वरूप परब्रह्म श्रीकृष्ण के ही अनन्य उपासक थे। जो जैसा होता है, उसे वैसे ही भाव से उपलब्ध किया जा सकता है, यह एक शाश्वत मनोवैज्ञानिक सत्य है, जो न केवल मानव में अपितु प्राणिमात्र में तथा जड़ पदार्थों तक में देखा जा सकता है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि लोहे से लोहा, तांबे से तांबा, सुवर्ण से सुवर्ण, चांदी से चांदी जुड़ते हैं। श्रीकृष्ण प्रेम स्वरूप हैं, अतः वे अप्रेम से नहीं किन्तु प्रेम–रस से ही जुड़ सकते हैं। चतुर्भुजदास इस शाश्वत मनोवैज्ञानिक तथ्य से सुपरिचित हैं। एक गोपिका ने रस–स्वरूप, रसिक गोपाल, कुंवर कन्हाई को रस द्वारा ही रिझा लिया है। उसने रसीली बातों से रसनिधि

गिरिधर को न केवल हृदय–रस में अपितु अपने हृदय–रस से भी लिपटा लिया है। शुद्धाद्वैत वेदान्त की दृष्टि से यह तद्रूप मिलन मुक्ति है–

रस ही में वश कीने कुंवर कन्हाई।
रसिक गोपाल रस ही रीझत य रस मिस रस त्यज भाई।।
प्रिय को प्रेमरस सुन्यौ है, रसीली वात रसमय वचन सुखदाई।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सब रस निधि, रसता मिली है रहसि हृदय लपटाई।।

चतुर्भुजदास-पदसंग्रह, पद ११६

'सब रस–निधि' कथन द्वारा कवि ने लौकिक–अलौकिक सर्व रसों का आदि कारण परब्रह्म श्रीकृष्ण हैं एवं 'मधुराधिपतेरखिलं मधुरम्' माधुर्य के अधिपति भगवान् रासरसेश्वर, नट नागर, लीला पुरुषोत्तम , श्रीकृष्णचन्द्र का हंसना, बोलना, उठना, बैठना, उनकी बँसुरी, वृन्दावन, उनके द्वारा परिणमित जीव–जगत् सभी कुछ माधुर्य से ही आपूर्ण है, परिपूर्ण है, ओतप्रोत है, ऐसा कहा है। बाँसुरी का स्वर जीव के लिए ब्रह्म का आह्वान है। पुष्टिजीव गोपिकाएँ बाँसुरी का नाद सुनते ही विवश होकर कृष्ण से मिलने अर्ध रात्रि में भी दौड़ पड़ती हैं। एक गोपिका दूसरी गोपिका से यह पूछ रही है कि हे गोपिका, यह तो बताओ कि श्रीकृष्ण ने मुरली के सुमधुर नाद द्वारा तुम्हें कैसे विवश कर दिया? कवि चतुर्भुजदास का ध्यान भी 'रसाल बेनु' की ओर ही है। कवि भी मुरली की भांति सदा श्रीकृष्ण के अधरों के सम्मुख रहकर 'सुखनिधि' लूटना चाहता है। गिरिधारीलाल ने जड़ बाँसुरी पर अनुग्रह किया, वैसा ही वह उस पर भी कर दे तो उसका जीवन आप्तकाम हो जाए –

नेक सुनावहु हो उहि रीति।
जिहि विधि अमृत प्याय स्रवन पुट सरवस लीनो जीति।

***

लाग्यो ध्यान चतुर्भुज प्रभु मोहि तुम्हारे बेनु रसाल।
राखहु दास अधर धों सम्मुख, सुखनिधि गिरिधरलाल। चतुर्भुजदास–पद संग्रह, पद–७८

जीव: चतुर्भुजदास ने शुद्धाद्वैत वेदान्त के अनुसार ही जीव–जगत् को ब्रह्म का ही अंश बताया है। परब्रह्म रसरूप है एवं जीव भी उसका रसांश है। सागर में जैसे बूँद मिल जाती है, वैसे ही जीव भी रस–निधि में मिलकर रसमय बन जाता है। 'रसमिस रस त्यज भाई'। कथन द्वारा कवि यह कहना चाहता है कि परब्रह्म रस–स्वरूप श्रीकृष्ण को पाने के लिए संसार के वैषयिक रस छोड़ने होते हैं।

संसार : कवि चतुर्भुजदास ने अष्टछाप के अन्य कवियों की भांति एवं शुद्धाद्वैत वेदान्त के अनुरूप संसार को क्षणिक एवं त्याज्य माना है। श्रीकृष्ण के अनुग्रह को, उनकी प्रेमलक्षणा ऐकान्तिक भक्ति को प्राप्त करने के लिए लौकिक रसों के त्याग की बात कवि चतुर्भुजदास ने बारंबार दुहराई है। गोपिकाएं इसकी उदाहरण हैं। उन्होंने सांसारिक विषय, सांसारिक संबंध पुत्र, पति, माता, पिता इत्यादि का त्याग करके ही परब्रह्म श्रीकृष्ण को हृदय से लिपटाया है। श्रीकृष्ण की प्रेमाभक्ति में फिर गोपिकाओं के लिए केवल श्रीकृष्ण की प्रीति ही 'धर्म' शेष रह गया है–

गोपाल को मुखारविंद देखि जी जै।

धर्म कर्म लोक लाज सुत पति तजि धाई।

'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर मैं जांचे री माई। चतुर्भुजदास–पद संग्रह –२८

गोपिका का श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य भाव श्लाघ्य है। 'गिरिधर मैं जांचे री माई' हे सखि, मैने श्रीकृष्ण से प्रेम करके यह 'जांच' लिया है कि जगत् में वे ही एकमेव प्रेमाराध्य हैं। उनसे कभी कपट, धोखा, छल–छद्म, एवं तलाक की संभावना नहीं है, जब कि संसार में प्रायः ऐसा ही होता है।

चतुर्भुजदास ने आचार्य वल्लभ के अनुसार जगत् एवं संसार के भेद को स्पष्ट नहीं किया है, पर माता, पिता, पति, बंधु, वेद–निधि इत्यादि सभी सांसारिक संबंधों को 'जंजाल' (मायाजाल) कहा है। जीव को सिर्फ एक ही नाम 'गोपाल' भजना चाहिए। एक गोपिका कहती है कि उसके चित्त में तो श्रीकृष्ण का 'श्याम–स्वरूप' भलीभाँति 'चुभ गया' है। श्रीकृष्ण ने प्रेमपूर्वक जब उसके सामने देखा तो –

उनके विशाल नेत्र उसके अन्तः करण में खुब गए हैं। अब वह इस तन से श्रीकृष्ण के अतिरिक्त अन्य किसी को भी नहीं चाहेंगी–

एक ही आंक जपे गोपाल।
अब यह तन जाने नहिं सखि, और दूसरी चाल।
मात पिता पति बंधु वेद विधि, तजै सबै जंजाल।।
स्याम सुरूप चित्त में चुभ्यो, पर बीत्यो बहुकाल।
गह्यौ नेनु तिन तोरि जबै, हंसि चित्तये नैन बिसाल।
'चतुर्भुजदास' अटल भए उरघट, परसी-परसी गिरधारीलाल।

चतुर्भुजदास पद संग्रह, पद–३६

मोक्षः 'चतुर्भुजदास–पदसंग्रह' के पद–७६ में 'राखहु दास अधर द्यौं' सम्मुख सुख निधि रखता है, वैसे ही उसे भी रखे। इससे स्पष्ट होता है कि

कवि चतुर्भुजदास सान्निध्य मुक्ति को ही सर्वाधिक चाहते थे। एक गोपिका की अन्य माधुर्योक्ति में भी कवि ने स्वयं को मोहन के निकट रखने की कामना प्रकट की है। 'हे श्याम ! देखो, बादल कैसे झुक आए हैं। ये मुझ पर हावी हो रहे हैं, आक्रमण कर रहे हैं। ये अनंग के प्रबलतम सैनिक हैं। देखिए मेरी 'चुनरी भी नई–नई है। भीग जाएगी तो इसका सारा रंग ही बिगड़ जाएगा, इसलिए मुझे आप अपने पीत–पट की ओट में ले लीजिए। 'दामिनी' भी मदन की प्रचंड अमोघ शक्ति है। उससे भी मैं भयभीत हूँ। हे गिरधर, तुझसे स्नेह ऐसा बँध गया है कि इस समय प्रचंड आक्रामक मदन से रक्षा के लिए निःसंकोच होकर एकमात्र तुझे ही पुकारा जा सकता है–

स्याम सुन नियरे आयो मेहु।
भीजेगी मेरी सुरंग चुनरी, ओट पीत पट देहु।
दामिनी ते डरपत हों मोहन, निकट आपनो लेहु।
दास 'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर सों, बांध्यो अधिक सनेहु।

चतुर्भुजदास पद संग्रह, ८१

इस पद में भी सान्निध्य संदेह मुक्ति अवस्था ही निरूपित हुई है। गोपिका यही कहती है कि आप मुझे अपने निकट ले लीजिए। यहां शुद्धाद्वैत वेदान्त के अनुसार जीव ब्रह्म का ही अंश है, ऐसा भी ध्वनित होता है। 'नियरे' ब्रजभाषा का शब्द है, जिसका अर्थ 'निकट', समीप होता है अंग्रेजी का 'नियर' शब्द तुलनीय है। यह तो सर्वविदित है कि हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों एक ही भाषा परिवार–'भारोपीय भाषा परिवार' की आधुनिक भाषाएँ हैं।

एक और अन्य पद में कवि ने कृष्ण के नैकट्य की कामना की है। एक गोपिका कृष्ण से कहती है कि हे गुणसागर गिरधर प्रभु ! जैसे आप मीठे स्वर में गाते हैं वैसे ही मुझे भी सरस सारंग राग मुरली पर गाना सिखा दीजिए। आपका मुरली नाद–संगीत ऐसा श्रुति मधुर होता है कि खग, मृग, पशु, कुलवधू, देव, मुनि सभी की गति को वह भुला देता है। यदि आप यह न कर सकें तो आप स्वयं ही अपनी अधर–सुधा से मेरे श्रवण–पुटों को परिपूर्ण कर दीजिए–

ऐसे हि मोहू क्यों न सिखावहु।
कैसे मधुर-मधुर कल मोहन, तुम मुरलिका बजाबहु।
सारंग राग सरस नन्द-नन्दन सजि सप्तक सुर गावहु।

***

खग मृग पशु कुलवधू देव मुनि, सबकी गति बिसरावहु।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर गुन सागर, जो तुम यह न बनावहु।

तो बहुरि आपु ही अधर सुधा, स्रवन पुट प्यावहु।।

चतुर्भुजदास पदसंग्रह पद ८०

किसी प्रेमोन्मत्ता गोपिका का 'दधि लो–' के स्थान पर गोविंद लेहु' 'गोविंद लेहु' कथन भी सायुज्य मुक्ति–अवस्था के अनुरूप ही है–

आज सखी तोहि लागी है यह रट।
'गोविन्द लेहु, लेहु कोई गोविन्द' कहति फिरत बन में औघट घट।
दधि को नाम बिसरि गयो देखत, स्याम सुन्दर ओढ़े पीत पट।
मांगत दान ठगोरी मेली, 'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर नागर नट।

चतुर्भुजदास पद संग्रह -१२१

रासः रस स्वरूप परब्रह्म श्रीकृष्ण की रस–लीलाओं में 'रास' सर्वोत्तम है। सभी पुष्टि जीव अंत में भगवान् श्रीकृष्ण की नित्य रासलीला में ही स्थान प्राप्त करने की कामना करते हैं। चतुर्भुजदास ने भगवान् श्रीकृष्ण की रासलीला का अतीव मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। रासलीला देखकर चन्द्रमा भी अपनी गति भूलकर स्थिर हो गया है। इसके साथ ही पशु–पक्षी, पवन इत्यादि भी मुग्ध होकर इस अलौकिक रासलीला को देख रहे हैं –

(अ) 'चतुर्भुज' प्रभु स्याम-स्यामा की नटनि देखि।
मोहे खग मृग वन थकित व्योम विमान।।

चतुर्भुजदास पद संग्रह, पद–३२

(ब) चतुर्भुज प्रभु वन विलास, मोहे सब सुर अकास।
निरखि थक्यो मृग चन्द रथहिं, पच्छिम नहिं खींचे।
थक्यो चन्द मोहे खग मृग वन, प्रति धुनि अमित आन गति लायै।

चतुर्भुजदास पदसंग्रह २४

समस्त हिन्दी कृष्ण–काव्य का प्राण है, उसकी आध्यात्मिकता और आध्यात्मिकता का तत्व है, अखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त निराकार चेतन तत्व, जिसे निर्गुण वेदान्त ने आत्मा, जीव, चेतन नाम दिए हैं तो सगुण वेदान्त ने कृष्ण। इस तरह चेतन का सही नाम आत्मा है तो कल्पित, मनगढ़न्त एवं आरोपित नाम है कृष्ण।

हिन्दी कृष्ण–काव्य पर सगुण वेदान्त की दृष्टि से विचार करें तो ब्रह्माण्ड ही ब्रज है, उसमें व्याप्त अखिल चेतन ही कृष्ण है और उसका अहर्निश विकसन , वर्द्धन, बृंहण ही सगुण लीला विलास है तथा कृष्ण काव्य के गो, गोप, गोपिकाएं इस विलसित शाश्वत चेतना के ही विविध रूप हैं।

डा. संतोष पाराशर- (हिन्दी कृष्ण काव्य में भक्ति एवं वेदान्त)

श्री चतुर्भुजदास जी

श्री चतुर्भुजदास कुम्भनदास जी के पुत्र और गोसांई विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। इनके जन्म के सम्बन्ध में यह बात प्रसिद्ध है कि इनके पिता कुम्भनदासजी प्रभु श्रीनाथजी के साथ खेला करते थे। एक दिन कुम्भनदास जी को श्री गोवर्धननाथ जी ने चार भुजा धारण करके दर्शन दिये। उसी दिन कुम्भनदास जी के घर में पुत्र पैदा हो गया। इसलिए उन्होंने उसका नाम चतुर्भुजदास रखा। यह बात कुम्भनदासजी की वार्ता में लिखी है।

जब चतुर्भुजदास ग्यारह दिन के हुए तो कुम्भनदास जी उन्हें श्री गोसांई जी के पास ले गये और नाम स्मरण करवाया। जब चतुर्भुजदास ४२ दिनके हुए तो उन्हें गोसाईं जी से निवेदन करवाया। इस दिन से श्रीनाथजी ने चतुर्भुजदास को इतनी सामर्थ्य दे दी कि जब इच्छा हो वे बोलने-चलने एवं अलौकिक बातें करने लग जांय और जब इच्छा हो मुग्ध बालक बन जाँय। ऐसे भगवदीय थे श्री चतुर्भुजदास जी।

चतुर्भुजदासजी श्रीनाथजी के ऐसे अनन्य भक्त थे कि वे और किसी के आगे गाते ही न थे। एक बार पारसोली में रास हो रहा था। रास में खूब गायन हुआ। गोसाईं जी के पुत्र श्री गोकुलनाथ जी ने श्री चतुर्भुजदास को आज्ञा की कि आप भी कुछ गाइये। चतुर्भुजदासजी बोले-हमारा गायन सुनने वाले श्रीनाथजी पधारे नहीं हैं, अतः किस प्रकार गावें। श्री गोकुलनाथजी बोले, अभी पधारते ही हैं। भक्त की वाणी असत्य न हो, इस हेतु श्रीनाथजी वहाँ पधारे। प्रभु के दर्शन पाकर श्रीचतुर्भुजदासजी आनन्दमग्न होकर गाने लगे-

अद्‌भुत नटभेस धरें जमुना तट स्यामसुँदर।
गुननिधान गिरिबरधर रंग-रंग राचे।। और फिर-
प्यारी ग्रीवा भुज मेली, नृत्यत प्रिया सुजान।

ऐसे-ऐसे बहुत से मनोहर पद श्री चतुर्भुजदासजी नें गाये। फिर रास हुआ और उसमें खूब आनन्द आया।

एक दिन श्री गोंसाईजी ने चतुर्भुजदासजी को आज्ञा की कि अप्सराकुण्ड पर जाकर रामदास भीतरिया को लाओ और फूल लेते आओ। चतुर्भुजदासजी ने रामदास भीतरिया को भेज दिया और आप फूल चुनने लगे। फूल चुनकर जब आ रहे थे तो

उसी समय श्रीगोवर्धन पर्वतकी कन्दरा से श्रीनाथजी श्री स्वामिनीजी सहित पधारे। श्री चतुर्भुजदासजी ने उनका दर्शन किया और यह पद गाया-

गोबरधन-गिरि सघन कंदरा
रैन निवास कियौ पिय प्यारी। तथा-
रजनी राज कियो निकुंज-नगरकी रानी।

चतुर्भुजदासजी नित्य श्रीगिरिराज पर बैठकर विरह और हिलग के पद गाते। श्रीनाथजी सदा सन्ध्या समय गौवों के साथ वहाँ पधारते और इन्हें दर्शन देते। वैशाख सुदी १३ की सन्याा कों उन्होंने यह पद गाया-

श्रीगोबरधनवासी साँवरे लाल। तुम बिन रह्यो न जाय हो।

पदकी अन्तिम तुक श्रीनाथजी ने पधारते हुए सुनी। करुणासे व्याकुल होकर कहने लगे-सदा यहाँ पधारेंगे।

चतुर्भुजदासजी श्रीनाथजी के ऐसे कृपापात्र थे कि उनके बिना श्रीनाथजी रह नहीं सकते थे। इनके सभी पद एक से एक अनूठे हैं। यहाँ इनका एक पद दिया जा रहा है-

जसोदा ! कहा कहौं हौं बात।
तुम्हरे सुतके करतब मो पै कहत कहे नहिं जात।।
भाजन फोरि, ढारि सब गोरस, लै माखन-दधि खात।
जौ बरजौं तौ आँखि दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।।
और अटपटी कहाँ लौं बरनौं, छुवत पानि सों गात।
दास चतुर्भुज गिरिधर-गुन हौं कहति-कहति, सकुचात।।

कल्याण (सन्त अंक)

चतुर्भुजदास

ये कुम्भनदास के पुत्र और विट्ठलनाथ के शिष्य थे। कृष्णलीला का वर्णन ये सूरदास के समान ही करते थे। इनके पद अधिकतर कृष्ण के क्रिया कलापों से ही संबन्ध रखते हैं। इनकी भाषा बहुत स्वाभाविक और सरस हैं। इनके तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं –
१. द्वादश यश; २ भक्ति प्रताप; और ३. हितजू को मंगल।

इनके पदों के अनेक संग्रह हैं, जिनमें भक्ति और प्रेम के सुथरे चित्र मिलते हैं।

-प्रो. रामकुमार वर्मा (हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास)

चतुर्भुजदास

ये कुम्भनदासजी के पुत्र और गोसाई विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। ये भी अष्टछाप के कवियों में हैं। इनकी भाषा चलती और सुव्यवस्थित हैं। इनके बनाए तीन ग्रंथ मिले हैं – द्वादशयश, भक्ति–प्रताप, हितजु को मंगल।

इनके अतिरिक्त फुटकल पदों के संग्रह भी इधर उधर पाए जाते हैं। एक पद नीचे दिया जाता हैं–

जसोदा ! कहा कहौं हौं बात ?
तुम्हरे सुत के करतब मोपै कहत कहे नहिं जात।।
भाजन फोरि, ढारि सब गोरस, लै माखन दधि खात।
जौं बरजौ तौ आंखि दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।।
और अटपटी कहँ लौं बरनौं, छुवत पानि सों गात।
दास चतुर्भुज गिरिधर गुन हौं कहति कहत सकुचात।।

रामचन्द्र शुक्ल (हिन्दी साहित्य का इतिहास)

चतुर्भुजदास

चतुर्भुजदास नाम से चार भक्त कवियों का उल्लेख हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में मिलता हैं। कहीं कहीं इनके जीवन चरित और काव्यविषयक विवेचन में उलट–फेर और भ्रम भी उत्पन्न हो गया हैं, किन्तु अष्टछापी चतुर्भुजदास को अन्य व्यक्तियों से पृथक् करने के लिए पुष्कल प्रमाण उपलब्ध हैं। अष्टछाप के प्रसिद्ध कवि कुम्भनदास के ये सबसे छोटे पुत्र थे, अतः इनका चरित प्रामाणिक रूप से जाना जा सकता हैं। इनका जन्म १५३० ई. में हुआ। ये गोवर्धन के समीप जमुनावतौ ग्राम में जन्में तथा इनका देहावसान १५८५ ई. में हुआ। वंश–परम्परागत खेतीबाड़ी से विमुख रहकर इनका ध्यान भजन–कीर्तन की ओर अधिक रहता था। अतः इनके पिता कुम्भनदास इनसे बहुत प्रसन्न रहते थे। उन्होंने इन्हें स्वयं गान विद्या की शिक्षा देकर पुष्टिमार्ग की दीक्षा दिलाई थी। शैशवकाल में ही चतुर्भुजदास काव्य–रचना करने लगे थे। इनका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, स्फुट पदों को ही 'चतुर्भुज–कीर्तन संग्रह' 'कीर्तनावली' और दानलीला शीर्षकों से प्रकाशित किया गया हैं। 'द्वादशयश',

'मधुमालती' और 'भक्तिप्रताप' नाम से इनके जो अन्य ग्रन्थ बताये जाते हैं, वे इनके न होकर राधावल्लभीय तथा अन्य चतुर्भुजदास के हैं। अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास की रचना में शृंगार की छटा विद्यमान हैं। कृष्ण–जन्म से लेकर गोपी–विरह तक ब्रजलीला–गान इन्होंने किया हैं। किन्तु किसी मौलिक प्रसंग की उद्‌भावना इनके पदों में नहीं मिलती। साधारण ब्रजभाषा को ही इन्होंने अपनाया हैं। श्रीनाथजी के मन्दिर में जिस प्रकार के पद गाये जाते थे, उन्हीं के अनुकरण पर इन्होंने पद लिखे हैं।

डॉ नगेन्द्र (हिन्दी साहित्य का इतिहास)

चतुर्भुजदास

१५६७ ई. में उपस्थित।

राग कुल्पद्रुप। यह विट्ठलनाथ गोकुलस्थ (संख्या ३५) के शिष्य थे। ये अष्टछाप में सम्मिलित थे। यही सम्भवतः दूसरे चतुर्भुज भी है, जिनका उल्लेख शिवसिंह ने किया हैं। गार्सों द तासी ने (भाग १, पृष्ठ १४२) प्रेम सागर की भूमिका का हवाला देते हुए भागवत पुराण दशम स्कंध का दोहा चौपाइयों में ब्रजभाषा में अनुवाद करने वाले एक चतुर्भुज मिसर का उल्लेख किया हैं।

टि. सरोज के चतुर्भुज (सवेक्षण २३०) कक्ति सवैया रचने वाले रीति कालीन शृंगारी कवि हैं, यह निश्चय की अष्टछापी चतुर्भुजदास से भिन्न हैं। ग्रियर्सन की कल्पना ठीक नहीं।

भागवत का अनुवाद करने वाले चतुर्भुज मिश्र अष्ठछाप चतुर्भुजदास से असंदिग्ध रूप से भिन्न हैं। एक तो इन चतुर्भुजदास ने केवल फुटकर पद लिखे, दूसरे यह गोरवा क्षत्रिय कुम्भनदास के पुत्र थे, अतः इन्हें चतुर्भुज मिश्र से नहीं मिलाया जा सकता।

- किशोरी लाल गुप्त (हिन्दी साहित्य का इतिहास)

चतुर्भुजदास

ध्रुवदासजी ने केवल एक चतुर्भुजदास जी का वर्णन भक्त वैष्णवदास के साथ किया हैं। उससे यह पूर्ण रूप से स्पष्ट नही होता है कि ध्रुवदास जी ने वह वर्णन श्री हितहरिवंश जी के शिष्य चतुर्भुज जी का किया हैं, जिनकी

भक्ति और काव्य की प्रशसा नाभादासजी ने की है, अथवा अष्टछाप के भक्त कवि चतुर्भुजदास का। परन्तु उस वर्णन के कुछ शब्दो पर विशेष ध्यान देने तथा वैष्णवदास के संसर्ग का अनुमान करने पर लेखक इस मत के निकट आता हैं कि वह अष्टछाप वाले चतुर्भुज का ही हैं। ध्रुवदास जी द्वारा दिया हुआ वृतान्त इस प्रकार हैं –

परम भागवत अति भए भजन माहि दृढ़ धीर।
चतुर्भुज वैष्णवदास की बानी अति गम्भीर।
सकल देस पावन कियो भगवत जसहिं बढ़ाइ।
जहाँ तहाँ निज एक रस गाई भक्ति लड़ाइ।

दो सौ बावन वार्ता में वैष्णवदास का कोई उल्लेख नहीं हैं, परन्तु वैष्णवदास के पद वल्लभ सम्प्रदायी मन्दिरों में गाये जाते हैं। इस बात का उल्लेख 'भक्त नामावली' के सम्पादक स्वर्गीय बाबू राधाकृष्णदास जी ने भी भक्त नामावली में वर्णित महात्माओं के संक्षिप्त ऐतिहासिक वृतान्त में चतुर्भुजदास के वर्णन के अन्तर्गत किया हैं। उन्होंने भी ध्रुवदास जी के चतुर्भुज जी वाले वर्णन को अष्टछाप के भक्त कवि चतुर्भुजदासजी का ही माना हैं। इससे वैष्णवदासजी के साथ चतुर्भुजदास का नाम वल्लभ सम्प्रदायी चतुर्भुजदास जी का ही प्रतीत होता हैं। भक्त नामावली के उपर्युक्त वृतान्त में लिखा हैं कि चतुर्भुजदास ने 'गाई भक्ति लड़ाइ'। 'लड़ाना' शब्द 'दुलार' या 'प्यार' के अर्थ में ब्रजभाषा में वात्सल्य भाव का भी द्योतक होता हैं। नाभादास जी द्वारा वर्णित हितहरिवंशजी के शिष्य चतुर्भुज जी की भक्ति दास्य–भाव की थी। वल्लभ–सम्प्रदायी चतुर्भुजदास की भक्ति निकुंज लीला की माधुर्य भक्ति के साथ वात्सल्य भाव की भी थी। इस प्रकार ध्रुवदास जी के वर्णन से निम्नलिखित बातें ज्ञात होती है :–

१. चतुर्भुजदासजी की वाणी बड़ी गम्भीर थी।
२. इन्होंने भगवान की भक्ति का यश चारों ओर फैलाया।
३. ये बड़े भगवद्भक्त थे और सदा अपने भजन में लवलीन थे।
४. इन्होंने भगवान् की भक्ति का गान वात्सल्य–भाव से किया।

-डा. दीनदयाल गुप्त (अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय)

चतुर्भुजदास

इनका जन्म संवत् १५८७ (सन् १५३० ई.) के लगभग गोवर्द्धन के पास 'जमुनावती' ग्राम में हुआ था। ये अष्टछाप के कवि कुम्भनदास के सबसे छोटे पुत्र थे। बचपन से ही श्रीकृष्ण भक्ति में इनका मन रमा था। संवत् १५६७ (सन् १५४० ई.) में विट्ठलनाथजी से दीक्षित होकर वे सम्प्रदाय में प्रविष्ट हुए। बचपन से ही इन्हें काव्य और संगीत की शिक्षा मिली थी तथा काव्य रचना में भी इनकी प्रवृत्ति और गति थी। सम्प्रदाय में इनका सम्यक् सम्मान था। सम्भवतः संवत् १६४२ (सन्१५८५ ई)में इनका देहावसान हुआ। चतुर्भुजदास ने कीर्तन के स्फुट पदों की रचना की थी। अपने पदों में उन्होंने श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर गोपी-विरह तक की ब्रजलीला का गायन किया हैं-

प्रानपति बिहरति जमुना कूले।
लुब्ध मकरंद के बस भयो भंवर ज्यों, देखि रवि उदय मानो कमल फूले।
करत गुंजार लै मुरली जु सांवरो, सुनत ब्रजवधू तन-सुधि जू भूले।
चतुर्भुजदास प्रभु जमुने प्रेम सिंधु में लाल गिरधरन राखि कूले।।

डा. त्रिभुवन सिंह (हिन्दी साहित्य : एक परिचय)

चतुर्भुजदास

ये कुम्भनदास के पुत्र और गोस्वामी विट्ठलनाथ के शिष्य थे। अष्टछाप के कवियों में इनकी भी गणना की जाती हैं। इनके रचित तीन ग्रन्थ – (१) द्वादश यश, (२) भक्ति प्रताप और (३) हितजु को मंगल प्राप्त है। कुछ फुटकर पदों के संग्रह भी हैं। इनकी भाषा और कविता सामान्य स्तर की हैं। इन का एक पद देखिए :–

जसोदा! कहा कहौं हौ बात ?
तुम्हरे सुत के करतब मोपै, कहत कहे नहिं जात।।
भाजन फोरि, ढारि सब गोरस, लै माखन दधि खात।
जो बरजौ तो आँखि दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।।
और अटपटी कहाँ लौं बरनौ छुबत पानि सों गात।
दास चतुर्भुज गिरधर गुन हौं कहति कहति सकुचात।।

- श्यामचन्द्र कपूर (हिन्दी साहित्य का इतिहास)

चतुर्भुजदास

चतुर्भुजदास कवि कुम्भनदास के सबसे छोटे पुत्र थे। इनका जन्म जमुनावतौ नाम ग्राम में सं. १५६७ में हुआ। अन्य भाइयों मे केवल चतुर्भुजदास को ही भगवद्भक्ति भाती थी। यह तो विवाह भी नहीं करना चाहते थे। बाद में जब विवाह हो गया तब भी अनासक्त रूप से गृहस्थ–जीवन व्यतीत करते थे। इनका भक्ति भाव इतना बढ़ा हुआ था कि श्रीनाथजी को छोड़कर कही और जाते ही नही थे। इनका मृत्यु–संवत १६४२ माना जाता हैं।

वात्सल्य–वर्णन चतुर्भुजदास का भी सुन्दर बन पड़ा हैं। कृष्ण यह जानना चाहते हैं कि किसकी चोटी बड़ी हैं। नापने वाले भी स्वयं ही बन जाते हैं। फिर भला उनसे कौन बाजी ले सकता है।

चुटिया तेरी बड़ी किधों मेरी।
अहो सुबल बैठौ भैया हो, हम तुम मापे एक बेरी।।
ले तिनका मापक उनकी कछु अपनी करत बड़े री।
लेकर कमल दिखावत ग्वालन ऐसी काहू न केरी।।
मोको मैया दूध पिवावत ताते होत घनेरी।
चतुर्भुज प्रभु गिरिधर इहि आनन्द नाचत दै दै फेरी।।

कृष्ण का उत्पाती रूप देखिये :–

भाजन फोरि ढ़ोरि सब गोरस ले माखन दधि खात।
जो बरजो तो आँखि दिखावै रंचहुं नाहिं सकात।।

- देवीशरन रस्तोगी (हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास)

चतुर्भुजदास

चतुर्भुजदास श्री गोस्वामी विट्ठलनाथ के शिष्य थे। ये महाप्रभु के सुप्रसिद्ध स्वाभिमानी निरीह कुंभनदास के पुत्र थे। इन्हें भी काव्य रचना में रुचि थी। किन्तु उसमें विशेष प्रगति नहीं कर सके। इनकी कविता कवित्व और भाषा की दृष्टि से साधारण कोटि की हैं। इनकी तीन पुस्तकें मिलती हैं। जिनके नाम हैं – द्वादशयश, हितजू को मंगल और भक्ति प्रकाश। इसके अतिरिक्त इनके कुछ फुटकर पद भी मिलते हैं

इनका एक पद यहाँ दिया जा रहा है –

जसोदा ! कहा कहौं हौं बात ?
तुम्हरे सुत के करतब मोपैं कहत कहे नहिं जात।।
भाजन फोरि, डारि सब गोरस लै माखन दधि खात।
जो बरजौ तो आँखि दिखावै, रंचहुँ नाहिं सकात।।
और अटपटी कहँ लौं बरनौं, छुवत पानि सौं गात।
दास चतुर्भुज गिरधर गुन हौं कहति कहति सकुचात।।
-सर्वाधार गुप्त (हि. सा. का इतिहास : आलोचना तथा सिद्धान्त)

चतुर्भुजदासजी के जीवन की रूपरेखा

जन्मस्थान, जातिकुल :- चतुर्भुजदासजी का जन्म स्थान ब्रज में जमुनावतौ गाँव था। चतुर्भुज जी अष्टछाप के कवि कुम्भनदासजी के पुत्र थे। और उनकी जाति गोरवा क्षत्री थी।

माता, पिता, कुटुम्ब, ग्रहस्थ :- चतुर्भुजदास अपने पिता के सातवें तथा सबसे छोटे बेटे थे। बाल्यकाल से ही भगवद्भक्त होने के कारण माता–पिता का इनके ऊपर विशेष प्रेम था ; क्योंकि इनके पिताजी स्वयं एक त्यागी भक्त थे। चतुर्भुजदासजी के पाँच बड़े भाइयों की बुद्धि लौकिक व्यवहार में बहुत संलग्न थी। इसलिए वे पाँचों अपने भक्त भाई चतुर्भुजदास और पिता कुम्भनदास से अलग रहते थे। इनके एक भाई कृष्णदास को श्रीनाथजी की गाय चराते समय सिंह ने मार दिया। ये और एक इनकी चचेरी बहन जो गुसाई श्री विट्ठलनाथजी की शिष्या थी, अपने पिता कुम्भनदास जी के साथ रहते थे। वार्ता में लिखा हैं कि इनकी प्रथम स्त्री का विवाह के कुछ समय बाद ही देहान्त हो गया था। इसके बाद इन्होंने एक विधवा स्त्री से विवाह किया। वार्ता से यह भी ज्ञात होता है कि इनके राघवदास नाम का एक पुत्र भी था ज़ो भगवद्भक्त और कवि था। यद्यपि चतुर्भुजदास अपने पिता की तरह गृहस्थी थे, परन्तु उनका गृहस्थी में मोह न था। वे सदैव श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में ही रहते थे।

शिक्षा :- चतुर्भुजदासजी की शिक्षा उनके पिता कुम्भनदास तथा श्री गोस्वामी विट्ठलनाथजी की देखरेख में ही हुई। गान विद्या इन्होंने अपने पिता से सीखी थीं, काव्य रचना भी इनके पिता की ही देन हैं। कुम्भनदासजी इनके

बाल्यकाल में ही इनको कृष्ण की लीलाओ का रहस्य समझाया करते थे – ''ता दिन ते कुम्भनदास जी रहस्य लीला वार्ता चतुर्भुजदास सो करते।'' वार्ता से यह विदित ही हैं कि ये श्रीनाथजी के समक्ष कीर्तन किया करते थे और इन्होने बहुत से पद कृष्ण की बाल–लीला, विनय और विरह के भावों के बनाये।

वल्लभ सम्प्रदाय में प्रवेश और साम्प्रदायिक जीवन :-

वार्ता में लिखा है कि चतुर्भुजदास के जन्म के बाद जब शुद्धि स्नान हुआ तब उनके पिता कुम्भनदासजी बालक चतुर्भुज को श्री गुसाई विट्ठलनाथ जी के पास ले गये और विनती की ''महाराज कृपा करके चतुर्भुजदास को नाम सुनाइये .... यह सुनि के चतुर्भुजदास ताही समे किलक के हँसे।' इसके बाद उसी दिन राजभोग के समय गुसाई जी ने नवजात शिशु को शरण में लिया। उन्होंने कुम्भनदासजी से कहा – ''या पुत्र सों तुमकों बहुत सुख होयगो। सो तुम्हारे मन में जैसो मनोरथ हतो ताहि भाँति सों तुम्हारे मनोरथ सिद्ध भये हैं।''

जब चतुर्भुजदास कुछ बड़े हुए तो श्रीनाथजी की गायों को चराने के लिए जाने लगे। उनकी शिक्षा उनके पिता और श्री गुसाईजी के यहाँ हुई। वार्ता में बालक चतुर्भुजदास की आरम्भिक काव्य–रचना से सम्बन्ध रखने वाला एक प्रसंग इस प्रकार दिया हुआ है :–

एक समय कुम्भनदास ओर चतुर्भुजदास दोनों जमुनावतौ गाँव में अपने घर बैठे थे। आधी रात्रि का समय था। श्री गोवर्धननाथजी के मन्दिर में दीपक जल रहा था। उसका प्रकाश झरोखों से निकलकर बाहर दिखाई देता था। उसे देखकर कुम्भनदास ने चतुर्भुजदास को सुनाकर एक चरण कविता में कहा – 'वह देखो बरत झरोखन दीपक हरि पौढ़े ऊँची चित्र सारी' और इस चरण को कहकर वे चुप हो गये। उसी समय चतुर्भुजदास ने सहसा दूसरा चरण इस प्रकार कहा 'सुन्दर बदन निहारन कारन, राखे हैं बहुत जतन करि प्यारी।' यह सुनकर कुम्भनदास बहुत प्रसन्न हुये। इसके बाद चतुर्भुजदास ने समय समय पर अनेक लीलाओं के पद बनाकर गायें।

स्वभाव और चरित्र :- चतुर्भुजदास के जन्म से पहले कुम्भनदासजी अपने छः पुत्रों की लौकिक वृत्ति देखकर कामना किया करते थे कि मेरे कोई भगवद्भक्त सन्तान हो। चतुर्भुजदास के जन्म से उनकी यह कामना पूर्ण हो गई। चतुर्भुजदासजी भी अपने पिता की तरह से आरम्भ से त्यागी थे। उन्होंने

अपना प्रथम विवाह लोगों के बहुत आग्रह के बाद किया था। इनकी लोक से अनासक्ति और भगवान के साथ आसक्ति का भाव वार्ता के इन शब्दों से प्रकट होता है :– "तब श्रीगोवर्धननाथजी ने चतुर्भुजदास सों कह्यो, जो चतुर्भुजदास तू ब्याह करि, तब चतुर्भुजदास ने कही, जो महाराज मैं ये सुख छाँडि के आपदा में क्यों पड़ूँ, तब श्री गोवर्धननाथजी ने फिर आज्ञा करी जो बेगि ब्याह करि।"

चतुर्भुजदास जी श्रीनाथजी के मन्दिर को छोड़कर अन्यत्र नहीं जाते थे। इससे विदित होता हैं कि ये एकान्तप्रिय व्यक्ति थे। एक बार गोस्वामी विट्ठलनाथजी गुजरात–यात्रा को गये, उस समय गुसाईजी के बड़े पुत्र गिरधर जी श्रीनाथजी के स्वरूप को मथुरा ले गये। जितने दिन श्रीगोवर्द्धननाथ (श्रीनाथजी) मथुरा रहे उतने दिन गोवर्द्धन पर चतुर्भुजदास ने अपने दिवस बहुत विरह में काटे। उस समय इन्होंने बहुत विरह के पद लिखे थे।

गोलोकवास :- 'अष्टसखान की वार्ता में लिखा है कि जब श्री विट्ठलनाथ जी ने श्री गिरिराज की कन्दरा में प्रवेश कर नित्यलीला में प्रवेश किया, उस समय चतुर्भुजदास अपने गाँव से इस समाचार को सुनकर गिरिराज पर आये और कन्दरा के आगे गिरकर महाविलाप करने लगे और कहने लगे – "महाराज पधारत समय मोकों आपके दरशन हू न भये और मैं आप बिना या पृथ्वी ऊपर कौन कों देखूँगो, ताते अब या पृथ्वी ऊपर मोकों मति राखो। मोहू को आप के चरणारविन्द के पास निकट ही राखो, मोहू कू बुलाय लीजे।" उसके बाद उन्होंने उस विरह में निम्नलिखित दो पद गाये जिनका उल्लेख कवि द्वारा दिये हुये आत्मचारित्रिक वृतान्त में किया जा चुका हैं :–

"फिर ब्रज बसहु श्री विट्ठलेश" तथा "विट्ठल सौ प्रभु भये न ह्वै हैं।"

इसी प्रकार विरह के कीर्तन करते–करते चतुर्भुजदास ने भी अपनी देह छोड़ दी। चतुर्भुजदास के बेटे राघवदास तथा अन्य वैष्णवों ने उनका अग्नि संस्कार किया।

जन्मतिथि :- गोस्वामी विट्ठलनाथजी संवत् १५६७ वि. में गिरिधरजी के जन्म (प्राकदय) के बाद नन्द महोत्सव करके ब्रज में आये। अष्टछाप वार्ता में लिखा है कि कुम्भनदासजी ने चतुर्भुजदासजी के जन्म के बाद 'पिंडरू' संस्कार किया और फिर शुद्ध होकर श्री चतुर्भुजदास को स्नान कराया और दूसरे दिन उन्हें श्री गोस्वामी विट्ठलनाथजी की शरण में दिया। श्री द्वारिकानाथजी के मन्दिर काँकरोली में लेखक को ज्ञात हुआ कि वल्लभ सम्प्रदाय के गृहस्थ लोगों मे

बालक के जन्म से ४१ वे दिन शुद्धि स्नान हुआ करता है। इस हिसाब से कहा जा सकता है कि चतुर्भुजदास अपने जन्म से ४१ वें दिन गोस्वामीजी की शरण में आये। इस तरह इनका जन्म तथा शरणागति सवत एक ही हैं जो सम्प्रदाय–कल्पद्रुम के अनुसार सं. १५६७ वि. हैं।

गोलोकवास का समय :- कवि के आत्मचारित्रिक उल्लेख से एक तो यह सिद्ध होता ही हैं कि वे सं. १६२८ वि. (श्री विट्ठलनाथजी के सातवें पुत्र घनश्याम जी का संवत) तक विद्यमान थे, क्योंकि उन्होंने घनश्याम जी की बधाई गाई हैं। दूसरे उनके पीछे दिये पदों के स्वयं लेख से यह भी सिद्ध है कि उनका देहान्त श्री गोस्वामी विट्ठलनाथजी के गोलोकवास के बाद हुआ था। अष्टछाप वार्ता से विदित हैं कि गोस्वामी विट्ठलनाथ के तत्काल बाद इन्होंने भी देह छोड़ दी थी। गोस्वामीजी के गोलोकवास की तिथि सं. १६४२ वि. फाल्गुन कृष्ण ७ वल्लभ सम्प्रदाय में भी मानी जाती हैं। 'सम्प्रदाय–कल्पद्रुम' में संवत १६४४ वि. दिया हैं, परन्तु वल्लभ सम्प्रदायी अनेक प्राचीन प्रमाणों के आधार से सं. १६४२ वि. ही गुसाई जी के गोलोकवास की निश्चित तिथि हैं। इस हिसाब से चतुर्भुजदासजी का गोलोकवास लगभग ४५ वर्ष की अवस्था प्राप्त कर सं. १६४२ वि. के फाल्गुण मास में ७ या ८ को हुआ। ब्रज में रुद्र कुण्ड के ऊपर एक इमली के वृक्ष के नीचे इनका मृत्यु स्थान बताया जाता हैं।

डा. दीनदयाल गुप्त (अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय : प्रथम भाग)

चतुर्भुजदास

चतुर्भुजदास (१५३०–८५ई.) कुम्भनदास के पुत्र और गोस्वामी विट्ठलनाथ के शिष्य थे। यह भी अष्टछाप के कवियों में प्रतिष्ठित हैं। मिश्रबंधु के अनुकरण में आ. शुक्ल ने लिखा हैं, "इनके बनाए तीन ग्रंथ मिले हैं – द्वादशयश, भक्तिप्रताप तथा 'हितजु को मंगल'।" किंतु ये तीनों ग्रंथ चतुर्भुजदास कृत हैं जिनका जन्म १५२८ ई. में हुआ था। 'हितजू' से तो स्पष्ट भी हैं कि ग्रंथ हितहरिवंश से संपृक्त हैं। इन चतुर्भुजदास (अष्टछाप वाले) के पद 'चतुर्भुज–कीर्तनसंग्रह' 'कीर्तनवाली' एवं 'दानलीला' शीर्षक काँकरोली से प्रकाशित संकलनों में प्राप्त होते हैं। मिश्रबंधु ने 'मधुमालती' की कथा को भी इनकी रचना माना हैं जो एकदम गलत हैं – यह मधुमालती चतुर्भुजदास कायस्थ (रचनाकाल १७८० ई. के आसपास) की कृति हैं। एक चतुर्भुज कवि

ओरछा के वीरसिंह देव बुंदेला के आश्रित थे। जिनका रचनाकाल १५६० ई. के लगभग हैं। इन चार चतुर्भुजों के अतिरिक्त अन्य चतुर्भुज साधारणतर कवि हैं। अष्टछाप के शेष सात कवियों पर सूर इस प्रकार छाए हुए हैं कि मैं उन्हे 'सूर की सप्तछाया' कहने को विवश हो रहा हुँ। इन कवियों ने सूर के भावों को ही दोहराया या विकसित किया हैं। परमानंद दास इत्यादि ने दोहराया हैं, नन्ददास ने विकसित किया हैं। (इसीलिए सूर के अनन्तर, निस्सन्देह बहुत बहुत अंतर के साथ, नंददास अष्टछाप के अन्यतम कवि हैं।) चतुर्भुजदास का कवि स्तर सामान्यतर ही हैं किन्तु शब्दचयन आकर्षक हैं :

जसोदा ! कहा कहौं हो बात ?
तुम्हरे सुत के करतब मो पै कहत कहे नहिं जात।।
भाजन फोरि, ढारि सब गोरस, लै माखन दधि खात।
जौ बरजौतौ आँखि दिखावै, रंचहु नाहिं सकात।
दास चतुर्भुज गिरिधर गुन हौं कहति-कहति सकुचात।।

डा. रामप्रसाद मिश्र (हि. सा. का वस्तुपरक इतिहास)

चतुर्भुजदास

ये कुम्भनदासजी के पुत्र थे। जन्म के कुछ समय उपरान्त ही इनको विट्ठलनाथ की शरण में दे दिया गया था। चतुर्भुजदासजी ने विट्ठलनाथजी के सातवें पुत्र की भी बधाई गाई थी। विट्ठलनाथजी के मरण पर शोक–गीत भी इन्होंने गाए। इनके पद कीर्तन संग्रहों में मिलते हैं।

श्री कृष्णदत्त वाजपेयी (ब्रज का इतिहास : भाग -२)

भक्त श्री चतुर्भुजदास जी

चतुर्भुजदास का जीवन–चरित्र आजीवन चमत्कारों और अलौकिक घटनाओं से सम्पन्न स्वीकार किया जाता हैं। उनका जन्म सं. १५७५ वि. में जमुनावतौ ग्राम में हुआ था। वे पुष्टिमार्ग के महान भगवतभक्त महात्मा कुम्भनदास जी के सबसे छोटे पुत्र थे। कुम्भनदासजी ने बाल्यावस्था से ही उनके लिए भक्तों का सम्पर्क सुलभ कर दिया था। वे उनके साथ श्रीनाथजी के मन्दिर में दर्शन करने भी जाया करते थे। पारिवारिक वातावरण का उनके चरित्र–विकास पर बड़ा प्रभाव पड़ा था। कुम्भनदास के सत्प्रयत्न से गोसाई

विट्ठलनाथजी ने चतुर्भुजदास को जन्म के इकतालीस दिनों के बाद ही ब्रह्म सम्बन्ध दे दिया था। वे बाल्यावस्था से ही पिता की देखा–देखी पद रचना करने लगे थे। घर पर अनासक्तिपूर्वक रहकर खेती–बारी का भी काम सँभालते थे। श्रीनाथजी की सेवा में उनका मन बहुत लगता था। बाल्यावस्था से ही भगवान की अन्तरग लीलाओं की उन्हें अनुभूति होने लगी थी, उन्हीं के अनुरूप वे पद–रचना किया करते थे। उनकी काव्य और संगीत की निपुणता से प्रसन्न होकर श्री विट्ठलनाथ जी ने उनको अष्टछाप में सम्मिलित कर लिया था। वृद्ध पिता के साथ अष्टछाप के कवियों में एक प्रमुख स्थान प्राप्त करना उनकी दृढ़भगद्भक्ति, कवित्वशक्ति और विरक्ति का परिचायक हैं।

ब्रह्मसम्बन्ध से गौरवान्वित होने के बाद वे अपने पिता के साथ जमुनावतौ में ही रहा करते थे। नित्य उनके साथ श्रीनाथजी की सेवा और कीर्तन तथा दर्शन के लिये गोवर्धन आया करते थे। कभी–कभी गोकुल में नवनीतप्रिय के दर्शन के लिये भी जाते थे, पर श्रीनाथजी का विरह उनके लिये असह्य हो जाया करता था।

श्रीनाथजी में उनकी भक्ति सखा भाव की थी। भगवान उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देकर साथ में खेला करते थे। भक्तों की इच्छापूर्ति के लिये ही भगवान अभिव्यक्त होते हैं। श्री विट्ठलनाथजी महाराज की कृपा से चतुर्भुजदास को प्रकट और अप्रकट लीलाओं का अनुभव होने लगा। एक समय श्री गोसाईजी भगवान का श्रृंगार कर रहे थे, दर्पण दिखला रहे थे, चतुर्भुजदासजी रूप माधुरी का आस्वादन कर रहे थे। उनके अधरों की भारती मुसकरा उठी –

'सुभग सिंगार निरखि मोहन कौ लै दर्पण कर पियहिं दिखावै।।'

भक्त की वाणी का कण्ठ पूर्ण रूप से खुल चुका था। उनका मन भगवान के पदारविन्द–मकरन्द के मद से उन्मत्त था, उनके नयनों ने विश्वासपूर्वक सौन्दर्य का चित्र उकेरा –

माई री आज और, काल और, छिन छिन प्रति और और।।

भगवान के नित्य सौन्दर्य में अभिवृद्धि की रेखाएँ चमक उठीं। भगवान् का सौन्दर्य तो क्षण–क्षण में नवीनता से अलकृत होता रहता हैं। यही तो उसका वैचित्र्य हैं। लीला–दर्शन करने वाले को भगवान् सदा नये नये ही लगते हैं।

एक समय गोसाई विट्ठलनाथ गोकुल में थे। गोसाईजी के पुत्रों ने परासोली मे रासलीला की योजना की। उस समय श्रीगोकुलनाथजी ने चतुर्भुजदास से पद गाने का अनुरोध किया। चतुर्भुजदास तो रस–सम्राट

श्रीनाथजी के सामने गाया करते थे। भक्त अपने भगवान के विरह में लीन थे। श्रीनाथजी ने चतुर्भुजदास पर कृपा की। गोकुलनाथ ने उनसे गाने के लिए फिर कहा और विश्वास दिलाया कि आपके पद को भगवान प्रकट रूप से सुनेंगे। चतुर्भुजदास ने पद गाना आरम्भ किया।

भक्त गाये और भगवान प्रत्यक्ष न सुनें, यह कैसे हो सकता हैं। उनकी यह दृढ़ प्रतिज्ञा हैं कि मेरे भक्त जहाँ गाते हैं, वहां मैं उपस्थित रहता हुँ। भगवान प्रकट हो गये, पर उनके दर्शन केवल चतुर्भुजदास और श्री गोकुलनाथ को ही हो सके। गोकुलनाथजी को विश्वास हो गया कि भगवान भक्तों के हाथ में किस तरह नाचा करते हैं। चतुर्भुजदास ने गाया–

'अद्‌भुत नट वेष धरें जमुना तट। स्यामसुन्दर गुनिनिधान।।
गिरिबरधरन रास रँग नाचे।'

रात बढ़ती गयी, देखने वालों के नयनों पर अतृप्ति की वारुणि चढ़ती गयी। भक्त की प्रसन्नता और संतोष के लिये भगवान् अपना विधान बदल लिया करते हैं। एक समय श्री विट्ठलनाथजी ने विदेश यात्रा की, उनके पुत्र गिरिधर जी ने श्रीनाथजी को मथुरा में अपने निवास स्थान पर पधराया। चतुर्भुजदासजी श्रीनाथजी के विरह में सुध–बुध भूलकर गोवर्धन में एकान्त स्थान पर हिलग और विरह के पर गाया करते थे। श्रीनाथजी सन्ध्या समय नित्य उन्हें दर्शन दिया करते थे। एक दिन वे पूर्ण रूप से विरह विदग्ध होकर गा रहे थे –

'श्री गोबर्धनवासी साँवरे लाल, तुम बिन रह्यौ न जाय हो।'

भगवान भक्त की मनोदशा से स्वयं व्याकुल हो उठे। उन्होंने गिरिधरजी को गोवर्धन पधराने की प्रेरणा दी। चतुर्दशी की एक पहर रात शेष रहने पर कहा कि ''आज राजभोग गोवर्धन पर होगा। भगवान की लीला सर्वथा विचित्र हैं। नरसिंह चतुर्दशी को वे गोवर्धन लाये गये। राजभोग में विलम्ब हो गया। राजभोग और शयन भोग साथ ही साथ दोनों उनकी सेवा में रखे गये। नरसिंह चतुर्दशी को वे उसी दिन से दो राजभोग की सेवा से पूजित होते हैं।

उनका देहावसान सं. १६४२ वि. में रुद्रकुण्ड पर एक इमली के वृक्ष के नीचे हुआ था। वे शृंगार मिश्रित भक्ति प्रधान कवि, रसिक और महान् भगवद्‌भक्त थे।

कल्याण : भक्त चरितांक

चतुर्भुजदास

चतुर्भुजदास का जीवन–वृत्तांत 'दोसौ बावन वैष्णवन की वार्ता' सं. ३ और 'अष्टसखान की वार्त्ता' सं. ७ में दिया हुआ है। इन दोनों पुस्तकों में उनकी जीवन–घटनाओं से संबंधित कई चमत्कारपूर्ण एवं अलौकिक कथाएँ दी हुई हैं। इस प्रकार की कथाओं में विश्वास रखने वाले भावुक भक्तों को इनसे आनंद प्राप्त हो सकता है, किंतु अन्य व्यक्तियों को इनमें रुचि होना कठिन है। अष्टछाप के कवियों की प्रामाणिक जीवन–घटनाएँ उपस्थित करने में सबसे बड़ी असुविधा यह है कि वार्ता साहित्य के अतिरिक्त अन्य साधनों से उन पर बहुत कम प्रकाश पड़ता है। जहाँ अन्य साधनों से काम नहीं चलता है, वहाँ बाध्य होकर वार्ता साहित्य का ही सहारा लेना पड़ता है।

चतुर्भुजदास ने गोसाई बिट्ठलनाथ जी के देहावसान पर दुखित होकर कुछ पदों की रचना की थी। इससे प्रकट होता है कि वे गोसाई जी के देहावसान तक विद्यमान थे। इसके अतिरिक्त उनकी रचनाओं के अंतःसाक्ष्य से ऐसी कोई बात ज्ञात नहीं होती, जिससे उनके भौतिक चरित्र पर कुछ प्रकाश पड़ता हो। बाह्य साक्ष्यों से भी उनके चरित्र विषयक कोई सामग्री प्राप्त नहीं होती है। नाभादास जी ने अपने भक्तमाल ग्रंथ में चतुर्भुज नाम धारी दो अन्य भक्तों के वृत्तांत का कथन किया है। भक्तमाल के टीकाकार प्रियादास ने भी उनका कोई वृत्तांत नहीं दिया है। ध्रुवदास कृत भक्त–नामावली में एक चतुर्भुज नाम भक्त का उल्लेख हुआ हैं। यदि उसे अष्टछाप का चतुर्भुजदास समझा जाय, तब भी इससे उनकी भक्ति–भावना के अतिरिक्त उनके भौतिक चरित्र पर कुछ भी प्रकाश नहीं पड़ता है। ऐसी दशा में 'दोसौ बावन वार्ता' और 'अष्टसखान की वार्ता' के अलौकिक विवरणों में से बुद्धिगम्य बातों के आधार पर ही उनका कुछ भौतिक जीवन–वृत्तांत लिखा जा सकता हैं।

वार्ता साहित्य में चतुर्भुजदास के जन्म–संवत् का स्पष्ट उल्लेख नहीं है, अतः भिन्न–भिन्न विद्धानों ने उपके जन्म सवत् का अनुमान भिन्न–भिन्न रूप रो किया है। श्री कंठमणि शास्त्री के मतानुसार उनका जन्म सं. १५५७

से १५८० तक किसी समय हुआ था। 'संप्रदाय कल्पद्रुम' के अनुसार उनका जन्म सं. १५६७ में हुआ था। यही संवत् डाक्टर दीनदयाल गुप्त को भी मान्य है। यह संवत् स्वीकार करने से अष्टछाप की स्थापना के समय उनकी आयु केवल ५ वर्ष की होती है ! वार्ता से ज्ञात होता है कि उनके जन्म के इकतालीसवें दिन गोसाईं विट्ठलनाथ जी ने उनको मंत्र–दीक्षा देकर उनका ब्रह्म–संबध कराया था, तभी से वे पद–रचना करने लगे थे ! अपनी बाल्यावस्था में वे श्री गोवर्धननाथ के साथ खेलते थे और उनकी अंतरंग लीलाओं में सम्मिलित होकर तत्संबंधी लीला–विषयक पदों की रचना करते थे ! जिन लोगों को इन अलौकिक बातों में विश्वास हो, उनको 'संप्रदाय कल्पद्रुम' में दिये हुए जन्म–संवत को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होगी, किंतु जिनकी बुद्धि इन चमत्कारपूर्ण बातों को ग्रहण करने में असमर्थ है, वे उक्त संवत् को कदापि स्वीकार नहीं करेंगे। श्री द्वारिकादासजी पारीख भी पहले चतुर्भुजदास का जन्म संवत् १५६७ मानने के पक्ष में थे, जैसा उन्होने प्राचीन वार्ता रहस्य, द्वितिय भाग में लिखा है, किंतु अब वे सं. १५८७ में उनका जन्म होना मानते हैं। काल–क्रम के विचार से हमने भी यही संवत् स्वीकार किया है।

उनका शरण–काल 'संप्रदाय कल्पद्रुम' के अनुसार सं. १५६७ मानने में कोई बाधा नहीं है। उनका देहावसान भी गो. विट्ठलनाथ जी के लीला–प्रवेश के अनंतर सं. १६४२ में होना सर्वमान्य है।

हिन्दी के इतिहास ग्रंथों में उनके रचे हुए कई ग्रंथों का नामोल्लेख मिलता है किंतु वे इसी नाम के अन्य कवियों की रचनाएं है। चतुर्भुजदास ने कीर्तन के केवल स्फुट पदों की रचना की थी। श्री द्वारिकादास पारीख ने चतुर्भुजदास कथित ब्रजभाषा गद्य की एक पुस्तक 'खट ऋतु की वार्ता' प्रकाशित की है, किंतु यह हरिराय जी की रचना ज्ञात होती है।

अष्टछाप के कवि पुस्तक से

चतुर्भुजदास

हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रथो मे चतुर्भुजदास नाम से दो प्रसिद्ध कवियों का उल्लेख प्राप्त होता है। चतुर्भुजदास नाम के एक भक्त कवि अष्टछाप के सुप्रसिद्ध कवि हैं और दूसरे राधावल्लभ सम्प्रदाय के भी एक भक्त कवि इसी नाम के हुए हैं। प्रारम्भ में दोनों की ही रचनाओं को भ्रमवंश एक ही समझा जाता रहा, किन्तु डा. दीनदयालु गुप्त ने 'अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय' ग्रन्थ से इस भ्रम का निवारण किया हैं।

अष्टछाप के भक्त कवि चतुर्भुजदास का चरित्र 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' और 'अष्टसखान की वार्ता' में मिलता हैं। उनका जन्म सन् १५३० में स्थिर किया जाता हैं। 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम' के अनुसार उन्होंने सन् १५४० ई. में दीक्षा ग्रहण करके पुष्टिमार्ग स्वीकार किया था। उनका निधन सन् १५८५ ई. में हुआ। चतुर्भुजदास की शैशव से ही कविता में रुचि दिखने लगी थी। अष्टछापी कवि कुम्भनदास की वे सातवीं सन्तान थे। अपने पिता के काव्य रचना संस्कारों से परिपूर्ण होने के कारण आपने पिता द्वारा सर्वाधिक प्रेम और वात्सल्य प्राप्त किया था। उनका जन्म–स्थान जमुनावतौ नामक गाँव था, जो गोवर्धन के समीप ही हैं।

चतुर्भुजदास ने किसी ग्रंथ विशेष की रचना नहीं की। स्फुट पदों के रूप में ही उनकी काव्य–रचना प्रक्रिया आजीवन चलती रही। उनके पदों के तीन संग्रह कांकरोली विद्या विभाग की ओर से 'चतुर्भुज कीर्तन संग्रह', 'कीर्तनावली' और 'दानलीला' शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं। उनकी कविता में भक्ति–भावना और माधुर्य शृंगार की अच्छी छटा दृष्टिगत होती हैं। भगवान कृष्ण के जन्म से लेकर गोपी विरह तक के प्रसंगों का उनके पदों में वर्णन हैं। 'मधुमालती' नामक एक रचना चतुर्भुजदास के नाम से प्रसिद्ध हैं। किन्तु यह रचना किसी और चतुर्भुजदास की प्रतीत होती हैं। सभी अन्वेष्क विद्वान इसे अन्य व्यक्ति की कृति स्वीकार करते हैं।

धीरेन्द्र वर्मा (हिन्दी साहित्य कोष भाग - २)

चतुर्भुजदास

चतुर्भुजदास ने 'गोवर्द्धन पूजा' का वर्णन बड़े विस्तार से किया है। गिरिधर को गंगाजल से नहलाने, दूध चढ़ाने, अरगज चरचने, धूपदीपनैवेद्य समर्पित करने, भोग लगाने बीरा देने, आरती करने और प्रदक्षिणा के पश्चात् न्यौछावर देने की बात उन्होंने कही है।

चतुर्भुजदास का 'हटरी प्रसंग' भी कुछ कुछ ऐसा ही है। उनके गिरिध ार जब हटरी में विराजमान हैं तब ब्रजबालाएँ, भाँति–भाँति के मेवा लाती हैं। उधर रोहिणी और यशोदा 'डला' भर–भरकर पक्वान लाती हैं। श्याम सबको बुला बुलाकर उन्हें अपने हाथ से मिठाई देते हैं।

चतुर्भुजदास 'धौरी' की अकुलाहट का वर्णन तो कुंभनदास की भांति ही करते हैं किन्तु एक बात अवश्य उन्होंने नई लिखी है। जब श्रीकृष्ण गाय खिलाने (चराने) जाते हैं तो गायों की अपार भीड़ देखकर माता उन्हें जाने से रोक लेती है। श्रीकृष्ण के रुकते ही समाचार मिलता है कि बिना लाल के 'ध ौरी' ने खेलना (चरना) बन्द कर दिया है और बार–बार हूक कर इधर–उधर दौड़ रही है। तब श्याम प्रफुल्लित होकर मुरली बजाते हैं।

चतुर्भुजदास ने गोकुल की नारियों के नन्दराइ की पौरि पर 'जरि आने' की बात कही है। उनके शृंगार का वर्णन भी कवि ने किया है। 'कटाव को चोली', झूमक सारी पटने एवं कण्ठश्री' 'मखतूल' मोती और गजमोती के हार' कंकन किंकिणी नुपूर, 'खुढिला', खूभी, 'नकबेसरी' आदि आभूषणों के नाम दिये हैं।

चतुर्भुजदास की गोपियाँ लालन को पकड़वा कर 'ताण्डव नाच' करने को बाध्य करती हैं।

चतुर्भुजदास ने कृष्ण की उन्मत्तता एवं उदण्डता का वर्णन एक गोपी से कराया हैं। वह कहती हैं कि होली खेलते खेलते मोहन ने गुलाल, अबीर और कुमकुमा से मेरा बदन भर दिया। खीझने की कुछ चिंता न करके, निकट आकर मेरा आँचल झटका और मुझे अंक में भर कर मेरे कपोल चूम लिये।

डॉ. मायारानी टण्डन (अष्टछाप काव्य सांस्कृतिक मूल्यांकन)

सन्दर्भ ग्रन्थ

क्र.स.	पुस्तक का नाम	लेखक
१	हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
२	हिन्दी साहित्य का इतिहास	श्री ब्रजरत्नदास
३	हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा. नग्रेन्द्र
४	हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	डा. श्रीराम कुमार वर्मा
५	हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	श्री गुलाबराय, एम.ए.
६	हिन्दी साहित्य कोश भाग-२	डा. धीरेन्द्र वर्मा,श्री ब्रजेश्वर वर्मा
७	हिन्दी साहित्य एक परिचय	डा. त्रिभुवन सिंह
८	हिन्दी साहित्य का इतिहास	प्रो. भारतभूषण सरोज
६	हिन्दी के वैष्णव कवि	श्री ब्रजेश्वर, एम.ए.
१०	हिन्दी साहित्य का वस्तुपरक इतिहास	डा. रामप्रसाद मिश्र
११	हिन्दी साहित्य का इतिहास	श्री श्यामचन्द्र कपूर
१२	हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा. हृदयेश मिश्र, श्री शिवलोचन पाण्डेय
१३	हिन्दी साहित्य का नवीन इतिहास	डा. लालसाहब सिंह
१४	हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ	श्री जयकिशन प्रसाद
१५	हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ	डा. जयशंकर प्रसाद
१६	ब्रज का इतिहास भाग-२	श्री कृष्णदत्त वाजपेयी
१७	हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास	श्री देवीशरण रस्तोगी
१८	महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य का पुष्टिमार्ग	सम्पा. श्री हरिदास शर्मा
१६	कृष्णकाव्य की रूपरेखा	उपाध्याय श्री वेदमित्र 'व्रती'
२०	सूर की काव्य कला	श्री मनमोहन गौतम
२१	भक्तमाल	– – –
२२	सरोज सर्वेक्षण	डा. किशोरीलाल गुप्त
२३	मिश्रबन्धु विनोद	– – –
२४	ब्रज साहित्य का इतिहास	डा. सत्येन्द्र

२५	सम्प्रदाय कल्पद्रुम	– – --
२६	अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय	डा. दीनदयाल गुप्ता
२७	अष्टछाप परिचय	श्री प्रभुदयाल मीतल
२८	सूर संग्रह	श्री प्रभु दयाल मीतल
२६	श्री गोविन्द स्वामी	गो. श्री ब्रजभूषण शर्मा
३०	कल्याण भक्त चरितांक	गीताप्रेस, गोरखपुर
३१	सूर साहित्य और सिद्धान्त	श्री यज्ञदत्त शर्मा
३२	सूर मीमांसा	डा. ब्रजेश्वर वर्मा
३३	हिन्दी साहित्य	डा. श्यामसुन्दर दास
३४	अष्टछाप काव्य का सांस्कृतिक मूल्यांकन	डा.मायारानी टण्डन
३५	हिन्दी साहित्य रत्नाकर	डा. विमलकुमार जैन
३६	हिन्दी कृष्ण-काव्य में भक्ति एवं वेदान्त	डा. संतोष पाराशर
३७	कीर्तन मणि रत्नमाला	वैष्णव मित्र मंडल, इन्दौर
३८	अष्टछाप	डा. धीरेन्द्र
३६	पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह भाग १ से ४	वैष्णव मित्र मंडल, इन्दौर
४०	चौरासी वैष्णवन कीवार्ता	वेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई
४१	दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता	वेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई
४२	नित्य कीर्तन संग्रह	लल्लूलाल छगन भाई
४३	नागर समुच्चय	– – –
४४	कल्याण संतअंक	गीता प्रेस, गोरखपुर
४५	अष्टछाप : स्मृति ग्रंथ	सं॰ श्री भगवतीप्रसाद देवपुरा

नाटिका



खण्ड

"जै श्रीनाथजी"

पाटोत्सव २००२ के औसर पै साहित्य-मण्डल, श्रीनाथद्वारा की ओर सौं आयोजित

ब्रजभाषा कार्यक्रम के अन्तर्गत मंचन हेतु

ब्रजबाल नाटिका

गुरु-गोविन्द के चरणचञ्चरिक

भक्त-श्रीचतुर्भुजदास

✻ रामशरण पीतलिया

प्रस्तुति : साहित्य-मंडल श्रीनाथद्वारा के ल्हौरे ल्हौरे बालक

पात्र - परिचय

गोस्वामी श्रीविठ्ठलनाथजी	–	*अष्टछाप के संस्थापक*
भक्त कुंभनदास	–	*चरितनायक के पिताश्री*
भक्त चतुर्भुजदास	–	*चरितनायक*
भक्त छीत स्वामी	–	*अष्टछाप के एक भक्त*
भक्त गोविन्द स्वामी	–	*अष्टछाप के एक भक्त*
भक्त सद्दू पांडे	–	*श्रीवल्लभाचार्यजी के शिष्य*
एक गोपी	–	*माखन चोरी प्रसंग में एक पात्र*
एक ब़ालक	–	*श्रीजी महाराज की भावना का प्रतीक*
श्रीगोकुलनाथजी स्वामी	–	*गोस्वामी विठ्ठलनाथजी के लालजी*

बाल नाटिका

भक्त चतुर्भुजदास

वन्दना (समवेत स्वरों में)

(१)

जय रसिक शिरोमणि, जन मन मोहनि, कृपासिंधु श्री नाथ हरे।
जय भव भय मोचन, वारिज लोचन, दीन जनन के कष्ट टरे।।
जय कलिमल हारी, ब्रज रखवारी, बनवारी बन बन बिहरे।
जय असुर निकन्दन, मुनि मन रंजन, बिगरे काज सरें सिगरे।।

(२)

जय जय श्री नाथा, नाथ अनाथा, गाथा भक्तन मन उचरे।
जय वल्लभ प्यारे, नेह दुलारे, होहु सहारे शरण परे।।
अब आश्रय लीना, सुनहु प्रबीना, मैं अति दीना दुःख हरे।
जय असरन सरना, करुना करना, बालक बचनन चित्त धरे।।

आचार्य श्री की स्तुति- (समवेत स्वर)

(१)

आचार्य वर हम आज मिल हे नाथ वन्दन कर रहे।
श्रद्धा विनय अरदास कर हम दास चरनन पर रहे।।
हम गहें परिपाटी मनोहर नाथ यह वर दीजिए।
सत आचरण सत्पथ चलें हे प्रभु शरण में लीजिए।।

(२)

नादान हम बालक तिहारे, ज्ञान का अवदान दो।
श्रीनाथ चरनन चित रहै नित नाथ यह वरदान दो।।
शिक्षा हमारी राष्ट्र हित हो, सतत मंगल कार्य हो।
दीन हीन गरीब सेवा, प्रभु हमें स्वीकार्य हो।।

(३)

हम भगवदीय चरित्र मानस नित्य अवगाहन करें।
मनन चिन्तन उर धरें अरु आचरण अनुदिन करें।
सखा बन श्रीनाथ जिनके साथ खेले मोद सौं।
वे अष्टछाप चरित्र पावन करें याद विनोद सौं।।

दृश्य-१

(कुंभनदास के खेत कौ दृश्य। सघन वृक्षावली परदे पर दिखाई देय हैं, खेत की मेंड पै भक्त कुंभनदास बैठे भए हैं। बिनके हाथ भगवान श्रीनाथ कौ चित्रपट है। वे कबहुं हँसें हैं-कबहुँ सिर कूँ हिला हिला कें भगवान सौं संकेतन में बतियावें हैं। कबहुँ बिनकूँ दुलारें हैं-कबहुँ लाड लडावें हैं। भावुक तन्मयता की स्थिति में कबहुँ हर्ष विभोर है कें नाचिबे लग परें हैं।)

कुंभनदास -***(अपने आप सौं कहते भए)*** हे नाथ, आपकी लीला बड़ी विचित्र है। आप मो जैसे अकिंचन पै कृपा करै हौ। बड़े नेह सौं बात करौ हौ। मैं धन्य हूँ– मेरौ भाग्य धन्य है।

एक बालक स्वर -***(परदा के पीछे सौं)*** कुंभना का बात है ? आज तू उदास क्यौं दीख रयौ है ?

कुंभनदास -***(सहसा चौंकते भए)*** ऐं..........का कही ? ....
कुंभना उदास च्यौं है ? लाला, जब तू मेरें जौरी है, तौ मोय काहे की उदासी ?

एक बालक स्वर -***(परदा के पीछे सौं)*** फिरहू कोई बात तौ है।
इतनौ उदास तौ तू रहै नाय।

कुंभनदास -***(परदा कूं देखते भए)*** लाला तू तौ घटघटबासी है। अर्न्तयामी है। तो ते कछू छिप्यौ नाँम। तू सबके मन की जानै है। फिर मोते क्यों पूछौ हौ ? मैं कहा बताऊँ लाला बूझै–मैं चुप्पउ कैसैं रहूँ ? लाला तोय पतौ है। जब सत्संगी ना मिलै–सत्संग ना होय। सत्संग ना होय–तैरौ चिन्तन ध्यान का तरियां होय ? घर में कौन ते बतराऊँ ? कौन कूं मन गुन की सुनाऊं ? कौन ते आपकी चरचा करूँ ? और जब चरचा नांय तौ या मन कूं का तरियां समझाऊँ ? कैसैं चैन पाऊँ ? कैसैं सुख पाऊँ। लाला तो पै मेरौ पूरौ विश्वास है, फिरऊ च्यौं पूछै–कुंभना काहे कूं उदास है ?

एक बालक स्वर -***(परदे के पीछे सौ)*** कुंभना, जब सांझ सकारे, रात–द्यौस, मैं तेरें संग रहूँ, खेलूं हूँ, खाऊं हूँ फिर हू सत्संग की चाहना च्यौं है ? सत्संग कौ औरउ महत्व अधिक है का ?

कुंभनदास -***(परदा माऊँ देखिकैं)*** लाला, जि कहा कही? औरउ

अधिक महत्व है का ? हाँ, अधिकइ महत्व है, बहुतइ अधिक महत्व है। संसारी प्रपंचन में मन उरझि उरझि जावै है–या कूं सत्संगइ सुरझा बै। सत्संग बिना घर सूनौ–मन सूनौ। लाला तोकूं सब पतौ है–मेरैं सामई कैसौ भोरौ बतरावै ? जैसें या पै कछू नाँय आवै।

एक बालक स्वर -*(परदा माऊं देखिकैं)* तौ कुंभना, सूधी च्यौं ना कहै ? घर में सत्संगी बालक चइए। बड़ी घुमाय कैं बात करै ?

कुंभनदास -*(परदा माऊं देखिकैं)* ऐं कहा कही ? मैं घुमाय कैं बात करूँ? लाला तैने तौ ई सिगरौ संसार घनचकरी बना राखौ है - तो कूं मैं कहा घुमाऊँगो। लाला, तू तौ आपइ पूरै आपइ तानै - तेरे भीतर को कोऊ ना जानैं।

एक बालक स्वर -*(परदा के नीछे सौं)* कुंभना, अब तेरौ मन सूनौ सूनौ ना रहैगौ। घर सूनौ ना रहैगौ। सत्संगी पूत घर आवैगौ। सत्संग की बगिया महकावैगौ। भक्ती की रसधारा बहावैगौ।

कुंभनदास -*(परदा माऊं देखिकै)* ऐं, का कही ? सत्संगी पूत घर आवैगौ। सत्संग की बगिया महकाबैगौ। लाला, जि मैं कहा सुन रयौ हूँ। बात साँची है कै सपनौ है **(कानन नैं परदा माऊं करै)** मैं जाग रयौ हूं कै सो रयौ हूँ। या मधुर वाणी की रसधार एक बेर फिरकत्ता बहाऔ लाला। इन इमरत सने बचनन कूँ एक बेर फेर सुनाऔ लाला।

एक बालक स्वर -*(परदा के पीछे सौं)* सुपनौ नांय साँची है–सांची–साँची सौ टंचखरी–अब कछु समझ परी। कुंभना !

कुंभनदास -*(पर्दा माऊं देखिकैं)* समुझ गयौ लाला, समुझ गयौ। नित्त सत्संग होयगौ। प्रभु भक्त आवैगौ–सपूत घर आवैगौ। सुन लीनी मेरी अरदास–पूरी है रई है मेरी आस। **(प्रसन्नता में नाचबे लग परै)** जय श्रीनाथ, जय जय श्रीनाथ, जयजय श्रीनाथ, जय जय श्रीनाथ.....। सपूत घर आवैगौ–सत्संगी घर आवैगौ। आप कितने कृपालु हैं नाथ। **(पत्नी को खेत पर आता हुआ देखकर)** औ मैया कृष्णदास की... । अरी भागवान, नैंक बेगि आऔ। खूब अच्छे औसर खेत पै आई।

कुंभनदास की पत्नी -***(सिर पै रखी भई डलिया को एक लंग रखती भई)*** आज तौ अकेलेन कौ बडौ नचकना उडि रयौ है। का बात है गई। का खुशवक्ती दै दई। कैसैं हेलाहेल मचा दए। का बात है ?

कुंभनदास -***(अपने जौरी बिठाते भए)*** देख, तू हू सुनैगी तौ खुशी कै मारै नाचबे लगैगी। बातइ ऐसी है। बरसन की साध, मुद्दतन की अरदास आज पूरी है बे पै आई है।

कुंभनदास की पत्नी -***(अचंभौ प्रकट करती भई)*** कैसी साध, कैसी अरदास, साफ साफ बताऔ–पहेली काहे कूं बुझाऔ। मैं समझ ना रही।

कुंभनदास -***(तसल्ली दैंते भए)*** समझाऊंगो तबइ तौ समझैगी, तसल्ली सौं ध्यान दै कैं सुन । श्रीनाथजी सौं एक सत्संगी बालक पाइबे की अरदास कीनी ही। आज मेरी वू साध पूरी भई। भगवान तौ बडेई दयालु हैं–बिन्नै कह्यौ है,ई बालक प्रभु भक्ति में अनुरक्त होयगौ–भावलोक में प्रभुचर्चा, लीला और सत्संग में पारंगत होयगौ।

कुंभनदास की पत्नी -***(अचंभौ प्रकट करती भई)*** या बात पैई फूल कैं कुघा नांय बजरबट्टू है रये हौ। खूब बरदान लीनौ। खूब अरदास कीनी। धन्न हौ आपउ।

कुंभनदास -***(समझाते भए)*** पुत्र के वरदान ते तोकूं प्रसन्नता ना भई ? कुंभनदास की पत्नी–पुत्र, पुत्र.........नाक में दम कर रखौ है इन पुत्रन नैं। पाँच पाँच तिहारे पूत तौ न्यारी न्यारी गिरस्ती बसाय कैं बैठे भए हैं। घर बट गयौ। खेत बट गए। यहां पै जंगल में आय डेरा जमानौ परौ है। कृष्णदास कूं भगवान की गैयान पैतेई अवकाश ना मिलै। अब सातवें के वरदान पै आसमान सिर पै उठा राखौ है। आप धन्य हौ–आपके ठाकुरजी हू धन्य हैं।

कुंभनदास -***(समझाते भए)*** बिन पुत्रन में और यामें मोटौ फरक है। वे सिगरे संसारी हैं–पांचों के पांचों। ई भगवदीय होयगौ। कुंभनदास की पत्नी–(मुंह बनाते भए) घर में रहौ तौ पते

परैं। नित्त की धमा चौकड़ी–नित्त कौ महाभारत।

कुंभनदास -*(धीरे से)* मैं हू तौ ई चाहूं कै या महाभारत ते शान्ति मिलै। भगवतचर्चा कौ वातावरण बनैं।

कुंभनदास की पत्नी -*(पछतावे के सुर में)* शान्ति शान्ति...या शान्ति की बाट जोहतैं जोहतैं अधबूढ़ी तौ है आई। अब आवै अबइ सई।

कुंभनदास -*(डांटते भए)* आज काहू ते लरि कैं आई है कै खरखरे में सोई है। या तरियां तौ तू कबहुं ना बोली। का बात है? सांची बता।

कुंभनदास की पत्नी-*(रोते भए)* मेरी तुम कबहुं सुनौ हौ का?

कुंभनदास -मैं ने कब ना सुनी। और कौन सुनैगौ। कबहु प्रभु चिन्तन में ध्यान ना रहै–ऊ बात दूसरी है।

कुंभनदास की पत्नी -मैं तो सदा तेई आपकी अनुगमिन बन कैं रह रई हूं। आपकी प्रसन्नता में सुखी, दुख में दुखी। नैंक घर कौध्यान रह्यौ आयौ हौ–या की परेशानी ही। आप मोकूं छिमा करियौं।

कुंभनदास -या की कोऊ बात नांय। चलैं ठाकुरजीन के दरसनन कौ टकोरा है गयौ है। ***(दोनों नाचते गाते चले जाते है-)***

परदा

दृश्य - २

(आन्यौर गाँव की एक बगीची-कुंभनदास बैटे भए हैं। हाथन में सदा की तरियां भगवान श्रीनाथ जी कौ चित्रपट है। मुदित भाव सौं भाव लोक मांहि बिचर रये हैं। भगवान श्रीनाथ सौं बतियाबे में आप इ आप मगन है रये हैं)

कुंभनदास- *(चित्रपट मांऊ टकटकी लगाय कैं आपइ आप)* लाला तू घर सौं सूधौ चलौ आवै। देख तौ ये अलकावली का तरियाँ बिखर रई हैं। ठौर ठौर जि ब्रज रज लगी भई है।

एक बालक कौ सुर -*(परदा के पीछे सौं)* कुंभना, देख आज कहीं चलनौ है। गोविन्द, छीतू सबइ तैयार है गए हैं। तू जल्दी उठ बेगी

चलनौ है।

कुंभनदास -(**परदा पै लगे भए चित्र मांऊ उत्सुकता सौं देखतौ भयों**) हैं, कहा कही ? अबइ बेगी कहूँ चलनौ है। कहाँ चलनौ है लाला? हाँ–कहाँ चलनौ है ?

एक बालक कौ सुर -*(**परदा के पीछे सौं**)* कुंभ्ना, मोय माखन बहुत प्यारौ लगै। माखन चोरी करबे चलनौ है।

कुंभनदास -*(**उत्सुकता सौं देखते भए**)* हैं–कहा कही? माखन चोरी करबे चलनौ है। तौ जि बात है ? चलौ भैया, तेरी राजी में हमारी राजी। *(**चलबे कौ अभिनय करै है-बगल ते तीन अन्य बालकन कौ प्रवेश होय है। चारों जने मंच कौ चक्कर लगावैं-एक ठौर ठाडे है जांय**)*

कुंभनदास -*(**एक घर मांहि इंगित करतौ भयौ**)* तौ भैया गोविन्द जि जगह ठीक रहैगी ? लगै घर सूनौ है।

गोविन्द -*(**स्वीकारात्मक सिर हिलाते भए**)* हाँ, कुंभनदास बात तौ ठीक है देख सांकर लगी भई है। खोल कै देखौ।

छीतू -*(**सांकर खोलते भए**)* जि देख लाला ; माखन की हंडिया, जि देख दही की मलरिया। अब बेगी करौ।

कुंभनदास - *(**मूढा, चौकी उठायवे कौ अभिनय करैं**)* जि मूढा, जि चौकी अब लाला सब बानक बनि गयौ चढ ऊपर और पकर मलरिया, हंडियान कूं।

*(**पर्दे पै लगे भये चित्र पै कुंभनदास संकेत करै हैं। या चित्र पै दरसायौ गयौ भाव या तरियाँ है-बड़ी चौकी, ता ऊपर छोटी चौकी, ता पै औरउ छोटी चौकी-वापै ठाडे भए श्री जी महाराज-ऊपर ते दही की मलिरिया पकरि राखी है-उत्तरीय खिसक रयौ है-दो और हातन ते वा उत्तरीय कूं रोक राखौ है। चतुर्भुज सरूप के विलक्षण दर्शन**)*

गोविन्द -*(**सबन कैं संग अचरज की मुद्रा बनाते भए**)* हैं, जि कहा चमत्कार है गयौ। अद्भुत चतुर्भुज सरूप के दर्शन।।

कुंभनदास -*(**अचंभौ करते भए**)* लाला, तेरी लीला कौ कोऊ पार

नाँय। बोल चतुर्भुज प्यारे की जय।। बोल नन्द के दुलारे की जय।।

छीतू -*(सुर में सुर मिलाते हुए)* बोल वंशी बोर की जय। बोल चारभुजा बारे की जय।।

गोविन्द - आऔ आऔ भैया सिगरे आऔ। चतुर्भुज प्यारे की वन्दना करैं।

(सिंगरे मंच पै इकौरे है कैं वन्दना गावैं। मुख्य सुर कुंभनदास कौ होय। परदा पै चित्र कूं संकेत करि करि मैं वंदना करैं-)

माथे कस्तूरी तिलक, उर कौस्तुम की माल।
नकबेसर नासा लसे, मुरली हाथ रसाल।।
अंग अंग चन्दन लसे, कर कंकण गल हार।
ब्रज गोपी के यूथ में, शोभित जगदाधार।।
राजत है मुख चन्द्र पै, इन्दीवर उजियास।
मोर पंख सिर राजतौ, मंगल मोद निवास।।
आवृत ग्वाला गोप गौ, मुरली मधुर बजात।
ज्यौं नीलम मणि शैल पै, आतप होत प्रभात।।

(अचानक गोपी कौ प्रवेशः क्रोधित मुद्रा-डंडा हाथ में लिए भए।)

गोपी -तौ जि बात है–*(लौदरी फटकारते भए)* आज मैं सबन्नैं देखूंगी। (मौहडौ पकारि कैं अचानक बैठ जाए।) हैं, जिका भयी–मेरे मौहडे पै दही कौननैं फैकौ ? ***(सब ग्वाल बाल लपकि कैं भाग जावैं हैं)***

कुंभनदास -*(घर ते बाहिर निकस कैं सब इककौरे हौंय हैं। तब कौ कथन)* जि तौ लाला नैं ठीक कीनौ।गोपीके मौहंडे पै दही कौ कुल्ला कर दीनौ। बुतौ मोंहडे कूं पौंछती रही बिचारी।

छीतू -नई तौ आज हमारी आती चोखी–ख्वारी। देखी नाहीं बु गोपी की लौदरी।

गोविन्द -हां बु लौदरी तौ बडी सटकारी ही। आज पिटाई पै ते

खूब बचाए। धन्न है तेरी लीला, धन्नि है लीलाधर।

(तीनों बातन में व्यस्त हे-तबइ एक भक्त कौ प्रवेश)

भक्त -वधाई, भगत कुंभनदास जी बधाई।

कुंभनदास -भैया, का बात है ? कहा समाचार है ? काय की बधाई है? कछू बताऔ ना ?

भक्त -अरे भगत कुंभनदास जी, तिहारे घर लाला नैं जनम लीनौ है। जाकी बधाई दैबे आयौ हूँ। तिहारौ मन तौ कबहूं घर गिरस्ती माऊं फिरै ही नांय। जब देखौ ध्यान मगन। बंशी बारे तेई लगन। आप धन्य हौ।

कुंभनदास -*(प्रसन्नता व्यक्त करते भए)* घर लाला नैं जनम लीनौ है। वाह बंशी बारे।

गोविन्द -जि तौ बाबा बड़ी ही प्रसन्नता कौ समाचार है। हमारी हू बधाई स्वीकारौ।

छीतू -हाँ, या ते अधिक प्रसन्नता और का होयगी ? बधाई दादा, बहौत बहौत बधाई।

कुंभनदास -*(उमंग व्यक्त करते भए)* इतमें चतुर्भुज सरूप में दर्शन दै रये है–बितमें लाला कौ जनम भयौ है। *(सहसा नाचते भए)* धन्य भाग हमारे–घर में चतुर्भुजदास पधारे।

गोविन्द -अरे आपनैं तौ नामकरण हू कर दीयौ। प्रसंग सौं जोरि कैं बात करिबौ कोऊ आपते सीखै।

छीतू -हाँ भैया गोविन्द, हमारे कुंभनदादा की जि तौ सबसे बड़ी विशेषता है।

भक्त -आप धन्य हौ, आप कुंभनदासजी।

कुंभनदास -अरे मैयाऔ, नाम धरवैया मैं कौन हूँ। वो नटखट भावलोक में आइ कैं लीला दिखावै। कबहुं हँसै, कबहुँ हँसावै, बुई रीझे–बुई रिझावै। अबइ अनौखौ चतुर्भुज सरूप दिखायौ है। या बालक कौ चतुर्भुजदास नामइ सार्थक नाम है। सब तरियां सार्थक।

सब -*(सम्मिलित स्वर)* आप धन्य हौ, आप धन्य हौ। *(सब नाचबे लोगे हैं)* जै जै बंशी बारे। प्यारे जै जै बंशी बारे प्यारे। जै जै बंशी बारे................। *(पर्दा गिरैहै)*

दृश्य तीन

(कुंभनदास कौ घर। कुंभनदास की पत्नी अरू वाकी भतीजी बैठी भई है। आपस की बात चीतन में व्यस्त। दोऊ चटाई पै बैठी भई हैं। तबइ कुंभनदास कौ प्रवेश होवै। कुंभनदास की पत्नी कहे है।)

कुंभनदास की पत्नी -आज तौ आइबे में बहुत देर लगा दई। इकलेई आए? हमारौ लाला कहाँ रह गयौ ?मैं तौ बड़ी देर ते बाट देख रई ही। अब आये तौ इकलेई आए।

कुंभनदास -हमारौ लाला रहै है अब श्रीजी की सेवा में। बितते उकास मिलै तौ घर आवै। श्रीजी वाकूं अपने संगइ राखैं हैं।

कुंभनदास की पत्नी -संगइ राखै हैं ? जिं महाराज कहा लीला है ? मेरें तौ कछु समझ ना आवै।

कुंभनदास -श्रीजी जब भावलीला सौं गोचारण कैं तईं जावैं–हमारौ लाला संग रहै। जब न्यारे न्यारे खेल खेलैं, हमारौ लाला संग रहै। बडौ आनन्द आवै श्रीजी कूं चतुरभुज कैं संग खेलबे में ।

कुंभनदास की पत्नी -मोसौं आप बहुत छिपाऔ। ई बात पैलैं नांय बताई,मोकूं तौ बडौ अचरज है रयौ है।

कुंभनदास -अचरज की बात नाँय, हमारौ ई बालक बहुतई चमत्कारीहै

कुंभनदास की पत्नी -कैसौ चमत्कारी नाथ !

कुंभनदास -नाम निवेदन के औसर पै ई खिलखिलाय कै हँसौ हौ, जैसें गुसाईं जी कूं जनम जन्मान्तर ते जानतौ होय। श्री चरनन में माथौ टेकौ हौ तौ याकौ गंभीर भाव देखवे जोग हौ। ऐसी सन्तान पैले जनमन के पुण्य प्रताप सौं ही मिलै है।

कुंभनदास की पत्नी -हाँ नाथ, इतनौ परिवर्तन तौ मैं हूं देख रई हूं कै जब तानू श्रीजी के दरसन ना कर लेइ तब तानू दूधइ ना पीवै है।

कुंभनदास -हां, या लाला में पक्के वैष्णव अरू परम भगवदीय के सिगरे लच्छन कूट कूट कैं भरे भए हैं। हम धन्य है गए, ऐसी योग्य सन्तान पाइकैं।

कुंभनदास की पत्नी -हाँ नाथ या में नैंकउ सन्देह ना है सकै। जाकौ मन श्रीचरनन में लगै–ताते अच्छौ कौन है सकै ?

कुंभनदास -हाँ इतनी लगन, इतनी तल्लीनता काहू परम भगवदीय में ही मिल सकै है।

कुंभनदास की पत्नी -ऐसी भगवदीय सन्तान पाइकैं हमारौ जनम हू सफलहै गयौ नाथ। ब्रज में बसिबौ सार्थक है गयौ नाथ।

कुंभनदास -या बालक नैं तौ जनम ते पैलैं ई भावलोक की अनौखी लीला दिसाई ही। मैं कृतारथ है गयो। वा माखनचोर लीला में मोकूं माखनचोर के चतुरभुज सरूप के दर्शन भए हे।

कुंभनदास की पत्नी -चतुरभुज सरूप के दर्शन भए हे आपकूं। तबइ आप याकूं चतुरभुजदास कहौ हौ।

कुंभनदास -चतुरभुजदास नाथ या कौ सार्थक नाम है। गुसाई जी महाराज नैं या नाम कूं सही मानकैं प्रमाणित कीनौ है।

कुंभनदास की पत्नी -श्रीजी के संग गाय चराइबौ, खेलिबौ, कूदिबौ, बिनकैं संग सखाभाव सौं बिचरबौ, मोकूं सुन सुन कैं बडौ अचरज है रयौ है।

कुंभनदास -प्रभु लीलान में अचरज कबहुं नहिं करनौ चइए। बाकैं तईं सब कछु करबे की सामर्थ्य है।

कुंभनदास की पत्नी -हाँ ऊबइ वा दिना हरप्यारी उलाहनौ दै रई ही– तिहारौ लाला दही खाइकैं मलरिया कूं फोर आयौ है। पर मैंने तौ वाकूं हांसी में टार दोनौ हौ–तिहारे दही कूं हमारौ लाला क्यौं खावैगौ ? हमारैं दूध दही कौ टोटौ है का ?

कुंभनदास -कछू पतौई ना परै। लगै है हरथारी कहीं सांची कह रही होय । पर हम लाला ते कहें तौ कहा कहैं– जो दही–माखन

खायौ हू होयगौ। श्रीजी महाराज कैं संगइ तौ आयौ होयगौ। अब या भाव कूं तौ त्रिलोकी के जीव तरसैं–नैंक भावन आइबे पै हू मन में हरसैं– सोचौ हरथारी बिचारी कहा जानैगी ? हरथारी बिचारी नै अपनी ही तानैगी–माखन खायौ–मलरिया फोरी। कैसे चलैगी जोरा जोरी।।

(चतुर्भुजदास को प्रवेशः १०-१२ वर्ष को बालक,धोती-बगलबन्डी, कमरबन्दा, पगडी सिर पै, मध्यम कद-काठी, लौन-लवन सुन्दर)

कुंभनदास की पत्नी -लाला बड़ी देर सौं आयौ। तोकूं भूख प्यासउ ना लगै का ? अब तानू कहाँ रयौ।

चतुर्भुजदास -अरी माँ, श्रीजी की बाँकी चितवन, विनकी नेहभरी दृष्टि, बिनकी मुस्कराहट मोकूँ देवालय ते हटन ना दे। फिर जल्दी आइ कैं यहाँ पै हू का कर लैतौ।

कुंभनदास की पत्नी -ना कछू खानौ पीनौ, ना बोलबौ बतराइबौ। लाला, तू ध्यान चिन्तन तौ खूब कर, पर घर तौ देर ते मत आयौ कर।

चतुर्भुजदास -अरी मैया तू बड़ी भोरी है। जाकी कृपा ते मोय वाकी लीलान के भावलोक के दर्शन हौंय । वहां पै खानौ पीनौ बतरावौ, बोलबौ सब ल्हौरी बात हैं। जो संसार कौं पालनहारौ है, मेरी चिन्ता ना करैगौ ?

कुंभनदास की पत्नी-लाला, तू तौ बड़ी गहरी बात करै। मेरैं पल्लैं इनमें ते कछू नांय पडै। मेरी आंखिन कै अगारी रहे तौ मोय सन्तोष रहे–जब तू ना रहै–मन अकुलायों करै, लाला कहाँ होइगौ। आ कछू खाइलै।

चतुर्भुजदास -अरी मैया, भोग प्रसादी सौं पूरी तरियां तृप्त है रयौ हूँ ।अब मोय कछू इच्छा नांय।

कुंभनदास की पत्नी-लाला, ई हरथारी कहा उलाहनौ दै रई। कहा बात ही। तू वाके घर दही खाइबे गयो हौ। और कौन कौन संग हे? साँची बता। तोकूं घर पै कछू कमी है का लाला ?

चतुर्भुजदास -अरी मैया, अब तोते कहा छिपाऊँ ? वा दिना श्रीजी महाराज कौ मन दधि–माखन खाइबे कौ भयौ। मो सौं बिन्नैं संग चलबे की कही। मैं बिनके संग हौ। औरउ तीन

चार ग्वाल वाल हते। बिन्नैं माखन चोरी की लीला करी। लौदरीन की मार हममें परी।

कुंभनदास की पत्नी -लौदरीन की मार—क्यों ? का भयौ ?

चतुर्भुजदास -श्रीजी माखन चाख रये। बित्ते गोपी आ धमकी। गोपी कैं आमतें आमतें सिगरे ग्वाल बाल और श्रीजी तो भाग ठाडे भए। मैं या सिगरी लीलाकूं ठडौ ठडौ ठगौ सौ देखतौ रह गयौ। बिन्नैं माखन मिश्री खाई। मेरे हिस्सा में डंडा की मार आई। सो मैंने मार खाई।

कुंभनदास की पत्नी -तौ जि बात भई।

चतुर्भुजदास -हाँ, जि बात तौ भई सो भई, एक तौ खूब लौदरेन की मार दई—ऊपर ते आपते शिकायतऊ कर दई।

कुंभनदास -चतुर्भुज लाला, या बंशीवारे की लीला अनोखी है। चमत्कारउ दिखाबै—मारउ खबावै। पर या मार में बडौ सार है। हां—फेर का भयौ ?

कुंभनदास की पत्नी -हाँ लाला, का भयौ फिर ?

चतुर्भुजदास -फेरि श्रीजी तौ लपक कैं मन्दिर में आइ सिंघासन पै जा बिराजे। हमनें जब जाइ कैं कही कै हमकूं च्यौं छोड आए? तौ बोले—हमारे संगइ भाग आनौ चइए हौ। आए च्यौं ना ? पीछे रहौगे तौ पिटौगेई। संग रहते तौ कौन पीटबे बारौ हौ?

कुंभनदास -लाला, जि बात तौ पूरी तरह खरी बात है। श्रीजी कूं संग राखौगे। हृदय में बसाय कैं राखौगे तौ संसार में मार खाइबे कौ खतरा नैकंउ ना होयगौ।

कुंभनदास की पत्नी -तिहारौ बाप बेटान कौ सत्संग छिडौ चइए—फेर तौ पतौऊ ना लगै—दिन कबकौ गयौ।

चतुर्भुजदास -इतनौ ही नांय श्रीजी मोय देखकैं बहुतइ जोर ते खिलिर खिलिर हँसे हे। बिनके हँसते भए सरूप कूं देखिकैं मेरौ सिगरी कष्ट दूर है गयौ। अबउ बु हँसी मेरे कानन में गूंज रई है। मैं धन्य है गयौ।

दृश्य चौथौ

(स्थान-श्रीनाथ देवालय जतीपुरा, बाहरी चौक, एक लंग श्री गुसाई विट्ठलनाथ जी बिराजे भए है-दूजी लंग भगवदीय चतुर्भुजदास वाद्य यंत्र कैं संग विराजे भए हैं। सद्दू पांडे अरु तीन अन्य भक्त हू विराजे भए हैं। चतुर्भुजदास ध्यान मग्न है कैं गाइबे में तल्लीन

चतुर्भुजदास - *(गाते भए)*

छिन हू बिलग न होहु अब, प्यारे सुन्दर श्याम।
नयन पूतरी मीन ज्यौं तडपत बिनु छबिधाम।।
बाँकी चितवन माधुरी, मन्द मधुर मुसकान।
चाल अटपटी सहज ही, लाजत मनमथ बान।।
रूप माधुरी मन बसी, सह्यौ न जात बिछोह।
प्यारे सुन्दर श्याम प्रभु, मनुआ बिलपत ओह।।

(आंखों से आंसुओं की झडी बहबे लगै है)

गोस्वामी श्री विट्ठलनाथजी -*(आशीर्वादात्मक मुद्रा माहि)* धन्य हौ। धन्य हौ चतुर्भुजदास, बहुतइ डूब कैं गाऔ हौ। तिहारी कल्पना कूं धन्य–वाणी कूं धन्य। सुर में विरह कौ भाव साकार है रयौ है।

सद्दू पांडे -*(हाथ जोरि कैं)* जै जै या के हृदय मांहि वेदना घनी–भूत है रई है। एक तो पत्नी कौ वियोग, दूजे आराध्य देव प्रभु श्रीनाथजी सौं बिछोह –दोऊ कारन सौं अन्तर्वेदना वाणी कैं संग एकाकार है गई है–विरह कैं संग साकार है गई है।

गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी -*(आश्चर्य सौं)* तौ जि बात है। परिसद्दू पांडे, चतुर्भुजदास के गायन में जो कसक हैं, वो तौ प्रभु कृपा ते बिरले जनन कूं ही संभव होय।

सद्दू पांडे -*(हाथ जोरि कैं)* जै जै चतुर्भुजदास पै श्रीजी की पूरी कृपा है। बिन्नैं ठान लई–चतुर्भुज गिरस्ती बसा, चतुर्भुज व्याह कर। अब चतुर्भुज बिचारौ कहा करतौ ? करनौ पड़ौ

ब्याह। ब्याह करौ–गिरस्ती बसाई। अनुराग की दृष्टि तौ पाई परि वियोग की व्याधी हू आई। पत्नी कौ सुरगवास है गयौ– चतुर्भुजदास कूं वियोग की पीडा दै गयौ।

गोस्वामी श्री विट्ठलनाथजी -*(आश्चर्य दिखामते भए)* भैया सद्दू, करौ गोविन्द कौ सब होय। वाकी लीला बड़ी विचित्र है, बड़ी विचित्र है।

सद्दू पांडे -*(हाथ जारि कैं)* जै जै, लीला तौ विचित्र है, या कौ कोऊ पार हू ना पा सकै। परि अब तौ नई जिद्द ठानी है।

गोस्वामी विट्ठलनाथ -*(हाथ सौं पूछिबे की मुद्रा बनाते भए)* कैसी जिद्द ठानी है ? अब औरउ कोई नई बात है गई का ?

सद्दू पांडे -*(हाथ जोरि कैं)* अब नाथ, या चतुर्भुज सौं ही बूझ ले औ?

गोस्वामी विट्ठलनाथ -(**चतुर्भुजदास मांहि संकेत करते भए**) च्यौं चतुर्भुजदास का बात भई ?

चतुर्भुजदास -*(हाथ जोरि कैं)* जै जै अब मोसौं श्री जी कहैं हैं कै चतुर्भुज तू दूसरौ ब्याहु करि।

गोस्वामी विट्ठलनाथ –*(समझाइश करते भए)* तौ, तोकूं लाला की अज्ञा माननी चइए। लाला की बात की अवज्ञा तौ नैकउ ना करनी चइए।

चतुर्भुजदास -*(हाथ जोरि कैं)* जै जै अब मो दूजवर कूं कौन अपनी लरकनी देइ गौ। फेरि जि बातउ है कै अपनी गोरवा बिरादर में कोऊ लरकनी है हू नांय।

गोस्वामी विट्ठलनाथ -*(समुझाते हुए)* जि बात तोय लाला ते कह दैनी चइए तैने अब तानू गुप्प चुप्प राखी।

चतुर्भुजदास -*(हाथ जोरि कैं)* जि बातउ कह दई। अब तौ नई बात कहने लगे हैं। अब कहैं हैं कै बिरादर की नाय मिलै तौ धरेजौ करि। पर ब्याहु जरूर जरूर करि। जात की ना मिलै तौ आनजात की करि। मोय बड़ौ धरम संकट आयौ है।

गोस्वामी विट्ठलनाथ -*(आदेश दैंते भए)* देख चतुर्भुजदास, तोय श्री जी की आज्ञा कौ पालन जरूर करनौ है। या में अब कोई मीन मेंख पैदा मनि करै। (**सद्दू पांडे मांऊ संकेत करते भए।**)

और सद्दू पांडे, चतुर्भुजदास कैं काजैं धरेजे कौ प्रबंध आपकूं करनौ है।

सद्दू पांडे -*(हाथ जोरि कैं)* जो आज्ञा महाराज। मोते एक मुकदम नैं कही हू हती। वाकी पुत्री विधवा है। वाते बात चलाइ कैं देखूंगौ।

(परदा के पीछे ते टकोरा की आवाज-गुसाई जी, सद्दू पांडे औरभक्त एक लंग चले जावैं। चतुर्भुजदास वाद्य यंत्र कूं बजातोंभयौ बैठौ रह जाए। बीच कौ परदा हटैं पीछे के परदा पै श्रीनाथजी की छबि के दरसन हौंय। चतुर्भुजदास गायन करै-)

चतुर्भुजदास -*(गायन करतौ भयौ)*

तो बिनु मैं कैसैं रहूँ, लाड लडैते लाल।
बाँकी चितवन मन बसी, देखत भयौ निहाल।।
लोचन तडपत मीन ज्यौं, पल छिन कलप समान।
मोहन बेणु बजाइयो, सप्त सुरन बंधान।
रसिक रसीली बोलनी, गिरि चढि गाय बुलाय।
गाय बुलाऔ धूमरी, ऊँची टेर लगाय।।
दरसन कौं नैना तपैं, बैन सुनन को कान।
मिलबे को हियरा तपै, मेरे जीवन प्रान।।

(आँसून की झरी लग जावै है)

एक बालक कौ सुर -*(परदा के पीछे सौं)* चतुर्भुजदास, च्यौ इतनौ बिरह भाव दिखाऔ हौ। लगै है पतनी की याद सतावै ?

चतुर्भुजदास -*(आँसू पौंछते भए)* मेरौ क्यौं उपहास करौ हौ लाला। आपतौ मेरे जीवन प्रान हौ। नैंक दरसनन कूं देर है जावै--मन उचट उचट जावै। फिर बोलौ कौन है जो मोकूं धीर धरावै?

एक बालक कौ सुर -*(परदा के पीछे सौं)* चतुर्भुजदास तू अधीर मत होयौ करै, फिर धीरज की और धीर धरैया की आवश्यकता ही ना परैगी

चतुर्भुजदास -*(मुसकाय कैं)* बात बनाबौ कोऊ आपते सीखै? बातन में कोऊ ना जीत सकै।

एक बालक कौ सुर -*(परदा के पीछे सौं)* या में बात बनावे की कहा बात भई। जो सांची बात ही मैंने कह दई।

चतुर्भुजदास -*(उराहने के सुर में)* हाँ तिहारे सिवाय साँच बोलबौ जानै कौन है ? साँच बोलवे की सिगरी कला तिहारे ही बट में आई है।

एक बालक कौ सुर -(परदा के पीछे सौं) सांच बात तौ ई है कै अबइ दो चार महीनाहू ना बीते पतनी को बियोग सताइबे लगौ। है बे लगी ब्यहा की तैयारी–धरेजे की तैयारी। बोल ई हू झूठी बात है।

चतुर्भुजदास -*(अचंभे में)* हाँ लाला ई बात तौ झूठ नांय। पर या प्रपंच में पारौ कौन नैं ? बता, जल्दी बता। आप तौ घर घर फिरकनी बन्यौ डोलै। माखन चुरातौ डोलै, दही खातौ डोलै। बू तौ कोऊ बात नाँय। हमारे व्यहा हू की हाँसी उडावै। वाह लाला वाह।

एक बालक कौ सुर -*(नैंक उपहास सौं)* तौ जि बात है।

गो. श्री विट्ठलनाथजी-*(समझाते भए)* नहीं नहीं चतुर्भुजदास, या तरियां लाला कौ उपहास कतई न करनौ चइए। और सुनौ, लाला सनेह सौं प्यार सौं कछूई कहै, सुन लैनौ चइए। लाला कूं कबहुं उपहास भाव सौं या फिर उराहने के भाव सौं नहीं देखनौ चइए। साँचे वैष्णव कौ ई पवित्र धर्म है।

चतुर्भुजदास -*(रूंआसे है कैं)* मैं तौ अपने हिय के उद्गारन कूं सहज गाय रयौ हौ–लाला कूं रिझाय रयौ रौ। लाला नैं ब्याह बारी बात कूं छेड कैं उपहास कीनौ। सबन कैं साभईं मोकूं लज्जा आई। या सौं मैंने माखन चोरी की बात कह दीनी। मोय छिमा करौ नाथ, छिमा करौ मोकूं। अब आगैं या तरियां की चूक ना करूंगो।

दृश्य पाँचवौं

(स्थान-श्रीनाथ देवालय गोपालपुरा (जतीपुरा) का बाहरी चौक। चतुर्भुजदास वाद्य यंत्र पर अपने मनोभावों को झंकृत कर रहे हैं। आँखों से आंसुओं की धारा बहती भई दिखाई देय है-दो तीन भक्त जन बिनकें जोरी बैठे भए है)

चतुर्भुजदास - *(अधीरता सौं शोक प्रकट करते भए)* उत्थापन कौ समै निकर रयौ है। कहाँ गए नाथ ? लाला तो बिना ई मन्दिर सूनौ सूनौ लगै। चित्त में दुख दूनौ लगै है।

मन में वह मूरत गढी, मन अटक्यौ वा गात।
घरी घरी बीतत रई, कर मींडत पछतात।।
जब ते मन मोहन गए, जुग समान पल जात।
अब गिरिधर के मिलन को, नैन बहुत अकुलात।।

सद्‌दू पांडे -*(समझाते हुए)* चतुर्भुज भैया, तोय पतौ है गुसाईंजी महाराज बाहिर पधारे हैं। सो गोवर्धननाथ श्री जी महराज हू कछु समय कै लयैं मथुरा पुरी गए हतैं। वे तोसौं अलग ना हीं है। तेरे संगइ हैं। इतनौ बियोग च्यौं करै ?

चतुर्भुजदास -*(शोक मगन है कैं)* मोकूं कछू ना सुहावै। कछू नांहि भावै। लाल कौ वियोग बहुतइ सतावै। दादा सद्‌दू ई मन्दिर, ये लता विटप खाबे कूं आवैं। मैं का तरियां धीरज धरूँ ?

सद्दू पांडे -**(समझाते भए)** कछू दिना की ही तौ बात है। फिर वोही चतुर्भुज और वोई गोवर्धननाथ हैं।

चतुर्भुजदास -**(अधीरता सौं)** संयोग के सैकडान दिना छिन भर में बीते से दीखें हैं और वियोग की एक घड़ी हू बरसन कौं दुख दै जाय। मैं या चित्त कूं बहुत समझाऊं, बहुत धीरज बँधाऊ पर करूं कहा ? सद्‌दू दादा, जि मनं कौ दुख चाय छटंकी सौ होय पर मनन सौ हूं मारी लगै।

(भावावेश में आइकैं) देखौ, गाइयान की जंगल सौ लौटिबे की बिरियां भई। अरे रे ये तौ गइया आइ रही हैं। वो धौरी, वो धूमरी सबइ गैया आइ गई। हाँ हाँ वो ठाडे गोवर्धननाथ,

लाला अब तौ तुम बहुतइ सताइबे लगे हौ। देखौ मैं कितनौ व्याकुल है रयौ हूँ। आऔं लाला आऔ। आओं मेरे नाथ। अब बताऔ गोवर्धन पर्वत ऊपर कब दर्शन देओंगे। ***(अचानक हैरान है कैं)*** हैं कहा कहीं? कल्लि आऊँगो। कल्लि आऊंगो ***(बैठ जावै है)***

गोकुलनाथ -**(उठाइबे कौ संकेत करते भए)** उठौ, चतुर्भुजदास उठौ। देखौ पैंठे गाम में कछू काम है। अबइ चलनौ है।

चतुर्भुज़दास -**(उठि कैं अचंभे के संग)** हैं पैंठे गाम कूं चलनौ है। चलौ, जैसी आपकी आज्ञा चलै।

(गोकुलनाथ अरू चतुर्भुजदास चलबे कौ अभिनय करैं हैं। लते चलतैं बहुत देर भई। चिंतित है कैं चतुर्भुजदास कहवे लगै है।)

पैंठौ गाम तौ कब तौ निकस गयौ। मोय उल्टौ जान देऔ। मैं आगै नहीं जाऊंगो। आगैं नहीं जाऊंगो। साँची बताओं मोय लै कहाँ जा रहे हौ।

गोकुलनाथ -***(समझाते भए)*** देखौ, हमारे जौरी कोई सेवक तौ है नाँय। हमकूं चलनौ है–गोकुल। नवनीत प्रिया जी के दर्शन करे और वापिस गोवर्धन।

चतुर्भुजदास -***(हामी भरते भए)*** तौ जि बात है। चलौ, जो आज्ञा। पर हाँ, लौटिकैं बेगी आनौ है।

(फिर चलबे को क्रम जारी रहे हैं-बीच कौ परदा उठै है। गोकुल देवालय के दर्शन होंय)

गोकुलनाथ -***(समझाते भए)*** ले औ जि आगयौ गोकुल। कछु देर भई का?

चतुर्भुजदास -***(प्रेम मगन है कैं)*** धन्य भाग हमारे गोकुलगाम के दरसन भए। ***(गावे लगै है)***

उच्छब गोकुल गाम में ,गावत मधुरे गीत।
लीला सुन्दर श्याम की, ब्रज की न्यारी प्रीत।।
खिरक खोरि घर घर भयौ, दधि मंथन कौ धाम।
कौतूहल निसि द्यौस है, धनि धनि गोकुलगाम।।

(तबइ गुसाईं श्री विट्ठलनाथ जी के दर्शन होंय। चतुर्भुजदास आनन्द विभोर है जाय।)

गो. श्रीविट्ठलनाथजी -कहौ चतुर्भुजदास, अच्छे हौ ?

चतुर्भुजदास -नाथ, अच्छे कहाँ ? जब तानूं गोवर्धन नाथ के दर्शन ना पांऊ। चित्त में चैन ना आवै।

गो. श्री विट्ठलनाथजी-तोकूं लाला के दर्शन बहुत जल्दी होंइगे। नवनीत प्रिया जी कौ शृंगार करि कैं, पालने झुलाकैं हमहू गोवर्धन चालिंगे। तू चिन्ता मती करै।

चतुर्भुजदास -धन्य हौ नाथ आप धन्य हौ। मेरौ पल पल चिन्ता में जाइ रयौ हौ। आपने मोय चिन्ता सौं उबार लियौ। ***(भावावेश में गावै है)***

आंगन खेलै भ्रात दोउ, निरख नैन सुख पांहि।
हौं वारी नवनीत प्रिय, घोषतिया हरसाहिं।।
मेरे मोहन प्राणधान, जो भावै सो लेहु।
मधु मेवा दधि पय धरे माखन खाहु सनेहु।।

गो. विट्ठलनाथजी-***(प्रसन्न है कैं)*** धन्य हौ, धन्य हौ चतुर्भुजदास। ये सुर, ये भाव, ये लय, ये वीणा, की झंकार। सिगरौ वातावरण रस सिक्त कर दीनौ कैसी मधुर तान कैसौ सुरसन्धान, सब अनौखौ है। तो सौ कीर्तनिया पाइकैं देवालय धन्य है गयौ।

चतुर्भुजदास -***(हाथ जोरि कैं)*** सब आपकी कृपा कौ फल है नाथ। आप मो जैसे अनाड़ी कू हू इतनौ मान देऔ हौ–ई आपकौ बडप्पन है नाथ। ई आपकी महानता है नाथ ।

गो. बिट्ठलनाथजी -चलौ अब गोवर्धन चलनै चइए। तोकूं दर्शनन की व्याकुलता हू सता रई है।

चतुर्भुजदास -हाँ बेगी पधारौ नाथ।

(चलबे कौ अभिनय करैं हैं) **परदा**

छठौ दृश्य

(स्थान - श्री गोवर्धननाथजी कौ मन्दिर गोपालपुर (जतीपुरा) श्रीनाथजी कौ चित्रपट, शृंगार सजे भए, बिनकैं सामई कुंभनदास, चतुर्भुजदास छीतस्वामी अरू गोविन्दस्वामी कीर्तन करते भए। कीर्तनियान के हाथन में झांझ मजीरा वीणा मृदंग। चारों कीर्तनिया परम्परागत वेश मांहि।)

समवेत स्वर -(कीर्तन करि रये हैं)

मोर मुकट बंशी बारे।
गिरिवरधर के जै कारे।। *(बेर बेर दुहरावैं हैं)*

वन्दना के सुर उभरें हैं -

मन मोहन प्यारे, रूप सँवारे, सांझ सकारे मोद भरे।
छबि पै बलिहारी, नैन निहारी, तन मन वारी नाथ हरे।
मन कूं अति भावै, कहत न आवै, मोद बढावै, प्रीति बढी।
भूषण मणिमाला, रूप विशाला, जै नन्दलाला चित्त चढी।।
अंचल छबि पटतर, होत निछावर, तनमन तत्पर धन्य कहें।
अति रोम प्रफुल्लित, हियरा पुलकित, सुरभितजनित अनन्य कहें।।
जय गिरवरधारी, तू रखवारी, मोद बिहारी बलिहारी।
जय जय श्रीनाथा नाथ अनाथा, सबहिं सनाथा शुभकारी।।

बोल बंशी बारे की जै।
बोल मोहन प्यारे की जै।।

(पटाक्षेप)

साहित्य-मण्डल के
कतिपय महत्वपूर्ण प्रकाशन

- अष्टछाप स्मृति ग्रन्थ — मूल्य ८० रु
- गुसाईं विट्ठलनाथ स्मृति ग्रन्थ — मूल्य ७५ रु
- पाटोत्सव स्मृति ग्रन्थ — मूल्य २५ रु
- गोस्वामी हरिराय स्मृति ग्रन्थ — मूल्य ३० रु
- गोस्वामी गोकुलनाथ स्मृति ग्रन्थ — मूल्य ६० रु
- श्रीनाथजी अंक — मूल्य ४० रु
- हीरकजयंती ग्रन्थ — मूल्य ५०० रु
- अंग्रेजी हटाओ आन्दोलन — मूल्य १०० रु
- हीरक जयंती परिशिष्टांक — मूल्य ४५० रु
- कवि कुम्भनदास अंक — मूल्य ४० रु
- अष्टछाप के महाकवि ब्रजकोकिल : नन्ददास ग्रन्थ — मूल्य १५० रु
- विश्व कवि : गोस्वामी तुलसीदास ग्रन्थ — मूल्य १२५ रु
- कोकिल कंठी कवि और कीर्तनकार : छीतस्वामी ग्रन्थ — मूल्य १२५ रु
- गुरुगोविन्द के अनन्य उपासक : गोविन्ददास ग्रन्थ — मूल्य १५० रु
- गुरुगोविन्द के चरणचञ्चरिक : श्री चतुर्भुजदास ग्रन्थ — मूल्य १५० रु

और एक उल्लेखनीय प्रकाशन

त्रैमासिक
हरसिंगार

एक प्रति १५ रुपये वार्षिक ५५ रुपये

अब तक प्रकाश्य अंक

नि.ली.गो.ति. गोविन्दलाल अंक, शौर्य अंक, अंग्रेजी हटाओ अंक ९८
अष्टछाप कवि नन्ददास अंक, अंग्रेजी हटाओ अंक ९९, विविध अंक,
अंग्रेजी हटाओ २००० एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन (संयुक्तांक), प्रकीर्णक
अंग्रेजी हटाओ अंक ४, प्रचेयांक, पाटोत्सव अंक

साहित्य - मण्डल
श्री नाथद्वारा

साहित्य - मण्डल, श्रीनाथद्वा